।

ौर

शर्मा

" 'झूठा सच' का मुख्य विषय है—जीवन का प्रेम।
के बँटवारे से उत्पन्न विषम स्थिति एक प्रकार की
-मोटी प्रलय ही थी—प्रलय जिसमें व्यक्ति अपनी
आस्था खो देता है। 'झूठा सच' का लक्ष्य व्यक्ति
खोयी आस्था को उसे फिर लौटाकर देना है।
ाल के पात्र इतिहास के सबसे बड़े संकट-काल में
न की सबसे बड़ी अग्नि-परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं।
-कथा साहित्य के लिए यह कम गौरव की बात
है।"

—विश्वम्भर 'मानव'

ूठा सच' देश-विभाजन और उसके परिणाम के
ण को काफ़ी ईमानदारी से लिखी गयी कहानी है।
यह उपन्यास इसी कहानी तक सीमित नहीं है।
विभाजन की सिहरन उत्पन्न करने वाली इस
नी में स्नेह, मानसिक और शारीरिक आकर्षण,
ाकांक्षा, घृणा, प्रतिहिंसा आदि की अत्यन्त सहज
... कहानी भी आपको
...ी

झूठा सच
वतन और देश
तथा
देश का भविष्य

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद का महान उपन्यास

झूठा सच

[छात्रोपयोगी संस्करण]

यशपाल

लोकभारती प्रकाशन

१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद—१

लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग,
इलाहाबाद-१ द्वारा प्रकाशित

●

प्रथम छात्रोपयोगी संस्करण
१९६८

●

मूल्य ७.००

●

आवरण : शिवगोविन्द पाण्डे

●

भार्गव प्रेस
इलाहाबाद द्वारा मुद्रित

सच को कल्पना से रंग कर उसी जन-समुदाय को सौंप रहा हूँ, जो सदा झूठ से ठगा जाकर भी सच के लिये अपनी निष्ठा और उसकी ओर बढ़ने का साहस नहीं छोड़ता।

——यशपाल

'झूठा सच' के दोनों भागों—'वतन और देश' और 'देश का भविष्य' में देश के सामयिक और राजनैतिक वातावरण को यथा-सम्भव ऐतिहासिक यथार्थ के रूप में चित्रित करने का यत्न किया गया है। उपन्यास के वातावरण को ऐतिहासिक यथार्थ का रूप देने और विश्वसनीय बना सकने के लिये कुछ ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम भी आ गये हैं, परन्तु उपन्यास में वे ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं, उपन्यास के पात्र हैं।

कथानक में कुछ ऐतिहासिक घटनाएँ अथवा प्रसंग अवश्य हैं, परन्तु सम्पूर्ण कथानक कल्पना के आधार पर उपन्यास है, इतिहास नहीं है।

उपन्यास के सभी पात्र—तारा, जयदेव, कनक, गिल, डाक्टर नाथ, नैयर, सूद जी, सोमराज, रावत, ईसाक, असद और प्रधानमंत्री भी काल्पनिक पात्र हैं।

—यशपाल

वतन और देश | भाग १

মা-এর রামদুলাল
বাবু রামভবানী

१

सास के अन्तिम समय दोनों बहुयें उपस्थित थीं।

बड़ी बहू ने सास की मृत्यु की घोषणा करने के लिए, दारुण दुःख के समय की रीति का ध्यान कर देवरानी को असह्य पीड़ा के ऊँचे स्वर में चीत्कार करने के लिए कहा।

घबराहट में देवरानी से ठीक तरह से न बन पड़ा। बड़ी बहू ने रीति की रक्षा के लिए स्वयं खिड़की में जाकर उचित ऊँचे स्वर में विलाप का हृदय-बेधी चीत्कार किया जैसे बाण से बिंध गयी कोई चील मर्मांतक पीड़ा से चीख उठी हो।

गली भर के लोग नींद से जाग उठे। पड़ोसिनें मेलादेई, लाल्लो, कर्त्तारो, संतकौर, पीतमदेई और जीवां तुरन्त आ गयीं। छाती पीट-पीट कर विलाप होने लगा। विलाप करती स्त्रियाँ बीच-बीच में संतोष भी प्रकट कर देती थीं—बुढ़िया का समय भी आ गया था। भागवान पोते-पोतियों से भरा घर छोड़कर गयी है।··· कर्मों वाली थी।

मर्द भी नीचे गली में, मकान के चबूतरे पर एकत्र हो गये थे। सब लोग मास्टर रामलुभाया और बाबू रामज्वाया के माँ की छत्र-छाया से वंचित हो जाने पर 'सोग' प्रकट करके, संसार की अनित्यता की याद दिला कर उन्हें सांत्वना देने लगे।

वृद्धा प्रायः अपने बड़े लड़के बाबू रामज्वाया के ही घर पर रहती थी। रामज्वाया रेलवे पार्सल दफतर में नौकर थे। वे छब्बीस वर्ष से नौकरी में थे। उन्होंने 'पीपल बेहड़े' (पीपल वाले आँगन) मुहल्ले की 'उच्ची गली' में दो गिरे हुए मकान खरीद कर, नये तिमंजिले मकान बना लिये थे। आमदनी के लोभ में, अपने रहने के मकान का भी आधा भाग किराये पर दे दिया था।

रामज्वाया के बड़े लड़के का विवाह हो चुका था। मकान का एक कमरा लड़के और नयी बहू ने सँभाल लिया था। अन्य सब का तो निर्वाह हो ही जाता था, केवल बुढ़िया माँ के लिए जगह न रहती थी। बुढ़िया को ऐसा कुछ करना भी क्या था कि उसके लिए खास जगह की जरूरत समझी जाती।

रामज्वाया की घरवाली का स्वभाव कुछ तीखा था। दो मकानों की मालकिन बन जाने से उसकी जिह्वा की तीव्रता भी कुछ बढ़ गयी थी। सास बुढ़ापे की चिड़चिड़ाहट में बक देती तो स्वयं सास बन चुकी बहू खरा-खटाक उत्तर दिये बिना

न रहती। जब-तब ऐसा झगड़ा हो जाता और बुढ़िया अपने बड़े बेटे की पहली बहू का गुण याद करने लगती। अपने चार कपड़ों की पोटली बगल में दबाये, भोलापांधे की गली में, अपने छोटे बेटे मास्टर रामलुभाया के घर आ जाती। कुछ दिन बाद रामज्वाया जाकर माँ को लौटा लाते या बुढ़िया छोटे बेटे के घर में जगह की और भी तंगी से तंग आकर बड़े बेटे के बच्चों को देख आने के लिए उच्ची गली में लौट आती थी। पर सन् १९४७ के जाड़ों में बुढ़िया छोटे बेटे के यहाँ आई थी तो गहरी सर्दी खा गयी। उसे निमोनिया हो गया। दोनों बेटों ने बहुत दौड़-धूप की परन्तु माँ का समय आ गया था।

मास्टर रामलुभाया डी० ए० वी० (आर्य समाजी) स्कूल के अध्यापक थे और विचारों से सुधारवादी थे। उन के विचार में माता की मृत्यु का शोकाचार और सूतक दूर करने का उपाय ईश्वर-भजन और हवन से होना चाहिए था। गली की स्त्रियों ने उचित स्यापे के स्थान में रूखे ईश्वर-भजन और हवन के प्रस्ताव सुने तो उन्होंने विस्मय प्रकट कर आपत्ति की——हाय, यह कैसे हो सकता है! कर्मोंवाली बुढ़िया थी, पोते-पोतियों का, पोते की बहू का मुँह देखकर मरी है, इसका विमान नहीं सजेगा, इसके लिए संग-स्यापा नहीं होगा तो फिर क्या किसी जवान के मरने पर यह सब होगा?

बुढ़िया की मृत्यु मास्टर रामलुभाया के घर में हुयी थी। नड़ोया (अर्थी) भी उन्हीं के दरवाजे से उठा परन्तु वह बाबू रामज्वाया की भी तो माता थी और बुढ़िया का क्रिया-कर्म उचित सम्मान के साथ होने में उनके सम्मान का भी प्रश्न था। ऐसी भाग्यवान बुढ़िया का विमान जिस सज-धज से उठना चाहिए था, वह गरीब मास्टर जी के वश की बात न थी। रामज्वाया को इस बात के लिए भी बहुत खेद और लज्जा थी। शहर में उनका अपना घर रहते माँ का अन्तकाल छोटे भाई के यहाँ आया। माँ के क्रिया-कर्म का अनुष्ठान छोटे भाई के घर पर भोलापांधे की गली में हो रहा था परन्तु माँ के प्रति उचित प्रतिष्ठा प्रदर्शित करने के लिए सब खर्च और व्यवस्था उन्होंने सँभाल ली थी।

मास्टर जी किराये के मकान की ऊपर की मंजिल में रहते थे। नीचे आँगन में पानी का नल था और नीचे की कोठरियों में मकान मालिक का बजाजे का गोदाम था। ऊपर एक बड़ी कोठरी, एक रसोई और बरामदा ही तो था। रीति के अनुसार स्यापे की संगत ऊपर की मंजिल पर नहीं बैठ सकती थी। बाबू रामज्वाया और मास्टर की ससुरालों से और गाँव से सम्बन्धियों का आना भी आवश्यक था। मास्टर जी के मकान से लगते मकान में डाकखाने का बाबू बीरूमल और इंश्योरेन्स कम्पनी के क्लर्क टीकाराम रहते थे। इन मकानों के साथ गज भर चौड़े रास्ते से पीछे एक छोटा-सा आँगन था। गली के काज, संग-स्यापे उस खुले स्थान में ही होते थे। स्यापे के लिए वहाँ ही चटाइयाँ बिछा दी गयी थीं।

वृद्धा की मृत्यु का समाचार पाकर 'बुद्ध-समाज' की बहिनें आ गयी थीं यह बहिनें समाज से कुरीतियाँ दूर करने का और सदाचार का प्रचार करती थीं। इन

बहिनों ने दिवंगत वृद्धा के सोग में स्यापे की कुप्रथा को छोड़कर भक्ति और वैराग्य के भजन गाने का उपदेश दिया। वृद्धा की बड़ी बहू ने उनकी एक न सुनी; बोली—"हम चली आई रीति को छोड़ अपनी नाक कैसे कटा लें ? लोग नाम धरेंगे कि खर्च से डर गये...।"

रामज्वाया की घरवाली ने कौलां नाऊन को बुलवा लिया था। कौलां स्यापा-विशारद समझी जाती थी। सब स्त्रियाँ स्यापे और सोग के परम्परागत पहनावे में थीं। काले लहँगे और राख घोल कर रंगी हुई मोटी मलमल की खूब बड़ी-बड़ी चादरें। नाऊन दिवंगत भागवान बुढ़िया की दोनों बहुओं के साथ बीच में बैठी थी। जिन स्त्रियों का जितना निकट का सम्बन्ध था, वे उतनी ही निकट, एक के पश्चात एक वृत्तों में बैठ गयीं।

कौलां नाऊन ने पहली उलाहनी (विलाप का बोल) दी—"बोल मेरिये राणिये रामजी दा नाम।"

स्त्रियों ने समवेत स्वर में उसका अनुकरण किया।

नाऊन वृद्धा माँ की स्मृति के उपयुक्त उलाहनियाँ बोल रही थी—"डिट्ठे पलँगा वालिये। (भरे-पूरे घर वाली) राणिये अम्मां।"

स्त्रियों ने समवेत स्वर में दोहराया—"हाय-हाय राणिये अम्मां।"

नाऊन बोली—"हुन्दयां हुक्मां वालिये (जिसका हुक्म चलता हो) राणिये अम्मां।"

स्त्रियों ने दोहराया—"हाय-हाय राणिये अम्मां।"

नाऊन बोली—"लग्गे बागां वालिये (अनेक बागों की मालकिन) राणिये अम्मां।"

स्त्रियों ने अनुकरण किया—"हाय-हाय राणिये अम्मां।"

स्यापे में स्त्रियों के हाथ एक ताल से धप-धप छातियों पर पड़ने लगे। नाऊन वेदना में कुरलाते स्वरों में विलाप के बोल बोलती थी और स्त्रियाँ एक स्वर से 'हाया-हाया, हाया-हाया' पुकारती दोनों हाथों से एक साथ छाती पीटती जाती थीं। रीति के इस विलाप और पीटने में एक सुनिश्चित क्रम था। स्त्रियों के हाथ कभी छातियों पर पड़ते थे कभी क्रम में जाँघों और छातियों पर, फिर जाँघों, छातियों और गालों पर पड़ते थे। कौलां के संकेतों के अनुसार यह क्रम कभी विलम्बित में, कभी द्रुत में और फिर अति द्रुत में चलता और कभी बैठ कर और कभी खड़े होकर। नाऊन इस अनुष्ठान का नेतृत्व सतर्कता और अनुशासन से करती थी। आँख मूंद कर अथवा दीवार की ओट से सुनने पर स्त्रियों के छाती पीटने का सम्मिलित स्वर इस प्रकार बँधा हुआ जान पड़ता था मानो मैदान में बहुत सधे हुए सिपाही मार्च, मार्क-टाइम और क्विक-मार्च कर रहे हों। किसी स्त्री के बेमेल हो जाने पर नाऊन उसे संगत से उठा दे सकती है।

स्यापों का भारीपन मृतक के वियोग के शोक के अनुपात से होता है। भरी जवानी में हुई मृत्यु पर सोग-स्यापा अधिक और बूढ़ों के मरने पर कम होता है।

रामज्वाया की माँ की मृत्यु पर शोक कम और आमोद अधिक होने का ही अवसर था, परन्तु रीति पूरी करने में किसी प्रकार की शिथिलता नहीं होने दी गयी। बुढ़िया के जीवनकाल में उसके प्रति जो भी उपेक्षा हुई थी, उसे मृत्यु उपरांत प्रतिष्ठा से पूरा किया जा रहा था।

स्यापा नाऊन के इशारों पर होता था। विराम होते ही स्त्रियाँ सगाई और शादी की बातें आरम्भ कर देतीं। इन स्यापों से कुमारी लड़कियों और नई बहुओं को छूट रहती थी। दोनों भाइयों ने सिर, दाढ़ी-मूंछ उस्तरे से मुंड़ा दिये थे। लोग उनके पास सहानुभूति दिखाने आते और धैर्य धरने का उपदेश देकर चले जाते।

बाबू रामज्वाया और मास्टर रामलुभाया की माँ की मृत्यु के चौथे दिन 'मरना' बाँटा गया। रामज्वाया की बहू विशेष रूप से बन-सँवर कर आयी थी। मास्टर जी की लड़की तारा और रामज्वाया की लड़की शीलो को भी नये रंगीन रेशमी कपड़े पहन कर कुछ समय स्यापे की संगत के समीप बैठना पड़ा था।

दोपहर में शीलो और तारा अपने छोटे भाई-बहिनों को लेकर मास्टर जी के यहाँ बैठकर बातचीत करने और कुछ खाने-पीने के लिए जाने लगीं तो उन्होंने भाभी को भी साथ चलने के लिए कहा परन्तु बहू सिर में दर्द बताकर उच्ची गली लौट गयी।

शीलो को बातचीत करते समय कुछ नमकीन या मीठा ठुंगते रहने की आदत थी। छः मास पूर्व उसकी सगाई हो चुकी थी इसलिए उसे भी दादी के 'मरने' के दो रूपये मिले थे। बेचारी तारा की सगाई अभी तक नहीं हुई थी इसलिए उसका कोई हक नहीं आता था। शीलो ने तारा के घर जाकर बैठने से पहले, गली के मोड़ पर जाकर दो आने का ताजा मोंगरा दोने में ले लिया था। तारा के घर में सूना था। बड़ा भाई जयदेव कालिज गया हुआ था। तारा ने अपनी बरस भर की बहिन के सामने रबड़ की गुड़िया और झुनझुना रख दिया और चटाई बिछाकर शीलो के साथ लेट गई। मोंगरे का दोना बीच में रख कर, दोनों मोंगरे के दाने ठुंगती हुयी बातें करने लगीं।

शीलो ने कहा—"भाभी की बात जानती हो? उसे लहँगा-दुपट्टा मिला और पाँच रूपये मिले हैं। फिर भी कह रही थी, मैं तो दस रुपये लूँगी।" फिर शीलो बोली, "और तू देख, हमने बुलाया तो हम लोगों के यहाँ नहीं आयी। झूठी ने कह दिया, सिर में दरद हो रहा है। घर लौटकर भाई के साथ कमरे में जाकर किवाड़ बन्द कर लेगी, और क्या!"

जीने में तेजी से ऊपर आते कदमों की आहट सुनकर शीलो ने अनुमान प्रकट किया—"भाई!"

तारा ने कहा—"रतन होगा।"

कोठरी के किवाड़ खुले ही थे। आधे मकान के पड़ोसी बाबू गोविन्दराम के लड़के रतन ने पुस्तकें बगल में दबाये झाँक कर पूछ लिया, "मासी जी स्यापे से अभी नहीं लौटीं? झाई (मेरी माँ) नहीं आयी?"

शीलो ने रतन को तारा के यहाँ पहिले भी कई बार देखा था। रतन ने शीलो से पूछ लिया--"तू कब आयी ?"

तारा ने रूखा सा उत्तर दे दिया--"अभी से कैसे आ जायेगी ! तेरी भाई रसोई में कटोरदान के नीचे रोटी ढाँक गयी है।"

रतन लौट गया। रतन ग्यारहवीं श्रेणी में पढ़ रहा था। उम्र सत्रह-अठारह की थी। तारा से तीन बरस बड़ा था। गोरा-गोरा, लम्बा कद, होठों पर रोयें काले हो रहे थे।

शीलो ने मुस्कराकर तारा की आँखों में देखा--"हाय, यह तो बड़ा सुन्दर निकल आया है। तुझसे नहीं बोलता-चालता ?"

तारा ने मुख गम्भीर बनाकर गर्व से कहा-"बड़ा कोयदा (बिगड़ा) है। घूरता रहता है। जीने में मिल जाये तो छेड़ने लगता है। मैं डाँट देती हूँ--फिट्टे मुँह ! लानत है ! सिरसड़या (कपाल-फूटा) मुझे छू तो ! चीख मार कर तेरी माँ से कह दूँगी।"

जीने के दूसरी ओर रतन के घर से पुकार सुनाई दी--"तारा, भाई नालदा (रोटी के साथ खाने के लिए दाल या सब्जी) कुछ नहीं रख गयी है। तेरे यहाँ कुछ है तो दे जा।"

तारा ने शीलो की ओर आँखों से संकेत किया--"देखा मरे को ! मैं क्यों जाऊँ !"

शीलो बोल उठी--"ला, मैं दे आऊँ। बता, तरकारी कहाँ रक्खी है ?"

शीलो चौके से सुबह की रक्खी तरकारी एक कटोरी में लेकर जीने के दूसरी ओर गयी और पुकारा--"कहाँ है तू ? ले नालदा।" और तरकारी देकर लौट आई।

तारा और शीलो कुछ देर बातें करती रहीं। तारा की माँ सूर्यास्त से पूर्व स्यापे से उठ नहीं सकती थी। तारा ने शीलो को अपनी गोद की बहिन को सम्भालने के लिए कहा और स्वयं साँझ की रसोई के लिए आटा सँवारने लगी। शीलो उस के सामने बैठी अपनी गली में हुए झगड़ों की चर्चा सुनाती रही। कुछ देर बाद शीलो ने लड़की को गोद में उठाकर कहा--"मुन्नी को लेकर कुछ देर हवा में ऊपर बैठती हूँ। मुन्नी भी वहाँ खेलेगी। तू फुल्के सेंक ले।"

तारा ने दाल पिछले चूल्हे पर रख दी और फुल्के सेंकने लगी। आधी घड़ी में फुल्के सेंक कर उसने दाल के नीचे आग ठीक कर दी और आटे की परात, चकला-बेलन धोकर रख दिये। शीलो से बातें करने के लिए जीना चढ़कर खुली छत पर जा पहुँची।

मुन्नी छत के फर्श पर फैल गये अपने पेशाब पर बैठी हुई रबड़ की चूं-चूं करने वाली गुड़िया को, चावल के दानों जैसे दो दाँतों से काट-काट कर अपने में मगन किलक रही थी। तारा को शीलो दिखाई न दी। तारा ने बिना पुकारे आगे बढ़ कर बरसाती की आड़ में से झाँका और झटके से पीछे हट गई। रतन शीलो को दोनों बाहों में लिए था।

तारा की आहट पाकर दोनों घबरा गये थे। तारा कुछ न बोली, मुन्नी को गोद में उठाकर क्रोध में धम्म-धम्म जीना उतरती नीचे चली गई।

कुछ पल में शीलो भी नीचे उतर आई। तारा उससे बोली नहीं।

शीलो सिर झुकाकर चुप बैठ गयी तो तारा से रहा नहीं गया। शीलो के समीप जाकर बोली—"मरी, कुछ शरम कर! तेरी कुड़माई (सगाई) हो चुकी है!"

उस संध्या के बाद से तारा को रतन से घृणा हो गयी। इस से पहले रतन तारा की धमकियों से नाराज नहीं होता था। धमकी का स्वर ही बता देता था कि सच्ची लड़ाई नहीं थी। अब तारा की आँखों में घृणा थी। तारा को रतन और शीलो के प्रति क्रोध था। दोनों ने उसे धोखा दिया था। रतन शीलो से बोला ही क्यों? सचमुच गुंडा है। लड़के ऐसे ही होते हैं।

●

दादी की मृत्यु पर शीलो को 'मरना' दिया गया था और तारा को नहीं। तारा की माँ को दो रुपये और एक जोड़ा कपड़ों के लिए ईर्ष्या नहीं थी परन्तु यह इस बात का प्रमाण था कि जेठानी की लड़की की सगाई हो गई और भागवंती की लड़की की सगाई नहीं हो पायी। तारा चाहे शीलो से अढ़ाई मास ही बड़ी थी पर थी तो बड़ी। स्कूल में भी तारा शीलो से दो श्रेणी ऊपर थी। लोग उसे पन्द्रह की होने पर भी सोलह-सत्रह की ही मान लेते थे। बड़े भाई के भाग की लम्बाई भी उसी ने ले ली थी।

तारा की माँ को मास्टर जी की अव्यावहारिक बुद्धि पर भी खेद होता था। लड़की को यूँ जल्दी-जल्दी इतना पढ़ा देने की जरूरत ही क्या थी। गरीब मास्टर की लड़की के दहेज का प्रलोभन किसे था? मास्टर जी की आशा कि लड़की की बुद्धि और शिक्षा उसके लिए स्वयं ही वर आकर्षित कर लेगी, मिथ्या प्रमाणित हो रही थी। ऐसी अवस्था में, तारा की माँ की कठिनाई में जेठानी ही सहायक हो सकती थी इसलिए भागवंती अपने घर के दस काम की हानि सहकर भी जेठानी के घर जाकर, उसके लिए पापड़-वड़ियाँ बना आती, उसकी पुरानी रजाइयों की रुई तोड़कर दरियों के लिए कात देती थी।

शीलो की माँ आयु में तारा की माँ से दो बरस छोटी थी परन्तु जेठानी होने के नाते सम्बन्ध में बड़ी थी। स्त्री की स्थिति अपने पति की स्थिति की छाया होती है। रामज्वाया की पहली पत्नी केवल एक पुत्र को जन्म देकर चल बसी थी। शीलो की माँ रामज्वाया के दूसरे विवाह में आयी थी। साधारण व्यवहार के अनुसार उसकी खातिर भी अधिक थी। उसे पहनने-ओढ़ने का भी चाव और ढंग था। रेशमी कपड़े के बिना वह गली से बाहर न निकलती थी। जेठानी के साथ चलती तारा की माँ वस्त्रों और व्यवहार से भी निस्तेज और भिन्न स्तर की दीखती थी। तारा की माँ मोटी मलमल की चादर ओढ़े और बदरंग हो चुका रेशमी लहँगा या सलवार पहने हुए अपनी आयु से पाँच बरस अधिक जान पड़ती थी। उसकी दोनों कलाइयों

पर तोले-तोले भर सोने की दो चूड़ियाँ विवाह के समय से चली आ रही थीं। शीलो की माँ पतंग के काग़ज की तरह महीन छब्बी मलमल के कलफ़ से ऐंठे हुए, झाग की तरह श्वेत दो दुपट्टे जोड़ कर ओढ़ती थी। कलाइयों पर सोने की चूड़ियाँ और कड़े बदलते रहते थे। चिकना, चमकता चेहरा और रूप-यौवन का गर्व उसकी आयु को और कम कर देता था। बात भी वह अधिकार से करती।

मास्टर रामलुभाया और बाबू रामज्वाया में भी वैसा ही अन्तर था। मास्टर जी के चेहरे पर सदा थकान, सिर पर भूरी गोल टोपी और शरीर पर बन्द गले का कोट रहता। किफायत के लिए हजामत स्वयं बनाते थे—फिर भी सप्ताह में सोमवार और बृहस्पति वार को स्कूल नहीं जाना होता था इसलिए ठोड़ी पर उगी दो दिन की हजामत की भी उपेक्षा कर जाते थे। उनकी दो तिहाई सफ़ेद हो गयी मूँछें होठों को ढँके रहतीं, पानी पीने के बाद उन्हें पोंछना पड़ जाता था।

बाबू रामज्वाया को रेलवे से गर्मी और सर्दी की वर्दी मिलती थी परन्तु वे मेल-जोल में आने-जाने के लिए रेलवे के कपड़े न पहन कर अपने ही कपड़े पहनते थे। सिर पर महीन मलमल का कलफ लगा साफा, खूब सफेद कलफ लगी कालरदार कमीज और पायजामा। लाल, रेशमी जरीदार कमरबन्द के छोर कमीज के दामन के नीचे से तनिक झाँकते रहते थे। वे ऋतु के अनुसार कालरदार सूती या ऊनी कोट पहनते थे। नेकटाई और पतलून का उपयोग उन्होंने कभी न किया था। नाई एक दिन का व्यवधान देकर उनकी ठोड़ी बना जाता था। गंगा-जमनी मूँछों को ओठों की लकीर पर कतर कर सुथरा कर देता था। चेहरे की त्वचा पर स्निग्धता बनी रहती थी।

बाबू रामज्वाया की माता के सोग में समवेदना प्रकट करने के लिए लाला सुखलाल साहनी भी आये थे और स्यापे में सुखलाल की पत्नी भी आयी थीं। सुखलाल का रामज्वाया से बिरादरी का सम्बन्ध तो नहीं था पर उससे अधिक गूढ़ व्यावसायिक नाता था। सुखलाल प्रकट में लाहौर से पूर्व-पश्चिम की ओर ट्रकों द्वारा माल का यातायात करते थे परन्तु दूसरे व्यवसाय भी थे। उनका व्यवसाय रेलवे पार्सलों की यातायात से सम्बन्ध रखता था।

लाला सुखलाल साहनी की पत्नी जयरानी स्यापे में आयी तो स्वयं भी शोक की अवस्था में थी। तीन मास पूर्व उसकी बहू गुजर गयी थी। बहू की बीमारी और मृत्यु की चर्चा चली तो आनुषंगिक रूप से उनके लड़के सोमराज की दूसरी सगाई की चर्चा भी चली।

जयरानी ने शीलो की माँ से कहा—"बहिन तू जानती है, हमारे लिए लड़कियों की कमी नहीं है। अर्थी जला कर लौट भी नहीं पाये थे कि पाँच जगह से सन्देश आ चुके थे, पर मैं इस बार जल्दी नहीं करूँगी। बहू बेचारी स्वभाव की तो अच्छी थी, उन लोगों ने दान-दहेज भी बुरा नहीं दिया था परन्तु सच बात यह है कि लड़के के मन नहीं भायी थी। कुछ सिद्धड़-सी, चेहरा-मोहरा भी साधारण ही था। घर पर लड़के का मन ही नहीं लगता था। बेचारी को खाँसी-जुकाम वाला फलंजा बुखार (इन्फ्लुएंजा) हो गया था। 'बच्छोवाली' और 'मालरोड' के सभी डाक्टरों का इलाज

करा लिया, परन्तु परमेश्वर की लिखी को कौन मेट सकता था। इस बार तो मैं जैसे भी हो देख-सुन कर, कद-काठ की अच्छी और सुघड़ लड़की ही लूँगी। न हो, किसी तरह लड़के को भी दिखा लूँगी, वही ठीक होगा। आजकल के लड़कों को तो तुम जानती ही हो ! दान-दहेज की मुझे उतनी परवाह नहीं है। लड़की वही लूँगी जिसे देखकर लड़का हाँ कर दे···।"

शीलो की माँ ने अवसर देखकर कहा—"मेरा देवर बेचारा स्कूल में मास्टर है। गरीब आदमी है। बड़ा दान-दहेज तो क्या पर सच मानो, लड़की के नैन-नक्श हजारों में एक हैं, हाथ लगे से मैली होती है। आँखें मानो आम की फाँकें हैं।···मेरी शीलो से दो ही महीने बड़ी है पर उससे आधा बालिश्त सिर निकालती है। बिल्कुल छमक-सी, दसवीं में पढ़ रही है। पढ़ाई में सदा अव्वल आती है। मेरी देवरानी तो बेचारी···।"

सुखलाल साहनी का लड़का सोमराज कुछ ही दिन बाद, किसी कारण से कुछ समय के लिए कहीं चला गया था इसलिए प्रायः बरस भर इस सम्बन्ध में कोई बात न उठ सकी।

तारा ने १९४३ में मैट्रिक फर्स्ट डिवीजन में पास किया था। उसके भाई जयदेव ने आग्रह किया कि तारा को बी० ए० तक जरूर पढ़ाया जाय। जयदेव दयालसिंह कालेज में एम० ए० के दूसरे वर्ष में पढ़ रहा था। तारा को भी वहाँ ही दाखिल करा दिया था। जयदेव तो दो मास बाद ही गुप्त राजनैतिक आन्दोलन में भाग लेने के कारण जेल चला गया। तारा अकेली ही कालेज जाती रही।

तारा इण्टर की परीक्षा दे रही थी। उसे नित्य सुबह नौ बजे परीक्षा-भवन जाना होता था। एक दिन शीलो सुबह आ गयी और बोली—"आज मैं भी तेरे साथ चलूँगी।" शीलो की आँखों में रहस्य की चमक थी। मुस्कान छिपाये न छिपती थी।

माँ ने तारा को टोका—"यह क्या, इतने मुसे हुए कपड़े पहन कर जा रही है ! कंघी तो ठीक से कर ले !"

माँ ने स्वयं उसकी सबसे अच्छी सलवार, कमीज और दुपट्टा निकाल कर पहनने का आग्रह किया।

तारा स्वभाव से ही सुचज्जी (सुथरी) थी। उसे माँ ने पहले कभी ऐसे नहीं टोका था। मास्टर जी सादगी पसन्द करते थे। तारा समझ नहीं पा रही थी कि परीक्षा में ऐसे कपड़े पहन कर जाने की क्या जरूरत थी, तिस पर शीलो की रहस्य भरी मुस्कान। माँ के बार-बार आग्रह करने पर तारा ने बात-बात में विलम्ब हो जाने की आशंका से कपड़े बदल डाले। घर का जीना उतरते ही उसने शीलो से पूछा—'क्या बात है, कहती क्यों नहीं ?"

"आज रास्ते में तुझे वह देखेगा। मुझे तेरे साथ देखकर पहचान लेगा। मैं तुझे इशारा कर दूँगी। तू भी देख लेना।" शीलो बोली।

तारा को अच्छा नहीं लगा। सगाई हो जाना लड़कियाँ साधारणतः सौभाग्य और गर्व की बात समझती हैं। अपनी सगाई की बात सहेलियों-सहपाठिनों को बताये

बिना रह नहीं सकतीं, परन्तु तारा इएटर तक पहुँचते-पहुँचते कुछ और ही कल्पना करने लगी थी।

शीलो और तारा शहालमी दरवाजे से बाहर निकल कर चहारदीवारी के बाहर बाग में से होकर लुहारी की ओर जा रही थीं।

"वह सामने देख, रेशमी सूट वाला, हमारी तरफ देख रहा है।" शीलो ने तारा की बाँह दबा कर कहा।

पहली ही झलक में तारा ने जो देख लिया, देख लिया। फिर न देख सकी, आँखें झुक गयीं। लड़का जिस तीखेपन से उसकी ओर घूर रहा था, वह उसे अच्छा नहीं लगा।

तारा कालेज में लड़कों के साथ पढ़ती थी। उसने अच्छे और बुरे लड़के देखे थे। तारा और उसकी सहेलियाँ ऐसे घूरने वाले लड़कों को आपस में स्टुपिड, रूड (अभद्र, गधे) गर्ल-गेज़र (लड़कियाँ ताकने वाले) कहकर वितृष्णा प्रकट करती थीं, उनका मजाक करती थीं। गर्ल-चेज़र (लड़कियों का पीछा करने या चिपकने वाले) लड़कों से बचती थीं। जैसे बी० ए० का अविनाश था। किसी लड़की को एक ओर अकेली देखता तो दूसरों के सामने उसके समीप जाकर बहुत धीमे से पूछ लेता––आज इतनी तारीख है न? दूसरे अनुमान करते रहे, जाने क्या कहा होगा। इसकी लड़की से बहुत आत्मीयता है। तारा को लड़कों का अनायास और कोमल व्यवहार अच्छा लगता था जैसा सभा-सोसायटियों, डिबेटों और फेडरेशन में भाग लेने वाले लड़कों का होता था, जैसे क्रिश्चियन कालेज के एम० ए० के असद भाई साहब थे। बिलकुल सरल, अनायास, सहृदय और विनीत।

तारा ने घर पर माँ के सामने कई बार कहा––"मैं तो व्याह नहीं करूँगी, एम० ए० तक पढ़ूँगी।"

किसी ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया, उससे कुछ पूछा भी नहीं गया। एक दिन उसने सुना कि उसकी माँ बन्नी हाते के मुहल्ले में जाकर लड़के को ठीके के (सगाई के) ग्यारह रुपये दे आई है। उस दिन तारा छिप-छिप कर खूब रोयी। सोचा, भाई होता तो ऐसा न हो सकता। भाई को तो वह किसी तरह अपनी बात कह ही सकती थी। भाई उसकी इच्छा के विरुद्ध सगाई का समर्थन नहीं कर सकता था।

तारा दयालसिंह कालेज में दाखिल हुई थी तो उसका विचार था कि वह लड़कियों से ही मिलना-जुलना और सम्बन्ध रखेगी परन्तु दूसरे वर्ष में पहुँचते-पहुँचते उसका विचार और व्यवहार बदल गया। उसे कालेज में सुरेन्द्र, जुबेदा, स्नेह, गुर्टू आदि लड़कियों की संगति भली लगी जो राजनीति और फेडरेशन में भी भाग लेती थीं। यह लड़कियाँ न लड़कों से संकोच करती थीं न उनसे कतराती थीं।

सुरेन्द्र कौर तारा की सब से आत्मीय सहेली बन गई थी। सुरेन्द्र का भाई नरेन्द्र सिंह जयदेव का सहपाठी रहा था और एम० ए० पास कर लॉ-कालेज में पढ़ रहा था। नरेन्द्र सिंह स्टुडेंट फेडरेशन का नेता था। सुरेन्द्र भी फेडरेशन के काम में बहुत भाग लेती थी। सुरेन्द्र की संगति में तारा भी उन सभाओं में जाने लगी। इन सभाओं में दूसरे महायुद्ध की अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से विवेचना की जाती थी। जर्मनी

और जापान के आक्रमण को फासिज्म का आक्रमण बतलाया जाता था। भारत का हित रूस के नेतृत्व में अमेरिका और ब्रिटेन की विजय और फासिज्म (जर्मन और जापान) के पराजय में बतलाया जाता था। भारत पर जापान के आक्रमण के विरोध के लिए ऐसी नीति की चर्चा की जाती थी कि युद्ध का नेतृत्व अंग्रेजों की अपेक्षा भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के हाथ में आ जाय। तारा कुछ समझती और कुछ नहीं भी समझती पर उसे इन लोगों का साथ अच्छा लगता था।

तारा बचपन से मास्टर जी के धार्मिक विश्वासों का अनुशासन सहती आई थी। मास्टर जी उसे और बड़े भाई जयदेव को प्रातःकाल खूब तड़के उठ कर स्नान कर लेने के लिए विवश करते थे। समीप बैठा कर सन्ध्या-भजन कराते थे। ऐसी ही बात पोशाक और दूसरे व्यवहारों के बारे में थी। जयदेव को सिर के केश मशीन से छोटे कटवाने पड़ते थे, कोट बन्द गले का पहनना पड़ता था। कालेज में चले जाने के बाद जयदेव इन नियमों से मुक्त हो गया था। तारा कालेज में भरती हो गई तो उस पर भी नियंत्रण कुछ शिथिल हो गया था परन्तु उससे पहले तारा को भी केशों की एक ही चोटी बनाने की आज्ञा थी। घर के बाहर जाते समय सिर ढँके रहना आवश्यक होता था। वह दूसरी लड़कियों की तरह कमर पर फिट जम्पर और खुले पहुँचे की सलवार पहनना और बहुत महीन चुन्नी ओढ़ना चाहती थी पर उसे ढीला जम्पर, तंग पहुँचे की सलवार पहननी पड़ती और चुन्नी मोटे कपड़े की मिलती थी। गली-मुहल्ले में सब लोग सिनेमा के गीत और गजलें गाते रहते थे पर मास्टर जी के घर में वह निषिद्ध था।

तारा को पिता के आदेश और नियम अरुचिकर लगते तो उसे अपनी रुचि पाप की ओर होने की शंका से, स्वयं अपने प्रति ग्लानि होती थी। सहपाठियों और फेडरेशन के साथियों की संगति में उसे जान पड़ा कि वह स्वभाव और रुचि से अपराधी नहीं थी। वह आत्म-सम्मान अनुभव करने लगी। रेस्टोरेन्ट में कभी जुबेदा, असद या जुबेर के साथ बैठकर निःसंकोच कुछ खा-पी लेने से मिथ्या संस्कारों से मुक्ति का संतोष होता था। इनमें से किसी लड़के से निःसंकोच बात करते हुए साथ-साथ चलने पर समता और आत्म-विश्वास की अनुभूति होती थी। इससे पूर्व किसी लड़के से बात करना वह निन्दा का कारण और कुचेष्टा ही समझती थी। तारा अपनी गली में पिता जी और गली के लोगों के लिहाज से अपना व्यवहार बहुत कुछ पूर्ववत बनाये रहती। कालेज में वैसा व्यवहार उसे हास्यास्पद लगता था।

२

जयदेव पुरी १९४१ में एम० ए० के दूसरे वर्ष में पढ़ रहा था। पुरी युद्ध-विरोधी आन्दोलन में भाग लेने के कारण गिरफ्तार हो गया और जेल भेज दिया

गया था। पुरी का हृदय युद्धकाल में अपने परिवार की आर्थिक दशा से विदीर्ण था परन्तु वह देश की स्वतंत्रता के लिए बलिदान से मुँह न मोड़ सका। जेल जाते समय जयदेव पुरी को विश्वास था कि वह शीघ्र ही स्वतन्त्र देश में जेल से स्वतंत्र होगा। उस समय देश के दुखों के साथ उसके अपने दुख भी दूर हो जायेंगे।

पुरी ने मुलतान जेल में दण्ड भुगतते हुए अपने समय का सदुपयोग किया था। जेल जाने से पहले से पुरी की महत्वाकांक्षा थी कि वह प्रथम डिवीजन में एम० ए० पास करके किसी कालेज में प्रोफेसर बन जायगा और साहित्य के क्षेत्र में भी नाम कमायेगा। उसके साथी उसकी साहित्यिक प्रतिभा के कायल थे। विद्यार्थी अवस्था में ही, लाहौर के अनेक पत्रों में उसकी कुछ भावपूर्ण रचनायें और छोटी कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी थीं। जब जेल में दूसरे राजनैतिक कैदी तेल से मालिश करने और चोरी से मँगाये सामान से पकवान बनाने में समय बिताते थे तो पुरी निरन्तर पढ़ता और लिखता रहता था। अपने लिखे को आलोचक की दृष्टि से पढ़ता और उसे पुनः लिखता था। पौने दो बरस में उसने अपनी सोलह छोटी कहानियों का एक संग्रह खूब माँज-सँवार कर तैयार लिया था। उसे विश्वास था कि जेल में किया उसका यह श्रम उसके लिए साहित्यक मार्ग बनाने में सहायक होगा।

भाग्य की विडम्बना, जयदेव पुरी १९४५ के मई के दूसरे सप्ताह में जेल से रिहा हुआ परन्तु जेल से उसकी रिहाई तो अगस्त १९४२ की क्रान्ति की विजय और भारत में अंग्रेज सरकार की पराजय के कारण नहीं हुई थी बल्कि दूसरे महायुद्ध में मित्र-राष्ट्रों की विजय के साथ, अंग्रेजों की विजय के उपलक्ष में हुयी थी। पुरी को देश की स्वतन्त्रता का लक्ष्य प्राप्त किये बिना भी जेल से मुक्ति पाकर सन्तोष और उत्साह ही अनुभव हुआ था।

पुरी ने जेल से घर लौट कर दूसरी ही परिस्थिति देखी। पौने दो वर्ष जेल में रहते समय परिवार की याद और चिन्ता होते हुए भी उसे निर्वाह की चिन्ता न थी। जेल का भोजन-वस्त्र जैसा भी था, बिना चिन्ता के मिल जाता था। जेल में राजनैतिक कैदियों को अनाज और कपड़े के भावों के कारण संकट अनुभव न होता था।

पुरी को जेल से लौटे तीसरा ही दिन था। माँ ने संकोच से कहा—"तुम्हारे पिता जी स्कूल से लौटेंगे तो उन्हें ट्यूशन पर जाना होगा। मैं बच्ची को गोद में लिए राशन की दूकान में कैसे खड़ी रहूँ। उषा को भी कैसे कहूँ। वहाँ सब तरह के लोग खड़े रहते हैं। तारा बड़ी हो गई है। तुम एक रुपये की चीनी ले आओ। बाजार से लाओगे तो डेढ़ रुपये सेर मिलेगी......।"

जयदेव पुरी को एक रुपये की चीनी के लिए पौने दो घण्टे तक क्यू में खड़ा होना असह्य व्यथा जान पड़ी। कहाँ देश की स्वतन्त्रता के लिए जूझ जाने का विचार और कहाँ सेर भर चीनी के लिए संघर्ष, परन्तु इससे बचाव न था। युद्ध समाप्त हो गया था परन्तु अनाज की महँगाई बढ़ती-ही जा रही थी। वही हाल कपड़े का था। मास्टर जी अब भी वही धारीदार कपड़े का बदरंग हो चुका कोट पहने रहते

थे जो उन्होंने पुरी के जेल जाने से पहले सिलाया था। माँ, तारा और उषा की सलवारों में घुटनों और पहुँचों के ऊपर अनेक पैवन्द और बखिये पड़ चुके थे। माँ और बहिनें बाहर जाने के कपड़ों की चिन्ता अपने शरीर की त्वचा से भी अधिक करती थीं। पुरी पहचान गया था, छोटा भाई हरदेव जो नीली धारी की पतलून पहने था, वह पड़ोसी रतन की छोटी हो चुकी पतलून थी। रतन की माँ ने चुपचाप भागवंती को दे दी थी।

जयदेव जानता था कि बीरूमल, इंश्योरेंस कम्पनी के कर्ल्क टीकाराम और खुशालसिंह सब के घर की अवस्था ऐसी ही थी। टीकाराम की बहू दो दिन पहले अपने पति का फट गया पायजामा तारा के पास लाकर अनुरोध कर रही थी कि इसमें से छोटे लड़के के लिए पायजामा निकाल दो। खुशालसिंह को महीन मलमल का कलफ़ लगा रंगीन साफा बाँधने का बहुत शौक था। अब उसके साफे से लीरें लटकती रहती थीं।

सब से करुण अवस्था थी ब्राह्मणी पूरणदेई की। बेचारी अनपढ़ विधवा शीशामोती बाजार की 'आर्यपुत्री पाठशाला' में बुलावी का काम करती थी। बताती थी कि अच्छे खाते-पीते खानदान की लड़की और बहू थी। विधवा हो गई थी तो जेठ ने पूरे मकान पर कब्जा करके उसे घर से निकाल दिया था। कसूर में बिरादरी के लोगों के सामने नौकरी करते उसे शरम लगती थी इसलिए लाहौर आ गई थी। उसकी पन्द्रह बरस की जवान लड़की सीता थी। उसे किसी तरह आठवीं श्रेणी में पढ़ा रही थी। ऐसे जमाने में भी पाठशाला के समाजसेवी प्रबन्धक पूरणदेई को बीस ही रुपये महीना दे रहे थे। बेचारी घर में चाहे रूखी-सूखी खा लेती या भूखी रह जाती पर लाज ढँकने के लिए कपड़े तो चाहिए ही थे, खास कर जवान लड़की के लिए।

मास्टर जी पहले से स्कूल के काम के अतिरिक्त एक ट्यूशन लगातार सेठ गोपाल शाह की हवेली में करते आये थे। कभी दो ट्यूशनें भी ले लेते थे। अब वे तीन-चार ट्यूशनें कर रहे थे परन्तु घर में क्रिच्छता और कृपणता बढ़ गयी थी। माँ और मास्टर जी के मुख पर दैन्य को छिपाने के संघर्ष की थकावट पहले से भी अधिक स्पष्ट थी। तारा की उदासी घर की स्थिति को और भी असह्य बना रही थी।

इण्टर की परीक्षा का परिणाम निकल चुका था। तारा पहले डिवीजन में पास हो गयी थी। मास्टर जी उसे बी० ए० में दाखिल होने की अनुमति नहीं दे रहे थे। उनका विचार था जयदेव फिर एम० ए० की पढ़ाई करेगा। छोटी लड़की और लड़का भी स्कूल में थे। वे कितना बोझ सम्भाल सकते थे। विद्या चाहे जितनी उत्तम वस्तु हो और पैसा केवल हाथ का मैल परन्तु विद्या पैसे के बिना अप्राप्य रहती है।

जयदेव ने बचपन से गरीबी ही देखी थी परन्तु जेल के पौने दो वर्षों में वह स्वार्थ की चिन्ता न करके, त्यागी वीर की भावना से काट रहा था और भविष्य में अपनी योग्यता के बल पर निरन्तर सफल जीवन के स्वप्न बाँधता रहा था। जेल से

लौटकर दारिद्र्य का वह उत्कट रूप उसे अधिक असह्य लगा। जयदेव ने पिता से कह दिया था कि वह अब कालेज में नहीं पढ़ेगा।

जयदेव के लिए अब एम० ए० की डिग्री का कुछ लाभ भी न था। राजनैतिक अपराध में जेल काटने के बाद अंग्रेज सरकार की नौकरी के लिए हाथ फैलाना उसे अपमान जान पड़ता था। ऐसी नौकरी की उसे आशा भी क्या थी ? उसने अपने पाँव पर खड़े होने का निश्चय कर लिया था। सोच रहा था, किसी पत्र में नौकरी कर लेगा।

जयदेव ने अपनी अनुपस्थिति में तारा की सगाई हो जाने की बात भी सुनी थी। शीलो आकर यह समाचार भी दे गयी थी। सोमराज बी० ए० की परीक्षा में फेल हो गया था। पिछले वर्ष कालेज में हाजिरी कम रहने के कारण उसने परीक्षा ही नहीं दी थी। इस सम्बन्ध में घर में चर्चा चलती तो तारा का मुँह लटक जाता था। वह छिप कर आँसू बहा लेती थी। माँ और मास्टर जी का विचार था कि तारा के भावी पति के बी० ए० पास कर लेने की कोई आशा नहीं तो तारा का बी० ए० पास कर लेना क्या शोभा देगा ?

जयदेव 'सनातन धर्म कालेज' के विद्यार्थी सोमराज साहनी के विषय में थोड़ा-बहुत पहले भी सुन चुका था। वह इस सगाई को तारा के प्रति अन्याय समझ रहा था। जयदेव ने तारा के प्रति अन्याय का प्रतिकार करने के लिए उसे बी० ए० प्रथम वर्ष में भरती करवा देने का निश्चय कर लिया था।

जयदेव ने तारा को कालेज में भरती कराने का निश्चय किया था तो उसका खर्च मास्टर जी पर डालना उसे उचित न जान पड़ा। इतना रुपया कमा सकने का आत्म-विश्वास उसे था परन्तु कालेज में दाखिले के लिए रुपया कमा सकने की प्रतीक्षा तो नहीं की जा सकती थी। रुपया उधार माँगने के लिए वह अपने सहपाठी कालीचरण कौल के यहाँ पहुँचा। आशा थी कौल एम० ए० पास कर अवश्य अच्छी नौकरी पर लग गया होगा। कौल सहृदय, प्रतिभावान और परिश्रमी था। सदा पहले डिवीजन में पास होता रहा था।

कालीचरन बहुत उदास था। वह नौ मास से जाने कितनी दरख्वास्तें सभी जगह दे चुका था। डाक्टर राधेबिहारी, सेठ गोपालशाह, बैरिस्टर चावला, रायबहादुर दीनानाथ सभी से सिफारिशी पत्र ले चुका था, परन्तु सब विफल रहा था।

कौल ने कटुता से शिकायत की--"युनियनिस्ट मिनिस्टरी में हम लोगों के लिए नौकरियाँ कहाँ हैं ? मुसलमान और जाट को थर्ड डिवीजन में बी० ए० पास करके भी नौकरी मिल सकती है। हिन्दू के लिए एम० ए० फर्स्ट डिवीजन करके भी जगह नहीं। पुरी को दूसरे मित्रों से भी आर्थिक कठिनाई की बातें सुनने को मिलीं।

जयदेव ने मास्टर जी से भी डाक्टर प्रोफेसर प्राणनाथ की प्रशंसा सुनी थी। वे सदा ही प्राणनाथ, पी० एच० डी० की प्रशंसा करते रहते थे। उन्हें गर्व था कि डाक्टर को बचपन में उन्होंने आठ वर्ष तक पढ़ाया था। मास्टर जी पिछले पचीस वर्ष से सेठ गोपालशाह के परिवार में बच्चों के ट्यूटर चले आ रहे थे। आरम्भ में वे

आठ रुपये मासिक वेतन पाते थे। पाँच वर्ष तक उनकी ट्यूशन आठ रुपये मासिक ही रही थी। फिर पाँच वर्ष तक दस रुपया मासिक रही। तब से प्रति वर्ष एक रुपया तरक्की होती आ रही थी। सेठ गोपालशाह की हवेली में विद्या का यही मूल्य था, परन्तु डाक्टर प्राणनाथ की बात दूसरी थी।

डाक्टर प्राण मास्टर जी का बहुत आदर करता था। जयदेव के गिरफ्तार होने पर वह अपने पद और सरकारी नौकरी की चिन्ता न करके सहानुभूति प्रकट करने मास्टर जी के यहाँ गया था और मास्टर जी से प्रार्थना कर आया था कि मामले-मुकदमें में यदि रुपये-पैसे की कठिनाई हो तो उसे याद करें।

प्राणनाथ आक्सफोर्ड से राष्ट्रीय अर्थशास्त्र में पी० एच० डी० की उपाधि लेकर १६१६ में लौटा था। उसके कुछ लेख 'ब्रिटिश इकोनामिस्ट' पत्र में उसके भारत लौटने से पहले ही प्रकाशित हो चुके थे। बड़े-बड़े ब्रिटिश अर्थशास्त्रियों ने उसे 'जीनियस' कह कर उसकी सूझ की, प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों 'टोरी' और 'डंकिन' आदि से तुलना की थी। पंजाब यूनिवर्सिटी ने उसे यूनिवर्सिटी प्रोफेसर नियुक्त कर लिया था। डाक्टर प्राण आयु में जयदेव से केवल छः-सात वर्ष ही बड़ा था परन्तु जयदेव एम० ए० की तैयारी के लिए उसके लेक्चर सुनने जाता था। युद्ध-काल में पंजाब के गवर्नर ने प्रोफ़ेसर प्राण को आर्थिक विषयों के लिए सरकारी परामर्शदाता नियुक्त कर दिया था। तब से वह उस पद पर काम भी कर रहा था।

जयदेव और रास्ता न देखकर डाक्टर प्राण के यहाँ पहुँचा। प्राण ने जयदेव की पत्रों में प्रकाशित कहानियों की सराहना करके उससे जेल के अनुभवों के विषय में बात की।

डाक्टर प्राण ने जयदेव को याद दिलाया—"पुरी, याद है तुम्हें, मैंने कहा था कि जर्मनी की अर्थ-व्यवस्था युद्ध का बोझ देर तक नहीं सम्भाल सकेगी···।"

युनिवर्सिटी में प्रायः सब लोग जानते थे कि डाक्टर प्राण कम्युनिस्टों के संगठन से सम्पर्क नहीं रखता था परन्तु विचारों से मार्क्सवादी और उग्र परिवर्तन का समर्थक था। प्राण कम्युनिस्टों को भी रूढ़िवादी कह कर उनकी आलोचना करता रहता था।

बातचीत के पश्चात डाक्टर प्राण ने पुरी से पूछा—"कहो, इस समय कैसे आये ? मेरे लायक कोई काम हो तो बताओ !"

"डाक्टर साहब, मुझे एक सौ रुपया उधार चाहिए।" जयदेव ने सकुचाते हुए कह दिया।

प्राण ने पल भर सोचा। आलमारी से दस-दस के दस नोट लेकर जयदेव के हाथ में दे दिये और बोला—"आशा है किसी झगड़े में पड़ने के लिए रुपया नहीं चाहिए।"

संकेत स्पष्ट था। जयदेव एक बार १६४२ में स्वतंत्रता के लिए क्रांति के गुप्त कार्यों के लिए सहायता माँगने डाक्टर प्राण के पास आया था। उसे विश्वास था कि डाक्टर सहायता नहीं देगा तो भी उसे पुलिस के हाथ नहीं देगा। जयदेव ने अपने प्रति शंका दूर कर देने के लिए स्पष्ट कह दिया—"रुपया बहिन को बी० ए० में

दाखिल करवाने के लिए ले रहा हूँ। जब मेरी रचनाओं का मिलेगा वापिस कर दूँगा।"

"हूँ", कह कर प्राण ने एक सिगरेट ले लिया और बोला, "तुम्हारी बहिन तारा इतनी बड़ी हो गई ?"

"जी, उसने फर्स्ट डिवीजन में इण्टर पास किया है।"

"गुड। देखने में तेज लगती थी। तुम्हारे घर पर उसे दो बार देखा है। उसे जरूर पढ़ाना चाहिए परन्तु वह अपने पाँव पर क्यों न खड़ी हो ! गर्मी की तीन महीने की छुट्टियाँ आ रही हैं। कोई ट्यूशन क्यों न कर ले ! इससे लड़की में स्वावलम्बन का भाव भी आयेगा।"

जयदेव के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना प्राण ने कहा--"उसे यहाँ ले आना। इस घर में मेरे भतीजे-भतीजियाँ तीन और चार वर्ष के हैं। छुट्टियों में तारा उन्हें संध्या समय एक डेढ़ घंटे पढ़ा सकेगी। कालेज में उसे और भी तो खर्च चाहिये।" प्राण अंग्रेजी में बोला, "साथियों की भाँति पहन-ओढ़ न सकें या और खर्च न निभा सकें तो हीन भाव आने लगता है। उसका प्रभाव अच्छा नहीं होता।"

जयदेव अपने अनुभव से इन्कार न कर सकता था।

●

मास्टर रामलुभाया स्कूल की नौकरी और ट्यूशन के चक्कर में पिसे जा रहे थे। जयदेव अपने पाँव पर खड़े हो सकने के लिए कुछ नहीं कर पा रहा था। यह परिस्थिति उसके लिए अपमान और उत्कट मानसिक पीड़ा का कारण बन रही थी।

जयदेव पुरी जेल जाने से पहले कालेज में पढ़ते समय कभी-कभी मास्टर जी के अस्वस्थ या थके होने पर उनकी जगह जाकर ट्यूशन पढ़ा आता था। पिछले दो मास से मास्टर जी को एक और ट्यूशन मिल गयी थी। समय और सामर्थ्य न होने पर भी वे ट्यूशन से इंकार नहीं कर सकते थे, चाहे सिर में दरद हो जाये या स्कूल में ऊँघना ही पड़े।

लाला बधावामल नारंग का लड़का जगदीशचन्द मास्टर जी का विद्यार्थी रहा था। जगदीश पढ़ने में कुछ ऐसा वैसा ही ध्यान देता था इसलिए नारंग जी प्रायः मास्टर जी की ट्यूशन लगाये रहते थे। जगदीश जैसे-तैसे बी० ए० पास करके घर की मशीनों की दुकान में काम करने लग गया था। जगदीश की बहिन उर्मिला मैट्रिक की परीक्षा में फेल होकर स्कूल छोड़ बैठी थी। उर्मिला के पिता, विशेष कर माता चाहती थी कि लड़की किसी तरह मैट्रिक पास कर ले। जमाना ही ऐसा आ गया था कि लड़कियों की सगाई या ब्याह अच्छे घर में करना चाहो तो लोग लड़की की पढ़ाई की बात पहले पूछते थे। माँ अपनी बेटी के चंचल और शोख स्वभाव से परिचित थी। उसकी ट्यूशन के लिए विश्वासी आदमी को ही रखा जा सकता था। नारंग जी स्वयं मास्टर जी से अनुरोध करने आये थे।

बधावामल जी तीन बरस से 'खूहतिलियां' का मुहल्ला छोड़ कर मंसों गली में जा बसे थे। मंसो गली मास्टर जी को दूर पड़ती थी। ताँगे के खर्चे का विचार

करके नारंग जी पच्चीस रुपया महीना देने के लिए तैयार हो गये थे। मास्टरजी स्कूल में आठवीं श्रेणी को ही पढ़ाते थे परन्तु ट्यूशन में वे अँग्रेजी छोड़कर और सब विषय मैट्रिक के लिए भी पढ़ा देते थे। नारंग जी को अंग्रेजी के लिए दूसरे ट्यूटर की खोज थी।

जयदेव को जेल से छूटे दो सप्ताह ही हुए थे कि मास्टर जी को बुखार ने जकड़ लिया। बुखार तीन दिन रहा।

दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह की ट्यूशनों पर दो-तीन दिन न जा सकने की कोई बात न थी परन्तु नारंग जी के यहाँ न जा सकने से मास्टर जी परेशान थे। उर्मिला को नारंग जी सितम्बर में ही परीक्षा में बैठाना चाहते थे।

मास्टर जी जगदीश की ट्यूशन कर रहे थे तो जयदेव कई बार पिता के स्थान पर पढ़ा आता था। नारंग जी जानते थे कि मास्टर जी का लड़का बहुत योग्य है। पिता के अनुरोध से जयदेव संध्या समय रतन से साइकिल माँग कर नारंग जी के घर उर्मिला को पढ़ाने चला गया था।

जयदेव ने नारंग जी, उर्मिला की माँ और जगदीश सभी लोगों में अपनी देश-भक्ति और साहित्यिक योग्यता के प्रति आदर का भाव पाया। उन लोगों ने उस के जेल जीवन के अनुभव भी पूछे और स्नेह से जल-पान कराया। पुरी सप्ताह भर उर्मिला को पढ़ाने जाता रहा। जयदेव बहुत निष्ठा से पढ़ाता था।

उर्मिला की माँ भी जयदेव को जगदीश की तरह ही काका सम्बोधन करती थी। उर्मिला के पिता का स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा था। जून का महीना लग गया था। वे लोग गरमी के दो-तीन मास 'मरी' पहाड़ पर बिताना चाहते थे। लड़की की पढ़ाई का भी खयाल था। उर्मिला की माँ ने सुझाया, तुम जेल में रह कर आये हो, बहुत कष्ट पाया है। तुम्हें भी कुछ आराम मिलना चाहिए। मास्टर जी को तो अभी स्कूल से छुट्टी भी नहीं है। तुम उर्मिला को अंग्रेजी भी पढ़ा सकोगे। हमारे साथ ही रहना-खाना हो जायगा। हमारे लिए तुम में और जग्गी में क्या फरक है! हमारी मरी की कोठी में काफी जगह है। हम पचास रूपया महीना भी दे देंगे। कभी हुआ, छोटे काको को भी देख लेना कि क्या पढ़ रहा है।

पहाड़ की सैर और कुछ पैसा भी हाथ आ जाने का विचार जयदेव को बुरा नहीं लगा। लाहौर में उसे सभी लोगों से मिलने-जुलने के अतिरिक्त करना ही क्या था? पुरी ने सोचा, मरी के शीतल-शांत वातावरण में रहकर वह अपनी रचनायें पत्र-पत्रिकाओं में भेजता रहेगा। पिता जी और माँ ने भी इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया। उन्हें क्या आपत्ति होती! जयदेव अपनी लिखी चीजें साथ लेकर नारंग जी के साथ मरी चला गया।

उर्मिला की माँ जानती थी कि बेटी का मन पढ़ने में नहीं लगता था। उस का सुकुमार गुड़िया-सा शरीर सोलह का भी नहीं जँचता था पर अठारह की हो रही थी। विवाह हो जाना ही ठीक था। परन्तु अपनी रुचि पढ़ने-लिखने में होने के कारण सगाई से पहले लड़की को मैट्रिक जरूर करवा देना चाहती थी। पुरी से वे

नितान्त अपनेपन का व्यवहार करती थीं। कोठी में बरामदे के साथ अच्छा कमरा उसे रहने को दिया था। घूमने-फिरने जातीं तो उसे भी चलने के लिए कहतीं। पुरी को समझा दिया था कि उर्मिला पढ़ने में मन नहीं लगाती। उसे तो विशेष ध्यान देकर, जरा सख्ती से ही पढ़ाया जा सकता है।

पुरी साधारणतः उर्मिला से निःसंकोच और आत्मीयता का व्यवहार करता था परन्तु पढ़ाने के समय गम्भीर रहता था। पुरी मस्तिष्क में तीव्र बुद्धि और प्रतिभा पाकर भी कद में कुछ छोटा ही रह गया था। चौदह-पन्द्रह की आयु तक भी वह आधे टिकट में सफ़र करने का लाभ उठा सकता था। उसका चेहरा अब भी लड़कों की तरह कोमल था। अपनी बहिन से वह आध इंच से अधिक ऊँचा न हो सका था। बहिन-भाई साथ चलते तो बराबर कद के लगते। पुरी को सत्रह-अठारह की आयु में अपने कद की न्यूनता की चेतना हुई तो वह सदा कन्धे ताने और रीढ़ अकड़ा कर चलने लगा। वह अभ्यास उसकी प्रकृति बन गया था। देखने में वह अपनी आयु से कम लगता था। लड़का ही न समझ लिया जाने के लिए उस ने होंठों पर लकीर सी, छटी हुई मूँछें भी रख ली थीं। उर्मिला को पढ़ाने के लिए वह खाने के कमरे की मेज पर बैठता तो अपने कद की छोटाई के कारण, गुरुत्व कम न हो जाने देने के लिए रीढ़ को अकड़ाये रहता था।

उर्मिला पुरी को 'मास्टरजी' सम्बोधन करती थी परन्तु साथ रहने से झिझक मिटकर, सम्बोधन में बराबरी और निस्संकोच का ध्वनि आ गई थी। पुरी ने देखा कि 'बे जी' (उर्मिला की माँ) ने ठीक ही कहा था। वह पढ़ाई आरम्भ कर देता परन्तु उर्मिला की बात ही समाप्त होने में न आती। वह पढ़ा रहा होता तो भी उर्मिला कोई दूसरी बात छेड़ देती थी। स्कूल की किसी लड़की का किस्सा या कोई मजाक उसे याद आ जाता या कोई ऊटपटाँग प्रश्न।

पुरी टोक देता—"पहले पढ़ लो।" या "यह पढ़ने का समय है। बातें बाद में होंगी।"

उर्मिला हँस देती—"अच्छा इतना बता दो।" या "नहीं पहले सुन लो।"

पुरी के अनुशासन के आग्रह पर उर्मिला हँसी से बिखर जाती।

आकर्षक, चपल युवा लड़की से विनोद और खेल के अवसर की उपेक्षा कर देने के लिए पुरी को कम आतम-दमन न करना पड़ता, परन्तु पुरी को अपने पिता और अपने प्रति नारंग-परिवार के विश्वास और आदर का भी ध्यान था।

उर्मिला के स्वभाव की उर्मि की सी चपलता में उसके रूप की छवि भी योग देती थी। नख-शिख के अनुपातों से उसे रूपवती नहीं कहा जा सकता था। चेहरा गोल, गर्दन कुछ छोटी, नाक भी बखान के योग्य नहीं परन्तु उजला, सुनहरा, गोरा रंग, उड़े-उड़े से कोमल भूरे-सुनहरे केश और बड़ी-बड़ी कौड़ियों जैसी आँखों से आँखें मिल जाने पर दृष्टि सहसा न हट पाती। उस के आकर्षण के मोह में रूप की परख की चेतना रह नहीं पाती थी। तिस पर उसका बढ़-बढ़ कर बोलना।

पुरी अपनी स्थिति के प्रति सचेत था फिर भी उर्मिला की आँखों में छलक

आये रस में आँखें भरे बिना न रह पाता। ऐसा केवल उर्मिला के साथ बाजार जाने पर या बे जी की पीठ पीछे आँखें चार हो जाने पर ही होता। पढ़ाई के समय वह बिलकुल गम्भीर रहता था।

उर्मिला सदैव पढ़ाई के समय भी कोई न कोई चुहल करती रहती थी। एक दिन कुछ अधिक बढ़ गई और उस समय की सारी बातें बे जी ने सुन लीं।

उर्मिला के पर्दे की ओट होते ही पुरी को 'चट-पट, धम-धप' मार पड़ जाने की आहट मिली। वह उठ कर अपने कमरे में गया। विक्षिप्त की तरह अपने कमरे में इधर से उधर घूमता रहा। क्या करे? कभी खाट पर लेट जाता, कभी बैठ कर सोचने लगता। फिर बाजार की ओर चला गया। पुरी चार बजे लौटा तो निश्चय कर चुका था और आते ही वह अपना संक्षिप्त सामान बाँधने लगा। बाजार में 'एजेंसी' से रावलपिण्डी जाने वाली बस छूटने का समय भी पूछ आया था।

पुरी अपना सामान सँभाल रहा था तो प्रवीण ने आकर कहा--"मास्टर जी, बे जी चाय के लिए बुला रही हैं।" लड़के ने धीमे से बताया, "बहिन को खूब मार पड़ी है। बे जी ने पर्दे के डण्डे से मारा है। बाबू जी से मत कहना।" प्रवीण के स्वर में दरद था।

बे जी बहुत उदास थीं। पुरी के सामने चाय और कुछ मीठा नमकीन रख कर बोलीं--"काका जी, दोपहर कहाँ चले गये थे। खाना नहीं खाया?" वे अपने स्वर में पीड़ा का पुट छिपा नहीं पा रही थीं।

पुरी को ऐसी आशा तो कभी नहीं थी। वह कुछ पल सिर झुकाये चुप रह गया और अपराध की स्वीकृति और क्षमा-याचना के स्वर में बोला--"मैं आज साँझ लाहौर जा रहा हूँ।"

"क्यों काका जी?" बे जी ने पूछा, "तुम्हें तो मैंने कुछ नहीं कहा, तुम्हें कोई दोष नहीं दिया। हमारा अपना दोष है, किस्मत है। बाबू जी से कुछ न कहना। उन्हें गुस्सा आता है या सदमा लगता है तो दिल की हरकत बढ़ जाती है।"

पुरी ने दाँत दबा कर आँसू रोक लिए।

पुरी तीन दिन उर्मिला को देख न सका। उस की पीठ की झलक मिली भी तो वह आँचल में सिर मुँह लपेटे थी। चौथे दिन प्रवीण ने आकर कहा--"मास्टर जी, बहिन पढ़ने के लिए बैठी है।"

पुरी ने उर्मिला को सरसरी निगाह से देख लिया। उसके माथे पर सुनहले केशों के नीचे गोरे रंग पर नीला दाग़ झलक रहा था। बायें हाथ पर भी सफेद धज्जी बँधी हुई थी। पुरी ने सिर झुकाये कहा--"वही पोयम फिर पढ़ो।"

"बड़े बेदर्द हो, देखोगे भी नहीं?" पुरी ने सुना।

पुरी स्थिति को सम्भाल लेने का निश्चय किये हुए था। सिर झुकाये ही कड़ाई से बोला--"हड्डियाँ टूटने में अभी कुछ कसर बाकी है?"

"मार मुझे पड़ी, डर तुम रहे हो?"

"तो फिर?" पुरी ने आँखें उठायीं।

"मार खा ली है तो अब डर क्या ? और मार लें ! क्या मुफ्त में मार खायी है ?"

पुरी ने आँखें मूँदे सोचा। रक्त खौल जाने की गरमी से उसके मुख में तिक्तता भर गयी थी। वह सिर झुकाये पोयम का अन्वय, अर्थ और भाव बताने लगा।

"नहीं सुनूँगी !...नहीं पढ़ूँगी !...नहीं सुनूँगी !" उर्मिला पुरी को टोकती जा रही थी।

पुरी उठ कर अपने कमरे में चला गया।

दोपहर से कुछ पहले पुरी के कमरे के किवाड़ खटके। बे जी भीतर आयीं। उनकी आँखें मली जाने से भारी हो गयी थीं। पुरी की ओर दस-दस के पाँच नोट बढ़ा कर बोलीं—"तुम्हारा देना है।" उन्होंने एक और नोट देकर कहा, "यह किराया है।"

बे जी लौटी जा रही थीं। पुरी ने लज्जा से भारी स्वर में कहा—"इसकी कोई आवश्यकता नहीं। मैं आप की कोई सेवा नहीं कर सका। आपको केवल परेशानी हुई।"

"यह कैसे हो सकता है।" बे जी ने लौट कर साड़ी के खूँट से आँखें पोंछते हुए कहा, "तुम्हें बुला कर लाये थे, शर्मिंदा हैं। अपना पैसा ही खोटा है तो क्या करें ! काका जी, बात को अपने तक ही रखना।"

पुरी मरी से अकस्मात लाहौर लौट आया तो परिवार के सब लोग विस्मित थे। गली में प्रश्नों की झड़ी लग गयी। पुरी जितना मौन था, भीतर उतना ही क्षुब्ध। मन में उर्मिला की याद प्रतिक्षण बनी रहती, क्या यह मेरी कापुरुषता नहीं थी ? कितनी सुन्दर है। हमारा विवाह नहीं हो सकता ? बे जी को तो एतराज न होगा ! उसका प्रेम कितना तन्मय है ?......नौकर होकर क्या प्रेम करता ?...मेरे लिए विवाह का मतलब केवल शारीरिक सम्बन्ध नहीं है। वह लड़की तो प्रबल शारीरिक आकर्षण के अतिरिक्त और कुछ है नहीं। कैसे गले पड़ गयी ?

पुरी को अपने सफल जीवन की कल्पना में अपने बौद्धिक कलात्मक जीवन की उचित संगिनी के विषय में की हुयी कल्पनायें याद आने लगतीं। सोचता, दलदल में फँस जाने से बच ही गया......।

३

जयदेव पुरी जेल में माँज-सँवार कर तैयार की हुयी अपनी कहानियों को पत्रों में जहाँ-तहाँ प्रकाशित करवा रहा था। 'पैरोकार' और 'निशात' के साप्ताहिक अंकों में उसकी कहानियाँ प्रकाशित हुई थीं। उसे उदीयमान लेखक के रूप में तो बहुत से लोग जानते थे परन्तु उन चार कहानियों की विशेष चर्चा और प्रशंसा हुयी। इस

प्रशंसा के नशे में पुरी पेट में बेरोजगारी का पोल रहने पर भी, अभ्यास से अकड़ी रहने वाली अपनी रीढ़ पर गर्दन को भी अकड़ा कर चलने लगा।

'पैरोकार' के सम्पादक ने उसकी कहानी के शीर्षक के नीचे फारसी बहुल उर्दू में जो परिचायक टिप्पणी लिखी थी उसका भाव था—"हमारे पत्र को गौरव है कि हम उदीयमान कलाकारों में अग्रणी, मानव-प्रकृति के अनुपम चित्रकार, कथा-शिल्पी श्री जय पुरी की कहानी अपने पाठकों के मनोविहार के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं। जय पुरी नवयुवक हैं परन्तु उनकी कलात्मक प्रौढ़ता विश्व-साहित्य को देदीप्यमान कर रही है...आदि-आदि।

पत्रों के कार्यालयों के लोग जय पुरी को खोज-खोज कर सम्पादकों की ओर से कहानियों, भावपूर्ण गद्यों और हास्य-रस के लेखों के लिए अनुरोध करने आते थे परंतु इस अनुरोध में कहानियों के पारिश्रमिक की कोई चर्चा न होती थी। मानो वे कला की चर्चा में कुछ रूपयों की बात लाकर महान् कलाकार का अपमान न करना चाहते हों, परन्तु पुरी को अपने परिवार की आवश्यकता के लिए रूपया न कमा पाने के अपमान की वेदना बींधे दे रही थी।

पुरी सोचता—इस कला का मूल्य यह है। इस कला की रचना के लिए मेरे पास बैठने का स्थान और सुविधा से लिख पाने के लिए मेज-कुर्सी भी नहीं। श्रम से जर्जर, निरन्तर श्रम करते पिता के सामने मैं बेकार बैठा हूँ। मेरी माँ घर की सेवा की थकावट से चूर और झुँझलाहट से बौखलाई रहती हैं। बहिनें एक-एक धुले कपड़े की चिन्ता अपनी त्वचा से अधिक करने के लिए विवश हैं। मैं स्वयं कहीं जाने के लिए साफ कमीज-पतलून भी नहीं पा सकता...। पुरी ने कई बार सोचा, किसी पत्र के कार्यालय में जाकर नौकरी के लिए बात करे, उसे कौन इन्कार करेगा। परन्तु इतनी प्रशंसा और सराहना पाकर उसका आत्माभिमान दूसरों से निमंत्रण की प्रतीक्षा करना चाहता था। तब तक वह क्या करे!

पुरी 'अदायरा मुनव्वर' (मुनव्वर प्रकाशन) से एक उपन्यास अनुवाद करने के लिए ले आया था। उपन्यास के कुछ अंश सप्ताह भर में ही उलथा करके वह पारिश्रमिक की आशा से गया परन्तु प्रकाशक को पुस्तक प्रकाशित कर डालने की इतनी उतावली न थी।

'पैरोकार' का एक उप-सम्पादक लेखराम शर्मा पुरी का पुराना मित्र था और उसकी समस्या से भी परिचित था। शर्मा 'पैरोकार' की नौकरी के अतिरिक्त कभी-कभी 'नया हिन्द पब्लिकेशन' के लिए अनुवाद या कुछ दूसरा काम भी करता रहता था। उसने पुरी को सुझाव दिया—'नया हिन्द' के पंडित गिरधारी लाल जी से भी क्यों नहीं मिल लेते? वहाँ एक ट्यूशन का भी चांस है। तुम तो हिन्दी खूब जानते हो।

'नया हिन्द पब्लिकेशन' के मालिक पंडित गिरधारीलाल की मँझली लड़की कनक को एम० ए० के प्रथम वर्ष में पढ़ते समय हिन्दी की परीक्षा देने का चाव हो आया था। उन दिनों पंजाब के हिन्दुओं में, विशेष कर स्त्रियों में हिन्दी की ओर प्रबल

बहाव आ गया था। पुरी ने भी एम० ए० प्रथम वर्ष में पढ़ते समय विशारद की परीक्षा दे डाली थी।

कनक १९४२ की राजनीति में भाग लेने वाली कालेज की लड़कियों में थी। पंडित गिरधारीलाल जी स्वयं पुराने देशभक्त और उदार विचारों के थे। उनकी लड़की तत्कालीन लाहौर के समाज में भी साड़ी पहन सकती थी। पिता के विचारों के प्रभाव से कनक की सहानुभूति स्टूडेन्ट कांग्रेस के प्रति थी। सन् १९४२ के आन्दोलन में वह प्रायः सभाओं और जुलूसों में सम्मिलित होती थी। महीन खद्दर की सफेद साड़ी पहने उसका सलोना चेहरा बहुत लोगों की दृष्टियों को खींचता था। जयदेव पुरी ने भी उसे देखा था परन्तु बातचीत नहीं हुई थी।

पंडित जी उर्दू, अंग्रेजी ही जानते थे। उन्हें साहित्य में रुचि थी, बल्कि लेखक बन सकने के प्रयत्न में ही प्रकाशन के धंधे में आ गये थे। कनक को बचपन में उन्होंने उर्दू ही सिखायी थी। उसने स्कूल में हिन्दी भी पढ़ी थी परन्तु अधिक झुकाव कनक का उर्दू की ही ओर रहा था। वह अंग्रेजी साहित्य में एम० ए० पास करके उर्दू में 'मुंशी-फाजिल' परीक्षा देना चाहती थी परन्तु राष्ट्रीयता की भावना से उसने हिन्दी-विशारद की परीक्षा देने का निश्चय कर लिया।

पुरी पंडित गिरधारीलाल का संदेश पाकर कनक के साहित्यक अध्ययन, विशेषतः हिन्दी की पढ़ाई के सम्बन्ध में परामर्श देने गया था। कनक ने विद्यार्थी के रूप में जयदेव पुरी को गुरु मान कर उसका स्वागत विशेष विनय और आदर से किया था। वह जयदेव की प्रकाशित कहानियाँ और कुछ लेख भी पढ़ चुकी थी। दो कहानियाँ उसने अपने साहित्य-प्रेमी पिता को भी पढ़ कर सुनाई थीं।

कनक ने अपने जीजा नैयर को जयदेव का परिचय ऐसे दिया, माना जयदेव से मिल पाना नैयर का सौभाग्य हो। नैयर हाईकोर्ट में प्रैक्टिस करता था और माडल टाउन में अपने बंगले में रहता था।

पंडित गिरधारीलाल जी ने जय पुरी जैसे साहित्यिक के समय के मूल्य को समझने के कारण संकोच से बात को घुमा-फिरा कर अनुरोध किया। सप्ताह में तीन दिन या प्रतिदिन कुछ समय कनक की सहायता के लिए दे सकेगा? अपने समय के मूल्य का ख्याल कर, वह अपनी बहिन के समान लड़की को साहित्यिक विकास में सहायता देने के लिए, कम से कम क्या पारिश्रमिक स्वीकार कर सकेगा?

कनक से कुछ ही समय बात करने के बाद पुरी को उसके समीप वेतन पाने वाले की स्थिति में बैठने का विचार अच्छा न लगा। वेतन लेकर उर्मिला को पढ़ाने का अनुभव भी अभी याद में ताजा था। आर्थिक कठिनाई का विचार आत्म-सम्मान की भावना में डूब गया। पुरी ने कभी-कभी आकर कनक को पढ़ा देना इस शर्त पर स्वीकार किया कि पारिश्रमिक का प्रश्न न उठाया जाय।

पुरी लगभग प्रति दूसरे दिन संध्या समय कनक को पढ़ाने के लिए ग्वाल-मंडी जाने लगा। साहित्य और राजनीति दोनों ही क्षेत्रों में पंडित जी का आदर था। पुरी को उस सम्मानित परिवार में आ-जा सकने का भी संतोष था। पुरी के मन में

सदा एक सतर्कता बनी रहती कि उसकी आर्थिक कठिनाई पंडित जी के परिवार और कनक के सम्मुख किसी प्रकार प्रकट न हो। कनक के मकान पर जाते समय वह अपने अच्छे से अच्छे कपड़े पहने रहता था। अपनी सबसे अच्छी कमीज और पतलून उसने वहाँ जाने के लिए ही रख ली थी। जूतों पर पालिश का ध्यान भी रखता था।

पुरी ने कनक को दो सप्ताह ही पढ़ाया था कि संध्या समय ग्वालमंडी जाने के समय की प्रतीक्षा उसके मन में दिन भर बनी रहने लगी। उर्मिला के व्यवहार से पुरी के मन में लड़कियों के प्रति जो विरक्ति अनुभव हुई थी उसे कनक की प्रतिभा और संयमित सहज व्यवहार ने पुरी के मन से ऐसे दूर कर दिया जैसे मई-जून में झुलसे हुए मैदान की विरूपता को सावन-भादों की वर्षा दूर कर देती है। यह नहीं था कि उससे पूर्व पुरी किसी लड़की के रूप-लावण्य के प्रति आकर्षित हुआ ही नहीं था परन्तु कनक के सामीप्य से वे ओछी स्मृतियाँ ऐसे धुल गईं, जैसे सूर्योदय हो जाने पर ऊषा की धुँधलका लोप हो जाता है।

पुरी को जेल से छूटे दो मास हो गये थे। उसकी छः कहानियाँ पत्रों में छप चुकी थीं। चारों ओर प्रशंसा थी। सम्पादकों की ओर से और कहानियों के लिए अनुरोध आते थे परन्तु नौकरी के लिए कोई संवाद न आता। पुरी सोचता, कब तक निमंत्रण की प्रतीक्षा करता रहेगा। कनक के परिवार के सम्मुख हीनता से उसे अपने परिवार का दैन्य और भी अधिक खलने लगा।

पुरी ने विवश होकर अपने मकान के सामने रहने वाले डाक्टर प्रभुदयाल के सम्मुख अपनी समस्या रखी। डाक्टर प्रभुदयाल जयदेव के जेल जाने से कुछ समय पूर्व भोलापांधे की गली में आया था। उसने १९४२ में एम० बी० बी० एस० की परीक्षा पास कर ली थी। प्रभुदयाल चाहता तो युद्ध के समय सेना में सुविधा से अच्छी नौकरी पा सकता था परन्तु राष्ट्रीय भावना के कारण वह अपनी स्वतंत्र प्रैक्टिस जमाने की चिन्ता में था। कांग्रेस के काम में भी भाग लेता था और डाक्टर राधेविहारी के सहायक के रूप में भी काम करता था। वह डाक्टर साहब की ओर से नये चुनावों के काम में भी योग दे रहा था।

डाक्टर साहब ने युद्ध के समय मकानों की तंगी के जमाने में भी रेंट-कंट्रोल अफसर को पत्र लिख कर डाक्टर प्रभुदयाल को भोलापांधे की गली में अच्छा और सस्ता मकान दिलवा दिया था। डाक्टर कांग्रेस के प्रमुख नेता थे और असेम्बली के प्रभावशाली सदस्यों में थे। खिजर हयात का मंत्रिमण्डल भी उनकी बात का आदर करता था। हिन्दू जगत में तो डाक्टर की राय आदेश ही समझी जाती थी।

पुरी डाक्टर प्रभुदयाल के साथ डाक्टर राधेविहारी के यहाँ गया। प्रभुदयाल ने जयदेव की देश और कांग्रेस के प्रति भक्ति और उसके जेल जाने की चर्चा की। उसकी साहित्यिक प्रतिभा का बखान करके उसके परिवार की आर्थिक अवस्था के प्रति चिन्ता प्रकट की। डाक्टर राधेविहारी ने सुना और आश्वासन दिया--सोचेंगे।

डाक्टर प्रभुदयाल पुरी को तीसरी बार दोपहर के एकान्त में डाक्टर राधे-बिहारी के यहाँ ले गया और स्पष्ट ही कहा--जेल जाने से पूर्व यह सोशलिस्टों के

साथ था। चुनाव के समय ऐसे काम के आदमी का अपने साथ ही रहना अच्छा है। दूसरी पार्टी में क्यों जाये···!"

डाक्टर राधेविहारी 'पैरोकार' के डायरेक्टरों के बोर्ड के चेयरमैन थे। उन्होंने तत्काल ही एक पत्र 'पैरोकार' के मुख्य सम्पादक कर्मचन्द जी 'कशिश' के नाम टाइप करवा दिया।

●

जयदेव डाक्टर राधेविहारी का सिफारशी पत्र लेकर 'पैरोकार' के सम्पादक कर्मचन्द जी 'कशिश' के यहाँ पहुँचा। पहले तो सम्पादक जी ने उसको बड़े सत्कार से कुर्सी पर बैठने को कहा, चाय-काफी के बारे में पूछा। परन्तु जब उन्हें पुरी ने सिफारशी पत्र दिखाया तो 'कशिश' जी का व्यवहार परिवर्तित हो गया। उन्होंने एक लम्बा सा भाषण देकर समझाया कि साहित्य और देश की सेवा करना नाकों चने चवाने के बराबर है।

वहाँ इतने में इन्दरनाथ भी आ गया। यह युवक भी उसी कार्यालय में काम करता था। 'कशिश' जी ने उन दोनों का परिचय भी करा दिया। थोड़ी देर बात-चीत के बाद इन्दरनाथ उठा तो पुरी ने भी समझ लिया कि उसे भी उठ जाना चाहिए। कुर्सी पर बैठाये जाते समय वह सम्मानित कलाकार अतिथि था। उठते समय कशिश साहब के अधीन पत्र का एक नौकर। अनुभूति बहुत कटु थी परन्तु जीविका का अवलम्ब हाथ में आ जाने की सान्त्वना ने उसे सह्य बना दिया था।

●

'पैरोकार' में जयदेव पुरी की ड्यूटी एक सप्ताह के लिए दिन में दस से चार तक, दूसरे सप्ताह दोपहर बाद चार से रात के नौ तक और तीसरे सप्ताह रात नौ से दो बजे तक होती थी। पत्रों का काम साधारण मनुष्यों की सुविधानुसार नहीं चल सकता। आवश्यकता के अनुसार पत्रों के सम्पादन और छपाई का समय निश्चित होता है।

नागरिकों की नींद खुलते ही दैनिक-पत्र घटनाओं को अपने-अपने ढंग से सजा-बना कर पाठकों के सामने उपस्थित हो जाते हैं। पत्रकार के काम की विशेषता यह है कि वह अपने व्यक्तित्व को परोक्ष में रख कर मालिकों की इच्छानुसार घटनाओं के वर्णन को रंग देता है। हजारों पाठक उस से प्रभावित होते हैं परन्तु उस से अपरिचित रहते हैं, इसलिए उसकी सुविधा और आराम का प्रश्न नहीं उठता। सहायक सम्पादक प्रेस की मशीनों के लिए मसाला तैयार करने की मशीन होते हैं। पुरी ने इसी जीविका को चुना था और ऐसी ही दिनचर्या उसे अपनानी पड़ी थी। भोजन और शयन के समय पत्र की आवश्यकता के अनुकुल चलते थे। मुख्य सम्पादक बनने की महत्वाकांक्षा पुरी के मन में थी परन्तु वह बहुत दूर की बात थी। वह ग्वालमंडी में कनक के यहाँ कई-कई दिन न जा पाता परन्तु जा सकने का अवसर होने पर जरूर जाता।

पुरी कई दिन की प्रतीक्षा के बाद कनक के यहाँ आता तो आते ही किसी दोहे की उपमा और रूपक की विवेचना में डूब जाना पुरी और कनक के लिए सम्भव न हो पाता। इतने दिन पुरी के न आने की शिकायत भी न करना कनक के लिए कैसे सम्भव होता। पुरी को भी अपने काम के बोझ का कुछ व्योरा देना ही पड़ता था। शनैः-शनैः कनक के सहज निस्संकोच व्यवहार और साहित्य-चर्चा के उत्साह का स्थान उसका आदरपूर्ण मौन लेता जा रहा था। अब वह पहले की तरह खोज-खोज कर छन्दों की विवेचना नहीं करती थी। ध्यान आ जाता, पुरी जी काम से थके हुए होंगे। यदि पिताजी उठ कर चले जाते तो कभी कुछ समय के लिए वे दोनों चुप रह जाते और फिर संकोच होने लगता, वे चुप क्यों बैठे हैं।

जाड़ों के दिन थे। पुरी सप्ताह भर बाद कनक के यहाँ आया तो सूर्यास्त से पूर्व न पहुँच सका। बैठक में पंडित जी सिर पर साफा बाँधे और हाथ में छड़ी लिए, बाहर जाने के लिए तैयार बैठे थे। गिरधारीलाल जी ने 'आओ बरखुर्दार' कह कर ऊँचे स्वर में पुरी का स्वागत किया, उसके स्वास्थ्य के विषय में प्रश्न किये। 'पैरोकार' पत्र की प्रशंसा के व्याज से उसके काम की सराहना की। कनक के लिए बहुत-सी हिन्दी पुस्तकें मँगा देने की सूचना दी।

बैठक की बगल के जीने से कनक के उतरते कदमों की आहट मिली। कनक आयी तो रेशमी साड़ी पहने थी और बाँह पर कोट था, बाहर जाने के लिए तैयारी थी। पुरी से आँखें चार हुईं तो कनक के चेहरे पर हर्ष का गुलाबीपन आकर पलकें उदासी से झुक गयीं। चेहरे पर दुविधा का भाव आ गया। पीछे-पीछे कनक की छोटी बहन कंचन भी साड़ी पर कोट पहने उतर रही थी।

पंडित जी छड़ी फर्श पर टकोरते हुए बोल उठे—"कनक बेटा, पुरी जी आ गये हैं, तुम पढ़ लो। मैं और कंची चड्ढा के यहाँ हो आते हैं। तुम विमला से फिर किसी दिन मिल आना। यौर स्टडी फर्स्ट।" उन्होंने पुरी की ओर देखा, "बरखुर्दार, मैंने ही इसे कह दिया था, हमारे साथ चली चले, पर पढ़ाई सबसे अहम है। वर्क इज आलवेज फर्स्ट।"

"नहीं नहीं, आप तैयार हैं तो हो आइये, मैं कल फिर आ जाऊँगा।" पुरी ने पिता-पुत्री की योजना में बाधक न होने का सौजन्य प्रकट किया।

कनक ने बेबसी में पिता की ओर देखा।

पंडित जी ने तुरन्त निर्णय कर दिया—"नहीं-नहीं बेटा, मिलना-जुलना तो होता ही रहता है। वर्क इज आलवेज फर्स्ट।" वे उठ खड़े हुए। जाते-जाते कह गये—"बेटा, पुरी जी के लिए चाय मँगा ले।" उन्होंने पुरी की ओर देखकर मुस्कराहट से सहानुभूति प्रकट की, "दफतर से थके हुए आ रहे होंगे। आई नो, यू आर वेरी हार्ड वर्किंग।"

कनक अपना कोट सोफा की पीठ पर रख कर पुरी के समीप की कुर्सी पर बैठ गयी। एकान्त ने दोनों को चुप करा दिया। दोनों ही एक दूसरे के बात आरम्भ करने की प्रतीक्षा में थे परन्तु आरम्भ करते नहीं बन रहा था।

"आप इतनी चुप क्यों हैं ?" पुरी ने पूछा।

"नहीं, तो," कनक बोली, "आप कहिये !" दोनों फिर एक दूसरे की उपस्थिति की अनुभूति में चुप रह गये।

कनक को याद आया--"चाय ले जाऊँ ?"

"जल्दी क्या है ?" पुरी ने कहा। उसके अवरुद्ध स्वर ने कनक को और भी कंटकित कर दिया। वह अपनी साड़ी के आँचल के छोर में आँखें गड़ाये कोई एक विशेष धागा खोजने लगी।

कनक को चुप देख पुरी ने पूछा--"चाय की जल्दी है ?"

कनक ने एक पल पुरी की आँखों में देख पलकें झुका कर इन्कार में सिर हिला दिया और उसकी काँपती हुई उँगलियाँ साड़ी के आँचल में फिर तागा खोजने लगीं।

"तुम्हारी आँखें इतनी गुलाबी क्यों हो रही हैं ?" पुरी ने साहस किया, "कोई देखेगा तो क्या कहेगा ?" वह आप के स्थान पर तुम कह गया।

कनक का रोम-रोम सिहर उठा। पुरी से आँखें मिलाने में झिझक अनुभव कर वह बोली--"मेरी आँखें गुलाबी हैं ? अपनी देखिये !" उसकी आँखें फिर झुक गयीं।

पुरी ने जिस बात को सदा मन में दबाये रखने का निश्चय किया था अचेतन रूप से जिह्वा पर आ गई। बोला--"एक बात कहूँ ?"

कनक ने अनुमति में सिर झुकाया।

"नाराज तो नहीं होगी ?"

कनक ने पुरी की आँखों में देखकर नाराज न होने के आश्वासन के लिए इन्कार में सिर हिला दिया।

"प्रतिज्ञा करो।" पुरी ने और अधिक आश्वासन चाहा।

"किस बात की ?" कनक ने साँस के स्वर में पूछा।

"तुम नाराज नहीं होगी !"

"कभी नहीं।"

"वचन दो !"

पुरी ने अपना हाथ बढ़ा दिया।

कनक की आँखें एक बार फिर पुरी की आँखों से मिलीं। चेहरा लाल हुआ। उसने अपना हाथ पुरी के हाथ पर रख दिया। उसकी आँखें झुक गईं।

"हाथ दे रही हो, छुड़ाओगी तो नहीं ?" पुरी कंपित स्वर से पूछ बैठा।

कनक की आँखें पुरी की आँखों में जाकर स्थिर हो गईं..."कभी नहीं।" हृदय की गहराई से उठे श्वास से बोल कर कनक गम्भीर हो गई। अपना हाथ उसने पीछे नहीं खींचा।

इस बीच पुरी ने अपनी आर्थिक दशा बताकर अपने मन का बोझ हल्का कर लिया। कनक भी रुपये-पैसे की भूखी न थी।

उस दिन के बाद वे घर से बाहर भी मिलने लगे। पुरी को अभी तो सौ रूपया मासिक ही पारिश्रमिक मिलता था, परन्तु उसे अपनी सामर्थ्य और अपने भविष्य पर विश्वास था। अब कनक ने भी 'मुंशी फाजिल'' की परीक्षा देने का विचार छोड़ दिया। उसने निश्चय किया कि वह पत्रकारिता सीखकर भविष्य में पुरी के साथ अपना निजी साहित्यिक पत्र निकालना आरम्भ करेगी।

४

पत्र के कार्यालय में अपनी उपयोगिता प्रमाणित करने में जयदेव पुरी को बहुत समय न लगा। उसे टेलीप्रिंटर पर अंग्रजी में आये समाचारों का अनुवाद करने की अपेक्षा टिप्पणी और लेख लिखने का काम दिया जाने लगा। दफ्तर में उसकी सम्मति का भी मूल्य समझा जाने लगा था, इसलिए कशिश जी से कभी छोटे-मोटे मतभेद का अवसर भी आ जाता था।

कशिश जी पुरी की कहानी 'पैरोकार' में छापना चाहते थे, परन्तु पुरी अपनी कहानियाँ दूसरे पत्रों को देता था, क्योंकि वहाँ से उसे पारिश्रमिक मिल जाता था, जब कि 'पैरोकार' से पृथक पारिश्रमिक मिलने की उसे आशा न थी।

एक दिन समाचार आया कि सोमराज साहनी ने परीक्षा भवन में नकल की और उसे एक मुसलमान प्रोफेसर दीनमुहम्मद ने पकड़ लिया। इसी कारण झगड़ा हो गया। पुरी दुविधा में पड़ गया। फिर उसने काफी सोच-समझकर समाचार में कुछ परिवर्तन करके 'पैरोकार' में छाप दिया। जिससे न तो कशिश जी को जवाब देना पड़े और न तारा को सीधा धक्का लगे। यह मामला बहुत बढ़ा। सब के सब पत्र अलग-अलग खबरें देने लगे।

इस घटना से पुरी के माँ-बाप बहुत परेशान हुए। आखिर पुरी ने विश्वस्त सूत्र से पता लगाया कि प्रोफेसर की पदोन्नति करके दूसरी जगह भेज दिया गया है, ताकि यह घटना हिन्दू-मुस्लिम फसाद का रूप धारण न कर ले।

पुरी के माँ-बाप चाहते थे कि तारा की पढ़ाई रोक दी जाए, जब लड़का ही बी० ए० पास नहीं है तो लड़की बी० ए० पास करके क्या करेगी। भागवंती की जेठानी भी आकर उसे समझा गई कि लड़की को बी० ए० पढ़ाना व्यर्थ है। माँ ने तारा से कहा, परन्तु वह पढ़ने की जिद पर अड़ी थी। उसे केवल बड़ा भाई ही समझा सकता था, अतः माँ ने पुरी से बात करने का निश्चय किया। आखिर एक दिन उसे यह मौका मिल ही गया।

पुरी खाना खाने के लिए बैठा तो माँ ने तारा को समीप बुलाकर बात आरम्भ की--''इसे तुम समझाओ। जब ससुराल वाले पढ़ाना नहीं चाहते तो इस पढ़ाई से लाभ क्या ? उन्हें नाराज करके हम कहाँ जायेंगे ?''

तारा दीवार की ओर मुँह किये चुप बैठी रही।

"हो जाने दो नाराज।" पुरी माँ की आशा के विपरीत बोला।

माँ की आँखें विस्मय से फैल गईं। उसने सिर दोनों हाथों में थाम कर समझदार समझे जाने वाले लड़के की ओर देखकर पूछा—"उन लोगों ने सगाई तोड़ दी तो?"

"अच्छा ही है। हम सगाई तोड़ने की चिन्ता से बचेंगे।"

"लड़की की जिन्दगी का क्या बनेगा?" माँ ने पूछा।

"तुम्हें उसकी जिन्दगी भारी हो रही है तो मैं बहिन का बोझ उठा सकता हूँ," पुरी बिगड़ उठा, "कहाँ फर्स्ट डिवीजन में पास होने वाली लड़की, कहाँ इम्तहान में नकल करने वाला…।"

माँ बात न बढ़ाने के लिए उठ गयी। पुरी ने तारा की ओर देखकर अंग्रेजी में कहा—"तुम व्यर्थ चिन्ताओं में घुली जा रही हो। पढ़ने-लिखने में ध्यान दो। हमारे चारों ओर इतने बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे हैं। हमारे माता-पिता की दृष्टि वहाँ तक नहीं पहुँच सकती। विवाह ही तो सब कुछ नहीं है। जब तुम चाहोगी, योग्य लड़की को चाहने वाले युवकों की कमी नहीं होगी।"

तारा ट्यूशन पर जाने के लिए तैयार हो रही थी कि उसे गली में शोर सुनाई दिया। पता चला कि बच्छोवाली गली से हिन्दू रक्षा-कमेटी की ईश्वर कौर जी और ज्ञानदेवी आई हुई हैं। वे दोनों एक मुसलमान फलवाले को डाँट कर भगा रही थीं। फलवाले को भगाकर उन्होंने गली की औरतों को समझाना आरम्भ कर दिया कि कैसे १६ अगस्त को मुसलमानों ने कलकत्ते में हजारों हिन्दुओं को मौत के घाट उतार दिया और मुसलमान कहते हैं पाकिस्तान बनायेंगे। उन्होंने बताया कि मुसलमान बहुत तैयारी कर रहे हैं।

ये बातें हो ही रही थीं, तभी तारा भी नीचे उतर आई थी। उसने भी धीरे से कह दिया कि हमारी असली लड़ाई तो अंग्रेजों से है, मुसलमानों से तो हमारी लड़ाई नहीं है। ईश्वर कौर ने उसे शांत कर दिया और अपनी बातें बताने लगीं।

मुहल्ले की औरतें उनसे सहमत हो गईं। समिति वालों ने बंगाल के हिन्दुओं की सहयता के लिए चन्दा माँगा एवं वहाँ की औरतों के लिए धोतियों की माँग की। समिति की औरतें, मुहल्ले वालों की सहमति एवं सहायता के लिए उनके वचन को पाकर वापस चली गईं। तब तारा भी ट्यूशन पढ़ाने को चल दी।

५

सेठों की हवेली के फाटक के भीतर ड्योढ़ी में दोनों बाजू बरामदे थे। बरामदों में तख्त पड़े थे। तख्तों पर दब कर कड़े हो गये गद्दे थे। गद्दों पर स्याही के दागों की छींट बनी हुई मैली चादरें बिछी रहती थीं। दीवार के साथ बड़े-बड़े तकिये पड़े रहते थे। दोनों मुनीमों के सामने लाल कपड़ों की जिल्द में मढ़ी हुई बहियाँ पड़ी रहती थीं। तारा किसी ओर आँखें उठाये बिना ड्योढ़ी से आँगन में

चली जाती थी। आँगन के दायें-बायें दोनों ओर चौड़े-चौड़े जीने थे। तारा बाईं ओर के जीने से दूसरी मंजिल पर जाती थी।

तारा ने ऊपर जाकर देखा, बड़ा कमरा, जिस में वह बच्चों को पढ़ाती थी, खाली था।

तारा ने कमरे के पिछवाड़े के बरामदे में जाकर पुकारा "किक्के ! गुल्ली ! वे किक्के ! गुल्ली !...कहाँ हो ? आ जाओ बच्चो !"

कोई उत्तर न मिला।

तारा सोच रही थी, बच्चे कहाँ चले गये ? उसकी पुकार बच्चों के अतिरिक्त और लोग भी तो सुन सकते थे, कोई भी उत्तर क्यों नहीं दे रहा था। उसने नीचे आँगन में झाँक कर बुढ़िया नौकरानी कर्मो को पुकारा।

तारा को आँगन सूना-सा लग रहा था। नीचे के आँगन में चेतू पानी डाल-डाल कर, बाल्टियाँ पटक-पटक कर फर्श धो रहा था। तारा ने उसे पुकार कर बच्चों के विषय में पूछा।

चेतू ने उत्तर देने के लिए हाथ की बाल्टी फर्श पर पटकी और बताया--"बच्चे दूसरे आँगन में हैं। नहीं पढ़ेंगे। माँ जी ने कहलाया है, हमें बच्चों को पढ़ाने की जरूरत नहीं है।"

तारा का मन धक् से रह गया। वह लौटने के लिए जीने की ओर घूम रही थी। उसी समय बाईं ओर से पुकार सुनाई दी--"तुम हो तारा ?"

डाक्टर प्राणनाथ ने सामने आकर चेतू द्वारा दी सूचना में संशोधन किया, "बच्चों को ढूँढ़ रही हो ? वे सब लोग बच्छोवाली गये हैं। आओ, उधर आ जाओ। असद भी बैठा है। उधर ही बैठकर बात करेंगे।"

डाक्टर प्राण इतने साधारण ढंग से बोला, मानो चेतू द्वारा दी गई सूचना का महत्व न था, परन्तु तारा के लिए उस बात का ही महत्व था। घर का वह भाग केवल डाक्टर का था। वहाँ कोई स्त्री नहीं रहती थी। उधर जाते तारा को संकोच हुआ परन्तु डाक्टर साहब की बात की अवलेहना वह कैसे कर सकती थी !

तारा पिछले वर्ष भी इस घर के तीन से साढ़े चार बरस तक के बच्चों किक्के, भोली और गुल्ली को छुट्टियों में तीन मास पढ़ा चुकी थी। पढ़ाना क्या था, वह घण्टे डेढ़ घण्टे बच्चों को चित्रों और कागज-पेंसिल से खेलना सिखा जाती थी। पुरी के कहने पर डाक्टर साहब ने तारा की सहायता के लिए ही यह ट्यूशन लगा दी थी। गत वर्ष डाक्टर साहब यह ट्यूशन लगा कर और सौ रूपया अग्रिम देकर शिमला चले गये थे। युद्ध तो समाप्त हो चुका था परन्तु पंजाब गवर्नर जब-तब उन्हें परामर्श के लिए शिमला में बुलाता रहता था।

उस वर्ष तारा ने स्वयं पुरी से कह कर ट्यूशन के लिए डाक्टर साहब से अनुरोध किया था। वह चाहती थी, कुछ रूपया हो जाये तो सर्दियों के लिए कोट और कपड़े बनवा सकेगी। उस वर्ष डाक्टर प्राण ने शिमले जाना आवश्यक न समझा था। तारा बच्चों को पढ़ाने आती थी तो कभी-कभी घर पर मिल जाते थे और उसे बुला

कर हाल-चाल पूछ लेते या चाय पीने के लिए भी कह देते थे। इस घर की स्त्रियाँ पहले तारा से अच्छी भली बोलती-चालती थीं परन्तु उन्होंने तारा को डाक्टर के अकेले भाग में जाते देखा और उसके वहाँ चाय पीने की बात सुनी तो तारा से बोलना छोड़ दिया। अब वे उसकी ओर कटाक्ष कर आपस में मुस्कराने लगती थीं। यह देख कर तारा का मन बहुत कुंठित होता था।

असद को तारा के डाक्टर के यहाँ ट्यूशन करने की बात मालूम हो गई थी। वह तारा को यहाँ आकर दो बार मिल चुका था अन्यथा छुट्टियों में कालेज और फेडरेशन के परिचितों के परस्पर मिलने की सम्भावना कम ही रहती थी। असद तारा की प्रतीक्षा में डाक्टर के साथ बात करता बैठा रहता था। तारा के लौटते समय उसके साथ हो लेता और उसे घर की गली तक पहुँचा देता था।

तारा जानती थी कि गोपालदास सेठ का परिवार लाहौर के बहुत धनी-मानी परिवारों में था। दाईं ओर के तीन बहुत बड़े-बड़े आँगनों में डाक्टर के प्रौढ़ पिता, उन के पुत्र, पौत्र, बहू-बेटियाँ रहती थीं। बायीं ओर के आँगन में डाक्टर प्राण अकेले रहते थे। डाक्टर का नौकर अलग था और रसोई भी अलग बनती थी। तारा यह भी जानती थी कि डाक्टर प्राण को बचपन में मास्टर जी ने आठ वर्ष तक हवेली में आकर पढ़ाया था। डाक्टर प्राण मास्टर जी का बहुत आदर करता था। विलायत से लौटा था तो मास्टर जी के यहाँ भी प्रणाम करने आया था। तारा को याद था, उस समय प्राण खूब सफ़ेद कमीज-पतलून पहने था। मास्टर जी इतने सम्मानित अतिथि के आने से घबरा गये थे और पीढ़ी लाने के लिए पुकारने लगे थे परन्तु प्राण मास्टर जी के साथ ही फर्श पर बिछी चटाई पर बैठ गया था। डाक्टर प्राण के मास्टर जी के यहाँ आने की चर्चा गली भर में हुई थी।

डाक्टर तारा को अपने आँगन के बरामदे में ले गया। असद ने तारा को देख कर शिष्टाचार के नाते खड़े होकर नमस्ते की। तारा ने साधारण परिचय की नमस्ते से उत्तर दे दिया और बैठ गयी।

डाक्टर ने बेचू को पुकार कर चाय दे जाने के लिए कह दिया और बैठते हुए असद से कहा—"हाँ, तुम कहो! तारा से संकोच की कोई बात नहीं है।"

असद बोला, "डाक्टर साहब, मैं अर्ज कर रहा था हिन्दू और मुस्लिम मुहल्लों में जहर फैलाया जा रहा है। मुल्ला मसजिदों में रो-रो कर पैगम्बर के नाम से जिहाद के लिए फतवे दे रहे हैं। हथियार इकट्ठे करने की योजनाएँ बन रही हैं। यकीन रखिये, यहाँ दंगे की ऐसी आग भड़केगी कि कलकत्ते से भी ज्यादा खून होगा। अगर खिजर परवाह नहीं करता तो गवर्नर का ध्यान इस ओर दिलाया जाना चाहिए...।"

"साम्प्रदायिक दंगों से नौकरशाही को कोई भय नहीं है।" डाक्टर ने उत्तर दिया, "दंगों से नुकसान पहुँचता है कांग्रेस और लीग की शक्ति को। तुम अपने लीडर 'फिकार' से कहो। अब तो वह कांग्रेस छोड़कर लीग में आ गया है। तुम रेलवे यूनियन के लीडर इब्राहीम से कहो। उन लोगों पर तो मुसलमानों का विश्वास है...।"

असद ने अपनी कुर्सी पर आगे झुक कर उत्तर दिया--"वे लोग तो जो कुछ उनसे हो सकता है कर ही रहे हैं लेकिन स्थिति को सम्भाल सकना तो सरकार के सामर्थ्य की ही बात है।"

तारा ने झिझकते हुए कहा--"कुछ ऐसी ही बातें आज हमारी गली में हिन्दू-रक्षा-कमेटी की स्त्रियाँ कर रही थीं।"

"जानता हूँ, शहर क्या प्रान्त भर में यही हो रहा है।" डाक्टर ने स्वीकार किया और असद की ओर देखकर सिर के केशों में उँगलियाँ चलाते हुए बोला, "खिजर इस समय कुछ नहीं कर सकता। उसकी यूनियनिस्ट पार्टी के कई लोग लीग में शामिल हो गये हैं। वह इस समय लीग पर दवाव डालेगा तो शेष मुसलमान मेम्वर भी उसका साथ छोड़ जायेंगे। उसकी अपनी मिनिस्ट्री खतरे में है ही, जितने दिन घसिट जाय...।"

असद ने फिर कहा--"आप तो गवर्नर जेंकिंस से भी बात कर सकते हैं। आप उसके एडवाइजर हैं।"

डाक्टर ने तर्जनी उठाकर असद को सुनने का संकेत किया--"मैं आर्थिक प्रश्नों के लिए परामर्शदाता हूँ। बिना पूछे मैं कोई सलाह नहीं दे सकता। गवर्नर भी जानता है कि युनियनिस्ट मिनिस्ट्री के दिन लद गये। इस चुनाव से यह स्पष्ट हो गया है। मुझसे गवर्नर ने पंजाब के किसानों में फैले असंतोष के आर्थिक कारणों के विषय में रिपोर्ट माँगी थी। उसे मालूम है कि किसान भूमि-व्यवस्था में परिवर्तन के लिए विद्रोह करने पर तुले हैं। युनियनिस्ट मिनिस्ट्री उन्हें दवा नहीं सकेगी। सब शासन व्यवस्थाओं की नींव सामयिक भूमि-व्यवस्था पर ही होती है। किसानों की ओर से सरकार पर आते संकट को टालने का फिलहाल यही उपाय हो सकता है कि वे अपनी समस्या साम्प्रदायिक झगड़ों में भूले रहें। यदि लीग और कांग्रेस आपस में नहीं लड़ेंगे तो अब सरकार के लिए इनमें से किसी एक को भी दबाना सम्भव नहीं है। जेंकिन्स तो कैबिनेट मिशन को यह दिखा देना चाहता है कि हिन्दुस्तानियों को शासन का अधिकार सौंपना व्यावहारिक नहीं है। अगर यह योजना सफल हो जाये तो अंग्रेज गवर्नर की जरूरत ही नहीं रह जायेगी।"

चाय पीते-पीते डाक्टर समझाता रहा—"ब्रिटेन में बैठे अंग्रेज तो अपनी स्थिति के कारण अपने आप को भारत का बोझ उठा सकने में असमर्थ समझने लगे हैं परन्तु हिन्दुस्तान में मौजूद अंग्रेज-ब्युरोक्रेसी अन्तरराष्ट्रीय स्थिति और ब्रिटेन की वर्तमान आर्थिक स्थिति जानती नहीं। वे हिन्दुस्तान के शासन का मोह नहीं छोड़ना चाहते......।"

चाय समाप्त कर असद ने उठ कर चलने के अभिप्राय से तारा की ओर देखा। तारा दुविधा में थी। वह असद के साथ जाना चाहती थी परन्तु चेतू द्वारा दी गई सूचना के विषय में भी जानना चाहती थी।

असद ने और कोई बात कहने के लिए न होने के कारण उठने की आज्ञा माँगी। डाक्टर ने तारा की दुविधा समझी और बोला--"तारा, अगर जल्दी न हो

तो पाँच मिनिट और ठहरो। बच्चों के विषय में कुछ पूछना चाहता हूँ।"

तारा कुछ उत्तर न दे सकी। असद को चला जाना पड़ा।

"तुम असद के साथ जाना चाहती थीं," डाक्टर मुस्कराया, "मैंने रोक लिया। नाराज तो नहीं हो ?"

तारा अपना रहस्य भाँप लिए जाने की लज्जा से संकुचित हो गई। इस रहस्य को स्वयं अपने सामने भी इतनी स्पष्टता से कभी स्वीकार नहीं किया था। घबराहट में कुछ उत्तर न दे सकी।

डाक्टर उसके उत्तर की प्रतीक्षा न कर अंग्रेजी में बोला--"उस दिन पुरी ट्यूशन की बाबत बात करने आया था तो कह रहा था कि तुम्हारे ताऊ ने किसी बेवकूफ से तुम्हारी सगाई कर दी है। तुमने और पुरी ने इसका विरोध नहीं किया ?"

तारा गर्दन झुकाये निरुत्तर रह गई।

"असद तुम्हें पसन्द है, बहुत भला नौजवान है। तुम क्या सोशल रिस्ट्रिक्शन्स को मानती हो ?"

तारा मौन रही।

"टु बी इन लव इज ए प्लेजेंट फीलिंग (प्रेम में होने की अनुभूति आनन्द दायक होती है।)यू फील अलाइव (उस से उमंग अनुभव होती है)।"

"तुम्हारी आयु उन्नीस-बीस की होगी ?"

"उन्नीस।"

"प्रेम बेशक करो, परन्तु विवाह शिक्षा समाप्त करके ही करना।"

तारा की गर्दन और भी झुक गई। तारा मन में डाक्टर को जयदेव से भी बड़ा भाई समझती थी। उसके मुख से ऐसी बातें सुन कर लज्जा से गड़ गई।

डाक्टर ने कुर्सी पर करवट ली और बोला--"इस बार तुम्हें बी० ए० की परीक्षा देनी है। बच्चों को पढ़ाने में तुम्हारा काफी समय नष्ट होता होगा।"

तारा ट्यूशन हाथ से चले जाने की आशंका से चौंकी--"जी, ऐसी बात तो नहीं है।'

डाक्टर ने कुछ पल सोचा और बोला--"तुम्हें तीन मास के लिए रखा था। उतनी रकम तो मुझे तुम्हें देनी ही है। तुम्हारी आर्थिक हानि नहीं होगी। तुम्हें काम न करने के लिए कह दिया गया है तो तुम्हें काम करना अच्छा भी नहीं लगेगा।"

"जी, यह ठीक है।" तारा ने नेत्र उठाकर कहा, "परन्तु जितने दिन काम किया है उतने ही दिन के रूपये लूंगी।"

"यह कैसे उचित होगा।" डाक्टर ने झुझँलाहट से कहा, "तुम अपनी इच्छा से नहीं जा रही हो। हमें काम छुड़ाने की नोटिस देना चाहिए था या उसके एवज़ में उतने दिन की तनख्वाह दी जायगी। कायदा तो कायदा है।"

"यहाँ कायदे की ऐसी क्या बात है ?" तारा ने विनय से कहा।

"इस घर का वातावरण तुम्हारे लायक है भी नहीं।" डाक्टर ने तारा से आँख

चुरा कर कहा, "जानती हो, तुम्हें चेतू से यह संदेश क्यों दिलाया गया है ? तुम स्वयं भाँप गई होगी। मैंने भूल से इन लोगों के सामने तुम्हारी प्रशंसा कर दी थी।"

तारा ने विस्मय से डाक्टर की ओर देखा। डाक्टर की नजर दूसरी ओर थी। वह कहता गया–"इन लोगों का खयाल है कि मैं तुम्हारे प्रति आकर्षित हूँ। शायद तुम से विवाह कर लूंगा।"

तारा की गर्दन और भी अधिक झुक गयी। हाय क्या कह रहे हैं ?

गत मास की ट्यूशन के रूपये तारा ने नहीं लिये थे। सोचा था, सब एक साथ ले कर कपड़े बनवायेगी। उसे कोट पहनने का बड़ा चाव था। कालेज में वही तो एक लड़की बिना कोट के थी। उस में अपना कुछ अपराध न होने पर भी गरीबी की लज्जा तो थी ही। डाक्टर ने तीनों मास की ट्यूशन के लिए एक सौ रुपये का नोट उसे थमा दिया। तारा हिसाब से दस रुपये अधिक लेने में झिझकी परन्तु इतने बड़े आदमी के सम्मुख दस रुपये की ओर क्या संकेत करती।

डाक्टर उसकी ओर स्नेह भरी आँखों से देख कर अंग्रेजी में बोला—"मुझे गलत न समझना।···आशा है फिर भी मुलाकात होगी "

तारा घर लौटती हुयी डाक्टर के विषय में सोच रही थी। वह भी दुखी और विवश था। परिवार और समाज से बँधा हुआ था। वह तो समर्थ होकर भी विरोध नहीं कर पा रहा था। डाक्टर साहब के शब्द याद आ गये, उन्होंने कैसे कह डाला—"आई लाइक यू !" कितने भले आदमी हैं !

डाक्टर की उस बात पर दूसरी बात की याद उमड़ आयी—"असद तुम्हें पसन्द है। भला नौजवान है।" डाक्टर के यह शब्द मस्तिष्क में गूँज कर हृदय में तीर की तरह गहरे उतर गये। हृदय पर इस तीर के आघात ने शरीर को रोमांचित कर दिया। यह रहस्य हृदय में कितना गहरा बसा हुआ था ? उस ने कभी अपने मन में भी इसे ऐसे स्वीकार नहीं किया था।

तारा ने गम्भीर होकर सोचना चाहा—डाक्टर साहब को ऐसा क्यों जान पड़ा ?···यदि दूसरे लोग भी सन्देह करने लगे ? भय क्या है ? कोई अनुचित बात, शीलो-रतन की तरह तो है नहीं···।

तारा अपने ध्यान में डूबी जल्दी-जल्दी कदम उठाये चलते-चलते ठिठक गयी। वह अपनी गली से भी आगे निकली जा रही थी। पीछे लौट कर वह अपनी गली में घूम गयी।

तारा घर लौटी तो माँ अकेली ही थी और चौके में व्यस्त थी।

६

(कड़ाके की सर्दी पड़ने लगी थी। सूर्यास्त के पश्चात तुरन्त ही कोहरा उतर आता और आकाश की ओर उठते हुए धुयें को नीचे दबा कर नगर पर छत्र की तरह

छा जाता था। नाक-कान पाले से ठिठुरने लगते। सड़कों और बाजारों में चलते लोगों के नाक और मुख से भाप की विरल-सी फूँकें छूटती रहतीं। ताँगे में जुते, दौड़ से हाँफते घोड़ों के नथुनों से ऐसे भाप उड़ती रहती जैसे चूल्हे पर रखी केतली की सूँड़ से फुँफकार छूट रही हो। आँखें कोहरे में मिले धुयें से चरचराने लगतीं। दुकानों पर तेज बिजली की बत्तियों का प्रकाश, उस धुएँ और कोहरे को भी वेध कर अनारकली बाजार में कन्धे से कन्धा रगड़ती भीड़ को जगमगाता रहता था।

इस भीड़ में से प्रति संध्या "अल्ला-हो-अकबर ! मुस्लिम लीग जिन्दाबाद ! कैदेआजम जिन्दाबाद ! खिजर मिनिस्ट्री मुरदाबाद ! लीग मिनिस्ट्री कायम हो ! हिन्दू मुस्लिम यत्तहाद जिन्दाबाद ! पाकिस्तान ले के रहेंगे।" के नारे लगाते हुए जुलूस निकलते थे। इन जुलूसों में अधिक लोग न होते थे। कुछ मुस्लिम लीग के स्वयंसेवक, कुछ मुस्लिम विद्यार्थी या मध्यम श्रेणी के युवक ही हरे झण्डे लिए इन जुलूसों में रहते थे।

लाहौर के हिन्दू सहम रहे थे, लीग का बढ़ता जाता आन्दोलन जाने क्या रंग लाये ! लाहौर के हिन्दू पत्र और कांग्रेसी पत्र अपनी टिप्पणियों में सरकार को इस परिस्थिति से सावधान हो जाने की चेतावनी दे रहे थे। 'पैरोकार' में पुरी दो बार लिख चुका था—"साम्प्रदायिक उत्तेजना से भरी राजनीति और साम्प्रदायिक घृणा और द्वेष का तूफान क्षितिज पर उठ रहा है। यह तूफान सार्वजनिक नागरिक जीवन का अन्त कर देगा। उस समय हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद के नारे याद न रहेंगे···।"

शीघ्र ही लीग के जुलूसों का आकार बहुत बढ़ गया। जुलूसों में खास कर रेलवे के मजदूर सम्मिलित होने लगे और उनके नारे भी बदल और बढ़ गये—"हिन्दू-मुस्लिम एक हों ! खिजर मिनिस्ट्री मुरदाबाद ! सल्तनत शाही मुरदाबाद ! हिन्दुस्तान जिन्दाबाद ! पाकिस्तान जिन्दाबाद ! कैदेआजम जिन्दाबाद ! महात्मा गाँधी जिन्दाबाद ! हिन्दू-मुस्लिम एक हों ! जम्हूरी मिनिस्ट्री कायम हो ! हके खुदइखत्यारी (आत्म-निर्णय का अधिकार) मिले। दुनिया के मजदूर एक हो !"

पुरी ने 'पैरोकार' में लिखा—"···जुलूसों के नारों में जो परिवर्तन आया है उससे शान्तिप्रिय जनता को कुछ आश्वासन मिल सकता है। पंजाब में किसी दूसरे प्रजातांत्रिक मंत्री-मंडल या दो राजनैतिक दलों के संयुक्त मंत्री-मंडल की माँग का भी हम विरोध नहीं करते परन्तु इस आन्दोलन में सहयोग देने वाले राजनैतिक दलों को हम यह चेतावनी देना आवश्यक समझते हैं कि पाकिस्तान की माँग साम्प्रदायिक असहिष्णुता है, अन्य सम्प्रदायों के प्रति घृणा और द्वेष है। ऐसी प्रवृत्ति से एकता और जन-कल्याण की आशा नहीं की जा सकती।"

दयालसिंह कालेज में जुबेदा और गुर्टू आयीं। उन्होंने सुरेन्द्र, स्नेह, कृष्णा और तारा को बुलाकर बताया—"भाई नरेन्द्र ने कहा है कि आज चार बजे लुहारी दरवाजे से मुस्लिम महिलाओं का जुलूस निकलेगा। तुम सब भी उसमें रहो तो जुलूस साम्प्रदायिक रंग न ले सकेगा। हमलोग साम्प्रदायिक नारे नहीं लगाने देंगी। कुछ कामरेड भी साथ रहेंगे···।"

सुरेन्द्र जुलूस में जाने के लिए तैयार हो गयी। उसने तारा से भी साथ चलने को कहा। तारा इस विषय में अपने भाई की राय जानती थी, बोली—"लुहारी तक तो साथ चल ही रही हूँ फिर देखा जायगा।"

लुहारी दरवाजे के सामने रेलवे रोड और अनारकली के चौराहे पर स्टूडेंट-फेडरेशन के बहुत से साथी नरेन्द्र सिंह, असद, प्रद्युम्न, जुबेर, धनपत आदि और कुछ कामरेड लोग भी मौजूद थे। एक ओर मुस्लिम-लीग के स्वयंसेवकों के घेरे में बारह बुर्कापोश और पाँच बिना बुर्के पहने मुस्लिम स्त्रियाँ जुलूस आरम्भ करने के लिए खड़ी हुई थीं। सुरेन्द्र, जुबेदा और गुर्टू भी उनमें आ मिलीं। स्नेह और तारा झिझकीं। नरेन्द्र ने उन्हें उत्साहित किया—"कामरेड तुम भी चलो।"

तारा की नजरें असद से मिल गयीं। असद ने कहा—"जितनी ज्यादा हिन्दू लड़कियाँ हों, उतना ही अच्छा है।" तारा भी जुलूस की ओर बढ़ी तो स्नेह भी साथ हो ली।

स्टूडेन्ट-फेडरेशन की लड़कियाँ जुलूस के आगे हो गयीं। नारे लगने लगे—"शहरी आजादी जिन्दाबाद! हिन्दू-सिक्ख-मुस्लिम एक हों! जम्हूरी मिनिस्ट्री कायम हो! कांग्रेस-लीग एक हो। कैदेआजम जिन्दाबाद! महात्मा गाँधी जिन्दाबाद!…" जुलूस का नेतृत्व करती स्टूडेंट फेडरेशन की लड़कियों के कोमल, तीखे नारी-कंठों से निकले नारों को स्टूडेंट फेडरेशन के साथी और कामरेड खूब ऊँची दहाड़ों में दोहरा रहे थे।

जुलूस सौ कदम, गणपत रोड के सिरे तक ही पहुँचा था कि एक स्त्री की ऊँची चीख सुनाई दी।

स्त्री की चीख के साथ ही सुनाई दिया—"पकड़ो, पकड़ो, पकड़ लो!" लीग के स्वयं-सेवकों के साथ नरेन्द्र सिंह, प्रद्युम्न और जुबेर ने एक खद्दर की सफेद टोपी पहने आदमी को घेर कर पकड़ लिया और उस पर कई हाथ पड़ गये।

खद्दर की सफेद गाँधी टोपी पहने आदमी जोर से चिल्लाया—"मार दिया! बचाओ! मुसलमानों ने मार दिया!"

एक और पुकार उठी—"मुसलमानों ने मार दिया! दौड़ो! दौड़ो! मारो! मारो!"

दूसरी ओर से किसी ने पुकारा—"दौड़ो, मारो साले हिन्दुओं को।"

लोग दौड़ पड़े। कुछ लड़ने के लिए और बहुत से बचने के लिए। लाठियाँ निकल आयीं। अनारकली बाजार में हिन्दुओं और मुसलमानों की दुकानें मिली-जुली थीं। भागते-दौड़ते लोगों के जूतों की आहट से बाजार गूँज उठा।

जुबेर के गले में लाउडस्पीकर की शक्ति थी। वह चिल्ला कर बोला—"भाइयो, यह हिन्दू-मुसलमान का झगड़ा नहीं है। यह गुण्डों की शरारत है!"

'पैरोकार' का दफ्तर अनारकली और गणपत रोड के जोड़ पर था। बाजार में हल्ला सुनकर अखबार के दफ्तर के लोग बाहर निकल आये थे। पुरी भी जीने से उतर आया था। उसने देखा मुस्लिम-लीग के स्वयंसेवक और स्टूडेंट-फेडरेशन के

विद्यार्थी एक आदमी को बाहों और कोट के कालर से पकड़ कर एक ओर घसीट रहे थे। वह आदमी छूटने का यत्न करता हुआ धमका रहा था—"खबरदार, मुझे किसी ने छुआ तो! सब झूठ है। मैंने किसी को हाथ नहीं लगाया।"

पुरी चौंक उठा—"यह तो कांस्टेबल वहीद है। मुझे जेल से अदालत ले जाता था।"

शोर मच गया—"पुलिस के कुत्ते हाय-हाय! खिजर की वजारत हाय हाय!" बुरकापोश महिलायें सीने पर हाथ मार-मार कर पुलिस और खिजर का स्यापा करने लगीं।

पुरी भीड़ में आगे बढ़ गया और तारा और गुर्टू को सम्बोधित करके बोला—"यह क्या तमाशा है? तुम लोग पाकिस्तान की माँग के लिए जुलूस निकाल रही हो?"

गुर्टू १९४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में भी भाग ले चुकी थी। इस नाते पुरी से परिचित थी।

"आ जी (भाई जी) यह तो..." तारा उत्तर देना चाहती थी। पर असद बीच में टोक बैठा, "यह जुलूस शहरी आजादी के लिए है। जम्हूरी वजारत (प्रजा तांत्रिक सरकार) के लिए है और काँग्रेस-लीग के इत्तहाद के लिए है।"

"गलत है!" पुरी ने अँग्रेजी में विरोध किया, "कल बेगमों के जुलूस में पाकिस्तान ले के रहेंगे! बिहार को मत भूलो—के नारे लगाये गये थे। मैं 'सियासत' और 'जमींदार' के पर्चे लाकर दिखाऊँ?"

"कल की बात के लिए वे लोग जिम्मेदार हैं।" असद बोला, "हम लोग फूट के नारे नहीं लगाने देंगे!"

"तुम कम्युनिस्ट लोग पाकिस्तान का समर्थन कर रहे हो। पाकिस्तान फूट नहीं तो क्या है? यह तो उसके लिए पर्दा है।" पुरी ने बलपूर्वक कहा।

"हम मुल्क के बँटवारे का विरोध करते हैं।" असद ने भी उतने ही बल से कहा, "पाकिस्तान का मतलब क्या है, हिन्दुस्तान के एक सूबे में काँग्रेस की मिनिस्ट्री हो सकती है तो दूसरे में लीग मिनिस्ट्री हो सकती है। यही हके-खुद-मुख्तियारी है। अब काँग्रेस बँटवारा स्वीकार कर रही है पर हम बँटवारे के खिलाफ हैं।"

"यह काँग्रेस की मजबूरी है।" पुरी ने स्वीकार किया, "वर्ना लीग कहीं भी आजाद सरकार नहीं बनने देगी।"

"हम तो लीग, काँग्रेस और सर्व-साधारण को समझाना चाहते हैं कि लीग-काँग्रेस की एकता हो।"

पुरी ने इन्कार में सिर हिलाकर तारा की ओर देखा—"मुझे तो यह सब पसन्द नहीं है।"

असद पुरी के कंधे पर हाथ रख कर बोला—"अगर इस जुलूस में 'बिहार को मत भूलो, और पाकिस्तान लेकर रहेंगे' का नारा लगा तो हमलोग जुलूस से अलग हो जायेंगे।"

"खैर, तुम तारा का ध्यान रखना। इसे घर पहुँचा देना।" पुरी ने असद से कहा और अपने दफ्तर की ओर लौट गया।

जब पुरी और असद में बहस हो रही थी, प्रद्युम्न ने समीप की दूकान के आगे बढ़े हुए तख्ते पर खड़े होकर लेक्चर दे डाला।

"हिन्दू, सिक्ख और मुसलमान भाइयो! आपने अपनी आँखों से देख लिया है कि अँग्रेज सरकार और उसके टोडी कुत्ते आपस में लड़ा देने की कैसी साजिशें करते हैं। इस जुलूस में हमारी मुसलमान और हिन्दू बहनें एक साथ हैं। यह लोग खिजर की तानाशाही और शहरी आजादी छीनने वाले काले कानूनों की मुखाल्फत कर रही हैं। दोस्तो, काँग्रेस, लीग, हिन्दू महासभा और अकाली पार्टी का संयुक्त मंत्री-मंडल कायम करो।"

अनारकली की घनी, कंधे से कंधा टकराती भीड़ स्त्रियों के जुलूस के लिए मार्ग देती जा रही थी। जुलूस अनारकली बाजार लाँघ कर, माल रोड पर घूम गया और हाईकोर्ट और बड़े डाकखाने के सामने से होता हुआ लगभग घण्टे भर में असेम्बली हाल के सामने पहुँच गया। पहले स्त्रियों ने कुछ मिनिट तक छाती पीट-पीटकर स्यापा किया—"खिजर टोडी हाय-हाय। काला कानून हाय-हाय। अंग्रेज सरकार हाय-हाय।"

जुबेदा ने "हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई! काँग्रेस-लीग एक हों!" के नारे भी लगाये। स्त्रियों ने उसका भी साथ दिया।

मुस्लिम लीग के स्वयं-सेवक कुछ टाँगे ले आये। बुर्कापोश बेगमें उन टाँगों पर बैठ कर लौट गयीं। जुबेदा, सुरेन्द्र, स्नेह और तारा, सुरेन्द्र सिंह, असद और जुबेदा के साथ लोअर मालरोड की ओर पैदल चल दीं। प्रद्युम्न अपनी साइकिल थामे गुट्टू को पुरानी अनारकली में छोड़ने चला गया। निस्वत रोड पर पहुँच कर नरेन्द्र, जुबेर, सुरेन्द्र और स्नेह शबदर माली की गली से सीधे केले वाली सड़क के लिए चल दिए। असद पर जुबेदा को नीले गुम्बद की राह पर छोड़ कर तारा को शहालमी तक पहुँचाने का काम रह गया।

असद पहले जुबेदा को पहुँचा आया फिर तारा के साथ उसे पहुँचाने गया। रास्ते में वे एक-दूसरे के विचार टोहनेवाली बातें करते रहे। दोनों ही हिन्दू-मुस्लिम में भेद नहीं मानते थे। असद ने तारा से पूछ लिया कि उसकी शादी उसके निर्णय से होगी या उसके माँ-बाप के निर्णय से। तारा उसका कोई जवाब न दे पायी। परन्तु जाते-जाते फिर कभी बताने का आश्वासन दे गयी।

लीग का आन्दोलन बहुत बढ़ता जाता देख कर खिजर मिनिस्ट्री ने पंजाब के अनेक नगरों में दफा १४४ लगा कर जुलूसों और सभाओं पर रोक लगा दी थी। लाहौर में मुस्लिम-लीग ने दफा १४४ के विरोध में अहिंसात्मक सत्याग्रह कर दिया। आशा नहीं थी कि लीग भी काँग्रेस की भाँति अहिंसात्मक रह कर आन्दोलन जारी रख सकेगी। आशंका थी कि लीग के स्वयंसेवक उत्तेजित होकर मार-पीट कर बैठेंगे और सरकार की सशस्त्र शक्ति के सामने दब जायेंगे। मुस्लिम लीग के बड़े-बड़े नेता,

फिरोज खाँ नून, इफ्तखारुद्दीन, गजनफरअली खाँ सत्याग्रह करके जेल चले गये थे परन्तु प्रतिदिन लीग के स्वयंसेवकों के अहिंसात्मक जुलूस निकल रहे थे। पुलिस उन पर लाठी चलाती। स्वयंसेवक अहिंसात्मक रह कर 'अल्लाहो अकबर। मुस्लिम-लीग जिन्दाबाद! खिजर मिनिस्ट्री मुरदाबाद! पाकिस्तान ले के रहेंगे! लीग मिनिस्ट्री कायम हो। हिन्दू-मुस्लिम एक हों।" के नारे लगाते और गिरफ्तार हो जाते।

एक दिन स्टडी-सर्किल से लौटते समय असद तारा को एक रेस्तोराँ में ले गया। वहाँ अनायास ही दोनों के मन की बात होठों पर आ गई।

असद ने तारा को एम० ए० करने की राय दी। परन्तु तारा ने उसे अपनी आर्थिक मजबूरी समझा दी। इस पर असद ने उसे स्कालरशिप के लिए कोशिश करने को कहा। वह स्वयं भी उसे पढ़ाने को तैयार हो गया, परन्तु पुरी की सहमति बाकी थी।

●

तारा घर लौटी तो माँ को परेशानी और झुँझलाहट में देखा। मुन्नी दाँत निकाल रही थी। तबीयत ठीक न होने के कारण वह माँ की गोद छोड़ना न चाहती थी। ऊषा न लड़की को गोद में लेने के लिए तैयार थी, न चौके का काम सम्हालने के लिए। वह अपना स्कूल का काम कर रही थी। मास्टर जी ट्यूशन से लौटने वाले थे।

तारा ने माँ से कहा—"तुम मुन्नी को लिये रहो, चौका मैं देख लूँगी।" वह कपड़े बदल कर भोजन बनाने में लग गयी। मन कल्पनाओं में इतना उलझा हुआ था कि तरकारी बनाने के लिए मटर छीलने लगी तो बार-बार दाने छिलकों में डाल देती और छिलके थाली में।

तारा ने भोजन तैयार कर लिया। मास्टर जी ट्यूशन से थके और भूखे लौटते थे। कपड़े बदल, तहमत बाँध, हाथ-मुँह धोकर 'प्रभू तू ही तू है,' कहते हुए चौके में आ गये। तारा ने गरम-गरम खाना उनके सामने थाली में परस दिया। मुन्नी की आँख लग गयी थी। तारा की माँ उसे कन्धे पर लिए मास्टर जी के समीप आ बैठी। पति को भोजन कराते समय ही पत्नी के लिए सुविधा से बात करने का समय रहता है। तारा की माँ ने कहा—"भरजाई (भाभी) आज दोपहर फिर आयी थी। टीकाराम की घरवाली भी अपनी भाभी की लड़की के बारे में जवाब के लिए पीछे पड़ी हैं। एक ही लड़की है, मकान-जायदाद भी है। तुम तो काके को (बेटे को) कुछ समझाते ही नहीं। मैं जब बात करती हूँ, मुझे तो कह देता है, तुझे इतनी जल्दी क्या पड़ी है।"

मास्टर जी ग्रास चबाते हुए सुनते रहे और फिर बोले—"तुम्हारे सामने ही उस दिन बात की थी। लड़के के दिल में जाने क्या ख्याल है? कुछ दिन और ठहर जाओ।"

"ठहर क्या जाऊँ, भरजाई के सामने मैं क्या कह सकती हूँ! काके को सौ बातें कह गई हैं, क्या किसी जज-बैरिस्टर की लड़की से ही शादी करेगा? गली

की स्त्रियाँ चैन लेने दें तब न ! सभी कहती हैं, पच्चीस का हो गया। उसका मन शादी के लिए क्यों नहीं है ? शायद उसकी मर्जी कहीं और है, अपने मन से करेगा। मैं किसे-किसे क्या-क्या जवाब दूँ ?"

मास्टर जी फिर ग्रास चबाते हुए सुनते रहे और उत्तर दिया—"अगर उसके पसन्द की कोई अच्छी लड़की है तो क्या बुरा है। ऐसी कोई बात कही उसने ?"

"मुझसे क्या कहेगा ? कम से कम तुम अपने भाई जी को तो समझा दो कि लड़का ठहरने को कह रहा है तो जल्दी न करें।" भागवंती ने कहा, "वे लोग शगुन देने के लिए घर पर आ जायेंगे तो क्या होगा ?"

तारा अब तक चुपचाप फुलके सेंकती जा रही थी और मास्टर जी की थाली में फुलका समाप्त होते ही दूसरा फुलका रख देती थी। अवसर देख कर बोली—"पिता जी, आप ताया जी से कह दीजिये कि वे भाई से ही बातें कर ले। भाई अपने आप जवाब दे लेंगे।"

"हाँ ठीक तो है।" मास्टर जी ने पत्नी को उत्तर दिया, "तुम भाभी से कह देना।"

तारा ने उन्हें बचत का मार्ग सुझा दिया था।

मास्टर जी लम्बे डकार के साथ 'ओम' शब्द का उच्चारण कर भोजन से उठ गये और 'प्रभू तू ही तू है' कहते हुए बराम्दे में खाट पर जा लेटे।

तारा ने अवसर देख कर माँ को समझाया—"माँ, तुम इन लोगों के बताये सम्बन्ध स्वीकार न करना। भाई लड़की देखे-समझे बिना कहीं सगाई नहीं करेंगे।"

माँ ने रहस्य के स्वर में बताया—"लड़की दिखा देने के लिए तो लोग तैयार हैं। 'रानी बर्दवान' स्कूल में पढ़ने जाती है। रास्ते में देख सकते हैं। तू भी देख लेना कैसी है।"

"यह क्या देखना हुआ।" तारा ने असन्तोष प्रकट किया, "न बात, न चीत। एक आँख देख कर कोई किसी को क्या समझ सकता है ? अब तो लोग सगाई से पहले कई बार मिलते रहते हैं, आपस में बातचीत होती रहती है।"

माँ ने फटकार के संकेत से उँगलियाँ छिटका कर कहा—"फिट्टे मुँह, यह सगाई क्या हुयी, यह तो आशनाई हुयी ! ऐसा अनारकली, ग्वालमंडी, मालरोड के घरों में ही हो सकता है। यहाँ गली-मुहल्ले के लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे ?"

"वाह, इसमें क्या बुराई है ? भाई तो वैसी ही लड़की से शादी करेंगे।" तारा ने निश्चय के स्वर में कहा और परात में चिपटा आटा खुरचने लगी।

"तू जानती है !" माँ ने स्वर धीमा करने के लिए होठों पर हाथ रख कर फुसफुसाहट के स्वर में पूछा, "बता तो सही, कैसी लड़की है, कौन लोग हैं ?"

"लो, मैं क्या जानूं ?" तारा मुस्कराकर बोली, "लड़की सुन्दर है, एम० ए० में पढ़ रही है।"

"कौन लोग हैं ?" माँ ने और भी धीमे स्वर में पूछा।

"तुझे मेरी कसम।" तारा ने माँ की आँखों में आँखें गड़ाकर कहा, "भाई से मत कहना कि मैंने कुछ कहा है।" और बता दिया, "बहुत भले और बड़े लोग हैं, दत्ता हैं।"

"दत्ता ?" माँ की भौंहें चढ़कर माथे पर त्यौरियाँ पड़ गयीं। गाल पर हाथ रख कर बोला, "हाय दत्ता तो ब्राह्मण होते हैं। ब्राह्मण और खत्री का क्या जोड़ ? ऐसा कभी सुना है ?"

"माँ, तू भी क्या बात करती है ? उस लड़की की बड़ी बहिन की शादी अरोड़ों में हुई है।" तारा ने माँ के अज्ञान के प्रति करुणा प्रकट की, "आजकल हिन्दू-मुसलमानों के ब्याह हो रहे हैं। महात्मा गाँधी के लड़के ने ब्राह्मण की लड़की से और पंडित जवाहरलाल की लड़की ने पारसी लड़के से शादी की है। हिन्दू, पारसी, मुसलमान में क्या फरक है, आदमी-आदमी सब एक।"

"ले, यह क्या मैं नहीं जानती !" माँ मुन्नी को कन्धे पर सँभालते हुए बोली, "पागल, बैंकवाले लाला हरकिशनलाल के लड़के ने मुसलमानी से ब्याह किया था, दीवान चमनलाल ने किया था, पर बेटी उनकी दूसरी बात है, वे बड़े लोग हैं। हल लोग गली-मुहल्ले और बिरादरी से बाहर कैसे जा सकते हैं !"

"उन लोगों के क्या पर लगे हुए हैं ?" तारा बोल उठी, "हमारा भाई किससे कम है !"

जीने से चढ़ने की आहट आयी। तारा भाई के कदम पहचान चुप हो गयी।

"भाई जी आइये, गरम-गरम परोस दूँ।" तारा ने भाई से ऊपर आते ही पूछा।

"अच्छा आता हूँ।"

पुरी भोजन के लिए चौके में चटाई पर बैठ ही रहा था कि नीचे गली में किवाड़ों की साँकल खटकी और साथ ही पुकार सुनाई दी—"जग्गी ! बेटा जयदेव ! तारा।"

भागवंती मुन्नी को बरामदे में मास्टर जी की खाट पर सुला कर चौके की ओर आ रही थी। उसके मुख से और तारा के भी मुख से सहसा निकला—"भा जी ! ताया जी !"

भागवंती ने तुरन्त कहा—"हरिये, (हरदेव) दौड़कर जा, दरवाजा खोल दे।" और स्वयं मास्टर जी की ओर जाकर सूचना दी, "जी मैंने कहा, भा जी आये हैं।"

ऊषा तुरन्त बराम्दे से एक खाट कोठरी में ले आई और उस पर दरी बिछाने लगी। पुरी चौके से कोठरी में आ गया।

बाबू रामज्वाया का छोटे भाई के यहाँ आना साधारण बात नहीं थी। जयदेव ने आधा झुक कर पैरीपैणा (पाय लागन) किया। लड़कियों ने केवल हाथ जोड़कर मुख से नमस्ते की। भागवंती ने माथा आँचल से ढँक कर उनके चरण छुए। मास्टरजी ने उन्हें नमस्ते करके खाट पर बैठने का संकेत किया।

भागवंती ऊषा से बोली—"चूल्हे से अँगीठी में कोयले डाल कर ताया जी के पास रख दे।"

बाबू रामज्वाया कीमती काश्मीरी धुस्सा ओढ़े हुए थे। धुस्से को शरीर पर कसते हुए बोले—"न बेटा, कोई जरूरत नहीं है। आज तो वैसी सर्दी नहीं है। मेरा धुस्सा खूब गरम है।" उन्होंने बारी-बारी से सब बच्चों की सेहत का हाल पूछा। तारा रसोई में बैठी हुई थी। पुरी, ऊषा, हरदेव उनके समीप आकर खड़े होगये थे।

"तुम सुनाओ एडीटर साहब!" रामज्वाया ने पुरी को व्यंजना से संबोधन किया, "इतनी बार कहला-कहला कर भेजा, आप को उच्ची गली तक पहुँचने की फुर्सत ही नहीं मिलती। हमने कहा, साहब नहीं आ सकता तो हम ही चलें।"

"ताया जी, पिछले सप्ताह मेरी तीसरे पहर दो बजे से रात नौ बजे तक ड्यूटी थी। आज ही बदली।" पुरी ने क्षमा माँगते हुए कहा, "मैं सोच रहा था, कल संध्या आपकी सेवा में……।"

"हाँ भाई, बड़े आदमी हो गये हो, तुम्हें छुट्टी कैसे मिलेगी?" रामज्वाया बोले, "हम तो कहते हैं, तुम और बड़े आदमी बनो। तुम्हारा नाम और इक़बाल खूब बढ़े, लेकिन घर-बार जमाने की बात भी ख्याल में रखनी चाहिए। क्यों मास्टर?" उन्होंने मास्टरजी को समर्थन करने का संकेत किया।

"हाँ, बिलकुल ठीक कह रहे हैं भाई जी।" मास्टर जी ने समर्थन किया।

"बताओ भई, फिर उस मामले में खोसलों को क्या जवाब दें?" रामज्वाया ने पुरी को सुना कर मास्टर जी से पूछा, "शीलो की माँ आज भी आयी थी। वह कहती है, तुम लोग कुछ जवाब नहीं देते। यह मामला क्या है?"

"यह आपके सामने खड़ा है। आप हैं तो हमें क्या कहना-पूछना है। लड़का आपके सामने है। यह तो कहता है, अभी साल भर तो काम पर लगे हुआ है। पाँव जम जाये और कुछ तरक्की हो जाये…।"

मास्टर जी पुरी की ओर घूम गये—"बोलो भई, ताया जी क्या पूछ रहे हैं, जवाब दो।"

"सब कुछ करने वाला तो 'वो' है।" रामज्वाया ने छत की ओर हाथ उठा कर संकेत किया और पुरी को समझाया, "अरे भले आदमी, सब बातों का समय और उम्र होती है। तरक्की तो होती ही रहेगी। क्यों मास्टर, हम लोगों के व्याह हुये थे तो तीस रुपये तनख्वाह पाते थे। यह सौ रुपया पा रहा है पर भई तब के पच्चीस आज के सौ से अच्छे थे। खैर परमेश्वर सब करेगा, तरक्की भी होगी। लक्ष्मी तो मर्द-औरत दोनों के भाग से आती है। लड़की का भाग होगा तो उसके पाँव घर में पड़ते ही सौ के दो सौ हो जायेंगे। तू क्या बात करता है, वह तो खुद लक्ष्मी साथ लेकर आयेगी!"

"ताया जी, जल्दी क्या है, अगले साल…।"

रामज़्वाया ने पुरी को टोक दिया—"हैं! देखो पागल को, अगले साल की

बातें करता है ! वे लोग लड़की को लेकर बैठे रहेंगे ?" उन्होंने मास्टर जी की ओर देखकर स्वर ऊँचा किया, "तुम्हें अपनी लड़की का भी ब्याह करना है। मुझे तो उसी की फिक्र है। यह ब्याह पहले कर लो तो इस ब्याह के सहारे लड़की का ब्याह हो सकेगा, नहीं तो तुम्हारे पास है क्या ?"

"सच है जी।" मास्टर जी ने स्वीकार किया और भागवंती ने भी हामी भरी, "भाई जी ठीक ही तो कह रहे हैं।"

रामज्वाया समझाने के लिए दायें हाथ का पंजा दिखा कर बोले—"शीलो के ब्याह में गिन कर आठ हजार लगा है मेरा ! तुम कुछ नहीं करोगे तो लड़की के हाथ पीले करने के लिए हाथों और गले के कुछ तो जेवर दोगे ? ग्यारह-तेरह जोड़े कपड़ा भी दोगे, बरात को खिलाओ-पिलाओगे ? इस जमाने में कम से कम चार हजार तो लग ही जायगा। बिरादरी में नाक तो रखनी होगी। कहाँ से आयेगा चार हजार ?" रामज्वाया ने हाथ फैलाकर पूछा और बोले, "तुम्हें इससे अच्छा मौका मिल नहीं सकता। यह तो इसका भाग्य है।" उन्होंने पुरी की ओर संकेत करके कहा, "माँ-बाप की अकेली लड़की है, न कोई भाई न बहिन, लड़की का अपना मकान है। उसकी माँ का क्या है, उसे सब कुछ लड़की को ही देना है। पांच हजार तो नकद देने को कह रही है। इसीलिए परेशान फिर रहा हूँ कि ब्याह हो जाये। इसके सहारे लड़की का काम भी इज्जत से हो जायगा।"

"ताया जी, मुझे ब्याह मकान-जायदाद से तो नहीं करना।" पुरी ने पीठ दीवार से टिका कर कहा।

"हूँ, किसी भिखारी की लड़की से ब्याह करेगा ? तेरी बहिन का ब्याह कैसे होगा ?" रामज्वाया ने मास्टर जी की ओर देख कर कहा, "देखो, यह है इसकी अक्ल ! एडीटर साहब हैं यह।" उन्होंने फिर पुरी को सम्बोधित किया—"तुझे पढ़ाने-लिखाने में, आदमी बनाने में हमारा-मास्टर का कुछ खर्चा नहीं आया, तू ऐसे ही इतना बड़ा हो गया ? उसका लड़की वालों को कोई फायदा नहीं होगा ? लड़की के सुख के लिए उसके माँ-बाप अच्छा लड़का देखेंगे तो लड़के की तालीम के खर्च में, लड़की के सारी उम्र सुखी रह सकने के लिए कुछ मदद नहीं करेंगे ? हमने शीलो के ब्याह में दिया है या नहीं ! तेरा बाप तो सारी उम्र दुख सह-सह कर इस दिन की आस करता रहा और तू उसके किये-कराये पर पानी फेर दे रहा है। क्या तेरे हाथों में कारूँ का खजाना है ? है तो निकाल चालीस-पचास हजार, देखें ! किशोरचंद ऐसी बात करता तो मैं उसका मुँह तोड़ देता।" रामज्वाया बहुत क्रोधित हो गये।

पुरी ने दृढ़ रहने के लिए दोनों बाँहें सीने पर बाँध कर उत्तर दिया—"ताया जी, आप ठीक कह रहे हैं लेकिन पहली बात तो लड़की की है। मैं लड़की को जानता-बूझता नहीं, जाने कौन है, कैसी है ?"

"क्या बक रहा है ?" रामज्वाया और ऊँचे बोले, "कैसी होती है लड़की ! उसमें जानने-बूझने की बात क्या है ? तुझे भले घर की लड़की से शादी करनी है या अनारकली या मालरोड पर सैर करने वाली रण्डी से ? शादी से पहले लड़की को

कौन जानता-बूझता है ? लड़की का खानदान देखा जाता है, खानदान की हैसियत देखी जाती है। वह हमने सब देख लिया है। तेरे देखने का समय आयेगा तो तू भी सब देख लेना।"

पुरी फिर बोला—"लड़की की उम्र ही क्या है, लड़की मेरी उम्र के हिसाब से होनी चाहिए।"

"फिर वही बात !" रामज्वाया बोले, "तू क्या बुढ़िया ब्याहेंगा ? लड़की की उम्र कम है तो और अच्छा है। ज्यादा उम्र की लड़की का ऐतबार क्या ? लोग तो ढूंढ़ कर कम उम्र की लेते हैं। तेरे लिए देर तक जवान रहेगी ! आज सोलह की है तो कल सत्रह की, परसों अठारह की होगी। शीलो का ब्याह हमने सत्रह में ही तो किया था। तेरी तो अक्ल ही उल्टी चलती है।"

पुरी इस पर भी नहीं दबा, बोला, "लड़की सोलह की है तो आखिर क्या, क्या पढ़ी-लिखी होगी ? मैं ऐसी लड़की से क्या शादी करूँगा ? लड़की अपनी कुछ जिम्मेदारी तो समझ सके…।"

"तुझे बी० ए० पास लड़की चाहिए। बी० ए० पास लड़की क्या पढ़े-पढ़ाये बच्चे जनेगी ?" रामज्वाया क्रोध में उछल पड़े।

मास्टर जी का सिर झुक गया। भागवंती ने उस ओर पीठ कर ली और ऊषा को संकेत किया कि वह वहाँ से चली जाये। रसोई में बैठी तारा का भी सिर झुक गया।

रामज्वाया मास्टर जी की ओर देखकर बोलते गये—"यह नहीं चाहता तो हमीं को क्या मुसीबत पड़ी है, पर तुम देख लो, हम तो यह सब इसीलिए कह रहे हैं कि इसकी बहन का भी काम हो जाता और तुम लोगों की नींव बँध जाती। तुम्हारी उम्र भर की कमाई का कुछ फल मिल जाता। लाला सुखलाल तो जल्दी ही ब्याह माँगेगा। वह तो अब तक भी क्या ठहरता ! उस मामले को आठ-नौ महीने हो गये। गवर्नमेंट को कुछ झगड़ा करना होता तो अब तक पता लग जाता। अच्छा, मैं अब चलता हूँ। अपनी किस्मत बनाना-बिगाड़ना अपने हाथ में होता है। हमारा वह हाल न हो कि होम करते हाथ जलें।"

रामज्वाया उठ कर चले तो मास्टर जी उन्हें उच्ची गली तक छोड़ आने को तैयार हुए परन्तु पुरी ने उन्हें रोक दिया—"आप सर्दी में कहाँ जायेंगे ? ताया जी को मैं पहुँचा आता हूँ।"

ताऊ बाबू रामज्वाया के ऊँच-नीच बोलकर धमकाने से भी भाई को अपनी बात पर अडिग रहते देख कर तारा के मन में भाई के प्रति विश्वास दृढ़ हुआ और उसका अपना साहस भी बढ़ा। दूसरे दिन तारा ने माँ के सामने ही पुरी से अँग्रेजी में बात की—"असद भाई का ख्याल है कि मैं स्कालरशिप के लिए कोशिश करूँ। कह रहे थे, आप प्रोफेसर साहब से सप्ताह में एक दिन गाइडेंस दे देने के लिए कह तो मैं युनिवर्सिटी में उनके डिपार्टमेन्ट चली जाया करूँ।"

पुरी भोजन कर रहा था, बोला—"विचार तो बहुत अच्छा है पर कुछ पहिले

सोचना चाहिए था। पहिले सोचा होता तो तुम्हारे लिए क्या कठिन था। प्रोफेसर से मैं कहूँगा तो वे मेरी बात तो रखेंगे ही पर अब तो दो मास का भी समय नहीं रहा। इसके लिए तो छः-छः मास पहले से स्टडी जरूरी होती है। लोग ट्यूशन भी लगा लेते हैं। अब कैसे हो पायेगा ?"

"भाई कह रहे थे, परीक्षा तक रोज कुछ समय दे दिया करेंगे।"

"कौन असद ? वह तो ट्यूशन लेकर पढ़ाता है। सुना है, साठ लेता है।"

"मुझसे क्या लेंगे ? स्वयं ही सहायता करने के लिए कह रहे हैं।"

"क्यों क्या पार्टी का मेम्बर बना लेना चाहता है ? यह कम्युनिस्ट सभी तरह के जाल फेंक लेते हैं।"

"जबरदस्ती तो बना नहीं लेंगे। वह तो इच्छा और विश्वास की बात है।"

"आधा विश्वास तो तुम्हें हो चुका होगा। तुम्हारी गिनती फैलोट्रेवलरों (सह-यात्रियों) में तो करते ही होंगे।" पुरी ने ताना दिया और पूछा, "असद यहाँ आकर कहाँ पढ़ा सकेगा ?"

"हमारे कालेज की लायब्रेरी में ही ठीक रहेगा। दोपहर बाद पढ़ लिया करूँगी। आठ-दस दिन में प्रिपेरेटरी-लीव हो जायगी तो फिर जिस समय सुविधा होगी देख लेंगे।"

"मुझे क्या आपत्ति हो सकती है पर समय बहुत कम है, कोशिश कर देखो। 'मार्शल' और 'गीद' की किताबें काली से मैं ला दूँगा। प्रोफेसर साहब से भी कहो तो आज ही बात कर लूंगा।" पुरी ने स्वीकार कर लिया।

तारा ने पूरा ध्यान पढ़ाई में लगा दिया। असद लगभग एक घण्टे तक उसे लायब्रेरी के बरामदे में अर्थशास्त्र पढ़ाने लगा। तारा की कक्षा के बालमुकुन्द ने देखा तो असद से अनुरोध करके वह भी साथ बैठने लगा। बालकुमुन्द भी बहुत गरीब था। स्वयं ट्यूशन पढ़ाकर ही अपना खर्च चला रहा था। साधारणतः पढ़ने में अच्छा होने पर भी उसे विशेष मनोयोग से अध्ययन के लिए पर्याप्त समय ही न मिलता था। असद उसे इन्कार न कर सका।

एक दिन बालमुकुन्द न आया। उस दिन असद और तारा अपनी ही बातों में खोये रहे, पढ़ाई का ध्यान उन्हें न रहा। बातों ही बातों में असद ने तारा से विवाह का विषय भी उठाया। तारा का निर्णय तो उसे मालूम ही था, वह पुरी का इरादा भी जानना चाहता था। उसने तारा से पूछा—

"तुमने कभी इस बारे में पुरी का रुख टोहने का यत्न किया है ?" असद ने पूछा।

"अभी कहाँ ?" तारा सोचकर बोली, "वैसे तो भाई पक्के थिकर हैं, साम्प्रदायिकता से चिढ़ते हैं। कनक वाला मामला हो जाये तो स्वयं बात बन जाये।"

७

जयदेव पुरी की अन्तिम नींद को गली पार से सुनाई देती खुशालसिंह की मधुर सुरीली 'आसा दी वार' थपथपा कर जगा रही थी। उसकी खाट के समीप ही मास्टर जी अपने बेसुरे स्वर में 'जय-जय पिता परम आनन्ददाता' गाना आरम्भ करके 'आसा दी बार' का रस भंग करने लगे। पुरी मास्टर जी के भजन को अन-सुना करके 'आसा दी बार' में ध्यान केन्द्रित कर लेने का यत्न कर रहा था कि खुशालसिंह का गीत समाप्त हो तो वह उठ बैठे।

"सर खिजर का इस्तीफा मंजूर ! गवर्नर ने हुकूमत सम्भाल ली !"

अखबार वाले की तीखी-ऊँची पुकार सुनाई दे गई। उस सप्ताह पुरी की ड्यूटी दिन में होने के कारण उसे रात के समाचारों का कुछ ज्ञान न था। वह खाट से उछल कर तुरन्त गली में उतर आया।

डाक्टर प्रभुदयाल नित्य 'पैरोकार' खरीदता था। गोबिन्दराम कभी 'छत्र-पति' दैनिक और कभी 'प्रताप' खरीदते थे। अखबार-वाला डाक्टर के मकान के किवाड़ों में पत्र को फँसा गया था। पुरी ने पत्र लेकर देखा। समाचार ने लोगों को चौंका दिया।

समाचार था—'कल रात दस बजे पंजाब के मुख्य-मंत्री और युनियनिस्ट पार्टी के लीडर सर खिजर ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। गवर्नर ने त्यागपत्र स्वीकार करके नये मंत्री-मंडल की स्थापना हो सकने तक पंजाब का शासन अपने हाथ में लिया है। युनियनिस्ट मिनिस्ट्री द्वारा जारी किये गये सब आर्डिनेंस लागू रहेंगे।"

पुरी बाजार तक जाकर 'सियासत' (मुस्लिम दैनिक पत्र) की भी एक प्रति ले आया। 'सियासत' में यह समाचार दूसरे ढंग से था—'सर खिजर ने लीग का हक मंजूर किया। नवाब ममदोट की रहनुमाई में लीग की वजारत के मेम्बरों के बारे में कयासात। पाकिस्तान के दुश्मनों को शिकस्त। लीग की वजारत के लिए रास्ता साफ।"

डाक्टर गली में शोर सुनकर नींद का गुलाबी रंग आँखों में लिए जीना उतर कर आ गया। समाचार अपनी आँखों से पढ़कर डाक्टर को विश्वास करना ही पड़ा। भुँझलाकर बोला—"आखिर खिजर लीग के आन्दोलन से दब गया। लीग का रास्ता साफ हो गया। पुलिस वाले सब मुसलमान हैं। काँग्रेस के सत्याग्रहियों पर कैसी निर्द-यता से लाठी बरसाते थे ! लीगी वालंटियरों को ऐसे मारते थे जैसे पुचकार रहे हों।"

मास्टर जी भी गली में उतर आये थे, बोले—"मुसलमान यूनियनिस्ट हो या लीगी, सब मिले हुए हैं।"

गोविन्दराम समाचार से परेशान थे, बोले—"अब तो मुल्लाओं का राज चलेगा। अब क्या इन्साफ होगा ? मुसलमान वजीर तो यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री के जमाने में भी मनमानी करते थे।"

पुरी ने सुझाया—"गवर्नर तो झगड़े को ही प्रोत्साहन देगा। पाकिस्तान की माँग को वह क्या स्वीकार करेगा ? लीग के प्रदर्शनों के खिलाफ आर्डिनेन्स तो कायम हैं। खिजर को कम से कम अपनी मिनिस्ट्री का तो ख्याल था...।"

गोविन्दराम ने ऊँचे स्वर में विरोध किया—"यह लम्बी-चौड़ी अखबारी बातें रहने दो। हम तो आँख देखी कहते हैं। लड़ाई के जमाने में अच्छा भला इंसाफ था। पिछले बरस से गवर्नर ने महकमे वजीरों को सौंप दिये हैं तब से सरकारी नौकरियों में मुसलमान ही मुसलमान या जाट भरते चले आ रहे हैं।"

पुरी की ड्यूटी दफतर में सुबह की थी। शहालमी दरवाजे के बाहर तक वह तारा के साथ जाता था। कालेज में बी० ए० की परीक्षा की तैयारी के लिए छुट्टी हो गई थी परन्तु तारा नित्य लाइब्रेरी जाती थी। शहालमी दरवाजे से पुरी चार दिवारी के बाग से अनारकली की ओर घूम जाता था और तारा निस्वत रोड की ओर चली जाती थी।

तारा और पुरी अभी शहालमी के भीतर ही थे कि बहुत ऊँचे स्वर में लगाये जाते नारों की अस्पष्टता से गूँजें सुनाई दीं। वे शहालमी से बाहर निकले तो रेलवे रोड पर लुहारी दरवाजे की ओर, मुस्लिम लीग के सैकड़ों हरे झण्डे उठाये हुए बहुत बड़ा जुलूस जा रहा था। लाहौर के मार्च में आरम्भ में सुबह-सुबह वायु में सर्दी की कुछ सिहरन रहती है परन्तु जुलूस के लोगों के चेहरे नारों की चिल्लाहट के श्रम और उत्तेजना से सुर्ख होकर पसीने से चमक रहे थे। बिलकुल नये नारे थे—'नई खबर आई है—खिजर हमारा भाई है ! अल्ला_हो अकबर ! मुस्लिम-लीग—जिन्दाबाद ! पाकिस्तान—ले के रहेंगे ! लीग की वजारत—कायम हो ! कैदेआजम—जिन्दाबाद ! बिहार को—भूलो मत !'

जुलूस के कारण रेलवे रोड को लाँघना सम्भव नहीं था। शहालमी के भीतर से ग्वालमंडी, मेडिकल-कालेज, निस्वत रोड और माल रोड की ओर जाने वाले टाँगे, बाइसिकल और पैदल लोग प्रतीक्षा में खड़े थे। बहुत भारी जमाव हो गया था।

जुलूस में 'सल्तनत-शाही मुर्दाबाद ! अंग्रेज सरकार मुर्दाबाद ! जम्हूरियत जिन्दाबाद ! हिन्दू-मुस्लिम एक हों। खिजर मुर्दाबाद ! टोडी बच्चा हाय-हाय।' के स्थान पर 'खिजर जिन्दाबाद !' और 'खिजर हमारा भाई है' के नारे लग रहे थे। जुलूस के लोगों का व्यवहार और मुद्रा संकट और अत्याचार सहन करने की तत्परता में जम कर चलने की नहीं बल्कि बल-प्रदर्शन से धमकी देने की थी। उसे देख कर सहानुभूति नहीं आतंक अनुभव होता था।

पुरी बाग़ के रास्ते लुहारी की ओर न जाकर तारा के समीप खड़ा रहा और बोला—"आज रंग अच्छा नहीं दीखता। लौट ही जाओ तो अच्छा है।"

तारा ने बेबसी में कहा—"कालेज के पुस्तकालय में जाकर 'स्मिथ' की पुस्तक से नोट लेना आवश्यक है। परीक्षा में अब दिन ही कितने रह गये हैं ?"

जुलूस निकल गया तो जयदेव ने परामर्श दिया—"तुम टाँगे पर चली

जाओ। लौटते समय भी स्थिति देख लेना। किसी के साथ आ जाना या टाँगा कर लेना।" उसने कुछ दाम जेब से निकाल कर तारा के हाथ में दे दिये।

पुरी जुलूस के पीछे-पीछे अनारकली से होकर गणपत रोड पर पहुँचा। सभी लोग विस्मित थे, क्या होगा? पुरी टेलीप्रिंटर पर से उतरे कागजों पर नये समाचार देखने लगा। त्यागपत्र के संबंध में खिजर का बयान आया था। पुरी बयान पढ़ना ही चाहता था कि दरवाजे से नरेन्द्र सिंह की पुकार सुनाई दी—"क्यों भाई पुरी, यह क्या तमाशा करवा दिया?"

पुरी ने कागज आँखों के सामने से हटा कर उसे उत्तर दिया—"आओ!" नरेन्द्र सिंह ने पूछा—"कोई और खबर आई है?"

"हाँ, खिजर का बयान इस्तीफे के बारे में आया है।" पुरी ने उत्तर दिया और पढ़कर बताया, "खिजर कहता है, क्योंकि एटली के १६ फरवरी के वक्तव्य में कहा गया है कि जून १९४८ में हिन्दुस्तान के जिस भाग में जो राजनैतिक दल अधिक सशक्त होगा, ब्रिटिश सरकार उसी को स्थानीय शासन सौंप देगी इसलिए नये सिरे से मंत्री-मंडलों के निर्माण का अवसर दिया जाना चाहिए।"

"यह क्यों, खिजर अब अपनी यूनियनिस्ट हुकूमत नहीं चाहता?" नरेन्द्र सिंह ने सन्देह प्रकट किया, "क्या वह यूनियनिस्ट पार्टी को खत्म कर रहा है?"

"यह बयान खिजर का नहीं, गवर्नर जैन्किन्स का है। मतलब है, सब पार्टियों को लड़ने के लिए मौका और प्रोवोकेशन (उत्तेजना) दिया जाय।" पुरी ने कहा, "रात दस बजे तो खिजर ने इस्तीफा दिया। दो-तीन बजे अखबार छपने चला जाता है। इतने ही वक्त में गवर्नर ने दिल्ली से भी राय ले ली। इस्तीफा मंजूर हो गया। खबर गजट भी कर दी गयी। जाहिर है, प्लैन पहले से तैयार था।"

"एक बात सुनो।" नरेन्द्र तर्जनी को दाँत से काटते हुए अँग्रेजी में बोला, "सुना है, खिजर हर बात में डाक्टर राधेबिहारी की राय लेता है। कम से कम उसने अपना इस्तीफा अपनी कैबिनेट में डिसकस (विचार) किया होगा। काँग्रेस के भी तो दो मिनिस्टर हैं। उन लोगों ने क्या कहा होगा? अब इन लोगों की क्या राय है? क्या कांग्रेस लीग की मिनिस्ट्री में साथ देगी?"

टेलीप्रिंटर पर खट खट खट खट होने लगी। नया समाचार आ रहा था। पुरी नरेन्द्रसिंह के साथ टेलीप्रिंटर पर झुक कर टाइप होता समाचार एक-एक शब्द करके पढ़ने लगा—गवर्नर ने पंजाब असेम्बली में बहुमत पार्टी मुस्लिम लीग के नेता खान ममदोट को नया मंत्री-मण्डल बनाने के विषय में परामर्श के लिए बुलाया है। आज तीन मार्च के लिए निश्चित पंजाब लेजिस्लेटिव असेम्बली के बजट अधिवेशन से पहले, नये मंत्री-मंडल का बन जाना आवश्यक है...।

"ठीक तो है।" नरेन्द्र सिंह बोला, "जब तक शासन के लिए जिम्मेवार मंत्री-मंडल मौजूद न हो, असेम्बली में क्या कार्रवाई होगी?"

टेलीप्रिंटर पर समाचार की और पंक्ति टाइप हो गयी—आशा है कि खान ममदोट असेम्बली के अधिवेशन में ही अपने मंत्री-मंडल के नामों की घोषणा करेंगे...।

दफ्तर में अभी कशिश जी और बनारसीदास नहीं आये थे। पुरी ने दूसरे कमरे में जाकर डाक्टर राधेबिहारी के यहाँ से कुछ पता पाने के लिए फोन किया। लौट कर उसने नरेन्द्र सिंह को बताया—"खिजर ने इस्तीफा देने से पहले कैबिनेट के किसी भी मंत्री से कोई सलाह नहीं ली। डाक्टर साहब, मास्टर तारा सिंह से सलाह लेने के लिए 'सिक्ख मिशनरी कालेज' में गये हैं। वहाँ से असेम्बली चेम्बर चले जायेंगे।"

इन्द्रनाथ और भगतराम भी आ गये थे। सभी लोग उत्तेजित थे, जाने क्या होने वाला है! क्या लीग की मिनिस्ट्री में सब के सब मुसलमान ही होंगे? पुरी घड़ी देखकर नरेन्द्र सिंह से बोला—"ग्यारह तो बज रहे हैं। असेम्बली का अधिवेशन शुरू होने का समय तो हो गया। शायद कुछ देर में महेश आये या कोई खबर फोन पर दे। कुछ देर बैठो या तुम फिकार के यहाँ से पता लो कि लीग के हलकों में क्या कयास (अनुमान) है? कुछ हिन्दू-सिक्ख मेम्बरों को कैबिनेट में लिया जायगा या नहीं?"

नरेन्द्र सिंह चला गया तब भी इन्द्रनाथ, भगतराम और पुरी उत्तेजना के कारण काम आरम्भ न कर सके। अनुमानों पर बात चलती रही—क्या होगा?

साढ़े बारह बजे के लगभग फोन आया। इन्द्रनाथ ने फोन सुनकर बताया—"खान ममदोट अभी तक मंत्री-मण्डल के नाम गवर्नर के सामने पेश नहीं कर सका इसलिए गवर्नर मुस्लिम-लीग पार्टी के लीडर को शासन की जिम्मेवारी सौंपने के लिए तैयार नहीं है। असेम्बली का अधिवेशन आज के लिए स्थगित हो गया है। लीग के और विरोधी पार्टियों के मेम्बर अपनी-अपनी पार्टियों के कमरों में अलग-अलग मीटिंगें कर रहे हैं। इस बैठक में मास्टर तारासिंह और कुछ अन्य बड़े नेताओं को भी सम्मिलित किया गया है। संवाददाताओं को भीतर नहीं लिया गया लेकिन बाहर सुनाई देते शोर से अनुमान है कि दोनों ही दलों की मीटिंगों में बहुत गरमा-गरमी है। अनुमान है कि विरोधी दल खिजर के त्यागपत्र को अवैधानिक समझता है और उनका निश्चय है कि किसी भी हालत में लीग की मिनिस्ट्री कायम नहीं होने दी जायगी। लीग पार्टी मंत्री-मण्डल बनाने और शासन का अधिकार पाने के लिए तुली हुयी है। असेम्बली चेम्बर के सामने लीग के समर्थकों की बहुत बड़ी भीड़ लीग की वजारत और पाकिस्तान के लिए नारे लगा रही है। बहुत बड़ी तादाद में मुसल्ला (सशस्त्र) पुलिस को बुला कर असेम्बली चेम्बर को घेर लिया गया है...।"

भगतराम के सुझाव से पुरी ने तुरन्त स्टोरी (समाचार) तैयार की। शीर्षक दिया—"फिरकापरस्त वजारत (साम्प्रदायिक मंत्री-मण्डल) की पहली नाकामयाबी।" समाचार का अभिप्राय था—क्या केवल एक साम्प्रदायिक दल का मंत्रीमंडल व्यवहारिक और जनता के विश्वास के योग्य होगा? उससे शांति और सुव्यवस्था हो सकेगी?

भगतराम का विचार था, शायद कशिश जी इस समाचार और चेम्बर से मिलने वाले समाचारों को लेकर सप्लीमेन्ट्री (विशेषांक) निकालना चाहें। पुरी समाचार लेकर कशिश जी से राय लेने चला गया।

कशिश जी ने उँगलियों में थमा जलता सिगरेट मेज की काँच पर रख कर समाचार को ध्यान से पढ़ा। चश्मा उतार कर आँखें मलीं और अंग्रेजी में बोले—"ठीक ख्याल है। सप्लीमेन्ट्री का मौका है। ढाई-तीन बजे तक और सेंसेशनल खबरें मिलेंगी। कैबिनेट बन जाना और न बन पाना भी सेंसेशनल होगा। इट्ज मैटर फार सप्लीमेन्ट्री। बाबू बनारसीदास से पूछ लो, सप्लीमेन्ट्री के लिए कुछ तो स्टैंडिंग एडवट.इजमेन्ट है न?"

"बनारसीदास जी का तो आज आफ़ डे (छुट्टी) है।" पुरी ने याद दिलाया।

"ओह गुडनेस!" कशिश जी ने मेज पर हाथ पटका, "गुलाब सिंह तो है। तुम भी तो 'नेशनल पब्लिसिटी' की फाइल देख सकते हो या इन्हें फोन करके 'भल्ला शू,' 'कर्नाल शू,' 'कान्हचंद,' 'खेमसिंह होजरी' के बारे में बात कर सकते हो! यह सब काम तुम लोगों को सीखना चाहिए। ढाई-तीन सौ का स्पेस न हुआ तो सप्लीमेन्ट्री क्या छापेंगे? गो, हरी अप! मेक हेस्ट!"

बनारसीदास पुरी को विज्ञापनों के रहस्यों से दूर ही रखते थे। पुरी, गुलाब सिंह और इन्द्रनाथ फाइलें देखकर फोन पर सप्लीमेन्ट्री के लिए विज्ञापनों का प्रबन्ध करने लगे।

दो बजे महेश ने फिर फोन पर स्टोरी दी—"असेम्बली चेम्बर की सीढ़ियों पर मास्टर तारा सिंह ने मुस्लिम-लीग की ललकार के मुकाबले में तलवार खींच ली। जिस समय मास्टर तारासिंह कांग्रेसी, अकाली और हिन्दू सभा के मेम्बरों के साथ असेम्बली चेम्बर से बाहर निकले, चेम्बर के सामने हजारों की तादाद में जमा मुस्लिम-लीगी भीड़ के 'नाराए हैदरी! या अली! पाकिस्तान जिन्दाबाद! मुस्लिम लीग जिन्दाबाद! लेके रहेंगे पाकिस्तान! खून से लेंगे पाकिस्तान! लीगी वजारत बन के रहेगी!' नारों से आसमान काँप उठा।

"मास्टर तारा सिंह और हिन्दू-सिक्ख मेम्बर भीड़ के सामने एक साथ खड़े हो गये। मास्टर तारा सिंह ने गगन भेदी नारा लगाया—'पाकिस्तान मुर्दाबाद! जो बोले सो निहाल, सतसिरी अकाल!'

"मुस्लिम भीड़ जवाब में और भी ऊँचे नारे लगाकर ललकारती हुई आगे बढ़ी। मास्टर तारा सिंह ने कृपाण खींचकर भीड़ को चुनौती दी—'जिसमें हौसला हो आ जाये। यहाँ ही फैसला हो जायगा।'

"सशस्त्र पुलिस ने तुरन्त बीच में आकर हालत को काबू किया और विरोधी दलों को दूर-दूर कर दिया।

"कांग्रेस, अकाली दल और हिन्दू महासभा का सर्व-सम्मति से सयुक्त निश्चय है कि गवर्नर द्वारा यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री की बरखास्तगी अवैधानिक है, इसलिए मुस्लिम लीग के मंत्री-मंडल की सरकार को किसी हालत में सहन नहीं किया जायगा।"

भगतराम नया समाचार लेकर कशिश जी के सामने गया।

"गुड, वी मस्ट हैव ए सप्लीमेन्ट्री।" कशिश जी ने आदेश दिया।

विज्ञापनों का प्रबन्ध केवल आधे पृष्ठ के लिए ही हो सका था। कशिश जी इस बात से असंतुष्ट थे। उन्होंने भगतराम, पुरी और इन्द्रनाथ को समझाया—"एडवर्टाइजमेन्ट्स आर दी स्टीम आफ दी शिप आफ जर्नलिज्म (पत्र रूपी जहाज विज्ञापनों की भाप से ही चल सकते हैं)।" पैरोकार का सप्लीमेन्ट्री छत्रपति, सियासत, प्रताप, जमींदार आदि पत्रों से पीछे न रह जाय इसलिए मैटर तुरन्त प्रेस में भेज दिया गया।

पैरोकार के विशेषांक में जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान की ओर से भी एक सूचना थी—'सर खिजरहयातखाँ के इस्तीफा से व शासन का उत्तरदायित्व त्याग देने से आशंका, भय और गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई है। जनता से अनुरोध है कि संध्या छः बजे 'भारत इंशुरेंस बिल्डिंग' के मैदान में नियोजित सभा में आये और साम्प्रदायिक उत्तेजना से दूर रह कर राष्ट्रीय हित के दृष्टिकोण से इस स्थिति पर विचार करे।'

पुरी संध्या साढ़े छः के कुछ बाद 'भारत इंशुरेंस बिल्डिंग' के मैदान में पहुँच सका। अच्छी-खासी भीड़ थी। मंच पर खड़े नगर कांग्रेस के प्रधान कामरेड कपूर बोल रहे थे—"हाजरीन जलसा (सभा में उपस्थित सज्जनो), आप से इल्तजा (प्रार्थना) है कि इस जलसे के मकसद (उद्देश्य) को ख्याल में रख कर यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री के इस्तीफे से जो सिचुएशन पैदा हो गयी है, उसके बारे में और इस हालत में अमन (शान्ति) कायम रखने और मुल्क और कौम के मुफाद (हितों) के लिए हमारा क्या फर्ज है, इसी मजमून पर आप अपने खयालात का इजहार (प्रकट) फरमायें। इस वक्त हमें इश्तआल नहीं संजीदगी (उत्तेजना से नहीं गम्भीरता) से काम लेना है वरना इस जलसे का मकसद पूरा नहीं होगा। आप से यह भी गुजारिश (विनय) है कि जो साहबान तकरीर फर्माना चाहें, चेयरमैन से इजाजत लेने की मेहरबानी करें।"

लोग सभापति की आज्ञा बिना, जो मन में आ रहा था, बोल रहे थे। बड़े-बड़े काँग्रेसी नेता मौजूद नहीं थे। न डाक्टर गोपीचन्द भार्गव, न भीमसेन सच्चर, न डाक्टर राधेबिहारी मौजूद थे। कांग्रेस के कुछ स्वयं-सेवक और साधारण कार्यकर्ता मौजूद थे परन्तु राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ के लोग अधिक संख्या में थे, रतन भी था।

एक सज्जन ने मंच पर आगे बढ़ कर दायें हाथ की मुट्ठी हवा में चला कर घोषणा की—"पंजाब हमारा है। हम पंजाब में पाकिस्तान हरगिज नहीं बनने देंगे। हम न लीग की परवाह करते हैं, न काँग्रेस की। जब तक हमारी नसों में खून है, हम लीग की वजारत कायम नहीं होने देंगे। जिसमें ताकत हो सामने आ जाये। छिप-छिप कर दगाबाजी करने से क्या होता है?…"

श्रोताओं ने जोर से ताली बजा दी। किसी ने नारा दिया, 'नाराए बजरंगी!' उत्तर में हुंकार उठी, 'हर-हर महादेव! बजरंग बली की जय!'

सभापति ने मेज पर हाथ पटक कर वक्ता को चुप कराना चाहा लेकिन वह बोलते ही रहे।

एक दूसरे वक्ता बोले—"सृष्टि के आदि से इस देश को आर्यावर्त कहा गया है। यह भगवान राम और कृष्ण का देश है। इसे वेदों में 'पंचनद' कहा है। यहाँ पाकिस्तान कैसे बन सकता है ? जो पाकिस्तान बनाना चाहते हैं, वे अरब जायें। ...गाँधी और कांग्रेस की पालिसी हमेशा हिन्दुओं के खिलाफ रही है। कांग्रेस मुसलमानों को खुश करने के लिए हिन्दुओं के हकों को कुर्बान करती आयी है। आज मुसलमानों और लीग की इतनी हिम्मत है कि वे आधा मुल्क माँगते हैं। कांग्रेस के लीडर यह भी देने को तैयार हो गये हैं ताकि उन्हें वजारत की कुर्सियाँ मिल जायें, लेकिन मुस्लिम लीग और जिन्ना की अगली माँग पूरे हिंदुस्तान की हुकूमत की होगी। जो बात औरंगजेब नहीं कर सका, मुहम्मदअली जिन्ना करना चाहता है। हमारे कालेजों पर नारे लगाये जाते हैं—'हँस के लेंगे पाकिस्तान ! खून से लेंगे हिन्दुस्तान !"

"शेम ! शेम !" के नारे लगने लगे।

वक्ता ने श्रोताओं से पूछा—"क्या आप सिर झुका कर सब कुछ बर्दाश्त करते जायेंगे ?"

"हर्गिज नहीं। हर्गिज नहीं।" सभा के चारों ओर खड़े लोगों ने उत्तर दिया। फिर नाराए बजरंगी गूँजने लगा—'बजरंगबली की जय ! नहीं बनेगा पाकिस्तान ! नहीं बँटेगा हिन्दुस्तान !'

सभापति कामरेड कपूर ने कई बार मेज पर हाथ पटक-पटक कर चेतावनी दी—"हजरात, आप आज के जलसे के मजमून पर बोलिये !" लेकिन वक्ता अखंड भारत की अखंडता पर ही भाषण देते रहे।

यह भाषण समाप्त होते ही सभापति ने उठ कर सभा को संबोधित किया—"साहबान, मैं आपसे मुआफी की दरख्वास्त करके यह कहने के लिए मजबूर हूँ कि इस जलसे में निहायत बेतरतीबी से काम हो रहा है। यह जलसा शहर कांग्रेस की तरफ से मुनकिद (आयोजित) किया गया है लेकिन यहाँ तकरीरें कांग्रेस की पालिसी के मुताबिक नहीं हो रही हैं इसलिए मजबूरन इस जलसे को बरखास्त करता हूँ।"

'पैरोकार' का नगर संवाददाता महेश जयदेव को देखकर उसके समीप गया और बोला—"इन तकरीरों की क्या रिपोर्ट लूँ ?"

"जिक्र न करना ही बेहतर है। कामरेड कपूर की तकरीर की रिपोर्ट दे देना काफी है। कपूर ने अच्छा किया, जलसा बरखास्त कर दिया।"

कामरेड कपूर मंच से उतर आये थे। स्वयं-सेवक मंच पर बिछी चादरें और दरियाँ समेटने लगे थे। सभा को घेर कर खड़ी दर्शकों की दीवार के पीछे से बहुत जोर से नारे सुनाई दिये—'जो बोले सो निहाल ? सतसिरी अकाल ! बन्देमातरम् ! हर-हर महादेव !'

लोगों ने घूम कर देखा, सुरमई पगड़ी बाँधे और लम्बी तलवार कमर से लटकाये, ठिगने कद के मास्टर तारा सिंह और उनके साथ-साथ धोती फटकारते डाक्टर गोपीचन्द भार्गव चले आ रहे थे। उन्हें देखकर कांग्रेस के स्वयं सेवकों ने दरियाँ और चादरें बिछी रहने दीं।

पुरी ने महेश की ओर घूम कर कहा—"अब शायद कोई काम की बात हो।"

मास्टर तारा सिंह ने प्रधान की अनुमति की प्रतीक्षा न कर अपना भाषण आरम्भ कर दिया—"हम पंजाब में मुसलमानों की हुकूमत हर्गिज बरदाश्त नहीं करेंगे। ...आप लोग तवारीख को मत भूलिये। सिक्ख कौम मुसलमानों के खिलाफ लड़-लड़ कर ही इतनी बड़ी हुई है। ...अगर हमें मुसलमानों की हुकूमत बर्दाश्त करनी है तो श्री दसमेश (गुरु गोविन्द सिंह) ने औतार किस लिए धारण किया था?"

पुरी के रोयें खड़े हो गये। मास्टर तारा सिंह कहते गये—"लीग का खयाल है कि युनियनिस्ट मिनिस्ट्री तोड़ कर वे लोग पंजाब में लीग की हुकूमत से पाकिस्तान की बुनियाद डाल लेंगे। उन्हें यह खामखयाली छोड़ देनी चाहिए। हम पंजाब में लीग की मिनिस्ट्री एक दिन भी नहीं चलने देंगे...।"

पुरी ने अपने कंधों पर किसी का हाथ अनुभव कर देखा, नरेन्द्रसिंह और असद हैं। पुरी के मुख से निकल गया—"यह आदमी तो आग बरसा रहा है।"

"यह असेम्बली हाल के सामने क्या कर आया है, मालूम नहीं?" नरेन्द्र सिंह बोला।

महेश असेम्बली चेम्बर के सामने की घटना सुनाने लगा—"मास्टर तारासिंह ने तैश में तलवार खींच ली थी। इसका असर अच्छा नहीं होगा।"

मास्टर तारासिंह के बाद मंच पर डाक्टर गोपीचन्द भार्गव आये। डाक्टर भार्गव ने कहा—"आप लोग यकीन रखें, हम पाकिस्तान हर्गिज नहीं बनने देंगे। लीग ने शोरिश पैदा करके हमारी यूनियनिस्ट वजारत को खत्म किया है। हम भी लीग की वजारत नहीं बनने देंगे। ...हम असेम्बली के अन्दर कदम-कदम पर लीग से लड़ेंगे, आप लोग असेम्बली के बाहर उनका मुकाबला कीजिए...!"

असद ने मुस्कराकर कहा—"बनिया चालाक आदमी है। यह असेम्बली की कुर्सी पर बैठ कर लड़ेगा। हमारा काम ईंट-पत्थर से लड़ना रहेगा। इन्हें खिजर की गद्दारी से कोई नाराजगी नहीं है, जिसने सब साजिश की। गवर्नर और टोडी खिजर की साजिश को एक्सपोज (भंडाफोड़) करने का खयाल नहीं है। यह सिर्फ लीग से लड़ेंगे। असेम्बली में खिजर की मेजोरिटी है। उसने इस्तीफा दिया क्यों? अगर खिजर से काम नहीं हो सकता था, उसे कैबिनेट में मामले पर गौर करना चाहिए था और युनियनिस्ट पार्टी में इस मामले पर गौर किया जाना चाहिए था। उसका इस्तीफा पार्लियामेन्टरी प्रोसीजर (कार्य पद्धति) के खिलाफ है। कांग्रेस के कैबिनेट-मेम्बरों को इसके खिलाफ प्रोटेस्ट करना चाहिए लेकिन यह सिर्फ लीग को धमकी दे रहे हैं। लीग खिजर की मिनिस्ट्री को कैसे तोड़ सकती थी? मिनिस्ट्री तो खिजर और गवर्नर ने तोड़ी है...।"

नरेन्द्रसिंह बोला—"सब से होशियार खिजर निकला। कांग्रेसी और हिन्दू उसे अपना बता रहे हैं। लीग वाले नारे लगा रहे हैं, 'खिजर हमारा भाई है।' जैन्किन्स का तो वह हमेशा से अपना है!"

पुरी और असद दूसरे साथियों के साथ, 'भारत इंश्युरेंस बिल्डिंग' से अनार-

कली और माल रोड के चौराहे तक पहुँचे थे। असद ने 'लकी लाइन' की ओर से साइकिल पर आते एक आदमी को पुकार लिया—"ओय अब्दुल, कहाँ घूम रहे हो?"

"मालरोड पर कांग्रेसियों का जुलूस देखने आया था। आज सालों की कलई खुल गई।" अब्दुल ने कहा। उसका गला बैठा हुआ था।

"गले को क्या हुआ है? क्या सुबह के जुलूस में शामिल था?"

"जरूर था।"

"सुना है, नई खबर आई है। खिजर टोडी बच्चा तुम्हारा भाई है। खिजर क्या लीग का मेम्बर बन गया?" असद ने पूछा।

"आखिर तो मुसलमान है, तुम्हारी तरह काफिर तो नहीं है।" अब्दुल बोला, "आज तुम्हारे कांग्रेसियों की कलई तो खुल गयी, किसी रोज तुम कम्युनिस्टों की भी खुलेगी।"

"क्या कलई खुल गई?" असद ने पूछा।

"तुम्हें नहीं मालूम?" अब्दुल ने अविश्वास प्रकट किया, "शाम को यूनियनिस्ट कैबिनेट के कांग्रेस मिनिस्टर ने माल रोड पर से जुलूस निकाला है। कांग्रेसियों ने अपने झण्डों में से हरा रंग फाड़ दिया है। हम तो खुश हैं। अब तो कांग्रेस ने मान लिया कि मुसलमान उनके साथ नहीं हैं। कायदे-आजम तो हमेशा से कहते हैं कि कांग्रेस मुसलमानों की नुमाइन्दगी नहीं कर सकती, वह हिन्दुओं की जमायत है।"

"सच कह रहे हो? तुमने झण्डा खुद देखा है या सिर्फ सुना है?" असद ने चिन्ता से पूछा।

"मैंने देखा है और हजारों आदमियों की मौजूदगी में देखा है। मैं तो जुलूस के पीछे-पीछे असेम्बेली हाल तक गया था। तारासिंह ने तलवार खींच कर धमकी दी है—आ जाय जिसके कलेजे में दम है! अभी सिखड़े ने इस्लाम की तेग नहीं देखी है, तभी छुरी दिखा कर धमकाता है। उसका ख्याल है, धमकियाँ देने से काँग्रेसियों और अकालियों का राज हो जायगा। पंजाब में हुकूमत होगी मुसलमान की। तजल्लिये दीन को कौन दबा सकता है?"

पुरी, असद और नरेन्द्रसिंह कुछ देर चुपचाप अनारकली में चलते गये। उनमें कोई बात न हो सकी। वे लोग आधी अनारकली लाँघ चुके थे तो असद बोला—"सुना है, लीग के प्रोग्रेसिव (प्रगतिवादी) लोगों ने कांग्रेस के साथ मिल कर मिनिस्ट्री बनाने की तजवीज (प्रस्ताव) जिन्ना साहब के यहाँ भेजी है। मगर कांग्रेस का यह रुख है तो क्या होगा? मिनिस्ट्री इस वक्त सिर्फ लीग बना सकती है, दूसरी कोई पार्टी नहीं। लीग-कांग्रेस का झगड़ा हिन्दू-मुसलमान का झगड़ा बन गया है। इस झगड़े का फैसला दुबारा चुनाव से तो हो नहीं सकता। यूनियनिस्ट या इंडिपेन्डेन्ट सीटें भी हिन्दू-मुसलमानों में बँट जायेंगी। अँग्रेजों ने कम्युनल बेसिस (साम्प्रदायिक-आधार) पर चुनाव की नीति चलाई थी। उसका फल अब पका है। इस झगड़े का

फैसला या तो आपसी समझौते से हो सकता है या तारासिंह और अलामा मशरिकी की तलवारों से होगा। इसका मतलब है, पंजाब से या तो हिन्दू खत्म हो जायें या मुसलमान, या हमेशा के लिए अँग्रेजों की हकूमत रहे…।"पुरी और नरेन्द्रसिंह चुपचाप रहे।

नरेन्द्रसिंह, असद और पुरी अनारकली में शिवालय के समीप पहुँचे तो बीच बाजार में डेढ़-दो सौ आदमियों का मजमा लगा हुआ था। कांग्रेस की प्रसिद्ध लीडर शन्नोदेवी एक दुकान के सामने बढ़े हुए तख्तों पर खड़ी होकर अपने व्याख्यान के अन्तिम शब्द कह रही थीं—"…मुसलमान भाइयो, कांग्रेस की पूरी हिस्ट्री आप के सामने है। कांग्रेस ने मुसलमानों के जायज हकों की कभी मुखालफत नहीं की। आप पाकिस्तान बनाना चाहते हैं, लीग की मिनिस्ट्री कायम करना चाहते हैं तो वह भी आपस के समझौते से ही मुमकिन है। जो लोग आपसी लड़ाई करते हैं वे कौमी खुदकशी की राह पर चल रहे हैं।…"

वामपक्षी कांग्रेसी शर्मा जी, सोडी और कम्युनिस्ट हजारा सिंह, प्रद्युम्न, इब्राहीम आदि मौजूद थे। इन लोगों ने नरेन्द्रसिंह और असद को रोक लिया। पुरी घर लौट गया।

●

४ मार्च, प्रातः अखबार बेचने वालों को पुकारों में जोश था। पत्रों के शीर्षक उत्तेजक थे। 'छत्रपति' दैनिक का शीर्षक था— 'लीगी हल्कों में मायूसी! पंजाब असेम्बली की लीगपार्टी के लीडर खान ममदोट को गवर्नर पंजाब ने हिन्दुओं-सिक्खों को शामिल किये बिना वजारत कायम करने का मौका देने से इंकार कर दिया!'

दैनिक 'सियासत' का शीर्षक था—'कांग्रेस और हिन्दुओं को लीग के जम्हूरी हकूक नामंजूर। मास्टर तारासिंह की तलवार से फैसले की धमकी। पंजाब की किस्मत गवर्नर के हाथ में देने के लिए अकालियों और कांग्रेस की जिद्द।'

प्रायः सभी हिन्दू पत्रों में पंजाब के दूसरे नगरों में लीगी मंत्री-मण्डल बनाये जाने के विरुद्ध प्रदर्शनों के समाचार थे और मुस्लिम पत्रों में सभी नगरों से यूनियनिस्ट मंत्री-मण्डल के टूट जाने पर संतोष और लीग का मंत्री-मण्डल तुरन्त बनाये जाने की माँग के प्रदर्शनों के समाचार थे। लाहौर में लीगी मंत्री-मण्डल की स्थापना के विरुद्ध सभी हिन्दुओं और सिक्खों के संयुक्त प्रदर्शनों की घोषणायें थीं।

भोलापांधे की गली के लोगों ने गवर्नर के इस व्यवहार से संतोष प्रकट किया। बाबू गोविन्दराम ने कहा—"खिजर मिनिस्ट्री में मुसलमानों को क्या कमी थी? खिजर जरा कम तास्सुबी था। लीगी चाहते हैं, बिल्कुल औरंगजेब का राज। अँग्रेज इतना जुल्म बर्दाश्त नहीं कर सकता…"

मास्टर जी ने राय दी—"लीग की हकूमत हो जायगी तो यह लोग सब स्कूलों में सिर्फ उर्दू लाजमी कर देंगे और कुरान को टैक्स्ट-बुक मुकर्रर कर देंगे, देख लेना!"

पुरी ने तर्क किया—"अगर कांग्रेस और लीग का संयुक्त मंत्री-मण्डल होगा

तो यह सब कैसे हो सकेगा ? यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री में भी तो मुस्लिम, सिक्ख और हिन्दुओं की मिली-जुली मिनिस्ट्री थी। लीग भी कुछ न कुछ हिन्दुओं को जरूर लेगी। फर्क इतना है कि यूनियनिस्ट प्रोब्रिटिश (अँग्रेजों के मित्र) हैं, लीग के मुसलमान ऐंटीब्रिटिश (अँग्रेज विरोधी) हैं। लीग के लीडर और जिन्ना मज़हबी मुसलमान नहीं, पोलिटिकल मुसलमान हैं। उन्हें हुकूमत करने का मौका चाहिए। कानून हिन्दू और मुसलमानों के लिए दो नहीं हो सकते…।"

मास्टर जी ने टोक दिया—"क्या कहते हो, हिन्दू-मुसलमानों के शादी-व्याह और विरासत के कानून अलग-अलग हैं। उनकी छुट्टियाँ अलग-अलग हैं। लीग की हुकूमत में दिवाली की छुट्टी खत्म होगी और ईद, मुहर्रम की चार-चार छुट्टियाँ होंगी, जानते हो !"

डाक्टर प्रभुदयाल गत रात विलम्ब से लौटा था इसलिए कुछ विलम्ब से ही नीचे गली में उतरा। उसने रहस्य के स्वर में बताया—"भाई, गलती सब हमारे कांग्रेसी और हिन्दू लीडरों की ही है। रात डाक्टर साहब बता रहे थे कि खिजर दो मास से कह रहा था, लीग के इन प्रदर्शनों के विरुद्ध मामूली सा भी हिन्दू-मुस्लिम रायट करवा दो तो मैं चार दिन में इन सब को उधेड़ कर रख दूँ। तब तो कांग्रेस-लीग समझौते की उम्मीद करते रहे। गवर्नर आखिर कब तक तमाशा देखता रहता ! अब वह इन्हें खुद ठीक करेगा। तभी तो उसने खान ममदोट को टके सा जवाब दे दिया, कैबिनेट में हिन्दू-सिक्खों के नुमाइन्दे होने जरूरी हैं। बेटा, बना मिनिस्ट्री !"

लगभग बारह बजे महेश 'गोलबाग' से 'पैरोकार' से दफ्तर में आया। वहाँ हिन्दू, सिक्ख विद्यार्थियों की सभा में गोली चल गई थी। उसने कहा—पुलिस ने समूह को हट जाने के लिए चेतावनी दिये बिना गोली चला दी थी। गोलबाग के बाहर 'अपर माल रोड' पर जाते कुछ लोगों पर भी गोली चलाई गई और सड़क के साथ गवर्नमेन्ट कालेज के बोर्डिंग के बरामदे में खड़े एक विद्यार्थी को भी गोली मार दी गई। लोग गोलबाग से तो भाग गये हैं लेकिन मामला बढ़ेगा। महेश ने 'मजंग' और 'नीलागुम्बद' पर भी झगड़े की खबरें सुनी थीं। करफ्यू हो जाने की संभावना थी, इसलिए वह उधर का एक चक्कर लगा आना चाहता था।

अचानक पुरी को खयाल आया। उसने इन्द्रनाथ से बात की—"मेरी बहिन दयाल सिंह कालेज की लायब्रेरी में गई थी। फसाद बढ़ गया या करफ्यू हो गया तो उसका घर पहुँचना कठिन हो जायेगा। लाइब्रेरी जाकर देख आऊँ, अगर बहिन जा चुकी होगी तो तुरन्त लौट आऊँगा वर्ना उसे गली तक छोड़ कर अभी लौटता हूँ।" उसने इन्द्रनाथ से साइकिल भी माँग ली।

तारा लायब्रेरी में ही थी। आठ-दस और भी विद्यार्थी थे, असद भी था। सब लोग चिंतित थे। गोलबाग में दयाल सिंह कालेज का विद्यार्थी निहालचन्द भी घायल हुआ था। यहाँ पुरी को दिल्ली दरवाजे और मोची दरवाजे पर छुरे चल जाने के भी समाचार मिले।

असद ने पुरी को बताया—तारा घर लौट रही थी परन्तु झगड़े का समाचार

मिलने पर उसे रोक लिया है। एम० ए० का विद्यार्थी भारद्वाज भी लायब्रेरी में था। वह अपनी गाड़ी में आया था। भारद्वाज ने तारा को शहालमी के अन्दर भोलापांधे की गली तक पहुँचा देना स्वीकार कर लिया था।

पुरी दफ्तर लौट आया। उसने दंगा बढ़ने के समाचार इन्द्रनाथ और भगत-राम को बताये। भगतराम ने चिंता प्रकट की "जाने क्या होगा ?" वह किला गुज्जर सिंह में मुस्लिम बस्ती में रहता था, बोला, "मास्टर तारासिंह और डाक्टर भार्गव के प्रोग्राम आरम्भ हो गये, अब देखें क्या होता है ! दफ्तर में पुरी, भगतराम और लेखराम के विचार प्रायः मिलते-जुलते थे।

पुरी घण्टे भर के लिए छुट्टी लेकर चला गया था इसलिए पाँच बजे से पहिले दफ्तर से न निकल सका। रेलवे रोड यथावत चल रही थी। पुरी रास्ता काटने के लिए चौक मत्ती से पापड़मंडी होकर 'मच्छी हट्टा' तक गया तो जगह-जगह उत्तेजित और आतंकित लोगों के गिरोह दिखाई दिये। उसने सुना 'परीमहल' के पीछे मोची दरवाजे की तरफ कुछ दंगा हो गया था।

पुरी ने गली में कदम रखा तो देखा, गली के परले सिरे पर घसीटाराम के मकान के सामने स्त्रियों का जमाव सा लगा था। कराह की आवाज सुनाई दे रही थी। कर्तारो और रामप्यारी रो रही थीं। आँसू सभी के गालों पर बहे हुए थे। पुरी को देख कर स्त्रियों ने राह दे दी। बीच में फर्श पर दौलू मामा खून से लथपथ पड़ा था। होली के आरम्भ में ही अनेक रंग पड़ चुका उसका मैला कुरता अब रक्त के रंग से लाल था। उसकी बगल में कमर से कुछ ऊपर खून से लथपथ कपड़ा पड़ा था। खून रिस रहा था। समीप पानी के लोटे और गिलास पड़े थे।

दौलू मामा को अस्पताल पहुँचाया गया था। औरतों ने बताया कि थोड़े समय पहले दौलू मामा मोची दरवाजे की गली की ओर से चिल्लाता हुआ आया था, और गली में आकर गिर पड़ा था। दौलू मामा की बिगड़ती अवस्था से सारा मुहल्ला उदासी में डूब गया।

पुरी और रतन तो दौलू मामा को अस्पताल लेकर चले गये। उनके जाने के बाद सब ही लोग मामा की बातें याद करने लगे, और उससे और भी ज्यादा गम-गीन होते गए। गली के बच्चे भी खेल भूल कर उदास हो गये। दौलू मामा तो सब का मामा था। बच्चे उसे बड़े प्रिय थे। गली के सभी लड़के-लड़कियों को मामा ने गोद में खिलाया था। अतएव इस घटना से सब दुःखी थे।

अस्पताल में बहुत मुश्किल से, डाक्टर प्रभुदयाल की सिफारिश से मामा के केस की ओर ध्यान दिया गया। परन्तु खून आदि देकर भी मामा को नहीं बचाया जा सका।

पुरी और रतन मामा की अर्थी घर लाना चाहते थे, पर डाक्टर बिना मोस्टमार्टम के लाश देने को तैयार नहीं थे।

पुरी और रतन अस्पताल से निकल रहे थे तो लाउड-स्पीकर पर करफ्यू जारी हो जाने की घोषणा हो रही थी। उन्होंने अस्पताल के फाटक पर लोगों से

सुना कि 'दिल्ली दरवाजे' और 'चौक मत्ती' में भयंकर दंगा हो जाने के बाद आगें लग गई हैं।

शहालमी के बाजार में सब दुकानें बन्द हो चुकी थीं। पुरी और रतन गली में पहुँचे तो बहुत से लोग दौलू का समाचार जानने के लिए प्रतीक्षा में बैठे थे। रतन उन्हें देखकर रोना न रोक सका। गली में समाचार फैल गया। सभी मर्द अपने घरों के चबूतरों पर आ बैठे। स्त्रियाँ दरवाजों या खिड़कियों में आ गईं। रामप्यारी, जीवां और कर्तारकौर सिसकने लगीं। आँचलों में आँसू तो सभी पोंछ रही थीं।

गली में सर्व-सम्मति से निश्चय हो गया कि कल तीसरे पहर अस्पताल से मामा का शव लेकर उसका उचित रूप से संस्कार किया जाये।

५ मार्च, प्रातः पाँच बजे करफ्यू समाप्त हुआ था इसलिए पत्र कुछ विलम्ब से आये। पत्रों में पहले पृष्ठ पर ४ मार्च की संध्या तक की लीग मिनिस्ट्री न बन सकने का समाचार था। यह भी समाचार था कि हिन्दू-सिक्ख और कांग्रेसी लोगों ने लीग मिनिस्ट्री और पाकिस्तान की स्थापना का विरोध करने के लिए 'ऐंटी पाकिस्तान लीग' की स्थापना की थी। सर्व-सम्मति से इस लीग का डिक्टेटर मास्टर तारा सिंह को स्वीकार किया गया था। रावलपिण्डी में भयानक दंगा हो जाने और पुलिस द्वारा स्थिति सँभाल लेने, लाहौर में हिन्दू-सिख विद्यार्थियों के जुलूस पर गोली चलाये जाने और चौक मत्ती में हिन्दू-मुस्लिम दंगा हो जाने और आग लगने तथा मजंग और दिल्ली दरवाजे के समीप छुरे चलने के समाचार थे।

हिन्दू अखबार मुसलमानों को दोष दे रहे थे और मुसलमानी अखबार हिन्दुओं को दोष लगा रहे थे।

वैसे तो पुरी 'पैरोकार' का उपसम्पादक था, परन्तु उसे भी सम्पादकीय लिखने को दे दिया जाता था। यह काम प्रायः भगतराम, इन्द्रनाथ और चड्ढा बारी-बारी से करते थे।

उस दिन पुरी को तीसरे पहर दौलू मामा की अर्थी में जाना था, परन्तु उस दिन भगतराम की तबियत बहुत खराब हो गयी। जुकाम के कारण उसका बहुत बुरा हाल हो रहा था। भगतराम ने पुरी से प्रार्थना की कि वह उसकी जगह आज का सम्पादकीय लिख दे, फिर उसकी बारी में वह लिख देगा।

पुरी भगतराम की बात मान गया। उसने सोचा मैं अर्थी में नहीं जा पाऊँगा। उससे बेहतर मैं पत्र में लेख लिखकर दौलू मामा के प्रति अपनी श्रद्धा दिखा सकूँगा। उसने अपने मन की संवेदना को लेख में प्रस्तुत कर दिया, जिससे उसे संतोष मिला।

पुरी दो दिन पहले कनक के घर गया था, पर वहाँ नैयर (कनक का जीजा) बैठा था, अतः पुरी वहाँ से चला आया था। वह आज फिर जाना चाहता था, परन्तु घर पहुँच कर उसे और ही कुछ सुनने को मिला। पता चला कि बधावामल की लड़की उर्मिला के पति का कत्ल हो गया है।

उर्मिला का ब्याह माटी दरवाजे के दौलतराम के लड़के केवलकृष्ण से हो

गया था। ऐसे समय में पुरी वहाँ जाना टाल न सका। कनक के घर वह उस दिन न जा पाया।

पुरी को मरी में बिताया समय फिर एक बार याद आ गया। पुरी सोचने लगा कि उर्मिला में प्रेम की कितनी भूख थी, पर आज तो वह सदा के लिए प्रेम की अनाधिकारिणी हो गयी।

६ मार्च के 'पैरोकार' में पुरी का लिखा 'दौलू मामा' शीर्षक लेख निकला था। पहले तो उसमें मामा के कत्ल के लिए पुरी ने खेद प्रकट किया था, फिर इसी प्रसंग में वह कांग्रेस और लीग की आलोचना भी लिख गया था। रतन उस लेख को पढ़कर और भी उत्तेजित हो गया। उसने मामा का बदला लेने की ठान ली। पुरी ने विशेषत: कांग्रेस की ओर ही उँगली उठाई थी, वैसे उसने लीग को भी छोड़ा नहीं था।

कांग्रेस और लीग के रहनुमाओं के नाम !...कांग्रेस और लीग दोनों ही संस्थाओं ने देश को गुलामी से मुक्त करने के लिए जन्म लिया था।...आज इन दोनों संस्थाओं के नेता पंजाब प्रांत का शासन गवर्नर के हाथों सौंप देने के लिए जिम्मेवार हैं ...आज ये दोनों राजनैतिक दल विदेशी शासन के कठपुतले और उन्हें सदा धोखा देने वाले को मित्र और साम्राज्यवाद-विरोधी सहायक शक्तियों को अपना शत्रु घोषित कर रहे हैं।...जिस टोडी ने लीग के अहिंसात्मक आन्दोलन पर लाठियाँ बरसायीं वह आज 'लीग का भाई' है।...दो मास तक हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद के नारे लगा कर साम्राज्यशाही और उसके काले कानूनों को समाप्त करने की लीग की प्रतिज्ञाओं का क्या हुआ। जिस खिजर ने युद्ध-काल में कांग्रेस के नेताओं को जेल में बन्द करके पंजाब को अँग्रेजी साम्राज्यशाही के कदमों पर कुर्बान कर दिया था, वह आज इन कांग्रेसी नेताओं का 'अपना' बन गया है।

"याद रखिये, कांग्रेस अपने जन्म-काल से मुसलमानों की उतनी ही प्रतिनिधि है जितनी कि हिन्दुओं की ! काँग्रेस के झण्डे में से हरा रंग फाड़ कर आपने अपना एक हाथ काट दिया।...महात्मा गाँधी और पंडित नेहरू विदेशी शत्रु के सम्मुख संयुक्त मोर्चा बनाने के लिए, लीग के साथ केन्द्रीय सरकार बनाने के लिए तैयार हैं और पंजाब के काँग्रेसी लीग का बहुमत होने पर भी उनके साथ सूबे के मंत्री-मंडल में सम्मिलित होने के लिए तैयार नहीं हैं। आठ प्रांतों में मुसलमान कांग्रेसी सरकारों पर विश्वास कर सकते हैं तो दो प्रांतों के हिन्दू लीग के मंत्री-मंडलों को क्यों सहन नहीं करेंगे ?...युनियनिस्ट मंत्री-मंडल की पराजय साम्राज्यशाही के समर्थकों की पराजय है। यह पराजय कांग्रेस की प्रजातंत्र और नागरिक स्वतंत्रता की माँग की विजय है।...दूसरों के मंत्री-मण्डलों की धमकियाँ, परम्परागत शत्रुता के दावे समस्या को हल नहीं कर सकेंगे।...साम्राज्यशाही के सामने लाठी सहकर सत्याग्रह और लीग के सामने तलवार की धौंस, यही क्या आप की नीतिज्ञता और वीरता है ?...एक दिन में इतने खून क्या आपको सन्तुष्ट करने के लिए काफी नहीं है ? दुश्मन के जश्न के लिए अपने जिस्मों की मशालें बनाकर मत जलाइये...।"

कुछ लोगों ने पुरी के लेख की बहुत प्रशंसा की। किसी ने इसे राजनैतिक दृष्टि से भूल माना। 'पैरोकार' के दफ्तर में सब लोग इस लेख से प्रसन्न नहीं थे।

पुरी को अपनी सफलता पर काफी उत्साह प्राप्त हुआ। वह आज फिर कनक के घर गया। वहाँ फिर नैयर उपस्थित था।

पुरी को कनक के व्यवहार में कुछ उपेक्षा का आभास हुआ। वह वहाँ अधिक न बैठ सका और वापस चला आया। घर आकर भी रात को वह कनक के व्यवहार के कारण खिन्नता महसूस करता रहा।

●

७ मार्च, जयदेव ने दफतर के कमरे में कदम रखा ही था कि उसकी और भगतराम की आँखें मिलीं। पुरी इशारा पाकर भगतराम के पीछे बाजार की ओर खुलते छज्जे में पहुँचा। भगतराम के चेहरे पर परेशानी स्पष्ट थी।

"गजब हो गया" भगतराम ने कशिश के कमरे की ओर संकेत करके बताया, "कहता है, हम लोग कांग्रेस और हिन्दुओं के साथ दगा कर रहे हैं। 'पैरोकार' में 'फिफ्थ कालमिस्ट' (शत्रु के भेदिये) घुस आये हैं। कहता है, तुम पर पहले ही शक था। तुमने पिछले साल नाविक-विद्रोह के अवसर पर भी कांग्रेस की पीठ में छुरी मारी थी। मुझ से नाराज है कि मैंने एक ऐसे अवसर पर तुम्हें एडीटोरियल लिखने दिया। तुम जानते हो, मेरी तबियत खराब थी। मैंने तुम्हारा लिखा पढ़ा भी नहीं था। तुम उस दिन न लिखते तो एक दिन बाद वही लिखते···।"

"मैंने लिखा है और उसके लिए मैं जिम्मेवार हूँ।" पुरी ने भगतराम की चिन्ता की परवाह न कर कह दिया।

पुरी कशिश जी के यहाँ से सन्देश पाकर उनके कमरे में पहुँचा। कशिश जी गम्भीर और तत्पर मुद्रा में बैठे थे। सिर पर नोकदार तीखी टोपी मौजूद थी। दोनों हाथों की उँगलियों को परस्पर जकड़े कुर्सी की पीठ से पीठ सटाये हुए थे। सामने मेज पर पैरोकार में पुरी का लिखा सम्पादकीय का पृष्ठ रक्खा था। लेख में स्थान-स्थान पर हरी पेंसिल से निशान बने हुए थे।

पुरी की नमस्ते के उत्तर में कशिश जी ने सामने रक्खे पृष्ठ की ओर संकेत कर प्रश्न किया—"यह क्या तमाशा किया आपने ?'

पुरी ने संयम से काम लेने के लिए उत्तर दिया—"पंडितजी, मैंने अपने विचार में तमाशा नहीं किया है। कम्यूनल डिस्टर्बेन्स (साम्प्रदायिक दंगे) की आग को शान्त करने के लिए अपील की है। मुझे कांग्रेस की पालिसी के मुताबिक यही मालूम हुआ।"

"ओह, वैरी क्लेवर ! आपका ख्याल है, सेन्टीमेन्ट की आड़ लेकर आपने जिस तरह कांग्रेस और हिन्दुओं की बैक में स्टैब किया (पीठ में छुरी भोंकी) है उसे हम समझ नहीं सकते ?"

पुरी ने तिरस्कार के व्यवहार को निगल कर उत्तर दिया—"मैंने अपने यकीन में कांग्रेस की पालिसी और इन्ट्रेस्ट के खिलाफ एक भी लफ्ज नहीं लिखा है।"

"कांग्रेस के लीडरों पर खूंरेजी (रक्त-पात) और इश्तग्राल (उत्तेजना) की तोहमत लगाना, उन्हें बेईमान, बदनियत कहना कांग्रेस का इन्ट्रेस्ट है ?" कशिश जी ने तीखे स्वर में कटाक्ष किया, "लीग के सामने घुटने टेकने की नसीहत कांग्रेस की पालिसी है ?"

"मैंने फैक्ट्स की बिना (तथ्य के आधार) पर लिखा है। तकरीरें मैंने सुनी थीं और उनकी रिपोर्ट अखबारों में मौजूद है। मैंने घुटने टेक देने के लिए हरगिज नहीं लिखा। मैंने लीग की भी गलती बतायी है।" पुरी ने सफाई दी।

"ओह वेरी क्लैवर! आप लीग और कांग्रेस दोनों के ही रहनुमा हैं। आप यहाँ अपने बॉसेज (मालिकों) को तालीम देने आये हैं ? हमें अपनी इन कमीनी हरकतों से बख्शिये। अपने उस्तादों के अखाड़े में ही अपने जौहर आजमाइये।" कशिश जी धमकी से चिल्लाये।

पुरी उत्तेजित हो गया—"बेशक, मैं ऐसी जगह काम नहीं करना चाहता जहाँ सच्चाई का गला घोंटना पड़े।"

"हूँ!" कशिश जी ने गहरा ताना दिया, "लीग से पहले बात हो चुकी है ? खैर, जाइये ? हमारे यहाँ ट्रेटरों (विश्वासघातकों) की जरूरत नहीं है।"

पुरी कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और क्रोध में गरज उठा--"ट्रेटर तुम हो !"

कशिश जी की आँखें सुर्ख हो गयीं ! उन्होंने मेज पर रखी घण्टी का बटन दबा दिया। कमरे के दरवाजे की घण्टी जोर से बोल उठी, परन्तु पुरी कहता गया --"तुम कांग्रेस को धोखा दे रहे हो, मुल्क को धोखा दे रहे हो, अवाम को धोखा दे रहे हो। लानत है तुम्हारी नौकरी पर।"

साथ के कमरे में लोग कशिश जी के चपरासी को बुलाकर पूछ रहे थे, भीतर क्या बात हो रही है ? चपरासी घण्टी सुनकर झपटता हुआ आया।

पुरी दरवाजा खोल चुका था, चपरासी के भीतर आ सकने के पहले ही वह बाहर हो गया था। उसे कशिश जी की चिल्लाहट सुनाई दी--"इस आदमी को बाहर निकाल दो। दफ्तर में नहीं आयेगा।"

८

जयदेव पुरी के 'पैरोकार' की नौकरी छोड़ देने या उसके 'पैरोकार', से निकाल दिये जाने की घटना सभी पत्रों के पत्रकारों को मालूम हो गई थी। परन्तु इस घटना का उल्लेख किसी पत्र में न हुआ। सभी पत्रों की अपनी-अपनी राजनीतिक और साम्प्रदायिक नीति थी। परन्तु पत्रकारों को अनुशासन में रखने की नीति के विषय में उनमें कोई भेद नहीं था।

असद, प्रद्युम्न, हीरासिंह, नरेन्द्रसिंह और महाजन आदि ने पुरी के साथ किए गए इस अन्याय का विरोध किया। उन्होंने पत्रकारों की सभायें कीं। पत्रकारों

को समझाया कि देश की ऐसी स्थिति में जबकि नित्य ही कहीं न कहीं फसाद हो रहा है, उन्हें भी पुरी का आदर्श सामने रख कर सर्वसाधारण के कल्याण के लिए आवाज बुलन्द करनी चाहिए। पुरी इन सभाओं में की गई अपनी प्रशंसा से और भी उत्साहित हुआ, और उसने सर्वसाधारण के कल्याण के लिए अपने प्राण तक देने की शपथ ले ली।

अब कहीं भी कोई फसाद वगैरह हो जाता तो कामरेडों के दल में पुरी भी जाता। इन सब सभाओं आदि से पुरी को आत्मिक संतोष तो मिलता, पर नौकरी छूट जाने के कारण घर की आर्थिक दशा देखकर उसे बहुत दुःख पहुँचता।

उसकी नौकरी के लिए सब ने कोशिश की पर सफल न हो पाए। सब के कहने पर पुरी ने अपने प्रति किये गये अन्याय का वर्णन रजिस्ट्री द्वारा महात्मा गाँधी के पास भी भेजा, परन्तु वहाँ से भी तीन सप्ताह तक तो कोई उत्तर न आया।

पुरी पिछले सवा बरस से जिस ढंग से पहनने-ओढ़ने और खर्चने लगा था, अब रूपये के अभाव में वैसा न कर सकना उसे बहुत अपमानजनक जान पड़ रहा था। प्रति मास एक सौ रूपया पाने की आशा में वह कई वस्तुएँ उधार भी लिए था। उस उधार को न चुका सकने की चिन्ता ऐसी थी जैसे कोई कीड़ा खोपड़ी में छेद किए दे रहा हो।

'पैरोकार' के दफ्तर में पुरी की फरवरी मास की तनख्वाह शेष थी। तनख्वाह के लिए दफ्तर में जाकर तकाजा करना उसके लिए सह्य नहीं था। भगतराम और लेखराम ने उसे समझाया कि उस की तनख्वाह स्वयं उसके घर पहुँच जाने की आशा व्यर्थ है। कशिश जी पुरी का नाम भी सुनने के लिए तैयार नहीं थे। पुरी कहीं आने-जाने के लिए टाँगे के किराये और लांडरी से कमीजें धुलवा सकने के लिए भी पैसों का मोहताज हो गया। पुरी को यह विवशता बहुत अपमानजनक लग रही थी। वह अपनी तनख्वाह का अधिकांश भाग माँ के हाथों में देता था। उस अवस्था में भी पिता-पुत्र की कमाई मिलाकर घर का निर्वाह बहुत सुविधा से नहीं चल रहा था। अब कुछ न देकर माँ के सामने कैसे हाथ फैलाता! गर्मी आरम्भ हो गई थी। इस समय लाहौर की सफेदपोश श्रेणी में सफेद कमीज-पतलून या सफेद सूट पहनना ही उचित था। पुरी के लिए यह और भी कठिन था।

अपनी इस कठिनाई और मानसिक व्यथा में पुरी को बार-बार कनक की याद आ जाती थी। २ मार्च और ६ मार्च को संध्या भी नैयर की उपस्थिति में कनक द्वारा दिखाई गई उपेक्षा की स्मृति उसे बेंध देती थी। पुरी इस बारे में कनक से बात करने के लिए आतुर था परन्तु उससे मिलने जाने पर बताना पड़ता कि वह बेरोजगार हो गया है, उसकी सौ रूपये मासिक की नौकरी भी अन्याय से छीन ली गयी है। अब वह आँधी से सड़क पर उड़ते जाते पत्ते की भाँति अनिकेतन है। कनक के घर इस दीन स्थिति में जाकर आत्म-सम्मान खोने से वहाँ न जाना ही भला था।

पुरी में काम करने की शक्ति थी और काम करने का उत्साह था। काम

करने के लिए उसका मन और मस्तिष्क छटपटा रहे थे परन्तु काम करने का अवसर उससे छीन लिया गया था।

अब लाहौर के पत्रों में पुरी के लिए कोई स्थान न था, परन्तु बिना किसी आश्वासन के वह लाहौर से बाहर जाने को भी तैयार न था।

पुरी कभी-कभी लेख आदि लिखकर पत्रों में भेज देता। उसके लेखों की प्रशंसा तो बहुत होती परन्तु पारिश्रमिक बहुत कम मिलता था। वह मन ही मन सोचता कि कहीं और नौकरी कर लूँ, पर थोड़े से पारिश्रमिक पर नौकरी करना उसे बहुत अपमानजनक लगता था।

वह चाहता तो सेठ गिरधारी लाल से कहकर अपनी कहानियों का संग्रह छपवा सकता था, परन्तु वह कनक के परिवार में अपने आर्थिक दैन्य की चर्चा भी नहीं करना चाहता था।

पुरी का 'अदायरा मुनव्वर' (मुनव्वर प्रकाशन) से भी परिचय था। वह वहाँ से प्रति पृष्ठ आठ आने की दर से एक अंग्रेजी उपन्यास अनुवाद के लिए ले आया था। जब कभी करफ्यू या दंगे के कारण वह बाहर न जा पाता, अनुवाद कर लिया करता था। पुरी आधा काम करके रूपये लेने की आशा से प्रकाशन गृह के मालिक गौस मुहम्मद के पास गया। परन्तु उसे तो पुस्तक छापने की जल्दी नहीं थी, अतः उसने पुरी को दो-तीन दिन के बाद बुलाया।

महीने भर से ऊपर बीत गया। पंजाब में कोई मंत्री-मण्डल स्थापित न हो सका था। शासन गवर्नर और उसकी नौकर-शाही के ही हाथ में था।

लीग का, पाकिस्तान की माँग का आन्दोलन बढ़ता ही जा रहा था। मास्टर तारा सिंह के अधिनायकत्व में 'ऐंटी पाकिस्तान लीग' की हुंकार कम नहीं थी। पूर्वी पंजाब से त्रस्त मुसलमानों के पश्चिम की ओर भागने के और पश्चिम पंजाब से भयभीत हिन्दुओं के पूर्व की ओर भागने के समाचार आ रहे थे। लोग भयंकर विस्फोट की आशंका कर रहे थे। सन् १९४२ के स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय तलवार, बन्दूक, पिस्तौल का नाम सुनकर पसीना आ जाता था। अब पुरी सुनता कि लोग निधड़क तलवारें, बर्छे, बन्दूकें जमा कर रहे थे। कुछ लोग पानी के नल कटवा कर कड़ाबीनें (तोड़ेदार बन्दूकें) भी बनवा रहे थे। अफवाह गरम थी कि लाला माधो शाह और सुखलाल के यहाँ से हिन्दुओं की रक्षा और पाकिस्तान के विरोध के लिए, दो-सवा दो सौ में चाहे जितने बन्दूक, पिस्तौल मिल सकते हैं।

कामरेडों और शान्ति-रक्षा कमेटियों के प्रयत्नों के बावजूद नगर के किसी न किसी भाग में दंगा हो ही जाता और कर्फ्यू लग जाता था। यूनीवर्सिटी में परीक्षा की तैयारी की छुट्टियाँ थीं। दंगे के वातावरण के कारण मास्टर जी और भाई ने भी तारा को अकेले बाहर जाने से मना कर दिया था। वह कभी व्याकुल होकर सोचती, हजारों लोगों की मूर्खता, धर्मान्धता और स्पर्धाओं का फल मुझे भोगना पड़ रहा है। तारा विवश थी। ऐसी अवस्था में पुरी भी घर बैठकर कर कुछ लिखने या अनुवाद करने के लिए विवश हो जाता था। कर्फ्यू हटने पर कामरेड फिर नाग-

रिक एकता के लिए सभा कर डालते या जुलूस निकालने लगते । पुरी उसमें अवश्य सम्मिलित होता ।

भाई का व्याख्यान सुनने की इच्छा प्रकट करके तारा उसकी छत्र-छाया में ऐसे अवसर पर जाने का उपाय बना लेती थी । असद भी स्थिति को समझ रहा था । ऐसे अवसर पर अवश्य उपस्थित रहता । पुरी के व्याख्यान देते समय दोनों को कुछ मिनिट आपस में बातचीत के लिए मिल जाते । सभा की समाप्ति पर असद उन दोनों के साथ-साथ शहालमी के रास्ते भोलापांधे की गली के सामने से रंग महल से होता हुआ दिल्ली दरवाजे चला जाता ।

तारा एक बार सहमी । जानती थी, भाई असद का आदर करता है परन्तु लगा, जैसे असद का तारा के बहुत समीप होते जाना भाई को सुहाता न हो । कुछ दिन से तारा को भाई की चिड़चिड़ाहट और क्रोध बढ़ गया जान पड़ रहा था । कारण जानती थी इसलिए भाई को दोष भी न दे सकती थी । अलबत्ता ज़रा सतर्क हो गयी ।

तारा की शंका सर्वथा निराधार भी नहीं थी ।

पुरी महीने भर से कनक के यहाँ नहीं गया था । पुरी पिछले दो बार की उपेक्षा के क्रोध को दबाये था । उसे कनक के 'फ्री' होने की अफवाहें भी याद आतीं । पुरी को यह शंका हुई कि कहीं कनक नैयर की ओर तो नहीं झुक गयी । वह तारा को 'फ्री' नहीं होने देना चाहता था, अतः वह इस मामले में सतर्क रहता ।

पुरी की नौकरी छूट जाने के कारण उसके मुहल्ले वालों को उससे पूरी सहानुभूति थी । उसके दुःख में उसके पड़ोसी खुशी मनाना उचित नहीं समझते थे । यह सहानुभूति तो दो-चार दिन में समाप्त हो गयी, परन्तु रतन, टीकाराम, बीर-सिंह आदि उससे खिंचे-खिंचे रहने लगे । वे लोग पाकिस्तान बनाने के विरोध में थे, और पुरी हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रचारक था, इस कारण उनकी बहुत तो पट भी नहीं सकती थी ।

पुरी गौस मुहम्मद के पास रूपये लेने गया तो उसने रूपये देने में मजबूरी दिखायी, और उसके सामने एक प्रस्ताव रखा । उसने बताया कि युनिवर्सिटी के प्रोफेसर शाह की इतिहास की तीन अँग्रेजी की पुस्तकों से सामग्री लेकर उर्दू में तीन सौ पृष्ठों में लिख देना है । इस काम के लिए पुरी को पाँच सौ रूपया मिलेगा, परन्तु पुस्तक पर नाम प्रोफेसर शाह का ही रहेगा ।

पुरी को यह बात पसन्द न आयी और उसने इन्कार कर दिया । फिर गौस मुहम्मद ने उसे एक हफ्ते का समय सोचने को दिया । वैसे पुरी के लिए तो रूपये का प्रलोभन कम न था, परन्तु वह अपने भविष्य पर पर्दा भी नहीं डालना चाहता था ।

गौस के वचनानुसार पुरी शुक्रवार को फिर उसके घर पहुँच गया । गौस का घर मुसलमानी मुहल्ले में था । जब पुरी वहाँ पहुँचा तो उसे गौस के व्यवहार में नाराजगी और रूखापन दिखायी दिया ।

गौस ने उसे बताया कि बाजार का हाल अच्छा नहीं है, उसे यहाँ नहीं आना

चाहिए था। उसने उसे बताया कि अभी मुसलमानों ने एक पूर्बिये को मार डाला है। और उसने बताया कि वह उसकी लाश को देखकर आया है, तभी से परेशान है। पुरी के पूछने पर कि उसने उस आदमी को अस्पताल क्यों नहीं पहुँचाया, गौस ने बताया कि एक बार वे लोग एक जख्मी को अस्पताल ले गये तो उन्हीं को पुलिस वालों ने पकड़ लिया, फिर बाद में पता चलने पर उन्हें छोड़ा।

गौस पुरी को अपने यहाँ अधिक देर न रोक कर उसे पहुँचाने गया। उसने पुरी से कह दिया था कि सुरक्षित स्थान पर ही वह उसका रूपया देगा। वह पुरी को एस० पी० एस० के हाल के पास पुल तक छोड़ने आया और वहाँ पहुँच कर उसने रूपया पुरी को दिया और उससे फिर उस इतिहास की पुस्तक की बात की। उसने पचास रूपये और बढ़ा दिये और उसने पुरी को सोचने के लिए दो दिन का समय और दिया।

पुरी रास्ते भर उस पुस्तक की बाबत ही सोचता रहा। उसने यही निश्चय किया कि वह बेनाम लिखकर अपना भविष्य नहीं बिगाड़ेगा। जब वह अपनी गली में घुस रहा था, उसे तीन आदमी भागते हुए दिखायी दिये। पुरी उन्हें पहचान गया। मेवाराम, बीरसिंह और रतन अपने-अपने घरों में घुस गये। उन्होंने भी पुरी को देख लिया था। रतन के हाथ में पिस्तौल थी।

पुरी ऊपर घर में पहुँचा तो उसे पता चला कि मोची दरवाजे वाली गली में कुछ शोर हो रहा था। गौर से सुनने पर उसे चिल्लाहट सुनाई दी। रतन ने उसे आकर बताया कि वह दौलू मामा का बदला ले आया है तो पुरी को बहुत दुःख हुआ। उसने सोचा, इस तरह तो न जाने कितने निर्दोष दौलू मामा मारे जायेंगे और लोग आपस में बदला ही लेते रहेंगे।

"जग्गी ! तारा !" जीने के नीचे गली में से बाबू रामज्वाया की पुकार सुनायी दे गयी।

"पैरी पैणा ताया जी !" पुरी ने रतन की बात बीच में छोड़कर जीने में खड़े बाबू रामज्वाया को उत्तर दिया और घर के भीतर सूचना दे दी, "ताया जी आये हैं।"

रतन ने भी अपनी बात छोड़कर बाबू रामज्वाया को सम्बोधित किया—"ताया जी पैरी पैणा।"

हरी ने छत पर जाकर खुली हवा में लेटे हुए मास्टर जी को खबर दी।

बाबू रामज्वाया को रतन से कुछ काम था अतः वे उसे लेकर छत पर चले गये थे। पुरी को उनकी बात का कुछ अनुमान हो गया। पुरी समझ गया कि रतन अपने मामा के साथ व्यापारियों का माल छुड़ाने और भेजने का काम करता है। बाबू रामज्वाया भी पार्सल आफिस में थे। सुखलाल साहनी भी इसी काम में थे अतः रतन का उनसे भी परिचय था। पुरी को मालूम था कि ये लोग पूर्वी पंजाब से शस्त्र मँगा रहे थे। ऐसे पार्सल चुंगी की राह से नहीं आ सकते थे अतः ये लोग उन्हें इधर-उधर करने का काम करते थे। रतन भी उनकी सहायता करता था।

बाबू रामज्वाया नीचे आये और भाई के पास खाट पर बैठ गये। उन्होंने तारा की शादी की बात आरम्भ की। उन्होंने कहा कि लड़के वाले जल्दी शादी करना चाहते थे पर मैंने उन्हें कुछ दिन के लिए बड़ी मुश्किल से रोका है, अतः अब शादी की तैयारी की जाये। तारा का परीक्षा देना व्यर्थ है। पुरी ने तारा का पक्ष लेना चाहा तो ताया ने उसे निकम्मा आदि विशेषणों से सम्बोधित करके चुप करा दिया। उन्होंने उसे खोसलों की लड़की से अपनी सगाई न होने देने पर भी कोसा। उन्होंने कहा कि लड़के वालों को किसी ने बताया कि तुम लोगों को लड़का पसन्द नहीं तो वे बहुत गुस्सा हुए, और जिससे वे गुस्सा हो जाते हैं उसका पीछा नहीं छोड़ते। पुरी ने जब लड़के के बारे में कुछ कहना चाहा तो उसे डाँट दिया गया। तारा ने भी शादी का विरोध किया, परन्तु उसे भी डाँट पड़ गयी। उसे भाई का भरोसा था, पर वह भी सफल न हो सका था। अतः जब मास्टर साहब बाबू रामज्वाया को छोड़ने चले गये तो वे दोनों भाई-बहन चुपचाप आकर बिस्तर पर पड़ गये। माँ ने खाने को कहा तो दोनों ने मना कर दिया।

माँ ने पुरी से कहा कि उसे ताया जी की बात में नहीं बोलना चाहिए था। पुरी ने माँ से कह दिया कि अगर वह रिश्ता तोड़ते हैं तो तोड़ लें, तारा परीक्षा देगी। समय पर अपने आप रिश्ता मिल जायेगा।

पिता के कदमों की आहट पर सब चुप हो गये। माँ ने मास्टर साहब से कुछ नहीं बताया। उनके पूछने पर उसने कह दिया कि सब खाना खा चुके हैं। मास्टर साहब खाने बैठे तो तारा और पुरी को बिना सम्बोधित किए ही उपदेश देने लगे कि शांति से काम लेना चाहिए। ईश्वर ही सब कुछ करने वाला है। मनुष्य को अहंकार नहीं करना चाहिए।

इतने में ही गली में तरह-तरह की आवाज़ों के साथ ही 'अल्लाहो अकबर' की आवाज़ भी सुनाई दी।

पुरी ने जल्दी से खिड़की में से झाँक कर देखा कि छोटी सी भीड़ मशालें, बल्लम, लाठियाँ और छुरे लेकर गली में घुस आई थी। भीड़ लोगों के घर जलाने का प्रयत्न कर रही थी, और खिड़कियों से ईंट आदि फेंक कर लोगों को ललकार रही थी। थोड़ी ही देर में कोहराम मच गया।

सारे मर्द हथियार आदि लेकर गली में आ गये और औरतें छतों पर से ईंटें बरसाने लगीं। अचानक आक्रमण करने वाली भीड़ में बहुत ऊँची सी लपट उठी और उसके साथ ही भयंकर धमाका हुआ। और कई चीखें भी सुनाई दीं। औरतों से ईंटें रोक देने को कहा गया। फिर भीड़ भी वापस चली गई।

घसीटाराम के घर में आग लग गयी थी। उसके और पन्नालाल के मकान की दीवार साझी थी। पन्नालाल के घर से लोग ऊपर चढ़ गये। औरतों ने घरों से पानी से भरे बर्तन लाने शुरू किए। सब आग बुझाने में लग गए। पुरी आग बुझाने का इंजन बुला लाया।

भागती हुई भीड़ में से एक लाश भोलापांधे की गली में रह गई थी, उसे वहाँ से हटा दिया गया, जिससे पुलिस उसकी तहकीकात न करे।

सारा बवण्डर एक घण्टे में समाप्त हो गया। गली कीचड़ से भर गई थी। घसीटाराम और पन्नालाल का कुछ नुकसान तो वैसे ही हो गया था, ऊपर से बम गिरने के कारण उनकी दीवार का पलस्तर उतर गया था। गली के सब लोगों को उनसे सहानुभूति थी।

इस घटना के बाद मर्दों ने निश्चय किया कि अब रात के समय दो-दो मर्द बारी-बारी से पहरा देंगे। दूसरे दिन सुबह बच्चों ने अपने-अपने घर से फेंकी गयी ईंटें उठा लीं। मुहल्ले वालों ने यह भी निश्चय कर लिया कि यदि मर्दों के घर पर न रहने पर पुलिस आये तो औरतें कह दें कि हमें कुछ मालूम नहीं।

पुरी कल रात बाबू रामज्वाया से बेरोजगारी का लांछन सुनकर बहुत खिन्न हुआ, उसने निश्चय कर लिया कि वह गौस मुहम्मद के पास जाकर इतिहास की पाठ्य पुस्तक का काम स्वीकार कर लेगा। उसने तारा को भी समझाया और स्वयं भी शांत हो गया।

तारा घर से बाहर जाकर असद से मिलना चाहती थी, परन्तु ऐसा सम्भव न था।

गली में पुलिस आयी। किसी ने उन्हें कुछ नहीं बताया, परन्तु पुलिस घसीटाराम के घर आग के चिन्ह और पन्नालाल के मकान की दीवार का बम से गिरा हुआ पलस्तर देख कर उन दोनों को पकड़ ले गयी थी। वीर सिंह दुकान से घर आया हुआ था, पुलिस उसे भी ले गयी थी। पुलिस ने सब लोगों के नाम-पते ले लिये। शनिवार था इसलिए बाबू गोविन्दराम, टीकाराम और बीरूमल भी दोपहर बाद घर आ गये थे। वे लोग गिरफ्तार किये गये लोगों की जमानतें और मुचलकों का प्रबन्ध करने चले गये थे। तीन आदमियों के गिरफ्तार हो जाने से गली में चिन्ता का सन्नाटा छा गया था। बच्चे खेल छोड़ कर उदास से घूम रहे थे।

६

लाहौर में चारदिवारी के भीतर पुराने शहर में दंगे, छुरेबाजी और आग का जैसा आतंक था वैसा अनारकली, ग्वालमण्डी, निस्बतरोड और मालरोड पर नहीं था। वहाँ ताँगे, मोटरें, साइकिलें और पैदल पूर्ववत चलते दिखाई देते थे। वहाँ शरबत, फल, गँडेरी, सब्जी और मिठाई बेचने वाले हिन्दू और मुसलमान फेरी वालों की पुकारें भी पूर्ववत सुनाई दे रही थीं। हाँ, पुराने शहर के भीतर की घटनाओं का आतंक वहाँ भी लोगों पर था। किसी समय कुछ भी हो सकने की आशंका लोगों के मन में बनी रहती थी।

कनक सवा महीने के विरह से व्यथित थी। उसके मन में केवल पुरी का

और उसकी निर्दय रुखाई का ही ध्यान था। अपने मन के दुःख की तुलना में कनक को छुरे और आग से आतंकित लोगों का दुःख भी तुच्छ जान पड़ता था। सोचती थी, मरने से क्या डरना! कुछ दिन उसने मान से प्रतीक्षा की कि पुरी के आने पर बोलेगी नहीं, केवल आँसू बहा-बहा कर पुरी की ओर देख कर उसकी निर्दयता का दण्ड उसे देगी। पर पुरी न आया तो कनक का मान परास्त हो गया। वह पुरी को खोजने के लिए बावली हो उठी।

कनक को पुरी के सिद्धान्त के लिए नौकरी पर लात मार देने और उसकी प्रशंसा में मजदूरों की सभा द्वारा प्रस्ताव पास करने के समाचार मिल चुके थे, परन्तु स्वयं पुरी से नहीं, सुरेन्द्र और जुबेदा से। उसे यह भी मालूम हो गया था कि पुरी सब कुछ छोड़कर हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए मंजूर, नरेन्द्रसिंह और दूसरे कामरेडों के साथ काम कर रहा है। यह सब बातें सुरेन्द्र ने ऐसी ध्वनि से कही थीं मानो कामरेडों की विजय की घोषणा कर रही हो और वह पुरी को कनक की अपेक्षा अधिक जानती हो।

१९४२ के मतभेदों के कारण कनक के मन में कम्युनिस्टों के प्रति तब भी कुछ विरक्ति थी। कनक के लिए यह कितना दारुण दुःख था कि पुरी से मिल पाने के लिए, उसका समाचार जानने के लिए सुरेन्द्र और जुबेदा से पूछना पड़े। तारा से वह कुछ पता ले सकती थी, परन्तु दंगे के कारण पुराने शहर के भीतर से लड़कियाँ प्रायः कालेज नहीं जा पाती थीं। तारा को परीक्षा की तैयारी के कारण भी कालेज से अवकाश था। कनक अपनी बेबसी पर गहरे निश्वास भर कर रह जाती। आँसू बहाना उसकी प्रकृति में न था, इसलिए उसका दुःख हलका भी न हो पाता। पुरी के त्याग और साहस के कारण उसके प्रति कनक की श्रद्धा पूर्वापेक्षा बढ़ गयी थी और पुरी उसकी उपेक्षा कर रहा था।

कनक को सुरेन्द्र की बहुत चिपटने और चबल-चबल करते रहने की आदत पसन्द नहीं थी। जुबेदा फिर भली थी, स्वभाव से गम्भीर और केवल काम की बात करने वाली। उन दोनों ने अपने काम के प्रति कनक की सहानुभूति देखी तो उसके यहाँ आने-जाने लगीं। सुरेन्द्र तो कनक का मकान अपने घर के मार्ग में होने के कारण दूसरे-तीरे आकर कुछ समाचार दे जाती। वह बात-बात में कह गई थी—'पुरी भाई यूनिटी पर बोलते हैं तो कमाल कर देते हैं। हमारे यहाँ बहुत देर तक बातें करते रहे।' यह आघात कनक के लिए और असह्य हो गया कि पुरी उसके मकान के समीप से निकल गया और उसके यहाँ नहीं झाँका। सोचती—आखिर मुझसे कौन अपराध हो गया है? वह भी हिन्दू-मुस्लिम एकता और नागरिक शांति के लिए प्रयत्नों में भाग लेने के लिए तैयार थी पर पुरी उससे कहता तो···!

३० मार्च को कनक ने सुरेन्द्र से पुरी के स्टूडेंट-फेडरेशन की ओर से शामिल होने और 'ब्रैडला हाल' में व्याख्यान देने जाने की बात प्रातः ही सुन ली थी। वह टाँगा लेकर दो बार कामरेडों से घिरे हुए पुरी के समीप से गुजरी पर आँखें तक न मिल सकीं। धैर्य सम्भव न रहा तो सोचा पत्र लिख दे। भोलापांधे की गली का

पता मालूम था परन्तु साहस न हुआ । पत्र जाने किस के हाथ में पड़े । पुरी से सुन चुकी थी, उसके माता-पिता आधुनिक विचारों के नहीं हैं ।

कनक के मन में सन्देह हुआ, अवश्य किसी ने उसके विरुद्ध पुरी के कान भरे दिये हैं । यह संदेह उसे सुरेन्द्र से पुरी की इतनी अधिक प्रशंसा सुनकर सुरेन्द्र के प्रति ही हुआ । सुरेन्द्र ने ही उसे दो बार ग्वालमण्डी चौक में बहिन कांता के देवर के साथ देखा था और देख कर मुस्करा दी थी । यों तो राजेन्द्र नैयर के साथ कार में जाते हुए कनक ने एक बार ट्रिब्यून के दफतर के पास पुरी को भी देखा था पर उस से आँखें न मिल पायी थीं । राजेन्द्र कभी-कभी आकर कनक को बहिन के यहाँ माडल टाउन ले जाता था । कनक को राजेन्द्र जरा भी अच्छा न लगता था । वह होजियरी के व्यापार और ब्रिज के अतिरिक्त कोई बात जानता न था ।

कनक को दैनिक पत्रों पर सरसरी निगाह डाल लेने की आदत थी । 'पैरोकार' में नागरिक समाचारों के स्तम्भ में उसने देखा--'भोलापांधे की गली में आग और बमबारी !' समाचार था, आक्रमण-कारियों ने गली में बम फेंक कर आग लगा दी थी । जाँच-पड़ताल करने वाली पुलिस ने भोलापांधे की गली के ही कुछ लोगों को गिरफ्तार भी कर लिया था ।

कनक समाचार पढ़ कर रह न सकी । पंडित जी प्रातः ही दफ्तर में कुछ जरूरी काम देख रहे थे । कनक ने जाकर पिता को समाचार सुनाया और याद दिलाया कि पुरी जी भोलापांधे की गली में ही रहते थे ।

"ओह अच्छा !" गिरधारी लाल जी ने आँखों पर से चश्मा उतार कर मेज पर रख दिया और ठोढ़ी पकड़ कर अप्रत्याशित समाचार के प्रति चिंता से बोले, "बहुत दिन हो गये, पुरी का तो कुछ समाचार ही नहीं मिला ।" स्वयं ही उत्तर दे दिया, "अपने काम में उलझा होगा । ही इज़ वेरी हार्ड वर्किंग गुड ब्वाय ।"

पिता की उपेक्षा से आहत होकर कनक ने कहा--"हम लोगों को उनका कुछ पता तो जरूर लेना चाहिए ।"

"पता ?" पंडित जी ने खोपड़ी खुजाते हुए कहा, "हाँ, पता तो जरूर लेना चाहिए, मगर गलियों में ढ़ूँढ़ना जरा मुश्किल होता है । खैर, विधिचन्द किसी काम से लुहारी दरवाजे जायगा तो उसे कहेंगे कि भोलापांधे की गली से पता लेता आये ।" पंडित जी ने फिर पढ़ने वाला चश्मा आँखों पर रख लिया और कागजों पर झुक गये ।

कनक ने मन ही मन अपना माथा पीट लिया । अपने कमरे में लौट कर सोचने लगी कि क्या करे ? कुछ मिनिट बाद फिर आकर पिता से कहा, "पिता जी, मुझे शान्ति भसीन के यहाँ जरूरी काम है । खाने के समय तक लौट आऊँगी ।"

"कहाँ-कहाँ, बेटा, इस हालत में अकेली जाओगी ?" पिता जी ने फिर मेज पर से आँखें उठायीं ।

"पिता जी, यहाँ समीप निस्बतरोड पर क्या डर है । अभी लौट आऊँगी ।"

कनक ने कपड़े बदले । घर से निकल कर ग्वालमण्डी के बाजार से टांगा लिया और शहालमी के भीतर भोलापांधे की गली के लिए चल दी ।

मच्छी हट्टा के तंग बाजार में टांगा भोलापांधे की गली के सामने प्रतीक्षा में खड़ा नहीं रह सकता था। कनक ने टांगे का नम्बर देख लिया और उसे जरा आगे रंगमहल के चौक में जाकर प्रतीक्षा करने के लिए कह दिया।

भोलापांधे की गली में एक टांगे पर ठीकरी का खेल खेलते बच्चों ने दौड़ कर कनक को जयदेव पुरी और तारा के मकान का जीना दिखा दिया।

दो दिन पूर्व संध्या समय बाबू रामज्वाया और पुरी में तारा के विवाह के सम्बन्ध में बातचीत के समय गरमा-गर्मी हो जाने के बाद घर में सभी के चेहरे लटक गये थे। उसके तुरंत बाद गली पर आक्रमण की घटना ने अपनी विभीषिका से रामज्वाया और पुरी की बातचीत के प्रभाव को घर के लोगों के मन पर कुछ फीका कर दिया था, परन्तु उस बात की लक्ष्य, तारा के लिए यह न हो सका। तारा के लिए ताऊ की बातें अब भी मृत्यु की खाई के समान उसे निगल जाने के लिए सामने फैली हुयी थीं। तारा को भाई का ही भरोसा था, परन्तु उस दिन भाई के पाँव भी लड़खड़ा गये थे।

पुरी ने बाद में भी तारा से कहा था कि वह परीक्षा की तैयारी न छोड़े। तारा का मन चिन्ता में डूब रहा था, परन्तु पुस्तक हाथ में लिये कोठरी में दीवार के साथ चटाई बिछा कर लेटी हुयी पढ़ने का यत्न कर रही थी। प्राय: सभी लड़कियाँ अपने घर में साधारण कपड़े ही पहने रहती हैं। तारा कपड़ों की कमी के कारण घर में ऐसे ही कपड़ों से निर्वाह कर लेती थी, जो बाहर जाते समय पहनने योग्य न होते थे। मन खिन्न, सिर और शरीर में हल्का-हल्ला दर्द भी होने के कारण उस समय उसकी अवस्था और भी फूहड़-सी लग रही थी। कंघी भी ठीक से नहीं की हुयी थी। घर में कोई मर्द नहीं था, इसलिए कन्धों पर दुपट्टा भी न था। पुस्तक सामने जरूर थी, परन्तु मन जाने का कहाँ भटक रहा था। बार-बार सोमराज के परीक्षा से निकाले जाने और उसके चार-दीवारी के बाहर के बाग में घूर-घूर कर देखने की घटना याद आ रही थी। तारा को उसकी तुलना में असद की बातें याद आ रही थीं—'क्या विश्वास, बिरादरी और सम्प्रदाय के भेद की खाई को लाँघ सकोगी...उसने उत्तर दिया था—आप हाथ पकड़ेंगे तो लाँघ जाऊँगी।' उस संकट में उसका मन असद से मिल कर, परामर्श करके मार्ग निश्चय करने के लिए व्याकुल था।

तारा को जीने में कदमों की आहट सुनायी दी। सोचा, पुष्पा या सीता रतन की माँ के यहाँ जा रही होंगी। जीने की ओर से सुनायी दिया—"तारा बहिन!"

तारा ने लेटे ही लेटे गर्दन मोड़ कर जीने की ओर देखा, कनक का चेहरा झाँक रहा था।

कालेज की परिचित लड़की, वह भी दूसरे कालेज की और भाई की मित्र लड़की द्वारा वैसी अवस्था में देखे जाने की लज्जा से तारा पृथ्वी में गड़ गयी। झटपट उठ बैठी, जैसे कोई दबा हुआ स्प्रिंग छूट गया हो। कहना ही पड़ा—"आओ! आओ!"

कनक ने भीतर आ आत्मीयता से मुस्करा दिया।

"पीढ़ी लाती हूँ। ठहरो, एक पल।" तारा ने अपने साथ चटाई पर बैठने से कनक के कपड़े मैले हो जाने और मसले जाने की आशंका से कहा। कनक के बाहर जाने के लिए पहने कपड़ों से अभी तक ताजगी की आब और आलमारी की सुगन्ध नहीं मिटी थी।

"नहीं, नहीं ठीक तो है।" कनक ने तारा को कोहनी से पकड़ कर चटाई पर खींच लिया और धम से चटाई पर बैठकर पीठ दीवार से लगा ली। तारा अपनी गरीबी के उघड़ जाने से वैसे ही संकोच अनुभव कर रही थी जैसे व्यक्ति अपने किसी दोष के प्रकट हो जाने से गर्दन झुका लेता है। उसी समय उसकी माँ बरामदे के साथ के आँगन में बँधी रस्सी पर ताजे कपड़े सूखने डाल कर रसोई की ओर आ गयी। माँ केवल ब्लाउज और पेटीकोट ही पहने थी। तारा और भी लजा गयी। उसने माँ की ओर देख कर कह दिया, "बहुत धो लिये, अब रहने भी दो।"

कनक ने तारा की माँ को नमस्ते करके कहा—"हमारी माँ भी दिन भर घर सम्भालती है। घर का तो काम ही ऐसा होता है।" फिर तारा से बोली, "आज अखबार में तुम्हारी गली में दंगा हो जाने का समाचार था। हम सब लोग पढ़ कर बहुत घबराये। सुरेन्द्र और जुबेदा भी आने के लिए कह रही थीं। मैं शहालमी के बाहर चड्ढा जी के यहाँ आयी था, सोचा—तुम्हें देखती चलूँ। अखबार में तो था, गली में बम फेंका गया और आग लगा दी गयी। किसी को चोट तो नहीं आयी ? बम का नाम सुनकर तो···।"

कनक ने बताया—"मोची दरवाजे के बाजार की गली में भी बम फटने से एक मृत्यु और नौ आदमियों को चोट लगने की खबर थी।"

तारा बताये बिना न रह सकी—"पहले इसी गली के लड़कों ने वहाँ जाकर बम फेंके थे। भाई तो इन्हें बहुत समझाते हैं पर क्या किया जाय।"

तारा ने गली में हुए काण्ड की बात संक्षेप में सुना दी—

...भाई जी और मेवाराम लाठियाँ लेकर आगे बढ़े। स्त्रियाँ फौरन संडासें गिरा-गिरा कर गली में ईंटें बरसाने लगीं। ईंटों से सिर कुचल गये...। आदमी को खींच कर दूसरी गली में छोड़ आने और खून धो देने इत्यादि की बातें। अपनी उलझन भी प्रकट की, "क्या किया जाये, भाई एकता के लिए इतना कर रहे हैं, परन्तु आदमी आत्मरक्षा के लिए तो विवश हो जाता है। पुलिस हमारी गली के तीन आदमियों को गिरफ्तार करके ले गयी है। सुबह से भाई और दूसरे लोग उन्हें जमानतों पर छुड़ाने के लिए गये हुए हैं...।"

"इन्हें...!" कनक के मुख से निकल गया।

तारा ने उसकी ओर देखा।

कनक ने सँभल कर बात बदल दी—"हाँ, तुम्हारी परीक्षा की तैयारी का क्या हाल है ?"

"हाल क्या है !" तारा ने अँगूठे का नाखून दाँत से खोंटते हुए निरुत्साह से

उत्तर दिया, "एक बार तो स्थगित हो चुकी है। नहीं मालूम परीक्षा इस वर्ष होगी भी या नहीं। हुयी भी तो जाने मैं दे पाऊँगी या नहीं ?"

"हाय, यह क्या कह रही हो ? सब कहते हैं, तुम तो बेस्ट स्टूडेंट में से हो।" कनक बोली और पूछा, "इसके बाद एम० ए० का विचार भी है न ?"

तारा की गर्दन लटक गयी—"यह सब किस्मत में कहाँ है !"

"वह, क्यों ?" कनक ने कहा, हमारे जैसे थर्ड डिवीजनर भी पढ़े जा रहे हैं।"

अपने दुर्भाग्य की लज्जा छिपाने के लिए तारा ने सिर झुका कर कहा—"चांस ही कहाँ है। माता-पिता नहीं मानेंगे...।"

"पर तुम्हारे भाई तो जरूर पढ़ने के लिए कहेंगे।" कनक ने विश्वास प्रकट किया। वह तारा के भाई के विषय में सुनना चाहती थी।

"कैसे कहेंगे ?" तारा ने गहरा श्वास लिया, "भाई स्वयं परेशान हैं। नौकरी छूट गयी है। तुम्हें तो मालूम ही होगा। घर की हालत पहले ही कौन अच्छी थी। भाई किसी पब्लिशर से अनुवाद का काम ले आते हैं, परन्तु अनुवाद करें या शांति-रक्षा का काम करें ? यों तो भाई किसी न किसी समय काम कर ही डालते हैं। मुनव्वर के यहाँ से अनुवाद का काम ले आये थे। डेढ़ सौ का काम करके ले गये। तीन चक्कर लगाये हैं तो आधा रूपया उसने दिया है। ऐसी हालत में काम करने का उत्साह भी क्या हो ?"

तारा कनक के सामने भाई की योग्यता की सराहना आवश्यक समझती थी। कहती गयी—"यों भी जब से नौकरी छूटी है, भाई का मन बहुत खिन्न रहता है। 'पैरोकार' के एडीटर ने एक मास की तनख्वाह दबा ली है। भाई माँगने भी नहीं गये। भाई की आदत है, कष्ट चाहे सह लें, अपमान नहीं सह सकते। जानती हो, घरों में बीसियों झगड़े चलते ही रहते हैं। उन्हें कोई कुछ कह देता है तो और भी परेशान हो जाते हैं। तुम उनकी योग्यता तो जानती हो, परन्तु अवसर न मिले तो क्या करें...।"

कनक पुरी द्वारा न्याय और आदर्श के लिए नौकरी पर लात मार देने के लिए उसके प्रति श्रद्धा करती थी। उसने पुरी के नौकरी छोड़ देने के समाचार का मन ही मन स्वागत किया था। नौकरी छोड़ देने के दूसरे पक्ष का उसे अनुमान ही न था, मानो पुरी 'पैरोकार' की नौकरी केवल साहित्यिक शौक के लिए कर रहा था। तारा से स्थिति का आभास पाकर कनक ने गहरी वेदना अनुभव की। लज्जा भी अनुभव की कि उसे इस पक्ष का ज्ञान क्यों नहीं था और ऐसी अवस्था में वह क्यों पुरी से इतनी दूर रही।

तारा को सहसा याद आया—"तुम्हारे लिए लस्सी मँगाऊँ ? पर तुम्हें तो शायद चाय की आदत......।"

"नहीं-नहीं, कुछ नहीं !" कनक ने तारा को रोकने के लिए उसके कन्धे पर हाथ रख दिया, "आज नाश्ता बहुत देर से किया है। हाँ, पानी एक गिलास जरूर लूंगी।"

तारा ने ऊषा को पुकारा—"हरी कहाँ गया है, बरफ मँगा ले।"

ऊषा भी घर से बाहर जाने योग्य कपड़ों में नहीं थी। तारा ने सुझाया, "विजय को कह दे या पीतो को आवाज दे ले।"

कनक कहती रही—"बरफ नहीं, घड़े का पानी दो। मेरा गला ठीक नहीं है...।"

ऊषा ने रसोई में जाकर कपड़े धोने में व्यस्त माँ से बरफ के लिए एक पैसा माँगा। माँ ने बरफ की आवश्यकता का कारण पूछ कर कहा—"आलमारी के ऊपर के खाने में रूमाल में बँधे रखे हैं। एक पैसा ले ले।"

कनक यह सब देख कर पुरी की कठिनाई के अनुमान से सिहर उठी।

कनक ने फिर बात शुरू की—"पिता जी इन्हें—पुरी जी को—बहुत याद करते हैं...।"

तारा के कानों ने तुरन्त पकड़ा—'इन्हें !' उसे अच्छा लगा। वह सुनती गयी।

"पिता जी पुरी जी के लिखने की तो बहुत ही प्रशंसा करते हैं। कई बार याद करते हैं, कई दिन से नहीं आये......।"

तारा बोल पड़ी—"बहिन, भाई को फुर्सत ही कहाँ मिलती है ? अदायरा मुनव्वर ने एक बहुत जरूरी काम के लिए कहा है परन्तु......।"

"वाह !" कनक ने तुरन्त उलाहना दिया, "सुरेन्द्र के यहाँ तो जाते हैं। जुबेदा और सुरेन्द्र कह रही थीं। तुम भाई-बहिन को हमारे यहाँ जाने की ही फुर्सत नहीं मिलती। भई माना, हम लीडर नहीं हैं, छोटे आदमी हैं, पर हमारा मकान भी तो रास्ते में है। सच बताओ कब आओगे तुम दोनों ?"

"हाय, क्या कह रही हो !" तारा कनक की वेदना समझ कर बोली, "भाई का जितना आप लोगों से परिचय है, उतना किसी दूसरे से कहाँ है। शान्ति आन्दोलन के लिए जाना पड़े तो दूसरी बात है। शहर में जो हालत है, तुम जानती हो। मैं तो कहीं आती-जाती नहीं। भाई को कल तो उधर जरूर ही जाना होगा। रेलवे यूनियन के कामरेड इब्राहीम का आदमी अभी कुछ देर पहले आया था। कल तीन बजे के लिए भाई को पार्टी आफिस में बुलाया गया है।"

कनक ने कलाई पर घड़ी देखी और चलने के लिए उठ गयी—"चलूँ, मरा टांगे वाला परेशान हो रहा होगा। बहिन, परीक्षा तुम्हें देनी होगी। पुरी जी से नमस्ते जरूर कहना और पिता जी का संदेश कि याद करते हैं।"

●

कनक पुरी को कुछ रूपये देना चाहती थी, पर उसके जेब-खर्च में से तो यह काम हो नहीं सकता था, अतः उसने अपने पिता जी से भूठ बोला कि उसके पास जुबेदा के सत्तर रूपये थे, जो कहीं खो गये, और वह पिता जी से रूपये ले आयी।

कनक को मालूम था कि मंगलवार को तीन बजे पुरी पार्टी दफ्तर जाएगा।

सो वह जुबेदा के घर जाने के बहाने से ढाई बजे ही घर से निकल आयी। वह रास्ते में पुरी की प्रतीक्षा करती रही। आखिर वह आता हुआ दिखाई दिया।

पुरी अचानक कनक को देखकर संकुचित सा हो गया, क्योंकि उसके कपड़े यूँ ही मुसे-मुसे थे। कनक पुरी को लेकर वीनस गई, वैसे तो पुरी पार्टी दफ्तर जाने की जल्दी में था परन्तु कनक की जिद्द के आगे उसकी कुछ न चली।

कनक उसे इतने समय तक न मिलने का उलाहना दे देकर रोती रही। पुरी ने अपनी नौकरी छूट जाने की बात बताते हुए कहा—"तुम तक पहुँचने के लिए मैंने जो जीना बनाना शुरू किया था, वह गिरा दिया गया।"

इस पर कनक ने उसे टोक दिया—"कौन नहीं जानता कि नौकरी पर आपने स्वयं सत्य और न्याय के लिए लात मार दी है, सभी यह जानते हैं और आपका आदर करते हैं।"

दोनों में इसी तरह की बातें चलती रहीं। कनक द्वारा शादी की बात उठायी गई, तो इस पर पुरी ने कहा—"नाट जस्ट एट दिस मोमेंट। कुछ समय और ठहर ही जाओ। मैं जल्दी ही स्थिति सम्भाल लूँगा।"

"पर अब मिलोगे तो? हमारे यहाँ आयेंगे आप? पिता जी से क्यों बात नहीं करते? आपकी कहानियों का एक संग्रह उनके पास है।"

"पिता जी से क्या बात करूँ? उनके सामने यह कहूँ कि मैं अपदार्थ हूँ, अपने पैरों पर खड़ा होने योग्य भी नहीं। आप अपनी लड़की ऐसे आदमी को सौंप दीजिए?"

"अपदार्थ होने का क्या मतलब?" कनक ने इस शब्द के प्रति विरोध प्रकट किया और बोली, "जैसे आते-जाते थे, उस में क्या हर्ज है? जरूर आना!"

"ऐसी अवस्था में मेरा मन झिझकता है।"

इसी प्रकार की बहुत सी बातें हो चुकीं तो कनक ने पुरी को रूपये दिये, परन्तु उसने लेने से इन्कार कर दिया, क्योंकि इससे उसके आत्म-सम्मान को चोट पहुँचती थी। कनक अनुरोध करती रही, उसने यहाँ तक भी कहा कि क्या मेरी चीज आपकी नहीं है तो इस पर पुरी बोला—"मेरे आत्म-सम्मान को ठेस मत पहुँचाओ।"

कनक दुःखी मन से रुपये वापस लेकर घर गयी, पर उसे रास्ते भर यही खयाल सताता रहा कि पुरी ने रुपये क्यों नहीं लिए। उसने मन ही मन निश्चय किया कि वह पुरी को रुपये देकर ही रहेगी।

घर आने पर कनक को कंचन ने बताया कि उसके जाने के बाद जुबेदा और सुरेन्द्र आई थीं। पिता जी जुबेदा को रुपये देते रहे, परन्तु उसने इन्कार कर दिया कि उसे कनक से कोई पैसा नहीं लेना है। यह सुनकर कनक बहुत घबरायी। वह पिता के सामने जाने से बचती रही, पर अन्त में पिता के बुलाने पर उसे जाना पड़ा। पिता के सामने पहले तो वह कुछ न बोल पायी, परन्तु बिना कुछ बताये भी छुटकारा न था अतः उसने पिता से फिर बहाना बनाया कि तारा को परीक्षा की फ़ीस आदि देनी थी, सो मैं उसकी सहायता करना चाहती थी। उसने बाप को रुपये वापस कर

दिये और बताया कि पुरी जी ने लेने से इन्कार किया है। कनक की बात सुनकर पिता कुछ चिंतित हुए, फिर उसे सोने के लिए भेज दिया।

कनक जीना चढ़कर अपने कमरे की ओर आ रही थी तो संतोष से उसके कदम तेजी से उठ रहे थे। उसने परिस्थिति को चतुरता से सँभाल लिया था। बिस्तर में लेटते ही उसे नींद आ गई। उसका मस्तिष्क दिन भर की उलझनों से थक गया था।

गिरधारीलाल जी का अनुमान अल्हड़ नवयुवा बेटी की चतुरता के आच्छादन को सहज ही बेध गया। उन्होंने सोचा, मुझसे छिपा कर यह सब करने की आवश्यकता क्या थी? कनक जयदेव को पहले की तरह पुरी भाई जी नहीं कह रही थी। पंडित जी अपनी इस 'तेज बेटा' की ओर कुछ अधिक ध्यान रखना ही उचित समझते थे। उसके कुछ बन सकने की संभावना थी तो उसके धक्का और चोट खा जाने की आशंका भी थी। तीन वर्ष पहले ही वह क्रिश्चियन कालेज के एक लेक्चरार को अपना सब कुछ समझ लेना चाहती थी। ग़नीमत यह हुआ कि लेक्चरार विवाहित था। कनक जान गयी कि वह उसे धोखा दे रहा था...।

●

पुरी मंगलवार के दिन कम्युनिस्ट पार्टी के दफतर में हुई मीटिंग के परिणाम से संतुष्ट था। अगले ही दिन से रेलवे मजदूर यूनियन और स्टूडेंट फेडरेशन ने शांति-स्थापना के लिए कामरेड इब्राहीम के नेतृत्व में 'शांति के लिए जंगी आन्दोलन' (मिलिटेंट पीस मूवमेंट) आरम्भ कर दिया। इतने बड़े जुलूस न लीग के निकले थे और न ऐंटीपाकिस्तान लीग के ही। जुलूस के पैरों से इतनी धूल उड़ती थी कि धूल का एक बादल सा जुलूस के ऊपर-ऊपर चलता रहता। 'कांग्रेस-लीग-अकाली एक हों!' 'जम्हूरी वजारत कायम हो!' 'हिन्दू-सिक्ख-मुस्लिम भाई-भाई!" फिरकापरस्ती (साम्प्रदायिकता) मुरदाबाद!' और 'सल्तनतशाही मुरदाबाद!' के नारे इतनी धमकी से लगाये जाते थे कि सुनने वाले शांति के उपदेश के साथ फिसाद न करने की चेतावनी और धमकी भी अनुभव करते थे। हिन्दू और मुस्लिम मुहल्लों की सीमाओं पर रेलवे मजदूरों ने दोनों ओर के लोगों के सहयोग से शांति-रक्षा के लिए पहरे भी बैठा दिये। एक बार फिर शांति स्थापित हो गई दिखाई देती थी।

पुरी 'अदायरा मुनव्वर' के यहाँ से लाये हुए, इतिहास की पाठ्य पुस्तक के संकलन के काम में तन-मन से लग गया था। गरमी के कारण वह रात में खुली छत पर सोता था। ज्यों-ही पढ़ने-लिखने लायक प्रकाश होता, वह काम पर लग जाता। प्रोफ़ेसर शाह द्वारा बतायी तीन पुस्तकों को मिलाकर नयी पुस्तक लिखने का काम सरल न था। प्रातः छः से ग्यारह तक की बैठक में पहले पढ़ कर बाद में लिखना होता था। वह कठिनाई से पाँच या छः पृष्ठ का मसविदा लिख पाता।

इतिहास का इस पुस्तक के संकलन में तारा सहयोग दे सकती थी, इतिहास उसका भी विषय था, परन्तु तारा उर्दू लिखना न जानती थी। शांति-रक्षा का आन्दो-

लन चल ही रहा था। पुरी जुलूसों और सभाओं में अब कम जाता था। दोपहर बाद भी तीन-चार पृष्ठ का काम कर लेता। मन में इच्छा थी—जल्दी ही अदायरा मुनव्वर से साढ़े पाँच सौ रुपये लाकर दिखा दे तो पिता और ताऊ के सामने कुछ कह सकने का उसका अधिकार प्रमाणित हो जायेगा।

पुरी सोचता, यदि ऐसा काम लगातार मिलता रहे तो वह नौकरी की परवाह भी क्यों करे? प्रकाशक चाहे बीस हजार कमा ले और पाठ्य पुस्तक पर अपना नाम देने वाले को दस हजार दे दे, मुझे पाँच सौ ही दे, पर दे। जीवित रह सकने के लिए उसने अपना शोषण भी मंजूर कर लिया या शोषण के तंग द्वार से निकल पाने के लिए कुछ समय के लिए झुकना आवश्यक था तो वह झुक जाने के लिए तैयार हो गया था।

नगर में शांति जान पड़ती थी। पुरी तन्मयता से अपना मार्ग बनाने का यत्न कर रहा था, परन्तु तारा का मानसिक वेदना और बेचैनी बढ़ती जा रही थी। मास्टर जी और माँ में जब बात होती, विवाह के खर्च के लिए नारीवाल के मकान का भाग बाबू रामज्वाया को बेच देने की चर्चा चलती थी। विवाह के लिए कपड़ा और जेवर खरीदने के सम्बन्ध में विचार होता था। माँ जेठानी से भी राय लेने उच्ची गली जाती थी। शीलो की माँ स्वयं भी राय देने आती थी।

विवाह की तैयारी का काम आरम्भ कर देने के लिए सलवार-कमीज के दो सूटों के लिए रेशमी कपड़ा, गोटा-किनारी आदि खरीद लिया गया था। मेलादेई, पुष्पा, रामप्यारी, जीवां, भागवन्ती के साथ बैठी फैशन और डिजाइन तय करने लगीं। उन्होंने तारा को सुना कर कहा—"इससे अच्छा काटना-सीना कौन जानता है? अपनी चीज खुद शौक से सीये, इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है? आज-कल तो जवान लड़कियाँ स्वयं ही अपना दहेज तैयार करती हैं, इस में शरम क्या है?"

तारा को लग रहा था, उसका कफन तैयार किया जा रहा है। सब तैयारियाँ करके एक दिन उसका गला घोंट कर उसका शरीर उस कफन में लपेट कर एक गुण्डे के हवाले कर दिया जायगा। भाई देख रहा है और चुप है। वह दाँत पीस लेती···नहीं नहीं, ऐसा नहीं होने दूँगी।···यह घर ही छोड़ दूँगी।···यही लोग मुझे निकाल रहे हैं, तो मैं क्या करूँ?···उन्होंने कहा—परिवार, बिरादरी, विश्वास और सम्प्रदाय की खाइयों को लाँघ सकोगी? मैंने तो कहा था—आप हाथ पकड़ेंगे तो लाँघ जाऊँगी। उनसे कहूँगी, समय आ गया है, हाथ पकड़िये। चाहे जहाँ जायें, कहीं भी चले जायेंगे।

पुरी काम में ऐसा जुटा था कि कहीं जाता ही न था। तारा मन ही मन छटपटाती प्रतीक्षा कर रही थी, भाई आन्दोलन में जायें तो वह भी साथ जाये और उनसे बात करके निश्चय करे···।

एक दिन काफी देर हो गई, फिर भी पुरी इतिहास की पुस्तक के काम में तन्मय था कि पता चला 'नया हिन्द पब्लिकेशन्स' के विधिचन्द आये हैं। उन्होंने आकर बताया कि पंडित गिरधारी लाल जी ने उसे बुलाया है। पुरी ने व्यस्तता के

कारण मजबूरी जतायी, परन्तु विधिचन्द ने बताया कि पंडित जी ने जरूर से बुलाया है तो पुरी ने आश्वासन दिया कि अवकाश मिला तो आज ही आ जाऊँगा।

पुरी ने अपना एक जोड़ा कपड़ा तैयार करवाया। तारा ने भी कनक से मिलने की इच्छा प्रकट की—वैसे सच में वह सुरेन्द्र के घर जाकर असद से मिलना चाहती थी—तो पुरी ने सोचा बेकार पंडित जी के सामने और भी हमारे दारिद्रय का भेद खुलेगा सो उसने तारा को टाल दिया। तारा मन मसोस कर रह गई।

पुरी पंडित जी के घर दफ्तर के दरवाजे से घुसा, पंडित जी ने उसका बड़े प्रेम से स्वागत किया। उसके बाद वह पुरी से उसके कहानी संग्रह के विषय में बात करते रहे, परन्तु उन्होंने बताया कि आजकल कहानी की मार्केट ठीक नहीं है अतएव उन्होंने पुरी को उपन्यास लिखने की राय दी।

पुरी ने उनको इतिहास की पुस्तक के बारे में बताया। इस पर पंडित जी ने 'रेत की नींव', नामक उपन्यास का उर्दू में अनुवाद करने का प्रस्ताव पुरी के समक्ष रखा। पंडित जी को वह उपन्यास पसन्द था, वह उसके कुछ भाग कंचन से सुन चुके थे।

पंडित जी ने तुरन्त ही किताब मँगवा कर पुरी को दे दी। उन्होंने प्रति पृष्ठ के अनुवाद का दाम तय करना चाहा। पहले तो पुरी ने पैसे लेने से इन्कार किया, परन्तु पंडित जी के कहने पर प्रति पृष्ठ बारह आने के हिसाब से सौदा तय हो गया और पंडितजी ने पुरी को सौ रुपया अग्रिम भी दे दिया।

पुरी पंडित जी से कह कर कनक से मिलने बैठक में चला गया। कनक ने कुछ मान दिखाते हुए पुरी को उलाहना दिया कि आप मेरे कहने से तो नहीं आये, पिता जी ने बुलवा भेजा तो आये।

कंचन और पंडित जी भी बैठक में आ गये। उन लोगों ने चाय पी और आपस में बातें करते रहे। पुरी सबके सामने क्या बात करता, अतः जाने को तैयार हो गया। कनक ने पिता जी से आज्ञा ले ली कि मैं पुरी जी के साथ शहालमी तक चली जाऊँ, वहाँ मुझे सरला से मिलना है।

रास्ते में कनक पुरी से पूछती रही कि पिता जी से क्या बातें हुयीं। पुरी ने बताया और आशंका प्रकट की कि शायद कनक ने पंडित जी से उसकी सहायता का सिफारिश की थी। कनक ने पुरी के मन से इस आशंका को निकाल दिया।

दोनों बाग में जाकर बहुत देर तक बातें करते रहे, समय का कुछ ध्यान न रहा।

पुरी का मन शनैः शनैः सान्त्वना पा रहा था। मन में एक कल्पना बनती जा रही थी। कनक की बात असंगत नहीं लग रही थी।···किसी दिन मुझे पंडित जी का नयाहिन्द प्रकाशन और प्रेस सँभालना पड़ सकता है। मेरी मौलिक पुस्तकों से इस प्रकाशन का महत्व बढ़ेगा। एक अपना पत्र भी प्रकाशित किया जा सकेगा। एक पत्र का साधन हाथ में होने पर कितनी शक्ति हो सकेगी? उस समय कर्मचन्द कशिश और डाक्टर रा`बिहारी को पूछ सकूँगा।

जब बहुत देर हो गई तो दोनों एक-दूसरे का हाथ थामे तेज कदमों से बाग के बाहर निकल कर टांगे के अड्डे की ओर बढ़ चले। पुरी ने पूछा—"हमें इस प्रकार देख कर आने-जाने वाले क्या समझते होंगे ?"

"ठीक ही समझते होंगे। हैं ही ?" कनक ने उत्तर दिया।

१०

पुरी ने महसूस किया कि इतिहास की पुस्तक के संकलन की अपेक्षा 'रेत की नींव' का अनुवाद करना कहीं सरल है। अतः वह उसी काम में लग गया। इतने पर उसने सोचा कि यदि कोई हिन्दी पढ़ता जाये तो उसे उर्दू में और भी जल्दी लिखा जा सकता है। यह सोचकर उसने तारा से बात की। तारा ने हिन्दी पढ़ते जाना स्वीकार कर लिया। उपन्यास रोचक था, अतः उसे तारा जल्द ही पढ़ जाना चाहती थी। वैसे तारा का उपन्यासों की ओर कोई झुकाव न था।

पुरी ने क्रम बना लिया था, वह सुबह इतिहास की पुस्तक का काम करता और दोपहर में 'रेत की नींव' का अनुवाद कर लेता था।

तीस अप्रेल को कम्युनिस्ट पार्टी के दफ्तर से एक आदमी मंजूर का पत्र लाया था, जिसमें उसने पुरी को एक मई को भाषण देने के लिए बुलाया था।

पुरी पाँच बजे सभा में पहुँच गया। तारा भी उसके साथ गई थी। तारा और असद का लगभग एक महीने बाद आमना-सामना हुआ था, पर तारा भाई के रहते कुछ कह न सकी। परन्तु असद उसकी परेशानी भाँप गया और बोला—

"क्या बात है ?"

"मरने-जीने का ही सवाल है।"

"कहाँ मिल सकोगी ?" असद ने पूछा।

"सुरेन्द्र के यहाँ ही आ सकती हूँ।"

"कब ?"

"जल्दी कोशिश करूँगी, पाँच-छः दिन या सप्ताह के भीतर ही।"

सब ने पुरी के भाषण की प्रशंसा की। तारा ने नरेन्द्र सिंह से सुना कि सुरेन्द्र को मलेरिया हो गया है। तारा ने पुरी को सुनाकर नरेन्द्र से कहा कि वह तीन-चार दिन तक सुरेन्द्र को देखने आयेगी।

पाँच मई को तारा भाई के साथ अनुवाद का काम कराने बैठी तो उसने भाई से सुरेन्द्र के घर जाने की बात कही। पुरी ने कहा कि पाँच बजे तक काम करवा दो तो मैं छोड़ आऊँगा या तुम चली जाना। तारा ने जल्दी-जल्दी काम करवा दिया और माँ से कह कर तैयार होने चली। अभी वह कपड़े बदलने जा ही रही थी कि पता चला कि शीलो अपने लड़के को लेकर आई है।

तारा के हाथ से सलवार छूट गयी। उसे उठाकर प्रसन्नता से किलककर,

शीलो के बच्चे को गोद में लेकर बार-बार चूम लेना पड़ा। मन भीतर ही भीतर घुट कर रह गया। शीलो अपने पहले बच्चे को पहली बार लेकर उसके यहाँ आई थी। वह उसे छोड़ कर जैसे चली जा सकती थी ?

मार्च महीने के ठीक बीचोबीच जब दंगे खूब जोरों पर थे, तभी शीलो के लड़का हुआ था। मास्टरजी, भागवंती और तारा को बधाई देने जाना आवश्यक था। बाजारों के रास्ते जाना सम्भव न था इसलिए हिन्दू-गलियों के रास्ते शीलो के ससुराल 'शीशामोती' में बधाई देने गये थे। बच्चा चालीस दिन का हो जाने पर बाबू राम-ज्वाया ने लड़की को नाती सहित अपने यहाँ बुलवा लिया था। वहाँ भी तारा के घर के सब लोगों को जाना पड़ा था। तब भी बच्चे को खूब प्यार कर तारा ने कहा था —"हाय री सच, तुझ से भी ज्यादा सुन्दर है।"

शीलो के आने की खबर सुनकर सारे मुहल्ले की औरतें उसके लड़के को देखने आई थीं। जब वे सब चली गयीं तो शीलो ने भागवन्ती को बताया कि उसके पति (मोहन) और सोमराज एक साथ पढ़ते थे। कल मोहन को सोमराज मिला था। वह कह रहा था, सुना है तारा ने उसे नापसन्द किया है। इस पर वह बहुत गुस्सा हो रहा था। वह कह रहा था कि अगर ऐसा है तो घर बैठे, और इससे भी पहले में उसका मिजाज़ ठीक कर दूँगा।

भागवंती यह सुनकर एक दम से काँप गई। वह मुहल्ले वालों को कोसने लगी कि इन्हीं में से किसी ने आग लगाई होगी। भागवंती ने तारा से कह दिया कि अब उसे घर से बाहर जाने की कोई जरूरत नहीं है।

इतने में पुष्पा ने तारा और शीलो को अपने घर बुला लिया। तारा वहाँ भी चुपचाप बैठी रही। इस पर शीलो ने पुष्पा के सामने भी सोमराज की बात बता दी और तारा को समझाने लगी कि वह तुझे चाहता है तभी तो गुस्सा भी हुआ है।

पुष्पा और शीलो अपने-अपने पति की बातें करती रहीं और तारा चुपचाप सुनती रही।

तारा, ऊषा और हरिदेव शीलो को पहुँचाने उच्ची गली तक गये। इन तीनों के लौटने से पहले ही पुरी घर आ गया। भागवन्ती ने पुरी को सोमराज की बातें बतायीं, और यह भी कहा कि मैंने शीलो के बहुत कहने पर ही तारा को उसके साथ भेजा है।

भागवन्ती बात कर रही थी तो जीने में कई कदमों के ऊपर चढ़ने की आहट हुई और सब के आगे तारा ही आ गई।

भागवंती बड़े लड़के के सामने ही तारा को सुना देने के लिए कहती गयी— "मैंने तो इस से कह दिया है कि इसे गली से निकलने की जरूरत नहीं है। अब कोई बच्चा थोड़े ही है।"

"इसका क्या मतलब ?" पुरी ने माँ को टोक दिया, "हमारी लड़की हमारे घर में है। उसके आने-जाने पर एतराज करने वाला वो कौन है। तारा को जाना होगा तो मैं उसके साथ जाऊँगा। देखूंगा, कौन रोकता है ?"

"उन लोगों को मेरी चाल-ढाल अच्छी नहीं लगती तो क्यों मेरे पीछे पड़े हैं ? उनके लिए दुनिया में क्या और लड़कियाँ मर गई हैं ?" तारा ने फर्श की ओर देख कर इतना कह डाला और क्रोध में दीवार की ओर मुँह किये बैठ गयी।

भागवंती का मुख आतंक से खुल गया। उसने होठों पर हाथ रखकर तारा को डाँट दिया—"कुड़िये, तेरी मत्त मारी गई है ? देखो तो इसे !"

पुरी ने तारा की बात के विरोध या समर्थन में कुछ न बोल कर माँ को खाना देने के लिए कह दिया।

पुरी दो बार कनक को टाइम और स्थान पत्र द्वारा लिख चुका था, परन्तु कनक दोनों बार ही नहीं आयी। इस बात से पुरी बहुत परेशान था।

पुरी के उत्तर से माँ चुप रह गयी परन्तु तारा का भी माथा ठनका। उसने भाई के इस सहानुभूति पूर्ण उत्तर को बदलती स्थिति का संकेत समझा—लड़की हमारे घर में है तो ! सगाई टूट जाने की परवाह न करने की बात कहाँ गयी ?

तारा ने सोचा कि घर वाले मुझे निकालने की तैयारियाँ कर रहे हैं, अतः मुझे जो भी करना है अभी ही करना होगा।

पुरी कनक के घर जाकर स्थिति समझना चाहता था, परन्तु बिना किसी बहाने के कैसे जाता। अतः उसने सोचा कि आधा अनुवाद करके ले जाऊँ तो कुछ पैसा भी और मिल जाएगा और कनक से बात भी कर लूँगा। इसी कारण उसने इतिहास की पुस्तक का कार्य स्थगित कर दिया, और वह अनुवाद के लिए तारा से बात करना चाहता था। उसके बात करने से पहले ही तारा ने उससे सुरेन्द्र के घर जाने की बात कही। इस पर पुरी ने कहा आज रहने दो। परसों तक 'रेत की नींव' का आधा काम समाप्त कर लें, फिर मैं तुम्हें सुरेन्द्र के घर छोड़कर पंडित जी के पास चला जाऊँगा। तारा मान गयी। अनुवाद पाँच तारीख को समाप्त हो पाया। वह उसे दोबारा दुहरा भी चुका था। चार बजे वे दोनों चल दिए। तारा सुरेन्द्र के घर रुक गयी, पुरी आगे चला गया।

पंडित जी के यहाँ पुरी के आने का प्रकट कारण अनुवाद के सम्बन्ध में बात करना था अतः वह दफ्तर के दरवाजे से अन्दर घुसा।

पंडित जी ने उसकी सेहत के बारे में उससे कई प्रश्न पूछे। पुरी ने अनुवाद की फाइल पंडित जी की ओर बढ़ाई। उन्होंने कहीं-कहीं से थोड़ा-थोड़ा पढ़ा और उसकी प्रशंसा की। पंडित जी ने पुरी से कहा, तुमने अनुवाद बहुत जल्दी कर लिया, इस पर पुरी ने कहा कि अगर आप चाहें तो मैं दिन-रात लगकर इसे समाप्त कर दूँ। इस पर पंडित जी ने कहा कि ऐसी जल्दी भा क्या है, आराम से करो। पंडित जी ने पुरी से कहा, अगर रुपया चाहिए तो अभी ले लो। इस बात से पुरी को ऐसा लगा मानो पंडित जी ने उसकी सहायता के लिए ही उसे अनुवाद करने को दिया था।

थोड़ी देर बाद पंडित जी ने पुरी से कहा कि मैं तुमसे कनक के बारे में कुछ बात करना चाहता हूँ। इस पर पुरी सतर्क हो गया।

पंडित जी पेपरवेट को हाथ में जोर से दबाते हुए अंग्रेजी में बोले—"तुमने

शुरू से कनक को अपनी छोटी बहिन की तरह माना है। उस सम्बन्ध को निबाहने का उत्तरदायित्व भी तुम पर है।"

पंडित जी ने एक ही वाक्य में पुरी के सम्पूर्ण उत्साह और विरोध-शक्ति को सोखकर उसे निस्सार कर दिया। वे अंग्रेजी में ही बोले—"उसका आयु केवल बीस वर्ष है। बीस-इक्कीस की आयु क्या होती है? मेरा मतलब है, जिस प्रकार की समस्यायें आज हमारे लड़के-लड़कियों के सामने आ रही हैं, उन्हें सुलझा कर चल सकने के लिए अनुभव चाहिए। उसने बी० ए० पास कर लिया है, वह कोई बड़ी बात नहीं है। दिमाग अच्छा है, कुछ लिख भी लेती है। उसके लिए तुम्हें भी क्रेडिट है, लेकिन यह सब किताबी ज्ञान है। जानते हो, इस आयु में भावुकता की प्रधानता रहती है और बाद में पछतावा होता है। तुम ख़ूब समझते हो।"

पुरी सब समझ गया। उसका दम घुट रहा था। पंडित जी के शिष्टता और अपनेपन में लिपटे शब्द उसके कपाल पर नमदे में लिपटे हुए हथौड़ों की तरह पड़ रहे थे।

पंडित जी ने पुरी से फिर कहा कि मैं तुम्हारी इज़्ज़त करता हूँ और तुम्हारी मदद भी करना चाहता हूँ, परन्तु पुरी ने धन्यवाद देते हुए उनकी मदद अस्वीकार कर दी।

पुरी ने कनक से मिलने की इजाज़त चाही तो पंडित जी ने कहा कि मैं मिलने से मना नहीं करता, परन्तु इस समय तुम्हारा उससे न मिलना ही अच्छा है, क्योंकि वह अपनी गलती के लिए केवल शर्म और परेशानी महसूस करेगी।

पुरी नमस्ते करके वहाँ से चला आया। रास्ते भर उसका सिर घूमता रहा। वह नरेन्द्र सिंह के घर की गली तक पहुँच गया परन्तु उसने उसके घर जाना उचित नहीं समझा, क्योंकि उसकी मानसिक दशा उस समय ठीक न थी। वह दूसरी ही ओर निकल गया। वह सोचता रहा कि कनक की अब तक की बातों का क्या अर्थ था? क्या वह मेरा अपमान करना चाहती थी? वह समझ नहीं पा रहा था कि इतनी जल्दी कनक के व्यवहार में अन्तर कैसे आ गया। या तो वह पिता से डर गई थी या उसे स्वयं ही सुबुद्धि आ गयी।

थोड़ी देर बाद पुरी लौट आया।

जब तारा सुरेन्द्र के घर पहुँची, पहले तो वह तारा को इतने दिन तक न आने के लिए उलाहना देती रही, फिर असद की बातें ले बैठी। सुरेन्द्र ने बताया कि असद भाई रोज आते थे और तेरा इन्तजार करते रहते थे। सुरेन्द्र ने स्वयं तारा से पूछा कि उसे क्या परेशानी है, परन्तु तारा उसे टाल गई। उसे सुरेन्द्र ने बताया कि आज असद भाई से मुलाकात नहीं हो सकेगी। इस पर तारा बहुत परेशान हुई। सुरेन्द्र ने बताया कि आजकल वे रोज रेलवे वर्कशाप में मीटिंग कर रहे हैं।

तारा ने 'रेत की नींव' के पृष्ठों का अनुमान लगाया, और इस तरह उसने सोचा कि अनुवाद ग्यारह तारीख तक समाप्त हो जाएगा। उसने सुरेन्द्र से बारह तारीख को फिर आने को कहा, साथ ही उसे सिखा दिया कि भाई के सामने वह उससे आने को कहे।

पुरी तारा को लेने आया। वह ज्यादा बोला भी नहीं। चाय आदि को भी मना कर दिया, परन्तु सुरेन्द्र के बहुत आग्रह करने पर उसे चाय पीनी पड़ी। चाय के साथ सुरेन्द्र और तारा पुरी से कनक और पंडित जी के बारे में बातें भी करती रहीं, परन्तु पुरी हाँ-न में जवाब देता रहा।

रास्ते में भी पुरी चुप था। तारा ने कनक के बारे में पूछा तो उसने कह दिया कि मुझे नहीं मालूम, मेरी उससे मुलाकात नहीं हुई। तारा ने रास्ते में ही सुरेन्द्र के घर बारह तारीख को आने की बात की भूमिका आरम्भ कर दी। उसने अनुवाद की बात चलायी तो पुरी ने बताया कि अब वह काम नहीं करना है, पंडित जी तो आज ऐसे बातें कर रहे थे मानो मेरी सहायता के लिए ही अनुवाद करवा रहे हों।

तारा ने भाई के क्रोध में सहयोग दिया और बोली, "उनसे प्रार्थना करने कौन गया था।" परन्तु स्वयं वह चिन्ता में डूब गयी कि सुरेन्द्र के घर जाने का उपाय कैसे बनेगा।

•

बाबू रामज्वाया के संचालन में तारा के दहेज की तैयारी होने लगी। शीलो भी दिन भर आकर काम करवा जाती था। शीलो को अपने दहेज के प्रति तारा की उपेक्षा बहुत खल रही थी।

माँ भी तारा के असहयोग से खिन्न होकर जली-कटी कह देती। बात बढ़ कर बवंडर खड़ा न हो जाय, और भाई के साथ कभी-कभी बाहर निकलने का अवसर भी हाथ से न जाये इसलिए तारा बार-बार कहे जाने पर छोटे-मोटे कामों में हाथ बँटाने लगती थी। मन ही मन सोचती—बाद में यह लोग जाने क्या-क्या कहेंगे? फिर अपना समाधान कर लेती—यही लोग तो मजबूर कर रहे हैं, मेरे पीछे चाहे जो कुछ कहें।

पुरी ने तारा में यह परिवर्तन देखा तो कुछ आश्चर्य हुआ। वह कुछ बोला नहीं परन्तु उसके मन से हल्का सा बोझ हटता जान पड़ा। तारा के प्रति जिस अन्याय का प्रतिकार करने की सामर्थ्य उस में न थी, उस अन्याय का प्रतिकार करने के दायित्व से तारा उसे स्वयं मुक्त कर रही थी। पुरी ने भी एक-दो बार माँ और मास्टर जी से पूछा लिया—"मेरे लायक कुछ हो तो कह देना।"

माँ ने संतोष से कहा—"सब कुछ तुम्हें ही करना है, और कौन करेगा?"

तारा ने भाई की बात सुनी—यह भाई ने क्या कहा?……एक दम बदल गये? उसे लगा, पाँव तले की धरती फट गई और वह अन्धकूप में गिरी जा रही थी। उस ने निराशा के उठते गहरे श्वास को दाँत भींच कर दबा लिया और मन ही मन निश्चय कर लिया—मेरा कोई नहीं, स्वयं ही रास्ता देखूँगी, करने दो इन सब को…।

तारा ने मानसिक यन्त्रणा से बचने के लिए मन को समझाना चाहा—इन सब चिन्ताओं से लाभ क्या? यह सब सोच-सोच कर दुखा क्यों होऊँ? परन्तु भुला देने का यत्न करने पर वह चिन्ता मन में और भी आग्रह से उठती…भाई ने यह क्या

कहा ? अभी दो दिन पूर्व ही क्या आश्वासन दे रहे थे। उसके मन ने तर्क किया—झगड़े से बचने के लिए मैं भी तो चुप रह कर कुछ सहयोग देने का दिखावा कर रही हूँ। भाई भी शायद यही कर रहे हैं। भाई क्या असली बात नहीं जानते ? तारा ने इस तर्क से संतोष पा लिया।

पुरी के आत्म-समान पर पंडित गिरधारी लाल ने आघात किया था, वह उनका तो मुँह भी नहीं देखना चाहता था, परन्तु कनक की बातों को भुला देने में भी वह समर्थ न था। पुरी सोचता कि क्या मेरा अपमान कराने में कनक का भी हाथ था। उसे इस पर भी विश्वास नहीं होता था। वह सोचता कि अगर कनक ने यह सब किया है तो मैं उसे ठुकराऊँगा। वह उससे जवाब तलब करना चाहता था। वह उससे उसके घर के बाहर मिलना चाहता था।

पुरी का एक मित्र (चोपड़ा—ट्रिब्यून का उप सम्पादक) कनक के घर के आगे रहता था। वह एक दिन सुबह नौ बजे ही इतिहास की पुस्तक का काम छोड़कर चोपड़ा के घर की ओर चल दिया। उसने सोचा कनक उसे देख कर उससे मिलने आये बिना नहीं रहेगी।

वह उस दिन भी गया और दूसरे दिन भी गया। दूसरे दिन उसे घर के बाहर कंचन मिला, परन्तु कंचन ने उसे साधारण पहचान की मुस्कराहट से नमस्ते की और अन्दर चली गयी। उसने पुरी से अन्दर आने को भी न कहा। उसने सोचा कि मेरा इससे बढ़कर और क्या अपमान हो सकता है।

वह समझ गया कि उसका अपमान करने की अभिसन्धि में सारा परिवार सम्मिलित था। उसने मन-ही-मन अपने अपमान का प्रतिकार करने की प्रतिज्ञा कर ली। उसने कनक से जवाब तलब करने एवं उसे रोते हुए देखने का निश्चय भी कर लिया।

पुरी दूसरे दिन लगभग दस बजे इतिहास की पुस्तक का काम कर रहा था, माँ सिलाई कर रही थी, तारा पुस्तक लिए पढ़ रही थी। तारा सोच रही थी। उसकी परीक्षा स्थगित हो गयी थी, अब दो सप्ताह ही बाकी थे, परन्तु परीक्षा दे सकना उसके लिए शायद ही सम्भव हो पाता। न जाने बारह तारीख के बाद वह कहाँ होगी।

पुरी ने तारा से पानी माँगा। जब वह पानी ले आयी तो उसने तारा से कहा, "तुम सुरेन्द्र के घर जाना चाहती थीं ?"

तारा ने हामी भरी। इस पर पुरी ने उससे कहा कि आज शाम को चार-पाँच बजे चलना। तारा भाई का अभिप्राय समझ गयी कि वह कनक के विषय में जानना चाहता है। उसने सोचा कि सुरेन्द्र ने तो उनसे (असद) बारह तारीख के लिए कह दिया होगा, अतः उसने भाई से झिझकते हुए कहा कि सुरेन्द्र ने तो बारह को बुलाया है। इस पर पुरी ने कहा कि मुझे आज इधर से जाना है सो तुम आज कनक से मिल आना, बारह को सुरेन्द्र के घर चले चलेंगे। तारा भाई की बात मान गयी।

तारा बारह तारीख को सुरेन्द्र के घर जाने के लिए भाई की हर तरह सेवा करने को तैयार थी।

कहने को तो तारा अब भा परीक्षा देने की जिद्द किये बैठी थी, परन्तु मन में जानती थी कि परीक्षा देना सम्भव नहीं होगा। उसने मन में परीक्षा देने के बजाय दूसरा ही निश्चय कर लिया था। चिन्ता के कारण पढ़ाई में भी मन नहीं लगता था। अतः वह माँ और मुहल्ले की दो-चार औरतों के साथ अपने दहेज के किसी कपड़े पर बखिया करने बैठ गयी।

साढ़े चार बजे के करीब पुरी ने तारा से तैयार होने को कहा। वह हाथ का काम छोड़ कर उठ आई, उसने भाई को इस्तरी किए हुए कपड़े दिए और स्वयं कपड़े बदलने जा ही रही थी कि शोर मच गया कि कहीं आग लगी है। लोगों ने छत पर चढ़कर स्थान का अनुमान लगाना आरम्भ कर दिया। पुरी और तारा अभी सोच ही रहे थे कि जायें या न जायें कि गली से दीवानचन्द की आवाज़ सुनाई दी कि गली से कोई भी बाहर न जाए, करफ़्यू लग गया है।

"दिल्ली दरवाजे बहुत दंगा हो गया है और अकबरी मंडी में भारी आग लगी है। बाजार में पुलिस आ गई है। करफ़्यू हो गया है।" दीवानचन्द ने उतावली में बताया और लड़के को ढूँढ़ने बाजार की ओर लपक गया।

मास्टर जी पन्द्रह-बीस मिनिट पहले गोपालशाह की हवेली में ट्यूशन पढ़ाने चले गये थे। गोबिन्दराम, टीकाराम, बीरूमल दफ़्तरों से नहीं लौटे थे। दूर से लाउडस्पीकर की चिल्लाहट सुनाई दी। शब्द न समझे जा सकने पर भी समझ में आ गया कि करफ़्यू हो गया है। लगभग तीन सप्ताह से करफ़्यू का बिगुल और लाउडस्पीकर का ऐसा शब्द सुनाई नहीं दिया था।

सब स्त्रियाँ घबराकर अपने-अपने दरवाजे के चबूतरे पर बैठ गईं। पुरी ने माँ से कहा—"मैं जाकर पिता जी को ले आता हूँ। वैसे हवेली में कोई डर नहीं है!"

भागवंती का हृदय दहला परन्तु इन्कार भी न कर सकी। बहुत अनुनय के स्वर में समझाया—"काका जी, होशियारी से जाना। इधर मच्छीहट्टे की तरफ से न जाना। बच्छोवाली, हरीचरण की पौड़ियों से होकर जाओ, उधर से ही लौटना।"

मेलादेई बोली—"विजय सैदमिट्ठा गया था। अपने मामा के यहाँ ही रह जाये तो अच्छा है पर पता मिले विना शान्ति कैसे मिलेगी? रतन को तो तुम जानती हो कितना बेपरवाह है।"

प्रत्येक माँ का ख्याल था कि उसी का बेटा सबसे असहाय और अरक्षित है। प्रत्येक को अपने पुत्र और पति की चिन्ता थी। एक-एक करके सब आते गये। जिस स्त्री का बेटा या पति आ जाता वह चुपके से ऊपर जाकर रसोई के काम में लग जाती। मर्द चबूतरों पर बैठ कर सुना हुई बातें बता रहे थे। कुछ स्त्रियाँ अपनी खिड़कियों में बैठी सुन रही थीं। पुरी और मास्टर जी भी आ गये।

बीरूमल ने बताया—"केवल मालरोड खुली है। निस्बत रोड, अनारकली, ग्वालमण्डी में सब जगह करफ़्यू है। इतना बड़ा करफ़्यू पहले कभी नहीं लगा।"

डाक्टर प्रभूदयाल ने कहा—"मैंने अस्पताल फोन करके पूछा था। सत्तर जख्मी पहुँच चुके हैं। ज्यादा हिन्दू ही हैं।"

पुरी गोपालशाह के यहाँ फोन पर सब ओर से खबरें आने के कारण बहुत कुछ सुन आया था। उसने बताया—"रेलवे वर्कशाप में एक बजे की छुट्टी में बड़ा जबरदस्त बम फटा। तीन मर गये और बाइस आदमी जख्मी हो गये हैं। वर्कशाप बन्द हो गया है। मजदूर जिधर-जिधर गये, दंगा फैलता गया। अब दंगा रुकना मुश्किल है।" पुरी ने जानकारी से बताया, "रेलवे यूनियन के पैंतालीस हजार मजदूर अब तक दंगे के खिलाफ थे। उन्हीं के दम से इतने दिन शांति रह सकी। अब तो वे लोग पागल हो गये हैं। शाह जी कह रहे थे, अकबरी-मण्डी में करोड़-डेढ़-करोड़ रूपये से ज्यादा का नुकसान होगा। अभी पूरी आग बुझी कहाँ है ?"

"सब हिन्दुओं का ही नुक़सान है !" घसीटाराम ने एक लम्बी साँस खींची।

"हजारों का गल्ला तो पहले लूट लिया मुसलमानों ने। दो-दो बरस का राशन उठा कर ले गये हैं।" मास्टर जी ने पुरी से रह गयी बात भी बतायी।

"उन्हें तो लूटने का बहाना चाहिए।" दीवानचन्द बोला।

"बम जिसने भी फेंका, बुरा किया।" मास्टर जी बोले।

"परमेश्वर तो भाई सब का एक ही है। उसका नाम चाहे जिस तरह से लो।" गोविन्दराम ने समर्थन किया।

भगवान की चर्चा ने बहस को समाप्त कर दिया।

पुरी ऊपर गया और उसने तारा से फिर दंगा बढ़ने की बात बताई। तारा सोच रही थी, न जाने अब कर्फ़्यू कब तक रहेगा ? पहले तो दो तीन दिन तक रह जाता था। उसने बारह तारीख के लिए क्या-क्या सोच रखा था।

रात गरमी के कारण सब छत पर सो रहे थे। अभी पुरी काम कर रहा था कि मास्टर जी घबरा कर उठ बैठे। देखने पर पता चला कि उनकी खटिया के पास एक जलता हुआ पलीता आ कर गिरा था। पुरी ने पानी मँगवा कर उसे जल्दी से बुझा दिया। पुरी ने रतन को भी बुला लिया। पुरी ने लैम्प बुझा दिया, क्योंकि रोशनी के कारण उस ओर फिर पलीता आने की सम्भावना थी।

पुरी और रतन ने गली के सब लोगों को सावधान कर दिया। गली के मोची दरवाजा के लोग आग बाँध-बाँध कर पलीते फेंक रहे थे, यही सब का खयाल था, परन्तु थोड़ी देर बाद एक पलीता उस ओर जाता हुआ दिखायी दिया। लोगों को फिर से पलीता आ गिरने की आशंका थी। अतएव सब ही लोग कुछ डरे हुए थे।

लोगों के पूछने पर पुरी बोला—"यह नमाज पर बम फेंकने का बदला है।"

मेलादेई ने कहा—"बेड़ा गर्क हो ऐसे जालिमों का, जिन लोगों ने रब्ज (ईश्वर) का नाम लेते लोगों पर बम फेंका। उन्हें यह नहीं मालूम कि हम ग़रीबों पर क्या बीतेगी ? छिप-छिप कर आग लगाने वालों से भगवान ही समझें।"

भागवंती ने दुहाई दी—"हमने किसी का क्या बिगाड़ा है कि हम पर आग फेंक रहे हैं।"

"आग फेंकने वाले को क्या मालूम कि आग हमारे घर आ पड़ी।" रतन ने अपने विचार में सान्त्वना दी।

"हाँ ?" तारा ने धीमे से कहा, "उन्हें तो मतलब है, कोई घर जले। उन्हें तो कुछ जलने से मतलब।"

मेवाराम दो छतें लाँघ कर आ पहुँचा था। उसने भी सांत्वना दी—"भाई लड़ाइयाँ होती हैं, जंग होते हैं तो फिर सब कुछ होता है।"

"यह तो राक्षसों का काम है, आदमियों का नहीं।" गोविन्दराम बोले।

उत्तर-पूर्व के कोने की ओर से 'हो। हो!...हाय।' और चीख-पुकार की आवाजें सुनाई देने लगीं। बहुत-सा धुआँ उठने लगा। स्पष्ट था कि किसी घर में आग लग गयी थी। सब लोगों की आँखें उसी ओर लग गईं।

रंगमहल की ओर से आग बुझाने वाले इंजन की घण्टी टन-टन-टन-टन गूँज उठी।

तारा और ऊषा से नीचे जाकर सोने को कहा गया, परन्तु तारा नीचे जाने को तैयार न हुयी। वीरसिंह ने रतन से डब्बा (देसी बम) फेंकने को कहा, इस पर पुरी ने कहा कि अगर लौटकर तुम्हारे यहाँ उससे भी बड़ा डब्बा आ गया तो क्या होगा। उन लोगों ने डब्बा नहीं फेंका। गली के बड़े-बूढ़ों ने तय कर लिया कि रात को सब आदमी बारी-बारी से दो-दो घण्टे तक पहरा दें, एक आदमी गली के एक सिरे पर रहे, और एक दूसरे सिरे पर।

सब ही की नींद खराब हो गयी थी। आतंक के कारण सब सो नहीं पा रहे थे।

ग्यारह से लगा तो कहीं चौदह तारीख को करफ़्यू हटा। पुरी ताया जी के घर जाकर कुशल-क्षेम पूछ आया। दैनिक पत्रों से पता चला कि काफी खून-खराबा हो गया है। सोमवार को करफ़्यू हट जाने पर भी मास्टर जी स्कूल नहीं गये, और भागवंती से तारा के दहेज के विषय में बातें करते रहे।

पुरी का मन काम में नहीं लग रहा था, अतः वह स्थिति देखने बाहर चला गया। वह एक घण्टे में लौट भी आया। उसने आकर तारा से कहा कि आज तुम्हारा जाना ठीक नहीं, कल देखा जायेगा।

मंगलवार को पुरी दोपहर में बाहर जाकर सड़कों, बाजारों की स्थिति देख आया था और धीमे से तारा से कह दिया था—"चार-साढ़े-चार चलेंगे।"

पुरी ने शहालमी के बाहर आकर टांगा ले लिया। ग्वालमंडी और अमृत-धारा तक जाने के लिए पुरी को टांगा ले लेने की आदत नहीं थी। साधूराम की गली के सामने पुरी ने टांगे को रोक लिया। तारा से उसने अंग्रेजी में कहा—"तुम पहले कनक से मिल लो। ज्यादा देर न लगाना। पंडित जी बात करें तो यह मत कहना कि मैं यहाँ इन्तजार कर रहा हूँ। मैं उनसे नहीं मिलना चाहता। कनक अधिक रोके तो कह देना मैं बाहर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"

तारा ने कहे गये शब्दों से कुछ अधिक समझ कर स्वीकृति का संकेत किया और गली में चली गयी।

पुरी ने बहुत सोचकर योजना बनाई थी। यह जानकर कि वह बाहर खड़ा प्रतीक्षा कर रहा है, कनक कैसे नहीं आयेगी ? इस पर भी नहीं आयेगी तो भी फैसला हो जायेगा। कनक और तारा के गली में से एक साथ लौटने के विश्वास में था। सोच लिया था कि जीवां की गली तो अब कुछ कदम पर ही है, तारा पैदल चली जायगी। वह कनक को टांगे पर ले जायगा। गिरधारीलाल टापते रहें। वह कड़े से कड़े शब्दों में अपने अपमान के लिए कनक से जवाब तलब करने के लिए व्याकुल था। उसकी कल्पना में कनक की आँसू बहाती आँखें दिखाई देने लगी थीं।

जब पुरी ने तारा को अकेले आते देखा तो उसे बड़ा भयंकर धक्का लगा। तारा ने आकर बताया कि कनक अपनी बहन के घर गई है, शायद साढ़े पाँच बजे तक आयेगा। कनक के घर पर न मिलने से तारा कुछ बेचैन हुई कि भाई साथ रहेंगे तो सुरेन्द्र के घर जाकर भी कुछ काम नहीं हो सकेगा। पुरी और तारा टाँगे पर बैठ कर सुरेन्द्र के घर को चल दिए। सुरेन्द्र की गली के सामने पहुँच कर पुरी ने तारा से कहा कि तुम सुरेन्द्र से बातचीत करो, मैं तुम्हें थोड़ी देर में आकर ले जाऊँगा। यह सुनकर तारा ने आश्वासन की साँस ली, और सुरेन्द्र के घर की सीढ़ियाँ चढ़ने लगी।

उस समय पाँच बज रहे थे, पुरी कनक से मिलने का अवसर नहीं चूकना चाहता था, चाहे उसे सड़क पर रोक कर ही बात करनी पड़े। पुरी कनक की बहन के घर और कनक के घर के बीच के रास्ते की ओर चल दिया। उसने सोचा कनक उसे देखकर कार अवश्य ही रुकवा लेगी। परन्तु उसे कनक न दिखाई दी। वह उससे मिलना चाहता था अतः वह फिर ग्वालमण्डी की ओर चल दिया। उस समय छः बज रहे थे, परन्तु कनक कांता की गाड़ी पर आती हुई कहीं न दिखाई दी। पुरी ने सोचा कि क्यों न तारा को फिर एक बार कनक के घर भेजा जाये। यह सोचकर वह सुरेन्द्र के घर की ओर चल दिया।

जीवां की गली में नरेन्द्रसिंह के मकान के नीचे दो बार पुकारने पर खिड़की में से सुरेन्द्र की, दस बरस की छोटी बहिन ने उत्तर दिया, "भाई जी नहीं हैं।"

पुरी ने कहा—"मुन्नी, मेरी बहिन तारा सुरेन्द्र से मिलने आयी है, उसे जल्दी नीचे भेज दे। कहना, भाई नीचे बुला रहा है।"

महेन्द्र पीछे हट गयी और कुछ पल बाद सुरेन्द्र की माँ ने झाँक कर सूचना दी—"सुरेन्द्र और तारा तो घर में नहीं हैं। शायद पार्टी के दफ़्तर में भाई को ढूँढ़ने गयी हैं।"

"कब गयीं ?" पुरी को अप्रत्याशित आघात लगा।

"तारा आयी तो यहाँ बहुत से लोग थे। वे सब साथ-साथ चले गये।"

पुरी को खिन्नता अनुभव हुई। ऐसी उत्कट आवश्यकता के समय तारा की सहायता न पा सकने से मन झुँझला उठा। उलटे पाँव ग्वालमंडी के चौक की ओर

लौटा तो क्रोध बढ़ता जा रहा था—यह क्या तरीका है ? उसने तो सुरेन्द्र से मिलने के लिये कहा था, पार्टी दफ़्तर में उसका क्या काम है ?

पुरी ने साधूराम की गली के सामने से कान्ता की गाड़ी को खाली जाते देखा। वह समझ गया कि अब कनक घर पहुँच गई होगी। उसने सोचा पार्टी के दफ़्तर से तारा को बुलाकर जल्दी से कनक के घर भेजा जाये तो कनक से मुलाकात होने की आशा रहेगी। वह यह सोचकर फिर से टांगा लेकर पार्टी के दफ़्तर गया। पार्टी के दफ़्तर में उसे मालूम हुआ कि सुरेन्द्र तो ऊपर बैठी है, परन्तु तारा असद के साथ थोड़ी देर पहले गई है। असद दफ़्तर में यह कह कर गया था कि उसे पुरी ने बुलाया है। पुरी ने यह सुना तो वहाँ यह कह कर कि उसे देर हो गई थी इसलिए यहाँ आ गया, वहाँ से चल दिया।

पुरी ने सोचा तारा कहीं भी गयी होगी, सुरेन्द्र के घर तो जरूर लौटेगी, अतः वह सुरेन्द्र के घर की ओर चल दिया।

पुरी वीनस रेस्तोराँ के सामने पहुँच कर चौंका और टांगे वाले को आदेश दिया—"ठहरना-ठहरना !"

वीनस रेस्तोराँ से तारा निकल रही थी। उसके पीछे असद था।

●

जब तारा सुरेन्द्र के घर पहुँची तो वहाँ प्रद्युम्न, हामिद, जुबेर, जुबेदा और स्नेह आदि सभी मौजूद थे। वे सब अपने-अपने घर जाने वाले थे, जाने से पहले सब ने सुरेन्द्र से चाय पीने की फर्माइश की। सुरेन्द्र ने कहा कि मैं माँ से कह देता हूँ। वह तुम सब को चाय पिला देंगी, मुझे तो तारा के साथ पार्टी आफिस जाना है।

सुरेन्द्र ने जीना उतरते समय तारा को बताया कि असद भाई आज भी आये थे, परन्तु काम के कारण रुक नहीं सके, अब तो उन्हें रोज ही काम है, उन्होंने तुम्हें आफिस में ही बुलाया है।

तारा और सुरेन्द्र दफ़्तर पहुँचीं तो असद कई लोगों के साथ बैठा काम कर रहा था। उसने उन लोगों से बैठने को कहा और बोला कि मुझे पुरी ने बुलाया है, मैं अभी पन्द्रह-बीस मिनट में आता हूँ। उसने दफ़्तर से बाहर आकर तारा से पूछा, "आखिर बात क्या है ?"

तारा कुछ कह न सकी, उसका गला रुँध रहा था, उसने बस इतना कहा, "कहाँ बैठकर बातें करें।"

असद तारा के साथ समीप के वीनस रेस्तोराँ की ओर बढ़ गया।

रेस्तोराँ में जाकर असद ने एक केबिन का पर्दा उठा कर तारा को मार्ग दिया और पूछा—"चाय के लिए कहूँ या काफी के लिए ?"

तारा ने हाथ के संकेत से मौन उत्तर दिया—कुछ भी।

बैरा आ गया था। असद ने काफी के लिए कह दिया—"दो प्याले काफी।"

"हाँ, कहो क्या परेशानी हो गयी ?" असद तारा के समीप होने के लिए बीच में पड़ी मेज पर झुक गया।

तारा की सम्पूर्ण घबराहट और व्यग्रता उसकी आँखों और चेहरे पर आ गयी थी—"मुझे कहाँ रखियेगा ? मैं घर से आ गयी हूँ।" तारा ने कह डाला। उसके पास घुमा-फिरा कर बात करने के लिए न समय था, न धैर्य।

"क्या ?" तारा की ओर झुके असद के ओंठ और आँखें फैल गयीं।

तारा ने कहा कि मैं घर नहीं जा सकती, घर में मेरे दहेज की तैयारी हो रही है। ताया जी ने परीक्षा देने और घर से बाहर निकलने को मना कर दिया है। आज आने का मौका बन गया है, इसके बाद नहीं हो सकेगा। असद ने तारा से पुरी की राय के बारे में पूछा तो तारा ने बताया कि अब भाई का कोई वश नहीं है। नौकरी छूट जाने के बाद से वह कुछ बोल नहीं पाते हैं। भाई स्वयं अपनी भी चिन्ता में हैं। शायद कनक के घर वालों से कोई बात हो गई है। अब भाई मेरे लिए भी कुछ नहीं कर पा रहे हैं, अब उनमें वह जोश नहीं रहा।

असद सिर के केश पकड़े सोचता रहा। बैरा काफी रख गया।

असद ने गहरी साँस ली—"तारा, इस वक्त कैसे मुमकिन हो सकेगा ?" फिर कुछ सोच कर बोला, "यकायक मैं तुम्हें कहाँ रख सकूँगा ? और उसका असर लोगों पर, पार्टी के साथियों पर क्या होगा ? तूफान मच जायेगा। तुम प्रद्युम्न और जुबेदा की बात जानती हो। इस समय पार्टी इनको भी इजाजत नहीं दे रही है। उन्हें ताकीद कर दी गयी है कि अभी कोई बात न हो। हमारी बात उठाना भी ठीक न होगा। पार्टी की मंजूरी के बिना मैं कुछ नहीं कर सकता ! इट विल बी अगेंस्ट रूल्स ऐंड इन प्रजेन्ट सिचुएशन अगेंस्ट कामनसेंस (यह नियम-विरुद्ध होगा और इस परिस्थिति में समझदारी भी नहीं)।"

"पर मैं क्या करूँ ? मेरे लिए तो दूसरा रास्ता नहीं है।" तारा असद की आँखों में देखती रही, "तुमने नहीं कहा था ?"

"कहा था और अब भी कह रहा हूँ," असद ने तारा की ओर और भी अधिक झुक कर समझाया, "लेकिन मुझे मंजूरी तो लेनी होगी। तुम वक्त को देखो। वर्कशाप के हादसे से वहाँ हमारा किया-कराया सब मिट्टी हो गया है। इस वक्त घर छोड़ कर तुम रह कहाँ सकोगी ?"

"लाहौर से बाहर, किसी दूसरे शहर में।"

"इस समय मुझे लाहौर से जाने की इजाजत कौन देगा ? इजाजत माँगूँ भी कैसे ? तुम यहाँ आई कैसे हो ?"

"भाई सुरेन्द्र के यहाँ लाये थे।"

"दैट इज डैंजरस। पुरी सुरेन्द्र से पूछेगा, तुम कहाँ गयीं ? बात पार्टी पर आ जायेगी ?"

"पार्टी सब कुछ है, मैं तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं ?" तारा की आँखों से उसके सामने पड़ी काफी की प्याली में टप-टप आँसू गिर पड़े।

असद ने तारा से कहा कि जरा सब्र से काम लो, फिसाद का जोर टल जाय तो हम अपना रास्ता निकाल लेंगे। इस पर तारा ने कहा कि तब तक तो मैं जिन्दा भी नहीं रहूँगी। असद ने तारा को समझाया कि वह ऐसी बातें न सोचे। असद ने कहा, "तारा हिम्मत से काम लो, घर के हालात का मुकाबला करो, उन्हें कुछ वक्त के लिए बरदाश्त करो।"

तारा ने सिसकते हुए कहा—"अगर यह हो सकता तो मैं ऐसी बातें क्यों सोचती।"

असद ने कहा कि मैं जानता हूँ कि हमारे यहाँ औरतों की किस्मत दुःख और आँसुओं से भरी हुई है। इस समय तो सारा मुल्क मुश्किल में है। मुल्क की मुश्किल दूर हो जाये, तभी तो हम अपनी समस्याओं के लिए सोच सकते हैं। असद ने कहा कि मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकता, परन्तु मजबूरी है। असद ने तारा को विश्वास दिलाया कि हर समय तुम मेरे ध्यान में हो। तारा ने कहा, मेरे लिए जान देने के सिवा और कोई चारा नहीं है। इस पर असद ने कहा कि जान देने से कुछ हासिल नहीं होगा, बल्कि और संकट बढ़ेगा। तारा ने बाताया कि घर वाले मेरी कुर्बानी दे देना ही अपना फर्ज और धर्म समझ बैठे हैं। चलते-चलते असद ने कहा, "मुझे पूरा भरोसा है कि तुम इस संकट को साहस से पार कर लोगी।"

असद ने तारा से फिर कहा—"अगर तुम कहो तो मैं एक बार पुरी से मिल कर बात कर लूँ। क्या उसे हमारे संबंध के विषय में कोई अनुमान है ?"

तारा ने धीरे से उत्तर दिया, "नहीं, कोई स्पष्ट नहीं।" असद ने कहा कि मैं पुरी से मिलकर बात करूँगा, मुझे यकीन है कि वह न्याय की उपेक्षा नहीं करेगा। तारा ने काफी भी नहीं पी थी, असद ने कहा भी परन्तु वह बैठी आँसू बहाती रही, सब आँसू काफी के प्याले में गिरते रहे। चलते-चलते असद ने वही आँसू वाली काफी पी ली। तारा ने रोका भी परन्तु वह पूरा प्याला खाली कर गया।

प्याला तश्तरी में रख कर बोला, "तारा, मुझ पर यकीन रखना। मिलने की कोशिश करती रहना। मैं तो करूँगा ही।"

तारा कुर्सी छोड़ कर खड़ी हो गयी। तारा के समीप जाकर असद ने अपनी बाँह उसकी पीठ पर रख दी।

तारा ने रुकते हुए कहा—"अगर पौसिब्ल (सम्भव) हुआ, जिन्दगी हुयी... आशा नहीं...।"

तारा की आँखें फिर डबडबा रही थीं, परन्तु उसने दाँत दबा कर उन्हें रोका, अपने आप को वश में किया और असद से पहले केबिन से बाहर निकल गयी।

असद काफी के दाम देने के लिए काउन्टर की ओर बढ़ गया। तारा छोटे-छोटे कदमों से रेस्तोराँ के दरवाजे की ओर जा रही थी। असद दाम देकर लम्बे कदमों से दरवाजे पर पहुँचा और तारा के लिए दरवाजा खोल दिया। रेस्तोराँ से फुटपाथ पर आते ही असद और तारा की आँखें सामने सड़क पर टाँगे में बैठे पुरी

पर पड़ीं। पुरी ने उन्हें पहले देख लिया था। टाँगा रुक रहा था। पुरी की दृष्टि उनकी ही ओर थी।

पुरी के चेहरे पर क्रोध की तमतमाहट स्पष्ट थी। तारा ने अपनी कँपकँपी को वश में किया। असद भी सहम गया था, परन्तु पुरी को देख कर—"हैलो!" पुकारते हुए उसकी ओर बढ़ गया। तारा सिर झुकाये विवशता में साथ रही।

पुरी टाँगे से उतर आया। असद के 'हैलो' के उत्तर में उसके चेहरे पर मुस्कराहट न आयी। फिर भी असद ने पूछा—"कहाँ से आ रहे हो?"

पुरी ने उत्तर न देकर आँखें फेर लीं।

असद ने अपमान अनुभव किया, परन्तु स्थिति के विचार से कुछ बात करना आवश्यक था। तारा की ओर देखते हुए बोला—"हम लोग काफी का प्याला पीने के लिए यहाँ आ गये थे।"

पुरी मौन रहा।

तारा घबराहट और विपन्नता को वश में नहीं कर पा रही थी इसलिए असद ने अंग्रेजी में कहा—"तारा बहुत परेशान है। हम लोग वही बात कर रहे थे।"

तारा की गर्दन झुक गयी।

पुरी ने अब तक अपने क्रोध और विस्मय को सम्भाल लिया था। उसने कटाक्ष से अंग्रेजी में उत्तर दिया—"यह बात है? मैं समझता था, वह मेरी बहिन है, लेकिन तुम्हें उसकी बाबत मेरी अपेक्षा ज्यादा मालूम है।"

असद ने अप्रतिहत होकर भी झिझकते हुए कहा—"मैं धृष्टता नहीं कर रहा हूँ, परन्तु यह असाधारण बात नहीं है कि बहिन की किसी समस्या को भाई की अपेक्षा कोई दूसरा अधिक जान पाये।"

"बहुत अच्छा, मैं भी समझने का यत्न करूँगा।" पुरी ने तीखे स्वर में उत्तर देकर मुँह मोड़ लिया।

असद इस अपमान को निगल कर बोला—"तुम जल्दी में हो तो हम लोग फिर किसी समय मिलकर बात कर सकते हैं।"

पुरी ने उसकी ओर देखे बिना ही कहा—"थैंक्यू।"

"बाई-बाई!" असद ने अपमान निगल कर कहा और पार्टी आफिस की ओर जाने के लिए मजबूर हो गया।

तारा मौन खड़ी थी। पुरी ने उसे आदेश दिया—"टाँगे पर बैठो!"

टाँगा चल दिया। पुरी अपना क्रोध दबाये न रख सका। उसने अंग्रेजी में ही तारा से पूछताछ करनी आरम्भ कर दी। आज तारा सब कुछ खो ही चुकी थी अतः वह भी चुप न रह सकी और भाई को जवाब देती गयी। पहले तो पुरी क्रोध के कारण चुप हो गया, परन्तु वह ज्यादा देर तक क्रोध पर वश न रख सका। वह क्रोध में बोला—"ऐसी हालत में मैं तुम्हारे लिए कोई जिम्मेदारी नहीं ले सकता।"

तारा अनिच्छा से घर जा रही थी। ऐसी अवस्था में पुरी तारा को कनक के

घर कैसे भेजता, अतः उसने टाँगा घर की ओर मुड़वा लिया। दोनों घर पर पहुँचे, परन्तु चुपचाप। गली में लोग बैठे थे, वे दोनों बिना किसी से बोले ऊपर चले गये। माँ के पास ऊपर कुछ औरतें बैठी थीं। पुरी कपड़े बदलने के लिए बरामदे में चला गया। तारा सीधे ही ऊपर छत की ओर चली गयी।

पुरी कपड़े बदल कर फिर नीचे उतर गया। अब सब का ध्यान इस ओर गया कि तारा अभी तक नीचे नहीं उतरी। माँ भाँप गई कि दोनों रास्ते में लड़ पड़े होंगे। माँ औरतों से बोली—"इतने बड़े हो गये हैं पर स्वभाव अब भी वैसे ही है।"

●

पुरी ने मैट्रिक पास करने के बाद तारा से लड़ना बन्द कर दिया था। जब से पुरी जेल हो आया था, तारा उसका बहुत आदर करने लगी थी।

जब तारा नीचे आयी तो माँ ने उससे पूछा, "क्या बात है ?" यह कहते हुए माँ ने तारा की कलाई छूकर देखा कि कहीं बुखार तो नहीं है। तारा ने कहा—"बस जरा सिर में दर्द है।" माँ ने हाथ देखते ही कहा कि अरे इसे तो बुखार चढ़ा है। माँ ने उससे लेट जाने को कहा। तारा ज्यादा बोलना नहीं चाहती थी, अतः वह चुपचाप बिस्तर पर लेट गयी।

पुरी रात को आठ बजे लौटा। माँ ने उसे भी बताया कि तारा को बुखार चढ़ गया है। पुरी ने मन में सोचा कि मैं तो इस ज्वर की वास्तविकता जानता हूँ, परन्तु प्रकट में उसने कुछ नहीं कहा।

पुरी रोज की तरह लैम्प जला कर इतिहास की पुस्तक का काम करने बैठ गया। परन्तु वह पढ़ता तो लिखते समय उसे कुछ याद न रहता कि उसने क्या पढ़ा था।

इतने में माँ ऊपर आयी और तारा से कहने लगी कि या तो वह नीचे जाकर सोये या मोटा कपड़ा ओढ़ ले। पुरी सोचने लगा कि नारी की कोमलता में कितना छल है। पुरी के सामने ही दो उदाहरण थे। एक कनक थी, जो आत्मसमर्पण का ढोंग रचकर पिता के कहने पर पीछे हट गयी थी। दूसरी ओर तारा थी, जो मुसलमान से जोड़ लगा बैठी थी, और जिसने उसका स्वयं का अपमान किया था।

दूसरे दिन प्रातः भी पुरी का मन काम में न लगा। कनक उसे चोट देकर उसकी पकड़ से बाहर हो गयी थी। कनक के प्रति उसका विवश क्रोध तारा पर ही बरस सकता था। उसका मस्तिष्क क्रोध के उमड़ते बादलों से धुँधला हो गया था। उस धुँधलके में बार-बार असद के शब्द बिजली की तरह कौंध जाते थे। पुरी काम में मन न लगा सका तो तौलिया लेकर नहाने चल दिया। उसने सुना कि माँ तारा से शरबत पीने को कह रही थी, परन्तु तारा चुपचाप लेटी पड़ी थी। पुरी ने तारा को जोर से डाँटते हुए शरबत पीने को कहा, तारा ने उठकर शरबत पिया और मुँह ढँककर चारपाई पर लेट गई।

पुरी क्रोध में मौन खाट के पास खड़ा रहा। उसने अँग्रेजी में तारा को

संबोधन किया—"मैं जानता हूँ, तुम सो नहीं रही हो। मैं तुमसे कुछ बात करना आवश्यक समझता हूँ।"

तारा उठी और सिमट कर खाट के पैंताने की ओर बैठ गयी। पुरी खाट की पाटी पर दोनों हाथों से अपना शरीर तौले टिक गया। उसने दबे हुए परन्तु आज्ञा के स्वर में पूछा—"तुम यह सब मौन विरोध किस बात के लिए दिखा रही हो ?"

"कोई विरोध नहीं दिखा रही हूँ।" तारा ने गर्दन झुकाये उत्तर दिया।

"जो प्रत्यक्ष है उसे कैसे न देखें ? कल तुमने असद से किस परेशानी की शिकायत की थी ?

"किसी की नहीं ?"

तारा के झूठे इनकार से पुरी का क्रोध उबल पड़ा, परन्तु उसने भेद लेने के लिए क्रोध को दबा कर पूछा—"वह झूठ बोल रहा था ?. . .उसने तुम्हारे सामने कहा था कि तुम बहुत परेशान हो, तुमने उससे क्या बात की थी ?"

तारा चुप रही।

"चुप रहना ठीक नहीं है।" पुरी आदेश के स्वर में बोला, "तुम्हें मैं ले गया था। इस घर के लोगों का और मेरा तुम्हारे विषय में और तुम्हारे प्रति भी उत्तर-दायित्व है, इसलिए स्थिति समझना आवश्यक है। तुमने उसे कुछ तो कहा ही होगा ? अपनी परेशानी बतायी होगी ?"

तारा बात नहीं करना चाहती थी। उसने कह दिया—"ऐसे ही, कुछ नहीं।"

पुरी ने प्रश्नों का व्यूह बाँधना चाहा, उसने तारा से कहा कि तुम्हारी परे-शानी दूर करना मेरा और घर वालों का फर्ज है। उसने पूछा कि आखिर ऐसी कौन सी परेशानी है जो असद जान सकता है, परन्तु घर वाले नहीं जान सकते। तारा ने कहा कि आप जानते हैं। पुरी ने भूल जाने के कारण तारा से फिर याद कराने को कहा। इस पर तारा ने क्रोध में कहा—"भला आपको क्यों याद रहने लगा ! आपने सगाई टूट जाने की बात भी कही थी, और अब आपको कुछ याद नहीं। अब आप दहेज का काम करने को भी तैयार हैं।"

तारा ने पुरी पर धोखे और कायरता का लांछन लगाया। पुरी ने तारा द्वारा कहे गये सत्य को झुठलाने के लिए कह दिया,—"जब तुम स्वयं ही दहेज की तैयारी कर रही थीं तो मैं क्यों आपत्ति करता। अगर तुम्हें विरोध करना था तो तुम सगाई के समय क्यों चुप रहीं। उस समय की बात मैं नहीं जानता, मैं तो जेल में था।"

इस पर तारा ने कहा कि वह कभी चुप न रहती यदि भाई ने उसे विवाह न होने देने का झूठा आश्वासन न दिया होता।

"तुम्हें स्वयं उत्साह से दहेज की तैयारी करते देख कर भी विरोध करता रहता ?" पुरी ने प्रश्न किया।

तारा ने आँसुओं भरी आँखों से पुरी की ओर देखते हुए अपने होठों में दाँत गड़ा दिये, परन्तु पुरी को उस पर दया नहीं आई। उसने स्त्री की छलिया, उच्छृंखल प्रकृति को पहचान लिया था। वह उसे अपना और परिवार का अपमान करने का दण्ड दे रहा था और स्वयं न्याय का साथ न दे सकने का हीनता के भाव से मुक्ति पा रहा था। वह कहता गया—"सब कुछ स्वीकार करके, हमारी इस गरीबी में विवाह की तैयारी के लिए कर्ज का बोझ लदवा कर अब विवाह को अपनी परेशानी बताना और मुझे बदल जाने का लांछन लगाना, छलना है! तुम प्रेम और विवाह को लेकर खेलना चाहती हो। यू वाण्ट फ्लर्टेशन, नाट मैरेज (तुम उच्छृंखलता चाहती हो, विवाह नहीं) क्या यह नारी के स्वभाव का आवश्यक अंग है?"

तारा ने हाथ जोड़े दिये—"मुआफ करो। मुझे कुछ नहीं कहना। चिन्ता की आवश्यकता नहीं। मेरा जो होना होगा, हो जायगा।"

पुरी ने तिरस्कार करने वाले प्रतिद्वन्द्वी को धरती पर गिरा दिया था, परन्तु शत्रु अब भी उत्तर देकर उसकी अवज्ञा कर रहा था। पुरी ने और चोट की—"मेरा प्रश्न है, इस विषय की चर्चा उस आदमी से करने का क्या अर्थ था? उसका इस विषय से क्या सम्पर्क है? वह इस विषय में क्या कर सकता है? तुम्हारे लिए परिवार की इज्जत कोई चीज नहीं है?"

तारा निरुपाय होकर मौन के कूप में कूद पड़ी।

पुरी बोला—"मैं अपने प्रश्न का उत्तर चाहता हूँ।"

तारा मौन रही।

पुरी को तारा के मौन में भी अपने अधिकार और सामर्थ्य की अवज्ञा जान पड़ी। उसके मस्तिष्क में दो नारियों की छलना से प्रतिहिंसा के शोले लपटें ले रहे थे। कुछ सोच कर उसने तारा से फिर कहा कि मैं बिना तुम्हारे बताये भी समझ सकता हूँ। मैं समझ गया था कि तुम दोनों भाग रहे थे।

तारा तड़प कर घूमी और उसने अपना माथा खाट के पाये पर पटक दिया। वह फिर पटकना चाहती थी, परन्तु पुरी ने उसे पकड़ कर खाट पर लिटा दिया। आवाज सुनकर माँ भी वहाँ आ गई। उसने खून देखा तो झट पुराना कपड़ा लाकर तारा के माथे से बहता खून पोछने लगी। तारा मूर्छित हो गयी थी। सब के पूछने पर पुरी ने बताया कि वह कोठे पर जाना चाह रही थी। खड़ी हुई तो गिर पड़ी। माँ को बस यही फिकर थी कि कहीं तारा के माथे पर निशान न बन जाये। तारा जब होश में आयी तो उसने भी अपने गिरने की बात सुनी और उसने भी इस वृत्तान्त को मौन स्वीकृति दे दी।

तारा ने पावे पर सिर मार कर माथा फोड़ लिया तो पुरी का हृदय कुछ समय के लिए दहल गया था। मन में अपनी क्रूरता के लिए पछतावा सा अनुभव हुआ। उसके मस्तिष्क पर मूढ़ता सी छा गयी। उसे कल्पना में कनक की ज़ारोज़ार रोती आँखें दिखायी देने लगीं। वह नहाने के लिए नीचे आँगन में चला गया। नहा कर भोजन कर लेने के बाद वह लेट कर सोचने लगा तो गत संध्या का विचार लौट

आया—यह अच्छा पाखंड है ? आत्म-यंत्रणा से दूसरों को लाचार और परास्त कर देना। दुराग्रह से तर्क का विरोध करने का, सत्य और न्याय के दमन का यह अच्छा अहिंसात्मक तरीका है ? ···यह खूब सत्याग्रह हुआ ?

सभी को यह चिन्ता थी कि कहीं तारा के प्यारे से मत्थे पर निशान न पड़ जाये। डाक्टर आया तो उसने टाँका लगवाने की राय दी। तारा ने इसके प्रति उपेक्षा दिखायी, परन्तु गली के बहुमत के आगे उसे झुकना ही पड़ा। तारा की चोट के कारण सिलाई का काम दो दिन स्थगित रहा।

घसीटाराम की लड़की धन्नो का ब्याह तीन सप्ताह बाद होने वाला था। अतः उसके घर में तो मसाले आदि साफ होने का काम भी होने लगा था। दूसरे दिन तारा खाट छोड़कर चटाई पर लेट गई। कोई उससे बात करता तो वह यह कह कर चुप हो जाती कि बात करने में घाव में दरद होता है। घसीटाराम के यहाँ गाना बैठना था—अतः उसके घर से तारा और ऊषा को भी बुलाया गया था।

जब भी संभव हो पाता पुरी काम में लग जाता। पुरी सूर्यास्त के बाद भी बैठा काम कर रहा था। नीचे से टीकाराम की आवाज़ सुनायी दी कि अखबार में निकला है कि कांग्रेस ने पाकिस्तान मंजूर कर लिया। टीकाराम दफ़्तर से लौटते समय 'सियासत' और 'पैरोकार' दोनों की एक-एक प्रति ले आता था।

दोनों पत्रों में प्रकाशित समाचार का अभिप्राय था कि कांग्रेस विभाजन का सिद्धान्त स्वीकार कर लेने के लिए तैयार है, परन्तु वह पूरा पंजाब और बंगाल पाकिस्तान में दे देने के लिए तैयार नहीं है। केवल पश्चिमी पंजाब और पूर्वी बंगाल, जहाँ पूरे प्रदेशों में मुस्लिम जन-संख्या का आधिक्य है, पाकिस्तान में दिये जा सकते हैं। युक्त प्रान्त का अथवा अन्य किसी भी प्रान्त का कोई भाग, जहाँ पूरे प्रदेश में हिन्दू बहु-संख्या में हैं, पाकिस्तान को नहीं दिया जा सकता।

'सियासत' में मुस्लिम-लीग की ओर से कायदेआजम जिन्ना का बयान प्रान्तों के बँटवारे के विरोध में और पूरे बंगाल तथा दोनों पंजाब प्रान्तों को मिला सकने वाली गली के रूप में एक भू-भाग की माँग के लिए भी था।

पुरी ने समझाना चाहा—"पाकिस्तान का मतलब मुस्लिम-लीग की मिनिस्टी ही तो है। किसी की मिनिस्ट्री हो, हिन्दुओं-मुसलमानों को तो गली-मुहल्लों में एक साथ ही रहना है। हमें मिनिस्ट्री से क्या मतलब है ? हमें तो अपने पड़ोसियों से निबाहनी है।"

ऊपर कोठरी के बरामदे में लेटी हुई तारा को नीचे गली से भाई का बात सुनाई दे रही थी। उसने बहुत वितृष्णा से मन ही मन कहा—"वाह रे पाखंड ! कैसे निबाहने वाले हैं ? इस से अच्छे तो रतन जैसे, जो अन्दर और बाहर एक हैं। दुश्मन समझते हैं तो मित्रता का पाखंड नहीं करते। ऐसे झूठे, जहरील लोगों के सम्पर्क से तो मृत्यु अच्छी। इस घर में अब निर्वाह सम्भव नहीं। तारा ने अनुभव किया, वह मृत्यु के कुँए में गहरी उतरती जा रही थी।

तारा का ध्यान पुनः नीचे की बातों की ओर गया। नीचे बड़ी जोरों की

बहस हो रही थी कि लाहौर पाकिस्तान में जायेगा या हिन्दुस्तान में । सब अपनी-अपनी दलीलें पेश कर रहे थे ।

डाक्टर प्रभुदयाल आठ बजे के लगभग घर लौटा तब भी पाकिस्तान-हिन्दुस्तान के बँटवारे के विषय में बहस चल रही थी ।

"भई डाक्टर, आज की खबर सुनी ?" बाबू गोबिन्दराम ने गुड़गुड़ी की नली हटाये बिना, विकृत स्वर में डाक्टर को सम्बोधन किया ।

डाक्टर के मौन और उसके उतरे हुए चेहरे से स्पष्ट था कि विशेषांक का समाचार वह पा चुका था । सभी को मालूम था कि डाक्टर का पुश्तैनी मकान लाहौर से पश्चिम सरगोधा जिले में था । पुरी ने उसे देख कर सब के सामने पूछ लिया—"क्यों डाक्टर साहब, गाँधी तो कहते थे—पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा ! आपको और डाक्टर राधेलाल जी को भी बहुत भरोसा था कि अंग्रेज लीग की बात नहीं मानेंगे, पाकिस्तान नहीं बन सकेगा ? यह क्या हो गया ?"

"गांधी जी का इसमें क्या अपराध है ?" डाक्टर प्रभुदयाल विचारों में दृढ़ता न रह जाने पर भी बोला, "यह तो पंडित नेहरू, सरदार पटेल और कांग्रेस वर्किंग कमेटी का फैसला है । गांधी जी का तो इस निश्चय से कोई सम्बन्ध नहीं है । उन्होंने तो साफ-साफ कह दिया है, नेहरू और पटेल सरकार चला रहे हैं । सरकार की जिम्मेवारी हाथ में लेकर बीसियों ऐसे राजों (रईसों) का असर उनकी राय पर पड़ता है, जिन्हें मैं नहीं जानता । इसलिए मैं अपनी नादानी से उनके फैसलों में हायल (बाधक) नहीं बनना चाहता । गांधी पर इसकी क्या जिम्मेवारी है । यह तो नेहरू और पटेल का फैसला है ।"

"उसूल भी तो कोई चीज होता है ।" रतन ने ऊँचे स्वर में विरोध किया, "अगर मुल्क का तकसीम उसूलन गलत है तो नेहरू-पटेल के मान जाने से वह सही हो गयी ? चार दिन पहले नेहरू-पटेल भी तकसीम को मंजूर करने के लिए तैयार नहीं थे ।"

पुरी ने रतन का साथ दिया—"नेहरू-पटेल का क्या है, वे तो 'वैदर काक' (हवा के रुख पर घूमने वाले टीन के दिशा-द्योतक) हैं । सन् ४५ में वह अहमद नगर जेल से ४२ की क्रांति को काँग्रेस की पालिसी के खिलाफ बता रहे थे । सन् ४६ में सरकार दब गयी तो ४२ क्रांति का सब सिला (श्रेय) खुद ले लिया ।"

डाक्टर प्रभुदयाल ने अपनी हानि के प्रति उपेक्षा दिखा कर उत्तर दिया—"देश की बेहतरी और आजादी ही असली चीज है । नेहरू-पटेल क्या करें ? तकसीम न मंजूर कर सकने की जिद्द में बाकी मुल्क को भी डूब जाने दें ? लीग को तो अंग्रेज शह दे रहे हैं । एक बार अंग्रेजों से तो निबट लें, फिर लीग को भी देख लेंगे । पालिटिक्स में तो भाई वक्त की चाल ही सब कुछ होती है ।

"यही है गांधी जी की सत्य-अहिंसा ?" रतन ने धीमे से चुटकी ली ।

खुशालसिंह ने शाबाशी दी—"ठीक कहता है रतन ? हाँ जी फिर 'सत्त-अहंसा' क्या हुई तुम्हारी ? इससे अच्छा तो जिन्ना है, जो कहता है, सीधा मुँह पर थप्पड़ मार कर कहता है। उसका जवाब तो मास्टर तारा सिंह है।"

डाक्टर प्रभुदयाल ने दूसरे लोगों की उपेक्षा करके पुरी को सम्बोधन किया—

"अच्छा, चलो जरा डाक्टर राधेविहारी के यहाँ चल कर पता लें, यह मामला क्या हो गया ?"

पुरी डाक्टर साहब के यहाँ नहीं जाना चाहता था, क्योंकि वह पुरी से 'पैरोकार' वाले मामले के कारण नाराज थे। डाक्टर प्रभुदयाल ने कहा—"चलो यार ! कौन तुम उसका दिया खाते हो।"

पुरी डाक्टर के घर चला गया। भागवंती ऊषा के साथ बसंती (घसीटाराम की पत्नी) के घर चली गयी। पुष्पा भी लड़की की तबियत खराब होने के कारण नहीं जा सकी।

मास्टर जी और गोबिन्दराम छत पर लेटे बातें कर रहे थे। हरी और विजय गली में खेल रहे थे। तारा अकेली चटाई पर लेटी हुई थी। वह लेटी-लेटी असद के साथ हुई बातें सोच रही थी। लेटे-लेटे तारा एकदम ही उठ गई और पुष्पा के घर मिट्टी का तेल माँगने गई। पुष्पा के पूछने पर उसने कहा कि चूल्हा जलाकर दूध गरम करना है। पुष्पा ने कहा कि यहाँ आकर स्टोव पर गरम कर ले परन्तु तारा तेल लेने के लिए तेल के पीपे के पास चली गयी, और पूरी बोतल भर कर शीशी को दुपट्टे में छिपाकर चलने लगी तो पुष्पा ने उसे रोक लिया।

उसने पूछा कि इतना तेल क्या होगा, तो तारा कोई उत्तर न दे पायी। पुष्पा उसका मतलब समझ गयी। उसने उसे झिड़कते हुए इस सब का कारण पूछा। पहले तो तारा टाल गयी। जब पुष्पा ने माँ से कह देने की धमकी दी तो तारा को बताना पड़ा। उसकी बात सुनकर पुष्पा ने कहा—"तू अभी तक चुप क्यों रही ?"

तारा ने कहा—"मैंने कब नहीं कहा ?" इस पर पुष्पा बोली कि हमने तो तुम्हें कभी कुछ कहते सुना नहीं।" पुष्पा ने तारा से कहा, "अगर कहे तो तेरी माँ से बात करूँ।"

तारा ने कहा कि कहने से कोई फायदा नहीं होगा। तारा लगभग एक घण्टे बाद पुष्पा के घर से लौटी, परन्तु तेल की बोतल वहीं रह गयी थी।

दूसरे दिन सुबह-सुबह खबर फैल गयी कि 'सरीं मुहल्ले' से हिन्दुओं के ऊँचे मकानों से, उस मुहल्ले से लगी मुसलमानों के नीचे मकानों की बस्ता पर, सुबह मुँह अन्धेरे बन्दूकों से गोलियाँ चलायी गयी थीं। अपनी छतों पर सोते हुए सात मुसलमान मारे गये थे। इसके बाद बादशाही मसजिद और बावली साहब के पास कई लोगों के छुरों और कृपाणों से घायल होने के समाचार मिले थे। करफ़्यू तो नहीं लगा था परन्तु 'लोहे के तालाब', 'डब्बी बाजार' और 'रंगमहल' तक प्रायः सब दुकानें बन्द हो गयी थीं।

ऐसी अवस्था में शीलो का पति मोहनलाल नहीं चाहता था कि शीलो घर से

बाहर जाये, परन्तु शीलो ने कहा कि थोड़ी ही दूर तो जाना है, और जब पति ने साथ चलने से भी इनकार कर दिया तो अपने पति से अधिक निर्भयता कैसे दिखा सकती थी।

दूसरे दिन मोहनलाल का दफ्तर जाना आवश्यक था क्योंकि न जाने से नौकरी छूट जाने का डर था, और वैसे वह बाहर जाने से भी डर रहा था। पति के साथ शीलो भी लड़के को लेकर उच्ची गली तक चली गयी। वहाँ उसने माँ से जिद्द की और माँ को साथ लेकर गलियों के रास्ते से होती हुई तारा के घर आ पहुँची।

तारा अब भी गुमसुम ही थी। उसकी माँ और तायी आपस में बात करने लगीं। भागवंती ने कहा कि देखें तारा शीलो से भी बात करती है या नहीं, कोई और कुछ कहता है तो बात ही नहीं करती है। शीलो बरामदे में तारा के पास जा बैठी। उसने तारा से चोट लगने का कारण पूछा तो तारा ने कहा कि माँ तो बता ही चुकी हैं।

शीलो ने फिर पूछा कि चक्कर कैसे आ गया था। इस पर तारा ने कहा कि बस आ गया था, और उसने बात बदलने को शीलो से कहा कि वह अपनी बातें बताये।

शीलो ने कहा—"मेरी क्या बात होगी ?" और इसके साथ ही उसने तारा के ससुराल वालों की बात शुरू कर दी, इस पर तारा ने उसे मना कर दिया। शीलो और तारा बातें कर ही रही थीं कि पुष्पा भी आ गयी और दोनों को अपने घर ले गयी। तारा जाना नहीं चाहती थी, परन्तु पुष्पा के आग्रह के आगे उसकी कुछ न चली और उसे जाना पड़ा था।

पुष्पा ने अपने घर पहुँच कर शीलो को तारा के मिट्टी का तेल लेने आने की पूरी घटना सुना दी। घटना सुनाकर स्वयं ही कहने लगी कि अभी ही इस लड़की का यह हाल है तो ससुराल जाकर क्या करेगी। अब हमें मालूम हो गया तो जान-बूझ कर इसे कुएँ में कैसे धकेला जाये। कहीं यह कल को कुछ कर बैठे तो।"

पुष्पा की बातें सुनकर शीलो कुछ पल तो बिल्कुल मौन ही रह गयी, उसके मुँह से बोल तक न फूटे। फिर अचानक वह तारा की ओर देखकर रोने लगी। जब तारा ने शीलो को रोते देखा तो वह भी रो पड़ी। पुष्पा भी रोने लगी, परन्तु उसने चेतावनी भी दी कि रोने से कुछ नहीं होगा। शीलो कुछ न बोली, वह और जोर-जोर से रोने लगी। तारा ने शीलो से कहा कि वह कब तक उसकी किस्मत के लिए रोयेगी। शीलो ने बड़ी मुश्किल से अपने रोदन पर वश पाया, और फिर वह तारा से कई प्रश्न करने लगी।

तारा ने शीलो को सारी बातें बता दीं, परन्तु उसने असद का नाम नहीं बताया। जब शीलो ने सुना कि तारा का प्रेमी उसे साथ ले जाने को तैयार नहीं है तो वह उसे भला-बुरा कहने लगा।

तारा के मन में असद से अपरिचित शीलो के सामने असद की ओर से बोलने की इच्छा नहीं थी फिर भी स्थिति समझाने के लिए बोली—"नहीं, हिम्मत तो है। वो कहता है, पहले यह हिन्दू-मुसलमान का झगड़ा खतम हो जाये।"

"चल हट, रहने दे !" शीलो ने वितृष्णा से कहा, "हिन्दू-मुसलमान का झगड़ा भी खतम होता है। जब से पैदा हुए हैं, देखते आ रहे हैं। हिन्दू हैं, मुसलमान हैं तो उनका झगड़ा भी है। लानत है ऐसे डरपोक मर्द पर ! सब कहने की बातें हैं। उसे तेरा ख्याल नहीं, झगड़े का डर है। यह क्या प्रेम हुआ ? प्रेम तो उसे कहते हैं कि और कुछ दिखायी ही नहीं देता, संसार प्रेममय हो जाता है। लोग प्रेम में कच्चे घड़े लेकर दरया पार करने के लिए उतर जाते हैं।"

तारा ने समझाना चाहा—". . . यह बात नहीं। मेरा तो असल में शादी का ख्याल है ही नहीं। मैं तो अभी एम० ए० पढ़ लेना चाहता थी। शादी की जरूरत ही क्या है ?"

"तू तो पागल है।" शीलो बोली, "शादी और घर की भी जरूरत पूछी जाती है ? मनुख होता है तो शादी भी होती है। यह तो संसार है। पैदा हुए हैं तो संसार भी होगा। जैसा सामने आयेगा, भोगेंगे। उससे क्या डरना ? दूसरी किस्मत होती है तो बाल विधवा हो जाती हैं। उनका भी हाल देख लें, बिद्दी बुआ का, क्या करम नहीं हो गये ?"

"बिद्दी बुआ की दूसरी बात है।" तारा बोलने लगी थी तो बोली, "पर आजकल कई स्त्रियाँ हैं, डाक्टर, प्रोफेसर बन जाती हैं, शादी नहीं भी करतीं, क्या बिगड़ जाता है उनका ?"

"वह और लोग हैं। उनका रीत-व्यवहार दूसरा है।" शीलो ने कहा, "हमें तो अपने लोगों की बात देखनी है। तू पढ़-लिख कर सोचती उन लोगों की तरह है पर तेरा घर-बिरादरी तो उन लोगों जैसा नहीं है। मनुख घर बिरादरी के साथ ही चलता है। उससे अलग कोई नहीं चल सकता। कोई जोग रमा ले, प्रेम का जोग कर ले तो बात दूसरी है। उन्हें भगवान भी क्षमा करता है। हमें अपने घर-बिरादरी में रहना है तो इनकी चाल पर चलना है। उन लोगों में होते तो वैसे चलते।"

तारा चुप रही। शीलो को ऐसे स्यानेपन की बातें करते कभी न सुना था। मन में सोच रही थी—शीलो कैसी सीधी-सीधी बातें कह रही है। शीलो क्या जैसे उसके मुँह से गलियों का समाज, गलियों की ईंटें बोल रही हों। याद आया असद भी कह रहा था, हालात और परिस्थिति से अलग कैसे हो सकते हैं ? यह भी वही बात कह रही है। मैं इतने दिन तक क्यों चुप रही ? भाई के भरोसे धोखा खाया ! आज बोलूँ तो सबसे पहले वही कहेगा, फ्लर्ट है ! घर और बिरादरी के हालात बदलने के लिए कभी किसी ने कुछ किया नहीं, आज मेरे लिए तुरन्त कैसे बदल जाये ?

कुछ देर पुष्पा, शीलो और तारा चुपचाप बैठी रहीं। शीलो फिर बोली—"सोमराज और उनकी बहन भी शीशामोती आये थे। बहुत नाराज थे। जाने तेरे इन्कार करने की बात कैसे फैल गई है। मेरा ख्याल है, यह रामप्यारी और पूरणदेई की करतूत है। बड़ी लुच्ची हैं। दोनों यहाँ की लुत्ती (पलीता, चिन्गारी) वहाँ लगा, यही करती फिरती हैं। सोमराज ने कहा—शादी की मुझे जरूरत नहीं, ऐसी

शादी पर लात मारता हूँ पर लड़की को नहीं छोड़ूँगा। उसने मेरी बेइज्जती की है। उसी की माँ और तायी सौ बार 'चाकरी' (सम्बन्ध के लिए खुशामद) करने हमारे यहाँ आई थीं। मैंने तीस-चालीस हजार का दहेज छोड़कर इसके लिए 'हाँ' की और वह नखरा करती है। मैं इस बेइज्जती का बदला न लूँ तो. . .।

"मैंने उन्हें उल्टे हाथों लिया। मैंने कहा—हम लोग तो गरीब हैं। सच क्यों नहीं कहते, दहेज का लालच आ गया है। सगाई तोड़ने के बहाने ढूँढ़ रहे हो। कर लो जुल्म ! मेरी बहिन तो जैसी है पूरा गली-मुहल्ला जानता है। उसने तो जहाँ एक बार 'हाँ' कर दी कोई सिर काट ले तो भी 'न' नहीं कर सकती। उसने कभी शादी से इन्कार किया ही नहीं। उसने तो सिरफ हाथ जोड़े कि बी० ए० कर लेने दो। बाबू जी ने कहा, मेरे लिए वह देवता है। मुझे उस के बी० ए० से मतलब नहीं।"

"हाय तेरी कसम, और क्या कहती ?" शीलो बोली, "वे लोग इसे बाजार में तंग करने पर तुले थे। मैंने उन्हें और डाँटा, कहा—सच कहो मेरी बहिन को तो सब लोग सराहते ही हैं, वह तो देवी है पर तुम्हारा अपना दिल कहीं और है, कोई दूसरी लड़की पसन्द आ गई है तो साफ क्यों नहीं कह देते ! वह बेचारी अपना माथा ठोक कर बैठ जायगी। मर्दों का तो यही ढंग है।"

शीलो ने तारा से कहा कि सोमराज को गुस्सा इसी बात का है कि उसका दिल तुझ पर है। उसने तारा को समझाते हुए कहा कि तेरे डरपोक से तो सोमराज फिर सौ अच्छा है।

तीन दिन बाद तारा के माथे की पट्टी खुल गई। एक सफेद टिकिया घाव पर चिपका दी गई। तीन दिन बाद टिकिया भी उतर गई। माथे पर अस्वीकृति का चिन्ह, दो छोटी-छोटी लाल-भूरी लकीरें एक-दूसरे को काटती हुई रह गईं। पुरी की आँखों में यह चिन्ह शूल की तरह गड़ रहा था। यह चिन्ह तारा द्वारा उस पर लगाये बर्बरता के आरोप और अपनी शहादत की घोषणा थी। स्वयं अनाचार करके तारा ने उस पर आरोप लगा दिया था। पुरी का मन अपनी सज्जनता, सहृदयता और आत्म-सम्मान पर इस आरोप से इतना खिन्न रहता कि इतिहास की पुस्तक का काम करते न बन पड़ता। वह सोचता, क्या अहिंसा के आवरण से ढँके दुराग्रह से सत्य का दमन करना शारीरिक बल या शस्त्र-शक्ति द्वारा सत्य के दमन की अपेक्षा भी अधिक क्रूर और निन्दनीय नहीं है ? उसे बहिन के चलित्तर के सामने केवल इसलिए परास्त हो जाना पड़ा कि वह क्रूर नहीं होना चाहता था वर्ना वह उसे सिर फोड़ लेने देता तो वह क्या कर लेती ? पुरी ने सोचा, तारा तो अपनी करतूत पर पर्दा बनाये रखने के लिए जान भी दे सकती थी, तब हमारी क्या स्थिति होती ? यदि वह सचमुच भाग ही जाती, वह भी एक मुसलमान के साथ, तो हम कहाँ के रहते ?...उस के मन में तारा के प्रति, उस के परिवार पर कलंक लगाये जाने के क्रोध की गाँठ पड़ गयी।

पत्रों में दिन-दिन कांग्रेस और लीग अथवा हिन्दुओं और मुसलमानों में समझौते की आशा क्षीण होकर विरोध और चुनौती का भाव बढ़ता जा रहा था। मई के तीसरे सप्ताह के अन्त में 'बागवानपुरा,' 'केले वाली सड़क' और 'माटा दरवाजे'

पर उपद्रवों के कारण फिर अड़तालीस घण्टे का करफ़्यू लग गया था। पत्रों में समाचार आया—प्रान्त और नगर में अशांति के कारण बी० ए० और एम० ए० की परीक्षायें आगामी सूचना तक स्थगित कर दी गयी हैं।

ऊषा ने तीन पुस्तकें लाकर पुरी के सामने रख दीं और कहा—"तारा कहती है, परीक्षा तो होनी नहीं। पराई पुस्तकें रखे रहने से क्या लाभ ?"

जून के प्रथम सप्ताह में निर्णय हो गया कि पंजाब को बाँट कर पश्चिम का आधा पंजाब पाकिस्तान में दिया जायेगा। लोगों का अनुमान था कि बँटवारे की सीमा लाहौर के आसपास होगी। लाहौर पाकिस्तान में जायेगा या हिन्दुस्तान में, यह अनुमान और विवाद का विषय बन गया था। इस घोषणा ने दंगों की धीमें-धीमें सुलगती चली आती आग को एक बार फिर भड़का दिया। 'कृष्णनगर' और 'देवनगर' के समीप 'राजगढ़' की मुस्लिम बस्ती पर रात में आक्रमण हो गया। एक सौ के करीब आदमी मारे गये और बड़ी संख्या में मुसलमानों के घर जल कर राख हो गये। मुसलमानों में आतंक बढ़ गया। मुसलमान बड़ी संख्या में लाहौर छोड़कर भागने लगे।

पुरी ने तारा के लिए कालीचरण से पुस्तकें उधार ली थीं। राजगढ़ के भयंकर दंगे के बाद दो बार करफ़्यू लग गया था इसलिए पुरी पुस्तकें लौटाने नहीं जा सका था। कुछ शांति होने पर वह 'सरीं मुहल्ला' लाँघ कर 'डूँगी गली' में काली के यहाँ गया। रास्ते में मुहल्ले और गलियाँ हिन्दुओं के ही थे। डूँगी गली में भी मुसलमानों के अधिकांश मकान बिक चुके थे। वह हिन्दू बस्ती हो गयी थी, परन्तु अन्त के सात गिरे-पड़े मकान अभी तक मुसलमानों के ही थे।

पुरी जब कालीचरण के घर डूँगी गली गया तो वहाँ एक टाँगा खड़ा था और उस पर थोड़ा-बहुत सामान भी रखा था। पुरी गली में घुसा तो उसे पता चला कि कोई मुसलमान-परिवार लाहौर छोड़कर जा रहा है और कालीचरण एवं महाजन उन्हें जाने से रोक रहे हैं। कालीचरण ने मुसलमान-परिवार के मर्द इमामबख्श को समझाया कि चाहे हिन्दुस्तान हो या पाकिस्तान हम तो पड़ोसी हैं, शुरू से एक साथ रहे हैं और अब भी रहेंगे। आखिर समझा-बुझा कर उन लोगों ने मुस्लिम-परिवार को जाने से रोक लिया।

जब यह मामला खतम हो गया तो कालीचरण पुरी और महाजन दोनों को अपनी बैठक में ले गया। वहाँ पहुँचते ही उन लोगों ने बातें आरम्भ कर दीं।

महाजन ने निराशा के स्वर में कहा—"हिन्दुस्तान-पाकिस्तान तो क्या बनेगा, हमें तो पंजाब अंग्रेजों के ही कब्जे में रहता दीखता है।"

"क्यों ? पंजाब के लिए क्या कोई अलग पालिसी है। एटली का १६ फरवरी का स्टेटमेन्ट तो पूरे हिन्दुस्तान के लिए है ?" पुरी ने महाजन के अनुमान से मतभेद प्रकट किया।

"उसी से तो, एटली के स्टेटमेन्ट से ही तो संदेह होता है।" कालीचरण बोला।

पुरी काली को गम्भीर और समझदार मानता था। वह महाजन की तरह कम्युनिस्ट पार्टी का मेम्बर भी नहीं था, इसलिए पुरी ने जिज्ञासा से पूछा--"क्यों ?"

"एटली ने फैसला दे दिया है कि जून ४८ में जिस प्रान्त में जिस राजनैतिक दल का मंत्री-मण्डल होगा, उस प्रान्त का शासन उसी राजनैतिक दल को सौंप दिया जायेगा। पंजाब के गवर्नर की चाल स्पष्ट है कि यहाँ जून ४८ तक किसी भी राजनैतिक दल का शासन कायम न होने दे। एटली की घोषणा के अनुसार पंजाब को सँभालने की जिम्मेवारी खुद अंग्रेजों के ही सिर रहेगी ?"

"तुम बहुत दूर की कल्पना कर रहे हो ?" पुरी ने अंग्रेजी में बोल कर सन्देह प्रकट किया।

"····दूर की कल्पना क्या है ?" महाजन मुँह चढ़ी गाली देकर बोला, "मार्च गया, अप्रैल गया, जून लग गया। इतने दिन तो गवर्नर ने मिनिस्ट्री बनने नहीं दी।"

"भई, जिसकी मैजोरिटी है, उसकी मिनिस्ट्री बनने दो। देखो तो वे कैसे संभालते हैं ? गवर्नर को यह कहने का क्या हक है कि मिनिस्ट्री में कौन हो और कौन न हो। तुम हिन्दुस्तान को जब नहीं सँभाल सकते तो दफा हो जाओ। तुमने बाँट कर जाने की जिम्मेवारी क्यों ले ली है ? छोड़ो हिन्दुस्तानियों पर। उन्हें जैसे बाँटना होगा, खुद कर लेंगे। खिजर से इस्तीफा दिलाने की क्या जरूरत थी ? यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री नागरिक शान्ति की रक्षा नहीं कर पाती थी। तीन महीने से उससे कहीं बुरी हालत है, रोज बिगड़ रही है। रेलवे वर्कशाप में जो बम फेंके गये थे, मिलिटरी के ग्रिनेड थे। आज घर-घर बन्दूकें, राइफलें पहुँच गयी हैं। यह क्या हो रहा है। यही अमन है ? यह सरकार इतनी पुलिस और फौज से अमन नहीं कायम कर सकती ? यू० पी० में किदवई ने कैसे खाकसारों को ठण्डा कर दिया ? यहाँ नहीं हो सकता !"

"असली बात है," महाजन रहस्य और जानकारी के ढंग से बोला, "पंजाब का गवर्नर चर्चिल की कंजरवेटिव पार्टी का है। वह अपनी पालिसी चला रहा है। उसका खयाल है, एटली और माउंट-बैटन बाकी हिन्दुस्तान कांग्रेस और लीग को दे भी दें तो पंजाब, खास कर पश्चिमी पंजाब को बचा ले। जानता है तू, इण्टरनेशनल स्ट्रेटेजी में पंजाब की बड़ी इम्पार्टेंस है। ये रूस के सिर पर कायम रहना चाहते हैं, यार मेरे !" महाजन ने पुरी का हाथ पकड़ लिया।

"अरे यार, तुम्हें हर जगह रूस दिखायी देता है।" पुरी ने अविश्वास से कहा, "तू तो ऐसे बक रहा है जैसे गवर्नर का पर्सनल फ्रैंड हो।"

"हैं, क्या कहता है !" महाजन ने पुरी के अज्ञान पर विस्मय प्रकट किया, "यह प्रोफेसर प्राण का आइडिया है। तू समझता क्या है ? क्यों भाई काली ?"

"हाँ-हाँ," काली ने समर्थन किया, "४ जून को पार्टीशन के बारे में स्टेटमेन्ट

आया था तो असद, प्रद्युम्न और मैं प्रोफेसर के यहाँ गये थे। तुम जानते हो, वह तो सबसे मिलता-जुलता रहता है। कह रहा था, ब्रिटिश ब्यूरोक्रेट, एटली और माउंट-बैटन की स्कीम से खुश नहीं हैं। वे दिखा रहे हैं कि हिन्दुस्तान को सेल्फ गवर्नमेन्ट देना मूर्खता है। अंग्रेज खूब जानते हैं, पार्टीशन से दोनों भाग लँगड़े हो जायेंगे ? अब तक देश का विकास इकाई के तौर पर हुआ है। अब पाकिस्तान इण्डस्ट्रियल गुड्स (औद्योगिक सामान) के लिए तरसेगा, शेष भाग कच्चे माल के लिए ! बड़ा क्लेवर मूव (गहरी चाल) है। पश्चिम पंजाब की रूई, दूसरी पैदावार और पूर्वी बंगाल का जूट कहाँ जायेंगे, ब्रिटेन में न ? इस से उनके मरते उद्योग जरा जिन्दा हो सकेंगे।"

"पश्चिम पंजाब और पूर्वी बंगाल की तो और मुसीबत !" काली ने बताया, "गवर्नर का मिलिटरी सेक्रेटरी मज़ाक कर रहा था, फिलहाल एक उत्तरी फ्रण्टियर है तो करोड़ों उस पर खर्च होता है। अब भारत के दो फ्रण्टियर होंगे और पाकिस्तान के चार फ्रण्टियर।"

"लेकिन पार्टीशन का सिद्धान्त तो मंजूर हो ही गया।" पुरी ने चिन्ता से कहा।

"प्रोफेसर प्राण कह रहा था कि अब भी दोनों औटो-नोमस (स्वायत्त) होकर भी फेडरेशन (सम्मिलित संघ) में रहें तो अधिक हानि नहीं होगी, लेकिन स्वयं एटली की नीति लीग को सेपरेशन (पृथक होने) के लिए प्रोत्साहन दे रही है। अंग्रेज बँट-वारे की जिम्मेवारी इसीलिए ले रहे हैं कि अपने हित के अनुकूल बँटवारा कर सकें।"

पुरी डूंगी गली से लौटकर इतिहास की पुस्तक के काम में मन न लगा सका। उसका मन छटपटा रहा था कि काली और महाजन से सुनी आशंकामय स्थिति के बारे में तारा से विवेचना करे। तारा के सिर फोड़ लेने की घटना के बाद से भाई-बहिन में बोल-चाल बन्द थी। दूसरों के सामने झगड़ा प्रकट न करने के लिए एक-आध बात बोल लेते थे। पुरी डूँगी गली में देखी एक घटना के आधार पर एकांकी लिखने लगा। सूर्यास्त के बाद तक लिखता रहा। डाक्टर प्रभुदयाल की आवाज सुन पुरी रतन को भी साथ लेकर डाक्टर के यहाँ चला गया और दोनों को हिन्दुओं और मुसलमानों के विरुद्ध ब्रिटिश नौकरशाही के षड़यन्त्र का रहस्य समझाने लगा।

रतन ने धैर्य से सुना परन्तु सिर हिलाकर बोला—"हमारे तो दोनों शत्रु हैं। हमें तो दोनों को समाप्त करना है।"

"कितनों को समाप्त करोगे ?" डाक्टर ने पूछा, "मुसलमान हैं कौन ? वे सब दस दिन पहले हिन्दू थे। और हिन्दू मुसलमान बन जायेंगे।"

"वह जमाना गया। अब कौन औरंगजेब आ रहा है ?" रतन ने उत्तर दिया।

"मुसलमान न सही, अछूत ही समस्या बन जायेंगे !"

पुरी ने डाक्टर को टोक दिया—"बन गये आलरेडी ! जिस क्लास को एक्स-प्लायट किया जायेगा, ऐज़ ए क्लास रिवोल्ट करेगा, तुम्हारा दुश्मन बन जायेगा।"

"भाप्पा, तुम हर जगह कम्युनिज्म अड़ा देते हो !" रतन झुँझलाया।

"मैं कम्युनिस्ट नहीं हूँ, दिस इज़ हिस्ट्री।"

रतन ने इन्कार में मुँह फेर लिया। पुरी निराश हो गया।

पुरी दूसरे दिन भी बहुत थोड़ा समय काम कर सका। संध्या को घसीटाराम के यहाँ बारात आने वाली थी। उसे वहाँ काम-काज में सहायता के लिए जाना चाहिए था। मुकन्दलाल और खुशालसिंह ऐसे अवसरों के लिए स्वयं-नियुक्त संचालक थे। मुकन्दलाल ने पुरी को गैस और कनातों का प्रबन्ध करने के लिए 'लोहे के तालाब' पर जाने का परामर्श दिया। ताकीद भी कर दी कि गैस और कनात मुसलमान से नहीं, हिन्दू से ही लाने चाहिए।

पुरी चार बजे के लगभग एकांकी लिख रहा था कि रतन आ गया। उसने आकर कहा कि घसीटाराम के यहाँ बारात कश्मीरी मुहल्ले से आनी है, अगर रास्ते में किसी बराती को कुछ हो गया तो बहुत बुरा होगा। उसने सुझाव दिया कि हम तीन-चार आदमी चले जायें और बारात के साथ-साथ रहें। इस तरह उनकी जानों का खतरा था अतः रतन ने जिरह-बख्तर पहनने की राय दी। पहले तो पुरी ने कहा कि मैं तो इतना भारी नहीं पहनूँगा, परन्तु झगड़ा समाप्त करने को उसने रतन का आग्रह मान लिया।

११

अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में पुरी पंडित गिरधारीलाल जी के यहाँ से लौट रहा था तो कनक पंडित जी से शहालमी दरवाजे के बाहर अपनी सहेली सरला शर्मा के यहाँ हो आने के लिए कह कर पुरी के साथ आ गई थी। वह पुरी से बातचीत करने के लिए आई थी इसलिए दोनों बात करते-करते शहालमी से ठीक उलटे, दूर लारेंस गार्डन तक चले गये थे। लम्बी बातचीत में विलम्ब और अँधेरा हो जाने की चिन्ता तो कनक को जरूर थी, परन्तु पुरी को पूरी तरह सांत्वना दिये बिना, बात अधूरी कैसे छोड़ देती। लारेंस गार्डन से दोनों टाँगे पर लौट रहे थे तब वे बात कर रहे थे कि वे भविष्य में किस प्रकार और कहाँ मिलते रह सकेंगे।

कनक ने लौट कर अपनी गली के सामने बहिन की गाड़ी खड़ी देखी तो दाँतों से जीभ काट ली। पिता जी से तो जल्दी लौट आने के लिए कहा ही था इसके अतिरिक्त, उस संध्या माडल-टाउन से बहिन और जीजा आने वाले थे। वे लोग संध्या देर से आते थे तो भोजन करके लौटते थे। कनक ने प्रातः कांता का फोन मिलाते ही बड़े नौकर केसरी को संध्या के लिए मीट ले आने के लिए कह दिया था।

कनक और पुरी ने एक साथ बाहर जाना आरम्भ किया था सो कंचन को भी साथ ले लेते थे। हँसी-मज़ाक की बातें करते घूम आना कंचन को भी अच्छा लगता था। धीरे-धीरे वे लोग कंचन को साथ चलने के लिए कहना भूलने लगे। कंचन साथ चलने के लिए स्वयं कैसे कहती, परन्तु यह उसे खटके बिना न रहा। कनक उसे

छोड़ जाती तो वह कुछ पढ़ने या कोई सिलाई का काम लेकर बैठ जाती। उस संध्या भी वह बैठक से 'नया जमाना' लेकर अपने पलँग पर लेटकर पढ़ती रही थी। उसके बाद अपनी कमीज के गले पर एक बेल काढ़ने लगी थी।

कंचन ने जैसे ही बहन की कार का हार्न सुना, वह सारा काम छोड़ कर नानो (कांता की लड़की) को लेने पहुँच गयी, परन्तु नानो को न देखकर उसे बड़ी निराशा हुई। कांता ने बताया कि उन्हें बाजार में कुछ काम था इसलिए नानो को घर पर ही छोड़ दिया था। नैयर ने बैठक में घुसते ही कनक के बारे में पूछा। पंडित जी के पूछने पर कि वह तुम्हें कहीं मिली थी क्या, नैयर ने बताया कि वह लोअर माल में पुरी के साथ घूम रही थी। पंडित जी हैरान हुए पर इतना ही बोले—"आती ही होगी। अभी आ जाती है।"

पंडित जी ने कांता से नानो के बारे में कई प्रश्न किये। कान्ता पिता जी से बातें करने के बाद अन्दर माँ से बातें करने चली गयी। नैयर कभी पंडित जी से बात कर लेता, कभी कंचन से। कान्ता जब अन्दर से आई तो भी कनक नहीं आई थी। उसने चिन्ता प्रकट की। वैसे भी उसे नानो के कारण घर जाने की जल्दी थी। कान्ता ने कहा—"हम लोगों को देर हो जायेगी। पिता जी, हम लोग खाना शुरू करें। कन्नो आती ही होगी।"

पंडित जी ने स्वीकृति दे दी और खाना आरम्भ हो गया। पंडित जी पहले भी कनक के न आने के कारण परेशान थे। उन्होंने कंचन से कहा कि नौकर से कह कर मेज पर खाना लगवाये। जब कंचन नौकर से कहकर वापस आयी तो कनक आ चुकी थी और नैयर से क्षमा माँगते हुए कह रही थी कि उसे जरा देर हो गयी।

नैयर ने अपनी घड़ी दिखा कर पूछा—"यह जरा देर है? यह शायद साहित्यिक कला है कि आप मेहमानों को घर पर इन्तजार करायें और दोस्तों के साथ माल-रोड पर साहित्य-चर्चा करती फिरें।"

कनक ने खुशामद के लिए जीजा के कंधे से और सट कर उत्तर दिया—"बड़े आये मेहमान। यह आप का घर नहीं है? कौन सड़क पर या जंगल में इन्तजार कर रहे थे?" वह लपक कर कान्ता की कुर्सी की बाँह पर बैठ गई और नानो को साथ न लाने की शिकायत करने लगी।

दूसरे दिन कनक ने भाँपा, पिता जी चुप-चुप थे। उसने दोपहर के भोजन के समय कई बार पिता जी को हँसाने का यत्न किया पर वे बनावटी मुस्कान से होंठ फैला कर रह गये। संध्या भी ऐसे ही बीती। अगले दिन भी पिता जी के व्यवहार से गम्भीरता का बोझ न उतरा तो कनक ने कंचन से बात की—"कंची बात क्या है, पिता जी कुछ उदास हैं?"

कंचन अवसर की प्रतीक्षा में थी, बोली—"तुम कहोगी, मैं व्यर्थ बीच में पड़ रही हूँ इसलिए चुप थी। परसों शाम तुम पिता जी से सरला शर्मा के यहाँ शहालमी जाने के लिए कह कर गई थीं परन्तु जीजा जी ने आकर बताया कि तुम पुरी भाई साहब के साथ माल पर थीं। बहिन जी और जीजा जी बार-बार कह रहे थे, कन्नी

ने इतनी देर कहाँ लगा दी ? पिता जी ने जीजा जी के सामने बात दबा दी परन्तु मन में बहुत दुखी हुए। तुम जानती हो, पिता जी साफ बात पसन्द करते हैं।"

"इसमें ग़ैर साफ बात क्या है ?" कनक ने उत्तर दिया, "मैंने बाहर जाने के लिए कहा था, शहालमी गई या माल रोड, फर्क क्या है, बात कहने का ढंग होता है। मैं पिता जी के सामने ही तो उनके साथ गयी थी।"

"पर कन्नो," कंचन ने आग्रह किया, "पिता जी संकीर्ण विचार के तो हैं नहीं। हमें उनकी भावना का भी तो खयाल रखना चाहिए।" वह रहस्य में उतरना चाहती थी।

"मैं कम खयाल तो नहीं रखती।"

कनक को पिता का ऐसी बात पर नाराज हो जाना बहुत अन्याय जान पड़ा—क्या मुझे किसी से मिलने-जुलने और बात करने की भी स्वतन्त्रता नहीं है ? मन ने विरोध किया——मैं अब बच्ची तो हूँ नहीं। मुझे भी तो किसी दिन अपने जीवन का फैसला करना है ? सदा इस घर में तो मैं बैठी नहीं रहूँगी। उसे नैयर पर भी क्रोध आया, वह मुझ पर चौकीदारी करने वाले कौन हैं ? इस बात की चिढ़ है न कि अब मैं उनके साथ नहीं घूमती।

कनक अपनी स्वतन्त्रता के अधिकार के लिए जूझने को तैयार थी पर पिता के स्नेह के अधिकार के सामने उसे झुकना ही पड़ा। पिता जी का क्रोध दूर करने के लिए वह संध्या को उनके लिए स्वयं चाय लेकर बैठक में आई। कंचन को कह दिया, मुझे पिता जी से कुछ बात करनी है।

कनक ने पंडित जी को चाय बना कर दी और उसने बड़े संकोच से पिता से क्षमा माँगी कि परसों उसे बहुत देर हो गई थी। कनक ने फिर बहाना बनाया कि रास्ते में एक सहेली मिल गई थी, उसने बहुत जिद्द की तो मैं उसके साथ कुछ दूर तक चली गयी थी। अकेले लौटना अच्छा न लगता इसलिए मैंने पुरी जी को भी साथ ले लिया था।

इस पर पंडित जी ने कनक को समझाते हुए कहा——"तुम स्वयं बहुत समझदार हो। कोई बात नहीं। एक लड़के के साथ तुम्हारा घूमना विचित्र लगता है। बाहर जाते समय कंची को साथ ले लिया करो। ठीक है न !"

कनक मौन रही।

पंडित जी कहते गये——"तुम तो स्वाभाविक और स्वस्थ वातावरण में रही हो, लेकिन जिन लोगों को बचपन से लड़कियों से दूर रहना पड़ता है, वे बेचारे कुछ और ही समझ बैठते हैं। अब तुम एम० ए० कर लो तो फिर हमें तुम्हारे विवाह का भी तो खयाल रखना है।" पिता जी 'हें-हें' करते हुए हँस पड़े, "उसके लिए सामाजिक स्थिति, व्यक्तित्व, सम्बन्ध सभी बातों का खयाल करना होगा।" वे अंग्रेजी में बोलने लगे, "पुरी भला लड़का है लेकिन वह और हम बिलकुल भिन्न प्रकार और श्रेणी के लोग हैं। शारीरिक अवस्था और अनुपात भी देखा ही जाता है। उसे

किसी तरह की गलतफहमी न हो जाये, जैसे कि प्रायः हो जाती है, इसलिए मेरी राय है कि तुम कुछ दिन के लिए उससे मिलना-जुलना बन्द ही कर दो।"

कनक अपनी बात कह डालने के लिए आतुर हो गई परन्तु अपने को वश किया। सोचा, उचित ढंग से फिर किसी समय कहूँगी।

पिता जी बहुत गम्भीर होकर अंग्रेजी में बोले--"देखो बेटा, मेरे सामने तुम्हारे हित और कल्याण के अतिरिक्त और कोई विचार तो है नहीं। मुझे विश्वास है, तुम मेरे सुझाव का आदर करोगी।"

कनक अपनी बात कह सकने के उपाय ढूँढ़ने के निश्चय में उठ गयी। मन भारी था। परन्तु उदासी को छिपाना था। कनक को यह यातना असह्य जान पड़ी। दूसरे दिन प्रातः ही कनक को याद आया कि उसने संध्या समय पुरी से मिलने का वायदा किया था। उसने पुरी को सूचित करना उचित समझा कि वह नहीं आ सकेगी। उसने दुखित मन से पुरी को पत्र लिखा। कनक ने पिता की आपत्ति की बात नहीं लिखी। उसने लिख दिया कि मैं किसी कारण से नहीं आ सकूँगी। आगे जहाँ लिखोगे वहाँ पहुँच जाऊँगी। नहीं तो शनिवार को दो बजे स्टैन्डर्ड में मिलूँगी।

कनक या कंचन का कोई पत्र आता था तो विधिचन्द उन्हें बुलाकर दे देता था। वैसे सारी डाक दफ्तर में ही आती थी। कनक को पत्र न मिलने के कारण परेशानी हो रही थी। उसने विधिचन्द को बुलाकर पूछा तो पता चला कि उसने सारी डाक पंडित जी को दे दी थी। कनक ने समझ लिया कि पत्र आया होगा परन्तु उसे दिया नहीं गया। उसने सोचा कि घर वाले तो स्थिति को असह्य बना रहे हैं। शनिवार को भी कनक पत्र की प्रतीक्षा करती रही परन्तु उसे पत्र नहीं मिला। उसका खाने को भी मन नहीं था परन्तु खामुखाह उसे खाना पड़ा।

खाना खाते समय पंडित जी ने कनक से कहा कि कांता और नैयर छुट्टियों में मंसूरी जा रहे हैं सो तुम और कंचन भी उनके साथ चली जाओ। कनक ने कहा कि वह मंसूरी के बजाय शिमला जाना ज्यादा पसन्द करेगी। कनक जानती थी कि पिता जी उसे शिमले भेजने का प्रवन्ध नहीं कर पायेंगे।

पंडित जी खाना खाकर लेटने चले गये। कनक ऊपर गयी परन्तु पुरी के पास जाने की बेचैनी में वह ठीक से लेट भी नहीं पायी। डेढ़ बजे के करीब वह कपड़े बदल कर तैयार होने लगी। कंचन ने पूछा कि इतनी धूप में कहाँ जा रही हो तो उसने कहा कि सरला के घर तक जा रही हूँ। कंचन ने कहा भी कि धूप ढल जाये तो चली जाना परन्तु वह कपड़े बदल कर नीचे उतर गयी।

कनक दो बजकर दो मिनट पर स्टैन्डर्ड पहुँच गयी। पुरी न दिखायी दिया। पाँच मिनट और बीत गये पर वह नहीं आया। वह अन्दर जाकर एक कोने वाली मेज पर बैठ गयी। अकेले होने के कारण कनक को झेंप लग रही थी। दो बजकर बीस मिनट हो गये और पुरी नहीं आया तो कनक ने अनुमान लगाया कि शायद मेरा पत्र न मिला हो। वह पुरी के घर जाकर पता लगाना चाहती थी परन्तु समय न था, क्यों कि वह पंडित जी के दफ्तर में आने से पहले घर पहुँच जाना

चाहती थी।

कनक ने जैसे ही बैठक में कदम रखा तो पिता जी को बैठक में देखकर हैरान हो गयी। पिता जी के पास एक और व्यक्ति बैठा था। उनके सामने नाश्ते का सामान रखा था। पंडित जी ने कनक का उन सज्जन से परिचय कराया। कनक के बैठ जाने पर पंडित जी ने बताया कि वह प्रोफेसर माथुर डी० लिट्० हैं। कनक उनसे नमस्ते और शिष्टाचार की बातें करके ऊपर चली गयी।

उसने अपने कमरे में पहुँच कर नौकर को आवाज देकर पानी माँगा। जब वह पानी लेकर आया तो उससे उसने पूछा, "परसों वह चिट्ठी किस बम्बे (लेटर-बाक्स) में डाली थी।"

नौकर ने बताया कि मैंने चिट्ठी बम्बे में नहीं डाली थी। पंडित जी ने मुझे बुलाकर चिट्ठी मुझसे ले ली थी और कहा कि चपरासी बड़े डाकखाने में डाल आयेगा।

कनक सिर को दोनों हाथों में पकड़ कर लेट गई। सोचा, इतना प्रपंच ? मैं तो बिलकुल कैदी बना ली गई हूँ। 'ये' कितना परेशान हो रहे होंगे, सोचते होंगे मैं भूठी हूँ !

कनक का दिल लज्जा और चिन्ता से डूबा जा रहा था कि परसों ही पिता जी ने क्या कहा था और आज ही वह उन के सोये रहते समय, बिना पूछे, बिना सूचना दिये चली गई थी और आती हुई पकड़ी गई, परन्तु अब पिता जी के अत्याचार के सामने अपना अपराध उसे भूल गया। वह अपनी बचपन से मिली हुई स्वतंत्रता और अधिकारों की रक्षा के लिए तैयार हो गई। सोचा, अब बात उठाये बिना चारा नहीं। बात उठेगी तो वह सब बातों का फैसला एक साथ ही कर डालेगी। इस घर से सम्बन्ध-विच्छेद का समय आ गया है। यह घर उसे स्वयं ही बाहर धकेल रहा है ? सोचती रही—अब संकोच छोड़ कर पिता जी के सामने सब कुछ कह देना होगा।

कनक परेशान सी बिस्तर पर पड़ी रही। उसे चाय के लिए नौकर बुलाने आया तो उसने सर-दर्द का बहाना बनाया। पिताजी ने कहा कि गरमी से सर-दर्द हो रहा होगा अतः चाय न पिये। उसके लिए फालसे का शरबत भेजा गया तो उसने उसे भी पीने से इन्कार कर दिया। रात को खाने के लिए कंचन बुलाने आयी तो कनक ने रूखा सा उत्तर दे दिया कि मन नहीं करता। माँ स्वयं पूछने आयी कि कोई तकलीफ तो नहीं है, तब भी कनक ने इतना ही कहा कि उसके सर में दर्द ही हो रहा है। माँ ने कहा कि पिता जी ने खिचड़ी बनवाई है, और वह तेरा इंतजार कर रहे हैं, चल कर थोड़ी सी खा ले।

कनक खाने की मेज पर पहुँची तो पंडित जी ने उसे बड़े प्यार से बुलाया और फिर उसे स्वास्थ्य के बारे में समझाते रहे। कनक से खिचड़ी भी न खाई गयी। दूसरे दिन कनक ने नाश्ते के लिए भी अनिच्छा प्रकट की और लस्सी पीने से भी मना कर दिया तो घर का वातावरण गंभीर हो गया। पंडित जी ने कनक से कहा, चलो डाक्टर

को दिखा लाऊँ कि क्या बात है। कंचन ने कनक से कुछ खाने को कहा तो उसने झमक कर उत्तर दिया—"मैं किसी को कुछ नहीं कह रही हूँ तो मुझे चुप भी नहीं रहने दे सकते ?"

ग्यारह बजे के लगभग नीचे से नौकर ने आवाज लगायी कि नानो आयी है। कंचन ने कनक से नीचे चलने को कहा तो कनक ने उससे कहा, तुम जाओ मैं अभी आ जाती हूँ। कंचन तो जल्दी से नीचे भाग गयी परन्तु कनक लेटी रही। वह सोचने लगी कि उसने बात को इतना बढ़ाया है तो अब चुप नहीं रहेगी। उसने मन में सोचा कि पिताजी जानबूझ कर अनजान बन रहे हैं।

कनक जानती थी कि नीचे बहन और जीजा आये थे पर उसे कोई पुकार नहीं रहा था। नीचे से उसे सबकी आवाजें सुनाई दे रही थीं। उसे किसी ने नहीं पुकारा। वह गुस्से के मारे पत्रिका पढ़ने लगी पर उसमें भी मन नहीं लगा। उसने मन ही मन कहा कि मैं बिना बुलाये क्यों जाऊँ!

आठ-नौ मास पूर्व नैयर और कनक में जीजा-साली का परिहास खूब चलता था। परन्तु पुरी से बात हो जाने पर कनक को नैयर की छेड़छाड़ में कुछ सस्तेपन का अनुभव होने लगा था। नैयर को ऐसे दुराव में अपनी हेठी जान पड़ती थी। इस परिवर्तन के कारण का अनुमान लगाना नैयर के लिए कठिन नहीं था।

कांता की शादी की बात नैयर से हो जाने पर कनक और कंचन को भाई भी मिल गया था। परन्तु जब नैयर के प्रति कनक का लगाव कम होने लगा तो नैयर पुरी के प्रति उपेक्षा का भाव रखने लगा था। वह कनक से कहता, "जैसे कंचन के सितार सिखाने वाले उस्ताद मुट्टु बाबा हैं, यह तुम्हारा उस्ताद है।"

कनक को नैयर का परिहास बुरा लगा। नैयर और कनक में पुरी के बारे में काफी बहस हो गई। नैयर ने कहा—"उस की बोल-चाल और उठने-बैठने में निष्प्रयोजन ऐंठ और आत्म-विश्वास की कमी है, जैसे बिना टिकट के सफ़र करने वाले मुसाफिर का व्यवहार होता है। क्या तुम्हें नहीं दीखता ? उस के व्यवहार में सदा एक आतंक बना रहता है कि वह अनाधिकृत स्थान पर बैठा है, उसे कभी भी उठा दिया जा सकता है। उसे स्वयं बात करने का साहस ही नहीं होता।"

"आप साहित्य के क्षेत्र और मर्म की बाबत उन से बात कर ही नहीं सकते। वे आप से क्या बात करें ? आप अखबारी खबरों के अतिरिक्त राजनीति भी नहीं समझते ? सोसाइटी टाक या निरी बैठकबाजी उन्हें नहीं आती, क्योंकि ऐसी श्रेणी से उन का सम्पर्क नहीं है। यह कोई मौलिक न्यूनता नहीं है। आप को पुरी जी की संगति नहीं रुचती तो वह कब आप के पीछे दौड़ रहे हैं......।" कनक नैयर से पुरी के अपमान का बदला लिये बिना न रह सकी।

नैयर का विचार था कि कनक के मन में साहित्य के प्रेम और लेखक बनने की महत्वाकांक्षा की आँधी निकल जायगी तो इस 'गुरु' के प्रति भक्ति की घनघोर घटायें भी उड़ जायेंगी। लगभग पूरा वर्ष गुजर जाने पर भी ऐसा न हुआ तो उस ने कनक से साली और जीजे की अतरंगता के नाते पूछ लिया था—"गुरुभक्ति कुछ

और रूप तो नहीं ले चुकी है ?"

कनक पुरी के प्रति नैयर की विरक्ति जानती थी इसलिए उस ने बिलकुल अभेद्य बन कर कह दिया था—"कुछ भी नहीं ।"

मार्च मास के उत्पातों के बाद से अप्रैल के मध्य तक कनक इतना बेचैन रहने लगी कि उस ओर सभी का ध्यान बार-बार जाता था। कंचन को उस बेचैनी के कारण का अनुमान था, परन्तु उसने किसी से कुछ कहा नहीं। नैयर ने भी दो-एक बार कनक से विश्वास और अंतरंगता के स्वर में उसकी परेशानी का कारण पूछा, परन्तु कनक ने अपना रहस्य प्रकट नहीं किया। नैयर के मन में शंका थी, परन्तु प्रमाण कोई न था इसलिए चुप था।

●

कनक लेटी हुई थी। नैयर आया तो उसने खसक कर पलँग पर उसके बैठने के लिए जगह बना दी। नैयर कनक के पत्र और मौन विरोध के बारे में पंडित जी से सुन चुका था। अतः वह परिवार के प्रतिनिधि के रूप में स्थिति समझने और सुधारने आया था। नैयर ने उसकी पीठ में कोहनी गड़ाई तो उसने रुखाई से कह दिया कि उसे हाथा-पाई का जोक अच्छा नहीं लगता। नैयर गंभीर हो गया। थोड़ा दूर खसक गया और उसने फिर पूछा, "क्या बात है, तबियत तो ठीक है ?"

कनक ने 'न' में सिर हिला दिया। जब नैयर ने देखा कनक टाले जा रही है तो उसने उससे कहा—"कुछ बताओ तभी तो तुम्हारी परेशानी का हल ढूँढ़ा जा सकता है। बिना बताये कुछ करोगी तो भी प्रकट हो ही जायेगा।"

कनक ने पत्रिका एक ओर रख दी और कमीज के आँचल को घुटनों पर खींचते हुए बोली—"पिता जी मेरे साथ ज्यादती कर रहे हैं।"

"क्या, कैसी ज्यादती ?" नैयर ने सहानुभूति से पूछा।

"मेरे पत्र रोक रहे हैं।"

नैयर ने सोच कर पूछा—"मतलब है, तुम्हारे नाम आये पत्र तुम्हें नहीं दिये ?"

"हाँ, और मैंने जो डाक में डालने के लिए दिया था, वह रख लिया।"

"किसका पत्र आया और तुमने किसको लिखा ?"

"पुरी जी को।" कनक के स्वर में साहस का निश्चय था।

"पुरी को ? वह तो यहाँ आता-जाता ही रहता है।"

"कहाँ आ पाते हैं ? आप लोगों का व्यवहार उन के साथ ऐसा है।"

"क्यों, मेरा तो खयाल नहीं कि मैंने कभी उसके साथ दुर्व्यवहार किया ? खैर, यह सोचने-समझने की बात है। इस विषय में सीरियसली बात करनी होगी। तुम हमारे साथ माडल-टाउन चली चलो। वहाँ सुभीते से बात करेंगे। वहाँ खुली हवा में यहाँ से अच्छी ही रहोगी।"

माडल-टाउन पहुँच कर कनक ने जीजा और बहन के साथ भोजन कर लिया।

कुछ विश्राम पा कर वह अपने अधिकार के लिए संग्राम करने के लिए और भी तत्पर हो गयी। बीच में दो-दो, चार-चार बातें होती रहीं। विवाद का विषय प्रकट हो चुका था। चौथे दिन संध्या की चाय के बाद कांता, नैयर और कनक लान के एक कोने में कुर्सियाँ डाल कर गम्भीरता से बात करने के लिए बैठे।

"तुम यह तो मानती हो कि पिता जी और हम लोग केवल तुम्हारा हित ही चाहते हैं और पिता जी और हम लोगों को थोड़ा-बहुत अनुभव और समझ है ?" कांता ने बात आरम्भ की।

कनक बोली—"ऐसी बातें तो वे लोग भी कहते हैं जो लड़कियों का व्याह पन्द्रह बरस की उम्र में कर देते हैं और इस विषय में लड़की का मुँह खोलना अनुचित समझते हैं।"

"पर तुम जानती हो हम ऐसा नहीं समझते।" नैयर ने बात अपने हाथ में ली, "हम लोग तो तुम्हारे विवाह में तुम्हारी इच्छा को मूल वस्तु मानते हैं और तुम्हारे हित की चिन्ता से अपनी अनुमति भी आवश्यक समझते हैं।"

"यदि आप लोग मेरी इच्छा को नामंजूर कर दे सकते हैं तो मेरी इच्छा का प्रश्न क्या हुआ ?"

"नहीं, यह बात नहीं है, प्रमुख तुम्हारी इच्छा ही है। तुम्हारी इच्छा न होने पर हमारी अनुमति या इच्छा का कोई प्रश्न नहीं उठता।" नैयर ने स्पष्ट किया।

"मेरी इच्छा आप जानते हैं परन्तु आप की अनुमति न होने से आप उसका कोई मूल्य नहीं समझते।" कनक ने आवेश में कहा, "आप का अभिप्राय तो यह है कि आप लोगं चुन लें और मैं हाँ कर दूँ और आप कहें, तेरी ही इच्छा से सब कुछ हो रहा है।"

नैयर उत्तेजित नहीं हुआ—"अच्छा यही सही। हमारा अभिप्राय है कि हमारा चुनाव तुम्हारी स्वीकृति पर निर्भर करता है और तुम्हारा चुनाव हमारी अनुमति से होना चाहिए। तब तो दोनों ओर सम स्थिति है न !"

कनक उद्वेग से बोली—"समता क्या है ? आप लोग मेरे अधिकार और क्षेत्र में दखल दे रहे हैं। आप मेरे अधिकार को आधा काट कर कहते हैं कि दोनों का अधिकार बराबर है। अंग्रेज भी कह दें कि भविष्य में भारत के सम्बन्ध में उनका और भारतीयों का अधिकार बराबर होगा या लीग कहे कि पूरे देश पर लीग और काँग्रेस का आधो-आध अधिकार होना चाहिए तो आप मान जायँगे ? प्रश्न तो मेरे जीवन का है, किसी दूसरे के निर्णय का प्रश्न क्या ?"

नैयर खिन्नता से बोला—"कैसी बातें करती हो, तुम्हें हम अपना कुछ न समझते तो हमारी अनुमति का प्रश्न न होता। पिता जी या हम क्या तुम्हारे विवाह से कुछ लाभ उठाना चाहते हैं ? हम देख रहे हैं कि तुम्हारा चुनाव तुम्हारे हित में ठीक नहीं है। चुनाव ठीक जँचता तो हम लोगों को प्रसन्नता ही होती।"

"निवाहना तो मुझे है। आप लोगों को पसन्द नहीं भी तो क्या हुआ ?"

"तुम तो ऐसे बोल रही हो जैसे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं। आखिर हम

लोगों को पसन्द क्यों नहीं है ? पुरी का हम लोगों के साथ हिल-मिल न सकना उस की न्यूनता नहीं है ? वह हम लोगों के स्तर का नहीं है। हम लोग तुम्हें अपने ही स्तर में रखना चाहते हैं या अपने से ऊँचा देखना चाहते हैं। तुम अपनी जिन्दगी बरबाद करना चाहो तो हम कैसे मान जायें ?"

"मैंने तो अपनी जिन्दगी सफल बनाने के लिए ही उन्हें चुना है।" कनक ने आँखें झुका लीं।

"हमें तो नहीं दिखायी देता किस प्रकार की सफलता तुझे उससे मिलेगी ?" कांता ने क्षोभ प्रकट किया, "तेरे साथ बराबर खड़ा भी वह कुछ नहीं जँचता। इन की ठोढ़ी तक भी नहीं पहुँचता, बाकी कद-काठ भी क्या है, जैसे लड़ाई के जमाने में मसाला न मिलने पर बचे-खुचे से ही बना दिया गया हो।"

"रहने दीजिये भैन जी !" कनक ने क्रोध से टोक दिया, "किसी के बारे में ऐसे कहने का आप को क्या हक है ? मैं कहूँ कि जीजा जी चलते-फिरते शहतीर हैं तो क्या आप को अच्छा लगेगा ?"

"हाय सदके, क्यों नहीं !" कांता हँस पड़ी, "मैं तो इनके सिर पर से सात मिर्चें वार कर आग में डाल दूँ कि नजर न लग जाये।"

कनक ने न हँसने का निश्चय कर लिया था—"आप को तो केवल शरीर ही दीखता है—बस पैसा, मोटर, बँगला, और पोजीशन ही दीखती है ?"

"अच्छा बाबा, तुझे उसमें क्या दीखता है ? तेरा व्याह उसके शरीर से नहीं होगा ?" कांता ने ठोढ़ी मुट्ठी पर टिका कर पूछा।

"क्यों, उनकी कला की प्रतिभा, उनका आत्माभिमान, आत्म-विश्वास, उनकी सहृदयता, इन बातों का कोई महत्व नहीं ?" कनक ने उत्तर दिया।

"इतना सब देख लिया तूने इतनी जल्दी ?" कांता ने मजाक किया।

"किसी में गुण होते हैं तो दीख ही जाते हैं।" कनक झेंपी नहीं।

नैयर ने कनक को समझाना चाहा कि हो सकता है पुरी एक दिन बड़ा लेखक बन जाये, परन्तु विवाह के लिए गुण की अपेक्षा सामाजिक स्थिति और सामर्थ्य को देखा जाता है। मनुष्यत्व एक चीज है और कला दूसरी। इस पर कनक ने कहा कि वह तो पुरी के मनुष्यत्व का ही आदर करती है। नैयर ने फिर समझाना आरम्भ किया कि तुम्हें अभी पुरी से अधिक मिलने और उसे समझने का अवसर ही कहाँ मिला है। इस पर कनक ने कह दिया कि आप लोग समझने के लिए समीप होने का अवसर ही कहाँ देते हैं। इतना सुनकर नैयर ने कहा—"तुमने तो निर्णय कर लिया है, समझने का प्रश्न ही कहाँ रखा है ?" इस पर कनक ने बे झिझक स्वीकार कर लिया कि हाँ उसने निर्णय कर लिया है।

दूसरे दिन नैयर प्रातः ही अपने सीनियर वकील के यहाँ चला गया। दोनों बहनें दोपहर में पलँग पर लेट कर बातें करने लगीं। कांता ने बताया कि जब पिछली बार वह पिताजी के पास गई थी तो वह रो पड़े थे और कह रहे थे कि उन्हें कनक से ही सबसे ज्यादा आशा थी और वह ही उन्हें सबसे अधिक ख्वार कर रही है। वह

कह रहे थे कि आज मेरी बेटी को मुझ पर एतबार नहीं है। वह यह भी कह रहे थे कि मुझे और क्या चाहिए, परन्तु ऐसे लड़के को अपना बेटा बनाने लायक कैसे समझूँ ?

इतना सुनकर कनक रो पड़ी। उसने बहन से कहा—"मैं पिता जी से बहुत स्नेह करती हूँ, पर इस बात में मेरा बस नहीं है। या फिर ब्याह की बात कभी सोचूँगी ही नहीं।"

कान्ता ने बताया कि पिता जी का कहना है कि कनक की जिन्दगी ऐसी जगह बरबाद करने से तो उसका कुँआरी रह जाना ही मुझे मंजूर है। कांता को विश्वास था कि पिता जी के प्रति कनक का प्रेम और आदर उसे सम्भाल लेगा। कनक ने बहन से कहा कि पिता जी से प्रेम तो तुम भी कम नहीं करती थीं पर अपना घर बसाने के लिए यहाँ आ ही गयीं। इस पर कांता ने कहा—"बड़ी निर्भय हो गयी है तू।"

कनक ने कहा—"जानती थी तुम ऐसा ही कहोगी, सो कहो। मैं पिता जी के लिए अपने-आप को बलिदान कर सकती हूँ, परन्तु उन्हें जो वचन दिया है, उसका क्या करूँ ? वे भी तो तड़प रहे होंगे ! यदि मेरे कारण कुछ कर बैठे ? तुम जीजा जी के लिए सब कुछ छोड़ सकती हो या नहीं, तो फिर मैं क्या करूँ ?" कनक फिर रोने लगी।

कनक को जब पता चल गया कि पिता जी उसके व्यवहार से दुःखी हैं तो वह उनके सामने जा नहीं सकती थी। वह बहन के ही घर रुक गई। जब वह जब्र न रख सकी तो उसने बहन से कहा कि वह पुरी को पत्र लिखना चाहती है। कांता ने इसे उचित न समझा अतः उसने कनक से कह दिया कि शाम को जीजा जी से पूछ लेना। संध्या समय बात नैयर के सामने आयी। नैयर ने कनक को फिर समझाना चाहा, उसने कहा कि तुम्हारे हित की चिन्ता हम सब का कर्तव्य है। उसने कनक से कहा कि वह उससे केवल जीजा जी की स्थिति से नहीं वरन् मित्र की स्थिति से बात कर रहा है। उसने कनक को बताया कि वह उसका विरोध करके उसका शत्रु नहीं बनना चाहता। उसने कनक से सहायता माँगी ताकि वह कनक की सहायता कर सके। कनक ने कहा कि मैं सहायता करने को तैयार हूँ, शर्त यह है कि आप मुझे शब्द-जाल में न बाँध लें।

नैयर कदम-कदम चलते हुए बोला, "तुम को जब हम यहाँ लाये थे तो पिता जी को यह आश्वासन दिया था कि हम तुम्हें अपना अहित न करने अर्थात पुरी को पत्र न लिखने और उस से न मिलने के लिए समझा लेंगे…।"

"यह मेरा अहित है ?" कनक ने टोका, "प्राण ले लो मेरे, तब अहित का भय न रहेगा।"

"बात सुन लो।" नैयर कहता गया, "मैं स्वयं अपनी बात और अधिकार पर सीमा लगा रहा हूँ। हमारा विचार है कि तुम कला के प्रति आकर्षण के कारण पुरी के चक्कर में आ गयी हो, तुम्हें उसे पहचानने-समझने का उचित अवसर नहीं

मिला और तुम ने आवेश में कुछ ऐसे कदम उठा लिये कि हम घबरा गये हैं।"

"मैंने अनाचार की कोई बात नहीं की।"

"अनाचार तो केवल धारणा की बात है। मेरा मतलब है, अपने-आपको बाँध देने से।"

"जीजा जी, दूसरे को बाँधने के लिए बँधना भी तो पड़ता है।" कनक ने मुस्कराकर कहा।

"खैर सुन तो लो! मेरा विचार है कि तुम ने चाहे जो कुछ किया हो, तुम्हें और हमें भी उस आदमी को पहचानने-समझने का अवसर मिलना चाहिए। शायद हम ही भूल कर रहे हों। हमें भी उसे समझने का यत्न करना चाहिए। यदि तुम उस से सम्बन्ध करना ही चाहती हो तो हम भी उस का आदर कर सकें, यह तो बुरी बात नहीं है?"

"परन्तु आप लोगों के दिमाग में तो प्रेजुडिस (विरोध) भर गया है।" कनक ने अटल विश्वास से कहा, "वह प्रेजुडिस भी आप ने ही जमाया है। आप पर मुझे सब से अधिक भरोसा था और आप ने ही यह किया। पहले सब लोग उनका आदर करते थे। आप ने उन्हें हीन कह दिया, दूसरों ने मान लिया।"

"तुम्हारा अनुमान ठीक नहीं है।" बहुत धैर्य से नैयर ने कहा, "यदि तुम्हारा अनुमान ठीक है तो मैंने जो कुछ किया, पुरी के प्रति द्वेष के कारण नहीं, तुम्हारे प्रति ममता के कारण किया है।" तुम्हें मुझ पर भरोसा मेरे ममता के व्यवहार के कारण ही था। मुझे अच्छा नहीं लगा कि हमारी कबूतरी को कौआ उड़ा ले जाये...।"

"शट अप!" कनक अपने पुलक को दबा न सकी।

नैयर कनक की धमकी सुन कर भी गंभीर बना रहा। उसने कनक से कहा कि वह उसे पिता जी से बात करने का अवसर दे। पिता जी से बात करने का मतलब उनके मन में उस व्यक्ति के संबंध में विश्वास की धारणा उत्पन्न कर सकना है, जिससे तुम्हें पूरी स्वतंत्रता रहे कि तुम पुरी से मिलो। बात करो। और अगर साल भर बाद भी तुम्हारा निश्चय अडिग रहेगा तो तुम्हारे व्यवहार में बाधा नहीं डाली जायेगी।

कनक ने उत्सुकता के कारण नैयर से पूछा कि वह पिता जी से कब बात करेगा। इस पर नैयर ने कहा कि इस काम के लिए पहले उसे स्वयं पुरी से मिलकर उसके बारे में जानना होगा। उसने कनक को बता दिया कि तब तक पिता जी की भावना के आदर के लिए वह न तो पुरी को पत्र लिखे और न उस से मिले। कनक ने आपत्ति की तो नैयर ने कह दिया कि इस तरह यही पता चल जायेगा कि उसमें कितना धैर्य और तुम्हारे प्रति कितना विश्वास है। कनक ने कहा कि पहले उन्हें स्थिति समझा दी जाये। नैयर ने कहा कि इसकी क्या आवश्यकता है? पुरी को पिता जी का मत और तुम्हारा भाव मालूम है, अब उसके धैर्य और विश्वास की परीक्षा ली जाये। कनक ने परीक्षा की बात पर आपत्ति की तो नैयर ने समझाया कि यह परीक्षा नहीं केवल पुरी के स्वभाव और व्यक्तित्व को समझने के लिए एक

उचित उपाय है। नैयर ने कहा कि कम से कम इस काम के लिए तीन मास का समय उसे मिलना चाहिए।

कनक ने पूछा कि उन दोनों को तीन महीने तक यातना देने की क्या आवश्य-है ? इस पर नैयर ने कहा, "तुम्हारे व्यवहार के कारण ऐसा करना आवश्यक हो गया है। तुमने उसे अपनी सहमति देने से पहले पिताजी से अनुमति भी नहीं ली। क्या तुम्हें पहले ही आशंका थी कि घर वालों को पुरी नहीं जँचेगा ?"

कनक के इन्कार करने पर नैयर ने कहा कि उसे पहले पिता जी से राय लेनी चाहिए थी। और इस समय स्थिति को सुधारने का यही एक उपाय है। इस तरह हम यह समझ सकेंगे कि तुम अपने प्रेम के लिए सच में त्याग कर सकती हो या यह केवल उफान-मात्र है। कनक के व्यवहार को देखकर नैयर ने फिर पूछा कि क्या तुम घर से त्याज्य हो जाना अधिक संतोषप्रद समझती हो। उसने कनक से इस विषय में पुरी की राय जाननी चाही तो कनक ने कहा कि वे इन रूढ़ियों की परवाह नहीं करते हैं। नैयर ने कहा कि शायद पुरी तुम्हारे समर्थ परिवार के कारण ही तुमसे प्रेम करता हो, परिवार से अलग होने पर तुमसे प्रेम न कर सके। यह सुनकर कनक ने कह दिया कि वे मेरे लिए सब कुछ करने को तैयार हैं।

नैयर ने फिर अपनी बात चलायी कि इतनी बड़ी बात की भूमिका बाँधने के लिए दो-तीन मास का समय अधिक नहीं होता। कनक ने पुरी से एक बार मिल लेने की इच्छा प्रकट की तो नैयर ने विवशता दिखाते हुए कहा कि वह इस विषय में पिता जी को आश्वासन दे चुका है। कनक ने कहा कि इस तरह उनके साथ कितना अन्याय होगा, वे क्या सोचेंगे। इस पर नैयर ने कहा कि अगर उसके पास बुद्धि होगी तो वह सब समझ जाएगा। नैयर ने पुनः कहा—"मैं तुम्हारे लिए इतना बड़ा जोखिम ले रहा हूँ। समाज में परित्यक्त बन कर और उसे परित्यक्त बनाकर तुम उसके भविष्य को सुधारोगी नहीं, उसके मार्ग में बाधा ही बनोगी।"

कनक ने कहा कि वह शर्त मानने को तैयार है, परन्तु उसे एक बार मिलने का अवसर दिया जाए। नैयर ने कहा कि वह घर से लड़कर उसका समर्थन नहीं कर सकता। इस पर कनक ने कहा कि फिर तीन महीने का समय न रखा जाए। इस पर नैयर राजी हो गया और उसने समय दो मास का कर दिया। और कनक से वचन माँगा कि वह चाहे जहाँ रहे, पुरी को न तो पत्र लिखेगी और न उससे मिलने का यत्न करेगी। नैयर ने यह भी कह दिया कि वह इतने समय में पुरी के बारे में जो भी जान पायेगा कनक को बता देगा और कहीं संदेह होगा तो उससे मिलकर उसे दूर करने का प्रयास करेगा।

●

जून के पहले सप्ताह में मुस्लिम-लीग ने पाकिस्तान की स्थापना के लिए बंगाल और पंजाब को हिन्दू-बहुल और मुस्लिम-बहुल भागों में बाँट देने की शर्त स्वीकार कर ली। इस प्रकट समझौते ने और भी विकट संघर्ष को जन्म दे दिया।

साधारणतः पश्चिमी पंजाब के मुस्लिम-बहुल और पूर्वी पंजाब के हिन्दू-बहुल होने पर भी पश्चिमी में पंजाब में लायलपुर, मिंटगुमरी, शेखपुरा के नहरी उपनिवेशों में सिक्ख किसानों की बहु-संख्या थी और पूर्वी पंजाब के जालंधर, लुधियाना, अमृतसर आदि नगरों में मजदूरों और कारीगरों के मुसलमान होने के कारण, मुसलमानों की संख्या अधिक थी। मुस्लिम-लीग लाहौर से पूर्व में बहुत दूर तक का भाग पाकिस्तान में चाहती थी और कांग्रेस अथवा हिन्दू आधे पंजाब से बहुत दूर पश्चिम की ओर हिन्दुस्तान की सीमा बनाना चाहते थे। लहौर के लगभग बीचो-बीच होने के कारण उस पर दोनों का दावा था।

सरकार, मुस्लिम लीग और कांग्रेस ने निश्चय किया कि पंजाब असेम्बली के भिन्न-भिन्न चुनाव-क्षेत्रों के हिन्दू-सिक्ख और मुस्लिम सदस्य अलग-अलग बैठ कर निर्णय कर लें कि उन के क्षेत्रों की जनता हिन्दुस्तान के साथ रहेगी या पाकिस्तान के साथ। सरकार ने इसके लिए २० जून की तारीख निश्चित कर दी थी।

माडल टाउन में रहने वाले गिने-चुने मुस्लिम परिवारों में बैरिस्टर मिर्ज़ा महेन्द्र नैयर के पड़ोसी थे। महेन्द्र नैयर और बैरिस्टर मिर्ज़ा के व्यवहारों में हिन्दू-पन और इस्लाम के आचार-व्यवहार की रीति के भेदों की कोई बात न थी। खान-पान और पहरावे के रूढ़िवादी बन्धनों को दोनों ही पसन्द नहीं करते थे। दोनों के यहाँ पर्दा नहीं था। वे अधिकांश में अंग्रेजी ही बोलते थे। दोनों का एक-दूसरे के यहाँ उठना-बैठना और निस्संकोच खाना-पीना भी था। यहाँ तक कि कभी महेन्द्र मिर्ज़ा की मोटर में और कभी मिर्ज़ा महेन्द्र की मोटर में हाईकोर्ट तक साथ आते-जाते रहते थे, विशेष कर उपद्रव के दिनों में सुरक्षा के विचार से भी। मिर्ज़ा के साथ रहने वाली उन की छोटी बहिन क्रिश्चियन कालेज की विद्यार्थी, कनक से खूब परिचित थी। पंजाब का विभाजन करने वाली रेखा कहाँ होनी चाहिए, इस विषय पर दोनों में बहुत चर्चा होती थी, परन्तु उन में भी कोई समझौता सम्भव न होता। मिर्ज़ा पाकिस्तान की सीमा में अम्बाला और फीरोज़पुर तक सम्मिलित करने के पक्ष में था। उस का तर्क था, पंजाब एक है, उस के टुकड़े नहीं होने चाहिए।

महेन्द्र आपत्ति करता—"लायलपुर, मिंटगुमरी, सरगोधा और शेखपुरा की नहरी आबादियों में सत्तर-अस्सी प्रतिशत भूमि और आबादी सिक्खों और हिन्दुओं की है। वे पाकिस्तान में क्यों रहें? क्या वे लोग अपनी भूमि उठाकर हिन्दुस्तान ले जायें? हिन्दुस्तान की सीमा वहाँ ही क्यों न हो?"

"उन्हें पाकिस्तान में रहने से कौन मना करता है?"

"तो मुस्लिम-प्रधान पंजाब को ही हिन्दुस्तान का अंग बना रहने में क्या आपत्ति है?" प्रकट में झगड़ा न होने पर भी दोनों की बातचीत कम होती जा रही थी।

कनक दिन काट सकने के लिए कुछ पढ़ने या लिखने में ध्यान लगाने का यत्न करती। अपनी समस्या को लेकर कहानी या एकांकी लिखने का यत्न करती, कभी लेख लिखने लगती, परन्तु उस प्रचंड दारुण यथार्थ को कल्पना के कुहासे में लपेट न

कुहरा

पाती। वह शिकायत या संवाद में न जाती। सन्तोष न होने पर फाड़ कर फेंक देती। जून में गरमी खूब बढ़ गयी थी। दोपहर में नींद आ जाती, परन्तु रात में उसका बदला चुकाना पड़ता।

आधी मई से नगर में कत्ल और आग का आतंक बहुत बढ़ गया था, परन्तु माडल-टाउन की बड़े लोगों की बस्ती उस प्रभाव से बची हुई थी। वहाँ हिन्दू मुसलमान और विभाजन की समस्याओं का प्रभाव केवल बहस, अंग्रेजी में ऊँचे स्वर में बहस तक ही सीमित था।

श्रीमानों की बस्ती माडल-टाउन पर प्रकृति का भी पक्षपात था। वहाँ के बंगलों की छतों पर नगर की अपेक्षा रात में काफी ठंडक रहती थी। दूर-दूर तक आड़ न होने के कारण वायु के लिए रुकावट नहीं थी। वहाँ चाँदनी और अँधेरी, दोनों ही प्रकार की रातें रम्य होती थीं, परन्तु कनक के लिए दोनों में ही विकलता थी। उसे नींद न आने पर आँखें खोले मसहरी में से आकाश को देखते हुए पुरी की याद और परिवार द्वारा लगायी बाधाओं की बात सोचते रहना असह्य हो जाता। कनक को दिन में सो लेने और मन अशांत होने के कारण आधी रात बीत जाने से पहले नींद न आती। वह नीचे प्रकाश में, पंखे के नीचे बैठी कुछ पढ़ती रहती। पहिली आधी रात की गर्मी का बदला पिछली रात के शीतल पवन से मिलता। सूर्योदय के एक घण्टे बाद भी ठण्डी हवा चलती रहती और छतों पर सोये लोग पलँग न छोड़ना चाहते।

कनक विलम्ब से सोती थी इसलिए शीतल पवन की थपकियों में सूर्योदय तक भी उसकी आँख न खुलती। पड़ोस में मिर्ज़ा के बँगले की छत पर भी ऐसा ही ढंग चलता था।

"कन्नी! कन्नी उठ देख!" कान्ता की ऊँची पुकारें सुन कर कनक ने गहरी नींद से आँखें खोलीं। उठते ही जलने की गन्ध सी अनुभव हुई। वह कमीज घुटनों पर खींच कर मसहरी से निकल आई।

नैयर की माँ कह रही थी—"मैं तो बहुत देर से देख रही हूँ। जब बहुत डर लगा तो तुम लोगों को जगा दिया।"

नैयर रात के धारीदार कपड़ों में खड़ा आकाश की ओर नजर उठाये था। उत्तर की ओर नगर के ऊपर आकाश में लाल आँधी सी चढ़ आयी जान पड़ती थी। जहाँ-तहाँ काले-काले, छोटे-छोटे डोर काटी हुई काली पतंगों जैसे कागज के टुकड़े से उड़ रहे थे।

"यह आग तो बहुत भयंकर है?" नैयर चिंता से बोला, "इतनी दूर से कहना कठिन है, कहाँ होगी?" वह नीचे उतर गया।

कान्ता ने सोयी हुई नानो को उठा लिया। वह और कनक भी नीचे उतरीं तो नैयर फोन कर रहा था। दोनों उत्सुक जिज्ञासा में समीप खड़ी रहीं। नैयर के संक्षिप्त: "हैं! अच्छा! ओह! रियली? माई गाड!" से उनकी चिन्ता और उत्सुकता गले तक उमड़ रही थी। नैयर ने फोन रख कर बताया—

"आग शहालमी दरवाजे के भीतर बाजार में लगी है। आधी रात से आग लगी हुई है। आग की लपटें ग्वालमण्डी में दिखाई दे रही हैं। प्रायः मील भर दूर है। ग्वालमण्डी में भी भयंकर चिरांध और हवा में गरमी आ रही है। आग की लपटों से आकाश में उड़े हुए चीथड़े या कागजों के टुकड़े राख बन कर गिरने से ग्वालमण्डी में छतें भर गई हैं। शहालमी में बहुत गोली चलने की भी अफवाह है।"

कान्ता का बहुत कुछ समाधान हो गया कि आग उसके मायके, ग्वालमण्डी से मील भर दूर थी। वह काम में लग गई, परन्तु कनक का मन चिन्ता से बैठा जा रहा था। भोलापांधे की गली शहालमी दरवाजे से बहुत दूर अन्दर की तरफ थी, परन्तु क्या पता था...।

"हैलो नैयर !" मिर्ज़ा के बँगले की ओर से पुकार सुनाई दी। साथ ही बेगम मिर्ज़ा की आवाज आई, "भैन जी ! कनक !"

नैयर के साथ कान्ता और कनक भी दोनों बंगलों के बीच की नीची दीवार की ओर बढ़ गईं। मिर्ज़ा उन्हें देखते ही बोला—"देख लो, महानाश आरम्भ हो गया। हिन्दुस्तान भी बन गया और पाकिस्तान भी बन गया। कयामत है, कयामत ! मैंने शहर में फोन किया था, खदीजा के मौसा दिल्ली दरवाजे से इधर की चक्की गली में रहते हैं। बेचारे बहुत घबराये हुए हैं। कह रहे हैं, उनकी छत पर भी आँच का सेंक आ रहा है। क्या मालूम, आग उधर भी बढ़ जाये। बेवक़ूफ कह रहा है, हिन्दू पूरे लाहौर को जला देने की कोशिश कर रहे हैं।"

"आग तो शहालमी से शुरू हुई है, वहाँ तो हिन्दू ही पहले मरेंगे।" नैयर ने कहा।

नैयर ने खदीजा को टोक दिया—"तोबा, कोई खुद अपना घर थोड़े ही जला लेगा। क्या जहालत है ?"

"मुझे तो परसों मालरोड पर ही आसार अच्छे नहीं दिखाई दे रहे थे। तुमने असेम्बली चेम्बर के सामने भीड़ देखी थी ? ओफ ! नाराए बजरंगी ! नाराए हैदरी ! तोबा ! तोबा ! पुलिस दोनों को भगा न देती तो खून के दरिया बह जाते ! वह जहर रात में फूटा।"

"लेकिन परसों दोपहर से ही करफ़्यू हो गया था, रात भी करफ्यू था।" नैयर ने सन्देह प्रकट किया, "करफ्यू में साधारण लोग बाहर निकल नहीं सकते। बाजारों में सशस्त्र पुलिस मौजूद होगी। इस प्रकार फैला कर आग लगाने का अवसर कैसे हुआ ? स्वयं लग गई थी तो एकदम बुझा दी जानी चाहिए थी। वहाँ बहुत समीप रंगमहल में ही फायर-ब्रिगेड का स्टेशन है !"

"अरे भाई, जब दिलों में इतनी आग है तो आग नहीं लगेगी तो क्या ? हिन्दू को मुसलमान और मुसलमान हिन्दू को नेस्तनाबूद (मूलनाश) कर देना चाहता है तो क्या नहीं होगा ? असेम्बली में परसों क्या फैसला हुआ, नहीं जानते ? वही तो इसकी जड़ है !"

नैयर ने हामी भरी।

"तो फिर ? तुम्हीं बताओ !" मिर्ज़ा अंग्रेजी में बोला, वह पंजाबी या उर्दू में तर्क नहीं कर सकता था, "माना, पश्चिम पंजाब मुस्लिम-प्रधान है और पूर्वी पंजाब हिन्दू-प्रधान है, पर पूर्व में ऐसी जगहें हैं कि लगातार मुस्लिम गाँव चले गये हैं। मेरा गाँव जालंधर के करीब है, वहाँ मीलों सब मुस्लिम हैं। जाहिर है कि वे इस्लामी तरज़-तौर पसन्द करेंगे...।"

"पश्चिम में लायलपुर, मिटगुमरी, ओकाढ़ा में क्या है ? सब हिन्दू-सिक्ख बस्तियाँ हैं।" नैयर ने टोका।

"यही तो कह रहा हूँ।" मिर्ज़ा बोला, "हमारे पच्छिम पंजाब के हिन्दू एम० एल० ए० और पूर्वी पंजाब के मुसलमान, मेम्बर ने हिन्दुस्तान में रहने के लिए वोट नहीं दिया। यह लोग नहीं लड़ा रहे तो कौन लड़ा रहा है। जाहिर है कि जिन्ना का तबदीलिये आबादी का प्रोग्राम सामने आयेगा ! मैं कहता हूँ, हिन्दुओं को मुसलमानों से और मुसलमानों को हिन्दू-सिक्खों से, लोगों को अपनी पुश्तैनी जगहों से अलग करना ऐसा है जैसे जिस्म के मांस को हड्डियों से अलग करना।"

मिर्ज़ा और नैयर दोनों ही हिन्दू-मुसलमान में भेद नहीं समझते थे। दोनों ही बटवारा नहीं चाहते थे, दोनों में मेल चाहते थे फिर भी दोनों के विचारों में भेद था, क्योंकि वे परस्पर-विरोधी हिन्दू-मुस्लिम बिरादरियों के अंग थे। पर उनकी सज्जनता उन्हें आपस में मित्रता बनाये रखने के लिए बाध्य किये थी। उस दिन सावधानी के विचार से दोनों मिर्ज़ा की गाड़ी में एक साथ कोर्ट गये।

कनक दोपहर तक बहुत व्याकुल हो गई। वह चाहती थी स्वयं फोन करके पता ले। फोन पर अधिक आशा पिता जी से ही उत्तर पाने की थी, इस विचार से रह जाती। सोचा, पिता जी से कह देगी कंची से बात करनी है, पर वह चुड़ैल बता देगी कि मैंने क्या पूछा है। पिता जी कहेंगे, पुरी जी के कारण ही बेचैन है। कहेंगे तो कहें, हाँ मैं पता लेना चाहती हूँ। फिर सहसा खयाल आ गया, शहालमी के बाहर सरला शर्मा को क्यों न फोन कर ले।

सरला शर्मा ने खबर दी—"शहालमी, परीमहल, पापड़मण्डी, मच्छी हट्टा, कंजरफला सब अभी तक जल रहे हैं। रंगमहल की तरफ आग नहीं है।" भोला-पांधे की गली रंगमहल के समीप थी।

कनक ने कांता को भी सब समाचार दिया। आग के इतने विस्तार से दोनों और भी आतंकित हो गयीं। कांता इसलिए भी चिंतित थी कि नैयर शहर चला गया था। कांता ने दोपहर में फिर एक बार ग्वालमण्डी फोन कर के पता लिया कि आग शहालमी के बाहर तो नहीं फैली है ?

नैयर जल्दी ही लौट आया। उसने बताया—"आधी रात में लगाई आग दोपहर तक भी वश नहीं की जा सकी थी। बजाज हट्टा का भी कुछ भाग जल गया था। लाहौर के सब फायर ब्रिगेड आग से लड़ रहे थे। इतने इंजनों के लिये नल पानी नहीं दे पा रहे थे। आग को फैलने न देने के लिए आग के घेरे की सीमा पर मकानों को गिरा दिया जा रहा है।

सुना है कि शहालमी दरवाजे पर एक हिन्दू लड़के ने मैजिस्ट्रेट चीमा के पक्षपात से चिढ़ कर उस पर गोली चला दी थी। सब लोग जानते हैं, अफसर निस्संकोच अपने-अपने सम्प्रदाय का पक्षपात कर रहे हैं। मैजिस्ट्रेट ने लड़के को तो वहीं गोलियों से छिदवा दिया और रात को अपने सामने शहालमी के बाजार में, हिन्दुओं की दुकानों के किवाड़ तुड़वा दिये। मिट्टी के तेल के कनस्तर छिड़कवा कर आग लगवा दी। उस भाग में मुसलमानों की दुकानें कम थीं। जो लोग आग बुझाने आये उन पर करफ्यू में निकलने के अपराध में गोली चला कर मार दिया गया।

नैयर ने बताया—"इस आग के रहस्य के बारे में अनुमान है कि राजगढ़ की घटना के बाद से मुसलमानों के पाँव उखड़ रहे हैं। यह मुसलमान अफसरों का हिन्दुओं से बदला है।"

कनक इन सभी समाचारों से आतंकित थी, परन्तु वह कुछ और भी जानना चाहती थी। नैयर समझ रहा था, उसने यथा सम्भव पता लेकर बता दिया था—भोलापांधे की गली और धम्मी गली में केवल बाजार के सिरे के मकान गिरा दिये गये हैं। गली में आग नहीं लगी है।

●

शहालमी की आग तीन दिन जलती रह कर बुझ चुकी थी। छः दिन से नगर में शांति थी। ऐसी ही शांति जैसी चौक में भिड़ गये दो साँड़ों के लहू-लुहान होकर और हाँफ कर गिर जाने के बाद हो जाती है। कनक अपने कुछ कपड़े और पुस्तकें ग्वालमण्डी से ले आने के लिए सोमवार प्रातः ही नैयर के साथ ग्वालमण्डी आ गयी थी। पिता जी ने उसके स्वास्थ्य के विषय में पूछा, कांता और नानो के विषय में पूछा, शहालमी की आग के बाद से शहर में बहुत बढ़ गये आतंक की चर्चा की और अपना विचार प्रकट किया कि चाहे एक सप्ताह से शांति दिखायी दे रही है पर अब लाहौर में रह कर व्यवसाय करना सम्भव नहीं जान पड़ता। अपना प्रेस लाहौर से किसी दूसरे स्थान दिल्ली, लखनऊ या इलाहाबाद ले जाना पड़ेगा। कनक पिता से बात कर चुकी तो माँ ने अपने हाथ बिलोई छाछ का एक गिलास, मक्खन का एक टुकड़ा डाल कर उसे पीने के लिए विवश कर दिया। सब कुछ ऐसे हो रहा था जैसे मतभेद या झगड़े की कोई बात मनों में न थी।

कनक सब से बात कर उर्दू दैनिक पत्र लेकर ऊपर जा लेटी। माडल-टाउन में उसे अंग्रेजी दैनिक 'सिविल मिलिट्री गजट' और 'ट्रिब्यून' ही मिलते थे। यह पत्र उत्तेजना न बढ़ाने के विचार से नगर में दंगे के समाचारों को बहुत संक्षेप में देते थे। उसकी नजर शहर के समाचारों के स्तम्भ पर गयी, पढ़ा : ···शहालमी दरवाजे की आग बुझाने के लिए जाने वाले, करफ्यू तोड़ने के जुर्म में गिरफ्तार नौजवानों के साथ नाजायज सलूक। अखबार में गिरफ्तार किये गये कई नौजवानों के नाम थे। पुलिस ने उनका मामला अभी तक अदालत में पेश नहीं किया था। ये नौजवान पुरानी अनारकली की हवालात में बन्द थे। उन्हें कानूनी सहूलियतों से वंचित रखा जा रहा

था और उन पर अनुचित कड़ाई की जा रही थी। हवालात में बन्द लोगों में जयदेव पुरी का भी नाम था।

कनक का कलेजा धक्क् से रह गया। उठ कर बैठ गयी—"ये हवालात में बन्द हैं! अखबार कह रहे हैं, उन्हें बहुत तकलीफ़ दी जा रही है। मेरे कारण दिमागी परेशानी होगी सो अलग! मैं सान्त्वना देने भी न जाऊँ?" पुरानी अनारकली की हवालात में हैं।...यहाँ से टाँगे पर दस मिनिट का रास्ता है।...मुझे कौन रोक सकता है? मैं तो जाऊँगी। कनक कुछ मिनिट फर्श की ओर दृष्टि लगाये गुम-सुम बैठी रही।

कनक पिता जी के पास गयी और उसने उनसे अपनी सहेली सुवीरा के घर जाने के लिए पूछा। पंडितजी ने ऐसी अवस्था में उसका बाहर जाना ठीक नहीं समझा। कनक ने कहा कि सुवीरा का घर तो कोतवाली के पास है, वहाँ कभी दंगा नहीं होता। पंडित जी अब भी उसे भेजने को राजी नहीं थे। उन्होंने कहा कि शाम को महेन्द्र (नैयर) के साथ कार पर उधर से होती हुई तब माडल-टाउन चली जाना। कनक ने फिर कहा कि उस समय जीजा जी थके रहते हैं और कभी तो आते भी बहुत देर से हैं। अब पंडित जी ने कहा कि वह विधिचन्द के साथ चली जाये और यह भी ताकीद कर दी कि देर न लगे।

कनक किसी तरह क्रोध के उद्वेग को दबाकर टाँगे पर बैठ कर चल दी। आगे विधिचन्द भी बैठा था। कोतवाली के सामने पहुँच कर कनक ने टाँगा रुकवा लिया। वह उतर कर अन्दर चली गयी। विधिचन्द कुछ समझा नहीं, परन्तु कनक के पीछे-पीछे अन्दर चला गया। कनक ने अन्दर जाकर एक वर्दी पहन कर बैठे हुए आदमी से कहा कि वह जयदेव से मिलना चाहती है। उस आदमी ने दस रूपये माँगे। कनक ने रूपये निकाल कर दे दिये। कनक को पुरी के पास पहुँचा दिया गया। विधिचन्द भी कनक के पीछे-पीछे चलता गया। पुरी ने कनक से पूछा, "तुम कैसे आयीं?"

कनक ने बताया कि उसे तो अभी थोड़ी देर पहले ही अखबार से मालूम हुआ है। उसने पुरी से पूछा कि अब क्या किया जाना चाहिए?

सिपाही चिरागदीन समीप खड़ा था, इसलिए पुरी ने धीमे स्वर में अंग्रेजी में कहा—"छः दिन से हम लोग यहाँ जानवरों की तरह बन्द हैं। हमें बिना वारंट गिरफ्तार करके बन्द कर दिया गया है। अब तक किसी अदालत में पेश नहीं किया गया। कानूनन हमें जेल हवालात में भेजा जाना चाहिए था। वहाँ हम साँस तो ले सकेंगे। मैं हवालात और जेल के कायदे जानता हूँ। यह सब गैरकानूनी है। यहाँ पुलिस हम लोगों से अपराध कबुलवाने के लिए चाहे जितनी यातना दे सकती है, हमें परेशान करके हमारे संबंधियों से हमारी रिहाई के लिए रिश्वत ले सकती है। हम आग बुझाने गये थे और हमें गिरफ़्तार कर लिया गया। सात आदमी गोली से मार दिये गये। पिता जी आये थे, उन्हें मैंने सब समझा दिया है पर वे लाला सुख-लाल, तारा के भावी ससुर और ताया जी के कहने से कुछ दे-दिला कर रिहाई की कोशिश कर रहे हैं। यह उचित नहीं है। हम सब लोग एक साथ हैं। तुम मिस्टर

नैयर से कहो तो वे इस विषय में अदालत में अर्जी दे सकते हैं। कुछ सोच कर पुरी ने बताया—"जमानत के लिए प्रोफेसर डाक्टर प्राणनाथ का प्रभाव उपयोगी हो सकता था पर पिता जी कह रहे हैं कि उन की हवेली जल गयी है। उन का कुछ पता नहीं चल रहा है......।"

"मैं अभी जाकर जीजा जी से कहूँगी। मुझे तो अभी ही पता लगा है।" कनक ने भी अंग्रेजी में उत्तर दिया—"मैंने कोशिश तो की थी, पत्र भी लिखा था, परन्तु मुलाकात नहीं हुई।"

इससे अधिक और कहने का अवसर न था।

पुरी बहुत सँभल कर बात कर रहा था, परन्तु उसके स्वर में यातना, त्रास और रक्षा की गुहार अनुभव करके कनक विचलित हो रही थी। उस ने अपने होंठ दाँतों से दबा कर लोहे के जँगले से लगी पुरी की आँखों में देखा कि वह उस के मौन दुख और विवशता को समझ जाये। सब लोगों के सामने ही दो आँसू टपक पड़ने के कारण उसे तुरन्त लौट जाना पड़ा।

कनक ने बहुत शीघ्र लौट कर बैठक के दरवाजे से घर में कदम रखा तो पंडित गिरधारीलाल ने कुछ विस्मय और बहुत संतोष से पुकार लिया—"लौट आयी कन्नी बेटा, दैट इज़ गुड। बहुत समझदारी का काम किया।"

कनक 'अभी आती हूँ' कह कर ऊपर चली गयी और अपने कमरे में जाकर पलँग पर गिर सी पड़ी। उसकी आँखों के सामने लोहे के पिंजरे का जँगला थामे यातना से कुचले हुए पुरी की छवि आ गयी। उसे ध्यान आया कि विधिचन्द पिताजी को सब कुछ बता रहा होगा। उसने सोचा कि उसे स्वयं कहना पड़ेगा, शाम को जीजाजी आयेंगे तो कहूँगी। अब उन्हें ही करना पड़ेगा।

थोड़ी ही देर में कंचन की आवाज़ सुनाई दी कि पिताजी बुला रहे हैं। कनक इसके लिए तैयार ही थी। कनक नीचे पहुँची तो पंडित जी ने सहानुभूति से उससे सारी बातें पूछीं। उनके स्वर में रोष नहीं था। उन्होंने विधिचन्द से कहा कि हाई-कोर्ट में फोन कर दे कि एडवोकेट महेन्द्र नैयर के घर से फोन है, उन्हें बुला दिया जाये। पंडित जी ने फिर कनक से कहा कि पहले ही मुझे बताती तो मैं स्वयं जाकर ज्यादा जानकारी हासिल करता। उन्होंने कनक को आराम करने को ऊपर भेज दिया।

शाम को नैयर के आने की खबर पाते ही कनक नीचे उतर आई। नैयर ने कनक की उपेक्षा करते हुए पंडितजी को हाईकोर्ट की बातें बतानी आरम्भ कर दीं। उसने बताया कि सब की जमानत की दरख्वास्तें दी जा चुकी हैं। चलते समय उसने कनक से चलने के लिए पूछा तो उसने कहा अभी सामान ले कर आती हूँ।"

रास्ते में नैयर को चुप देखकर कनक ने पूछा कि क्या किसी बात की नारा-ज़गी है। नैयर ने यह कह कर टाल दिया कि एक केस है, उसी के बारे में सोच रहा हूँ। कनक ने बताया कि पुरी के पिता और उसकी बहन के भावी ससुर तो कुछ दे-दिला कर उसे छुड़ाना चाहते थे, परन्तु पुरी ने रिश्वत देकर छूटना उचित नहीं

समझा। इस पर भी नैयर चुप रहा।

दूसरे दिन प्रातः भी कनक और नैयर की कोई बात नहीं हुई। कनक ग्वालमण्डी जाकर सब बातों का पता लगाना चाहती थी। नैयर को भी कोई एतराज नहीं था। कनक नैयर के साथ गयी पर रास्ते भर भी वह चुप ही रहा।

तीसरे दिन जब नैयर आया तो कनक बैठक में ही मौजूद थी। नैयर उसकी आँखों की उत्सुकता की यंत्रणा बढ़ाने के लिए उससे पूछने लगा कि वह दिन भर क्या करती रही? जब कनक ने उससे पूछा कि आप बताइये क्या हुआ? तो उसने पूछा—"किस विषय में?"

इससे कनक को बहुत बुरा लगा। इतने में पंडित जी भी दफ्तर से बैठक में आ गये। उन्होंने कनक से चाय मँगवाने को कहा और नैयर से पूछने लगे, "क्या हुआ? आज तो उनकी पेशी की तारीख थी?"

नैयर ने कहा—"कुछ भी नहीं।" और मौन हो गया। पंडित जी ने पूछा कि जमानत नहीं हुई तो नैयर ने केवल 'ऊँ हूँ' कर दी। कनक के प्राण ओठों पर आ गये।

पंडित जी ने फिर पूछा कि उन्हें कोतवाली से जेल भेजने का हुक्म तो हो ही गया होगा। पहले तो नैयर नहीं कहकर थोड़ी देर चुप रहा, फिर उसे कनक पर दया सी आ गयी सो बताने लगा कि वह राय बहादुर को लेकर स्वयं पुरी की तरफ से पेश हुआ था। छोटी अदालत का मैजिस्ट्रेट तो रायबहादुर को देख कर ही सकपका गया था। नैयर ने बताया कि हमने कहा कि जमानत माँगने की कोई वजह ही नहीं। सो वे लोग बगैर जमानत के ही छूट गये हैं।

कनक के हृदय को जकड़े लोहे का शिकंजा छूट गया। वह मुक्ति से साँस लेने लगी, परन्तु जीजा की ओर उस ने मान भरे क्रोध की कनखी से देखा, इतना सताने की क्या जरूरत थी?

१२

अदालत में सब से अन्तिम मामला पुरी और मेवाराम का पेश हुआ था। अदालत आधा घण्टे तक बैठी और पुरी और मेवाराम बरी कर दिये गये। मास्टर जी, रतन और खुशालसिंह दस बजे से अदालत में मौजूद थे। बीरसिंह और कुछ लोगों की पेशी की तारीख तीन दिन बाद रख दी गई थी। पुरी अग्निकांड के समय गिरफ्तार किया गया था। तब बजाज हट्टा, मच्छी हट्ठा के लपटों से भरे बाजारों से गुजरना भयावह था। पुलिस पुरी और दूसरे गिरफ्तार किये गये लोगों को रंगमहल से दिल्ली दरवाजे के रास्ते, कोतवाली में ले गई थी। अब आग शांत हो चुकी थी। वे लोग शहालमी के रास्ते ही लौटे।

शहालमी का गुंजान बाजार पूरा का पूरा राख हो गया था। जल कर गिरे-अधगिरे दुमंजिले-चौमंजिले मकानों का मलबा बाजार में भर गया था। अब बीच में पगडण्डी जैसा ही मार्ग बन गया था। उस मलबे को हटा सकना पहाड़ियों को खोद कर फेंकने के बराबर था। सँकरी पगडन्डी के दोनों ओर जली हुई विराटाकार चिताओं के ढेर खड़े थे। जले हुये शहतीर, गिरे हुए गर्डर, कोयला बने तख्ते, चौखटें और जले हुए किवाड़ ढेरों पर जहाँ-तहाँ पड़े थे। कहीं-कहीं काली हो गई दीवारों से छज्जों के लोहे के ढाँचे पशुओं की झुलसी हुई पसलियों और पंजरों की तरह झूलते जान पड़ते थे। ऊपर की मंजिलों में लगे हुए नल और आइरन ऐंगिल इमारतों की झुलसी हुई आँतों की तरह हवा में ऐंठे हुए खड़े थे। भयंकर दुर्गन्ध के कारण हाथ नाक को दबा लेता था।

पुरी और मेवाराम ने भोलापांधे की गली में कदम रखा ही था कि गली, गली में खेलते बच्चों की चीखों से गूँज उठी—"जद्दी भाप्पा और मेवा भाप्पा आ गये !"

भागवंती सुन कर ऐसे दौड़ी कि जीने से गिरती-गिरती बची। चबूतरे पर ही उसने जवान बेटे को सीने से चिपटा लिया और चीख कर रो उठी। दो वर्ष पहले भी पुरी के जेल से लौटने पर उसने ऐसा ही किया था। सभी लोग रिहा होकर आने वालों के स्वागत के लिए गली में निकल आये थे।

खुशालसिंह के मकान से ऊँचे स्वर में कर्तारो का रोना सुनाई देने लगा। पुरी और मेवाराम के साथ बीरसिंह को न देख कर वह चीख कर रो पड़ी कि सब लोग उसके बेटे को पीछे छोड़ कर, खुद छूट कर चले आये हैं। रतन को बाबू गोविन्दराम चार दिन पहले ही छुड़ा लाये थे। अमीरों और रसूख वालों की ही सुनवायी है तो गरीब के बेटे को साथ ले क्यों गये थे।

पुरी ने माँ के आलिंगन से मुक्ति पाकर मेलादेई को पैरीपैणा (पायलागन) किया। तारा और ऊषा भाई से गले मिलीं। हरी ने बड़े भाई के चरण छुए। तारा ने गर्व से कहा—"हमारा बहादुर भाई देश और सचाई के लिए जेल की क्या परवाह करता है ? पहले भी दो साल जेल काटी है।"

तारा के सामने आते ही पुरी को कनक के हवालात में आकर भेंट कर जाने की बात और उस से पूर्व कनक के प्रति अपना क्रोध सहसा याद आ गया।

उसे तारा के माथे पर बन गया क्रास का सूक्ष्म चिन्ह भी दिखाई दिया। चेहरे के गोरे रंग में निशान की सफेदी बेमालूम सी थी, परन्तु बाल जैसी महीन लकीरों ने पाँच सप्ताह पूर्व की घटना और तीन सप्ताह बाद तारा के होने वाले विवाह की बात याद दिला दी। पुरी की आँखें झुक गयीं।

पुरी अपने घर का जीना चढ़ने से पहले खुशालसिंह के यहाँ गया। उस ने कर्तारो को सम्बोधन किया—"मास्सी, पैरी-पन्ना (मौसी चरण छूता हूँ)" और उसे बीरसिंह के भी जल्दी छूट आने का आश्वासन दिया।

गली के लोग पुरी को छोड़ना ही न चाहते थे। उसे घेर कर दो दिन पूर्व घोषित पंजाब का विभाजन करने वाली पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की सीमा पर

बहस होने लगी। सब को विश्वास था कि रावी के इस किनारे पर बसे लाहौर से हिन्दुस्तान का आरम्भ होगा। यदि रेडक्लिफ कमीशन लाहौर पाकिस्तान को देना उचित समझता तो जैसे लाहौर से उत्तर में सियालकोट तक और नीचे बहावलपुर-खैरपुर का पश्चिम का हिस्सा उन्हें दे दिया है, लाहौर भी दे देता। लाहौर में अस्सी फीसदी जायदाद हिन्दुओं की है, यह कौन नहीं जानता?

पुरी ने सुना कि घसीटाराम और पन्नालाल शहालमी की आग के बाद, अपने-अपने मकानों में ताला लगा कर तीर्थ-यात्रा करने मथुरा-वृन्दावन चले गये थे। सब जानते थे कि ये बाजार की आग से डर कर भाग गये थे पर सब लोग कहाँ भाग जायें?

पुरी खाना खाने बैठा तो माँ कहने लगी कि अब ब्याह में थोड़े से ही दिन रह गये हैं, उसी में सब कुछ करना है। जो भी हो, जो व्याह ठहर चुके हैं वह तो हो ही रहे हैं।

पुरी ने देखा कि तारा शांत थी। उसने कोई विरोध या असन्तोष नहीं प्रकट किया था। पुरी के मन से एक हल्की सी चिन्ता दूर हो गयी और उसके स्थान पर एक हल्की सी उदासी भर गयी।

खाना खाने के बाद पुरी छत पर खाट डाल कर लेट गया। हफ्ता भर जेल की बन्द कोठरी में रहने के बाद खुली छत पर लेटना पुरी को बड़ा भला लगा। इतने बड़े परिवर्तन की अनुभूति ने सहसा नींद न आने दी, वह कल्पना-विकल्पना में डूब गया।

पुरी के मन से कनक के प्रति विश्वासघात का सब रोष मिट गया था। अब तो उसके प्रति संदेह और क्रोध करने की गुंजाइश नहीं थी। पुरी सोचने लगा कि हो सकता है कनक ने घर में स्थिति सँभाल ली होगी, तभी तो नैयर अदालत में उसकी तरफ से पेश हुआ था। उसने सोचा कि दो सप्ताह का नरकवास या हवालात की वैतरणी को पार करना, इस नये जीवन के द्वार में प्रवेश पाने के लिए आवश्यक था। उसने मन ही मन निश्चय किया कि अगर कनक हवालात तक पहुँची थी तो मुझे भी धन्यवाद देने उसके घर तक जाना चाहिए। फिर उसने सोचा कि अब दो-चार दिन में ही इतिहास की पुस्तक को दोहराने के लिए रात-दिन काम करूँगा। अब घर में तो पैसे की जरूरत ही जरूरत है।

पुरी दूसरे दिन प्रातः से ही काम में लग गया। संध्या समय उसे ग्वालमण्डी जाना था अतः साफ, प्रेस किए हुए कपड़ों की आवश्यकता थी। उसने सुबह ही ऊषा से अपने कपड़े तैयार करने को कह दिया था।

पुरी ने पाँच बजे तक काम किया और कपड़े बदल कर ग्वालमण्डी जाने को घर से निकला। जब वह वहाँ पहुँचा तो बाहर ही नैयर की गाड़ी खड़ी दिखायी दी। कनक से भेंट के समय नैयर की उपस्थिति की आशंका ने पुरी का उत्साह किरकिरा कर दिया। पुरी लौटने को ही था कि नैयर बैठक से बाहर निकल आया। पुरी को कुछ सान्त्वना हुई कि नैयर जा रहा है। पुरी ने मुस्करा कर नमस्ते की और आभार

प्रकट किया। नैयर ने भी आत्मीयता की मुस्काराहट लाते हुए पुरी का स्वागत किया।

पुरी ने कहा कि मैं आपकी और पंडित जी की सहायता के लिए कृतज्ञता प्रकट करने आया हूँ। मेरा सौभाग्य है कि आप भी मिल गये। नैयर पुरी को बैठक में ले गया। नैयर ने कहा कि वह तो हमारा फर्ज था। उसने नौकर से चाय लाने को कह दिया।

नैयर ने पुरी से उसके काम आदि के बारे में पूछा। फिर उसने पूछा की डाक्टर प्राणनाथ को आप कैसे जानते हैं ? पुरी ने बताया कि वे मेरे पिता जी के विद्यार्थी रह चुके हैं। नैयर ने फिर पुरी से पूछा कि लाला सुखलाल कौन थे ? पुरी ने बताया कि वे मेरी बहन के भावी ससुर हैं। अब नैयर ने पुनः तारा के बारे में पूछा, "आपकी बहन शायद कनक के साथ पढ़ रही हैं ?"

पुरी ने बताया कि उसने इस मार्च में बी० ए० की परीक्षा के लिए फीस जमा की थी। अब तो परीक्षा स्थगित हो गई है।"

इतने में चाय आ गयी। नैयर ने पुरी को चाय का प्याला देते हुए पूछा, "इन उपद्रवों की वजह से हर बात में परेशानी है तो क्या सितम्बर की परीक्षा तक आपकी बहन का विवाह भी टल जाएगा ?"

इस पर पुरी ने कहा कि ऐसा तो नहीं हो सकेगा। नैयर ने सुखलाल के लड़के का नाम और काम पूछा। पुरी ने नाम तो सोमराज बता दिया, परन्तु काम के विषय में वह स्वयं भी ठीक से नहीं जानता था, अतः उसने कह दिया कि जब सगाई हुई थी तो वह जेल में था, अतः उसे ठीक से नहीं मालूम। पुरी ने यह भी बताया कि शादी तय तो परिवार वालों ने की है, परन्तु परस्पर जान लेने का अवसर दे दिया था।

पुरी ने कहा कि अगर पंडित जी घर में हों तो मैं उन्हें भी प्रणाम करके कृतज्ञता प्रकट कर लूँ। नैयर ने बताया कि वह घर में तो हैं, परन्तु उनकी तबियत ठीक नहीं है। मैं उनको आपका धन्यवाद पहुँचा दूँगा। पुरी ने कनक को धन्यवाद देने की बात कही तो नैयर बोला कि आजकल वह माडल टाउन में है, मैं उससे भी कह दूँगा कि आप ने धन्यवाद प्रकट किया है।

नैयर ने पुरी से कहा कि शायद पंडित जी ने आपसे कनक के विषय में बात की थी। पुरी ने इसी प्रसंग में कहा—"मैं अपने और आप लोगों के आर्थिक स्तर के प्रति सचेत हूँ। मैंने तो कनक के प्रति और पंडित जी के भी प्रति आदर के कारण उस की भावना को स्वीकार किया और अपना वचन दिया था। मैंने अपनी परि-स्थिति उसके सम्मुख पहले ही स्पष्ट कर दी थी।"

नैयर ने अपनी नेकटाई को सहलाते हुए कहा—"मैं समझ रहा हूँ। ऐसी स्थिति कठिन होती है। हमारे समाज में विवाह परिवारों का भी सम्बन्ध बन जाता है। आजीवन लोगों का विरोध और असहयोग झेलते रहना सुखद नहीं हो सकता। जीवन में आकर्षण के अवसर तो आते ही रहते हैं, पर उस में जीवन भर के लिए

बँधने से पहले बहुत सी बातों का ध्यान रखना पड़ता है।"

कांता और कनक नैयर की प्रतीक्षा चिन्ता और व्यग्रता से कर रही थीं। नैयर के आते ही कांता ने पूछा—"इतनी देर कहाँ लगा दी ? हमारे तो प्राण सूख रहे थे, आजकल का समय कैसा खराब है।"

नैयर ने बताया कि मित्र से गप्पबाजी में ग्वालमण्डी में ही बैठा रहा। मित्र भी दूसरों का था, अपना नहीं था। नैयर ने कनक को बताया कि वह उसके लिए सन्देश लाया है। कनक के पूछने पर उसने पुरी का नाम बता दिया और फिर अपनी बेटी के साथ खेल में लग गया। जब नैयर कनक के समीप की कुर्सी पर आकर बैठ गया तो कनक ने उत्सुकता से बोझिल स्वर में पूछा, "क्या कहा है उन्होंने ?"

नैयर ने सोचने के लिए चाय के दो घूंट भरे और बोला—"तुम उससे मिलने के लिए हवालात में गयी थीं और तुमने जो सहायता की है, उसके लिए धन्यवाद कहा है।"

"और ?"

नैयर ने दो घूंट और लिए और बहुत गम्भीरता से उत्तर दिया—"और उसने कोई अच्छी बात नहीं कही। कम से कम मुझे अच्छी नहीं लगी।"

कनक के चेहरे पर आ गई चमक उड़ गई, फिर भी पूछा—"क्या कहा ?"

"कहा कि आग्रह उसकी ओर से नहीं था और न अब भी है।"

कनक की आँखें झुक गयीं और चेहरा और भी बुझ गया। कुछ सोच कर बोली—"मैं विश्वास नहीं करती। जाने किस प्रसंग में क्या कहा होगा ?"

कनक ने आँखें झुकाये नैयर की ओर घूम कर कहा, "अच्छा मेरा ही आग्रह सही। पुरुष ही चुन सकता है, स्त्री नहीं चुन सकती ?"

इस पर नैयर ने कहा कि यह तो ठीक है, परन्तु जिसे प्रेम किया जाये उसे अपने प्रेम-पात्र को दूसरों की दृष्टि में गिराना नहीं चाहिए। और अगर पुरुष इस तरह की बात करता है तो उसमें हीनता की जबरदस्त भावना होगी। कनक के माथे पर इस बात से रेखायें पड़ गयीं, उसने कहा कि उनमें किस बात की हीनता का भाव है। नैयर बोला कि उसने स्वयं स्वीकार किया कि वह अपने आर्थिक स्तर को जानता है इसलिए उसने स्वयं तुमसे कभी प्रस्ताव नहीं किया।

इस पर कनक ने कहा कि आप तो वकील हैं, जो चाहें कहलवा लें। उनको तो छल-फरेब नहीं आता है।

अब नैयर ने तारा का किस्सा शुरू कर दिया।

"तुम विश्वास करोगी कि कोई ब्रिल्लिएंट लड़की सोमराज साहनी जैसे बदनाम लड़के से विवाह करना पसन्द करेगी ?"

"मुझे मालूम नहीं, आशा तो नहीं...क्यों ?"

नैयर ने कुछ देर सोच कर कहा—"पुरी की बहिन का विवाह सोमराज साहनी से हो रहा है। सुना है कि लड़की ने इस विवाह का विरोध किया, परन्तु उसके परिवार और भाई ने उसका विरोध दबा दिया है।"

"दिस इज़ लिमिट (असह्य अन्याय) ! सब स्वतन्त्रता अपने ही लिये है ? बहिन को जबरदस्ती ब्याह रहे हैं।" कान्ता ने घृणा प्रकट की।

"यह नहीं हो सकता, मैं विश्वास नहीं करूँगी।" कनक ने विरोध किया।

नैयर अपनी कुर्सी पीछे फेंक कर खड़ा हो गया। बराम्दे के सामने खड़ी गाड़ी की ओर संकेत कर बोला—"इसी समय, अभी भोलापांधे की गली में चलो, चलो सच-झूठ का निर्णय हो जाय ?"

"क्या निर्णय हो जाय ?" कनक ने गर्दन सीधी कर पूछा।

"तुम स्वयं पूछ लेना कि जुलाई में तारा का विवाह सीनेट हाल से नकल करने के अपराध में निकाले जाने वाले सोमराज साहनी से हो रहा है या नहीं !"

"वाह, यह क्या प्रमाण है। तारा की अपनी इच्छा हो सकती है।"

"तुम्हारी कल्पना की तो कोई सीमा नहीं।" कान्ता बोली।

"तुम पहले कह चुकी हो, आशा नहीं कि ब्रिल्लिएंट लड़की ऐसे आदमी को चाहेगी।" नैयर ने तर्जनी उठा कर याद दिलाया।

"लेकिन असम्भव भी नहीं है। उसमें कोई और आकर्षण हो सकता है।"

"क्या आकर्षण हो सकता है, वह टैगोर की तरह महान कवि है या आई० एन० ए० का देशभक्त योद्धा है ?"

"मुझे क्या मालूम, अपनी रुचि और अपने स्वभाव की बात है।"

"मैंने तो यहाँ तक सुना है कि लड़की के विरोध करने पर उसे मारा-पीटा भी गया। लड़की का सिर भी फट गया था। आखिर वह हार कर चुप हो गयी।"

"असम्भव !" कनक ने मुँह फिरा कर कहा और फिर बोली, "मैं तारा से ही पूछूँगी।"

"तारा ने हार मान ली है तो अब सच बोलने का साहस भी नहीं कर सकेगी।" नैयर ने कहा, "मैं तो स्वयं पुरी के मुख से कबुलवा चुका हूँ।"

"क्या कबूला है उन्होंने ?" कनक ने नैयर की ओर देखा।

"सुनो, मैंने पुरी को यह नहीं बताया था कि मुझे विवाह के विषय में मालूम है। सोमराज का पिता सुखलाल उसके पिता के साथ आया था। पुरी ने बताया कि सुखलाल उसकी बहिन का भावी ससुर है। मैंने पूछा—लड़का क्या करता है, प्रोफेशन में है या सर्विस में ? लड़का योग्य है न ? पुरी ने उत्तर दिया—लड़का योग्य है, शायद घर के कारोबार ही में लगा है, उसे अधिक नहीं मालूम। पूरा लाहौर सीनेट हाल का मामला जानता है और सोमराज का भावी साला जो पत्रकार है, नहीं जानता ! यह बात विश्वास योग्य है ?"

"असम्भव ! यह कैसे हो सकता है ?" कान्ता ने अविश्वास प्रकट किया, "एक नम्बर का झूठा और पाखण्डी है।"

कनक अपनी कुर्सी पर उछल सी गई—"देखिये बहिन जी, किसी को गाली देने का आप को मतलब ? आई कांट···।"

"च्च-च्च ! ओ हो, गाली कौन दे रहा है। मैंने उसके शब्द तुम्हें बता दिये।

उसके अज्ञान प्रकट करने के बारे में तुम्हारी क्या राय है ?"

"यह सब वकीलों की पैंतरेबाजी है ।" कनक बोली, "उन्होंने यह तो नहीं क़बूल किया कि बहिन का विवाह जबरदस्ती कर रहे हैं ?"

"वाह, यह कैसे कह देगा ?" कान्ता बोली ।

"खैर, सोमराज की बाबत अज्ञान प्रकट करने से उसकी ईमानदारी का तो प्रमाण मिल गया ?" नैयर ने आग्रह किया ।

कनक उठ कर भीतर चली गयी और पलँग पर लेट कर मुँह ढाँप लिया ।

१३

सज्जनता निबाहने जाकर अपमान पाने से पुरी का मन अत्यन्त खिन्न हो गया था । उसे विश्वास था, कनक उसके लिए सब कुछ कर सकती है, ऊँची मध्यम श्रेणी की अट्टालिका से उतर कर उसके साथ मैली गली में खड़ी हो जाने के लिए तैयार है, परन्तु नैयर की अपमान बेंध देने वाली बातों की भी उपेक्षा नहीं कर सकता था ।

पुरी को सोचना पड़ा—कनक को या अपनी सुसंस्कृत, अभिजात पत्नी को अपनी वर्तमान अवस्था में रखना क्या उसके अपने सम्मान के अनुकूल होगा ? फूलों को सजाने के लिए फूलदान न हो तो फूलों को तोड़ कर लाया ही क्यों जाय ? आर्थिक दैन्य और बेकारी के कलंक और विवशता को दूर किये बिना वह नैयर और पंडित गिरधारीलाल को मुँह तोड़ जवाब नहीं दे सकता । जब तक वह कनक को उन लोगों के सामने, ससम्मान अपनी गाड़ी में बैठा कर नहीं ले आ सकता तब तक कनक को पा लेने या बुला लेने की बात सोचना विडम्बना-मात्र है, यह उनसे अपमान को स्वीकार करना है । उसकी माँ और बहनों की तरह कनक भी पुरानी-फटी सलवार या केवल पेटीकोट पहने भोलापांधे की गली के घर में रसोई में बैठ कर कपड़े धोये और बर्तन मले, यह कल्पना असह्य थी । पुरी के मन ने स्वीकार कर लिया कि समय से पूर्व उसका कनक की ओर आकर्षित हो जाना भूल थी । अपना और कनक दोनों का ही भविष्य बिगाड़ने से क्या लाभ ?

पुरी मन को वश में रखने का दृढ़ निश्चय करके इतिहास की पुस्तक के शेष काम में लग गया था । उसने चार ही दिन में शेष काम समाप्त करके पुस्तक को दोहरा भी लिया । पुरी का विचार था, संध्या पाँच बजे पुस्तक लेकर गौसमुहम्मद के यहाँ जायेगा । उसने लिखे हुये कागजों का सुथरा बंडल बाँध लिया था । वह गली में खूहवाली माई के चबूतरे पर बैठ कर खुशालसिंह से बात कर रहा था । खुशाल सिंह की दुकान बाजार की आग में जल गई थी । वह गली में ही, बाजार के समीप के चबूतरे पर अपनी पापड़-बड़ियों की दुकान लगाने लगा था । मुकुन्दलाल ने दीवान-

चन्द बजाज के चबूतरे पर अपनी दूकान लगा ली थी।

टीकाराम सदा ही दफतर से विलम्ब से लौटता था। वह चार बजे से भी पहले आ पहुँचा। उसका चेहरा उतरा हुआ देख कर खुशालसिंह ने पूछ लिया—"बाबू क्या बात है ? मुँह क्यों लटकाये हो ?"

टीकाराम इंश्योरेंस कम्पनी की लैदमिट्ठा बाजार वाली शाखा में काम करता था। उसने बताया कि पिछली रात कम्मूशाह की पूरी हवेली जल गयी थी। बीमा कम्पनी का दफतर भी जल गया था। उधर छुरी बहुत चल रही थी। कई आदमी मारे गये थे। उसकी शाखा के क्लर्कों को मैक्लोड रोड के दफ्तर में बुला कर एक-एक महीने का नोटिस दे दिया गया था कि एक महीने तक मैक्लोड रोड के दफ्तर में रिकार्ड ठीक करने होंगे। फिर उन्हें नये सिरे से नौकरी मिलेगी। कम्पनी जहाँ बदली कर देगी, जाना होगा।

टीकाराम के बात करते-करते रतन भी आ गया था। शहर में कारोबार बन्द था। ऐसी अवस्था में उसके मामा की गुड्स क्लियरेंस एजेंसी में माल रवाना कराने और माल छुड़ाने का क्या काम होता ? सब जानते थे, बाबू गोविन्दराम ने लड़ाई के जमाने में ढेरों रुपया कमा कर कृष्णनगर में दो मकान बनवा लिये थे। उन मकानों का किराया अच्छा मिलने के कारण वे स्वयं भोलापांधे की गली के तंग मकान में ही निर्वाह कर रहे थे। कारोबार बन्द रहने पर भी रतन को चिन्ता न थी। उसे दूसरे कामों की कमी न थी।

रेडक्लिफ कमेटी ने लाहौर के उत्तर और दक्षिण में हिन्दुस्तान-पाकिस्तान में बँटवारे की सीमा निश्चित कर दी थी। लाहौर का प्रश्न अब भी तय नहीं हुआ था, परन्तु रावी पार कर जिला शेखपुरा पाकिस्तान का भाग घोषित हो गया था। पेशावर से शुखपुरा तक के बहुत से हिन्दू व्यापारी भागे चले आ रहे थे। इन रक्षार्थियों के लिए एबट रोड पर रायबहादुर बद्रीदास की कोठी में, शहालमी के बाहर रतनलाल के तालाब पर, मेलाराम के शिवालय में, किले के पास गुरुद्वारा शहीदगंज में और गुरुदत्त-भवन के समीप कैंप बना दिये गये थे। रतन सहायता के काम के लिए वहाँ चला जाता था। मेवाराम और बीरसिंह भी हवालात से छूट कर उसके साथ जाने लगे थे। इस के अतिरिक्त वे लोग हिन्दू-रक्षा सभा की ओर से दिन में दो बार स्टेशन पर पश्चिम से आने वाले हिन्दुओं को उनकी गलियों या कैम्पों तक पहुँचाने की ड्यूटी पर जाते थे।

वीरूमल पाँच बजे से कुछ पहले डाकखाने से लौटा।

गली में पंचायत सी लगी देख कर उस ने कारण पूछा। टीकाराम ने कम्मूशाह की हवेली और अपना दफ्तर जल जाने की बात दोहराई।

रतन ने गहरी साँस से गाली देकर कहा—"क्या करें, हिन्दू दबते ही चले जा रहे हैं।" उस ने फिर गाली दी, "मुसलमान पुलिस खुल कर मुसलमानों का साथ दे रही है। पश्चिम से रोज डेढ़-दो सौ आदमी उजड़ कर चला आ रहा है......।"

वीरूमल ने टोक दिया—"पूरब में मुसलमानों की हालत मालूम है ? बाग-

वानपुरे का याकूब हमारे सेक्शन में काम करता है, साला रो रहा था। साले के पास दो कोठरी का क्वार्टर है। कपूरथला से उस का बाप और ससुर सब भाग कर आ गये हैं। उस का बड़ा भाई कत्ल हो गया है। उस की भाभी और बहिन को छीन लिया गया है। दो कोठरियों में सत्रह आदमी हैं। बता रहा था, बागवानपुरा के मुस्लिम रिफ्यूजी कैम्प में दो हजार आदमी भर गया है। वहाँ बदबू के मारे साँस लेना मुश्किल है।"

पुरी खुशालसिंह के समीप से उठ कर खड़ा हो गया और बोला—"अच्छा मैं चलूँ। मुझे जरा मोरी दरवाजे के भीतर जाना है।"

"क्या ?...अक्ल ठिकाने है ?" टीकाराम ने टोका, "अभी तो बताया कि सैदमिट्ठा में बुरा हाल है। आज उधर कोई अकेला नहीं जा सकता।"

"भाई, मुझे अपना रुपया लेने जाना है।" पुरी ने बेबसी प्रकट की।

"रूपया गया भाड़ में। वहाँ नहीं जाना होगा।" खुशाल सिंह ने निर्णय दे दिया।

"ऐसी क्या बात है, अभी रहने दो। कल आठ-नौ-बजे मैं साथ चला चलूँगा।" रतन बोला।

"ऐसी जगह कम से कम तीन आदमी होने चाहिए। मोरी दरवाजे और सैदमिट्ठा में फरक ही क्या है।" टीकाराम ने सलाह दी।

पुरी को विवश होकर उस समय मोरी दरवाजे गौस के यहाँ जाने का विचार छोड़ देना पड़ा। गौस जैसे आदमी के यहाँ रक्षकों को साथ ले कर जाने का विचार उसे अच्छा न लगा। दूसरे दिन लगभग नौ बजे बस्ता बगल में दबा कर पुरी अकेला ही अपनी गली से निकल गया। मच्छीहट्टा और शहालमी के रास्ते न जाकर वह बच्छोवाली राह शीशामोती, सूत्तर मण्डी होता हुआ लुहारी दरवाजे की ओर जा रहा था। इस ओर पूरी बस्ती हिन्दुओं की थी। अधिकांश दुकानें अब भी खुली थीं पर भीड़ नहीं थी। सूत्तर मंडी के चौक में सामने मसऊद उसी की तरह बगल में, पर उस से छोटा बस्ता दबाये दिखायी दे गया।

"अरे भाई पुरी !" मसऊद ने पुकार लिया, "तुम्हारी कसम, शहालमी का हौलनाक नजारा देख कर कलेजा दहल गया। उस रास्ते जाने का हौसला नहीं हुआ तो इधर से चक्कर देकर तुम्हारे यहाँ ही जा रहा था।"

मसऊद का चेहरा बहुत उदास था। उस के सदा मसले हुए और मैले रहने वाले कपड़ों से सड़े पसीने की गन्ध आ रही थी। सिर पर से खाल की ऊँची काली टोपी गायब थी। पुरी ने हाथ बढ़ा कर पूछा—"कहो, खैरियत तो है। मेरे लायक जो खिदमत हो कहो।"

"क्या खैरियत पूछते हो भाई ?" बहुत गहरा साँस लेकर मसऊद बोला, "तुम्हें शायद मालूम नहीं, खुदा उसे जन्नत नसीब करे, बेचारा गौसमुहम्मद शहीद हो गया।"

"हैं !" पुरी के मुँह से निकला और बस्ता बगल से गिरते-गिरते बचा

आँखों के सामने अन्धेरा सा आ गया। उस का तीन मास का श्रम, कितने स्वप्न, साढ़े पाँच सौ की रकम, सब एक साथ गिर कर राख हो गये।

"वहीं तो जा रहा था। मेरे तो साढ़े पाँच सौ मिट्टी हो गये।" बगल में दबे बस्ते को दिखाये हुए पुरी के मुख से निकल गया और फिर सँभल कर बोला, "पाँच सौ क्या होते हैं, इंसान की जान के मुकाबिले पाँच लाख कुछ नहीं।"

मसऊद ने बताया कि एस० पी० एस० के हाल के सामने गौस के पेट में कृपाण भोंकी गयी थी। वह दुःख भरे लहजे में फिर बोला—"हम लोगों को तो उसका ही सहारा था। उसने सौ रूपये का काम दिया था। मैं इस समय बहुत परेशान हूँ, अगर कोई पचहत्तर रूपये ही दे दे तो मैं यह नुस्खा देने को तैयार हूँ।"

उसने पुरी से भी कहा कि वह कहीं कोशिश कर दे, वह तो कई पब्लिशर्स को जानता है।

पुरी ने उसे तो आश्वासन दे दिया, परन्तु पसीना बहा कर बनाये साढ़े पाँच सौ के यूँ हाथ से निकल जाने पर स्वयं उसके पाँव लड़खड़ा गये। उसने सोचा कि गिरधारीलाल के पास जाकर बात करूँ कि आपका ही लाभ है, डाक्टर शाह से बात करके इतिहास की पुस्तक छाप दें। इस तरह उन्हें पता भी चल जायेगा कि मैं क्या कर सकता हूँ। परन्तु इन लोगों के प्रति क्रोध और घृणा के कारण मन ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया।

पुरी ने निश्चय किया कि मैं धनपत राय एण्ड संस, एजूकेशनल पब्लिशर्स से बात करूँगा। धनपतराय एण्ड संस का मालिक सूर्य प्रकाश जवान आदमी था। जब पुरी ने जाकर उसके सामने अपना प्रस्ताव रखा तो उसने हिन्दू जाति की रक्षा पर भाषण देना आरम्भ कर दिया। सूर्य प्रकाश ने कहा—"टैक्स्ट् बुक कमेटी के मुसलमान मेम्बर हिन्दू पब्लिशर्स की पुस्तकें हटाकर मुसलमान पब्लिशर्स की रख रहे हैं। उन लोगों में अपने दीन-कौम का कितना ख्याल है, लेकिन हिन्दुओं को तो बस पैसा चाहिए। तभी तो हिन्दुओं का यह हाल हो गया, वर्ना लाहौर का पूरा ट्रेड हिन्दुओं के हाथ में था।"

पुरी घर लौटा। उसे अपने चारों ओर विवशता की अदृश्य जकड़न अनुभव हो रही थी। वह सोचने लगा कि अब इस साढ़े पाँच सौ की पाण्डुलिपि का मूल्य कोरे कागज से भी कम हो गया है। अब पंसारियों की पुड़िया बाँधने के अलावा इससे कोई काम नहीं हो सकता।

दूसरे दिन पुरी मिथ्या अहंकार को ठुकरा कर कई पत्रों के कार्यालयों में गया। कोई भी सम्पादक पुस्तक छापने को तो राजी न हुआ, परन्तु उन्होंने पुरी को कुछ लेख लिखने को दे दिये। पुरी ने उनकी फर्माइश के अनुसार लेख लिख दिये और पन्द्रह-बीस रूपये ले आया।

पत्र पुरी से कहानी की माँग करते थे। एक समय था, अनायास ही कहानियाँ सूझती रहती थीं, परन्तु अब आवश्यकता का दबाव होने पर और उद्विग्न अवस्था में कहानियाँ सूझती ही नहीं थीं।

लाहौर को पाकिस्तान में दे दिये जाने की आशंका से हिन्दुओं में नगर छोड़ जाने की बातें उठने लगी थीं। अनेक गलियों के लोगों की तरह भोलापांधे की गली के लोगों ने भी एकमत होकर निश्चय कर लिया था कि वे लोग अपने परम्परागत स्थान लाहौर को नहीं छोड़ेंगे। वे लाहौर को बचाने के लिए प्राणपन से लड़ेंगे। जुलाई के आरम्भ में हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की सीमा ऐसी निश्चित कर दी गई थी कि लाहौर के पाकिस्तान में दे दिये जाने की ही सम्भावना थी। परन्तु लाहौर की अधिकांश गलियों के लोगों और भोलापांधे की गली के लोगों को विश्वास था कि लाहौर में अस्सी प्रतिशत जायदाद हिन्दुओं की है इसलिए लाहौर पाकिस्तान में नहीं दिया जा सकेगा। अगर ऐसा हो भी गया तो वे लोग अपना घर-बार नहीं छोड़ेंगे। उनके घरों से उन्हें कोई नहीं निकाल सकेगा।

शहालमी की आग के बाद घसीटाराम और पन्नालाल अपने घरों के दरवाजों पर टीन की चादरें मढ़वा कर और बहुत भारी-भारी ताले लगाकर सावन में वृन्दा-वन-मथुरा में झूलों की धार्मिक यात्रा के बहाने चल दिये थे। उस समय दूसरे लोगों को उनके प्रति घृणा हुई थी, परन्तु जुलाई के मध्य में सरकारी घोषणा ने सभी लोगों को गहरी उधेड़बुन में डाल दिया। सरकार ने सभी स्तरों के सरकारी कर्म-चारियों को सूचना दे दी थी कि वे अपनी इच्छानुसार भविष्य में हिन्दुस्तान में या पाकिस्तान में रहने और काम करने का निर्णय कर सकते हैं और अपना परिवर्तन करवा सकते हैं। इस घोषणा का अर्थ सर्वसाधारण ने समझा कि सरकार पाकिस्तान में हिन्दू अफसरों की और हिन्दुस्तान में मुसलमान अफसरों की सुरक्षा की जिम्मे-दारी नहीं ले सकती थी। ऐसी अवस्था में साधारण लोग किसका भरोसा कर सकते थे?

गली के कई लोग लाहौर से बाहर जाने की योजना बना रहे थे। मास्टर जी चिन्तित थे कि तारा के दहेज के लिए सब सामान जुट चुका है, और शादी में नौ दिन का समय ही रह गया है, अतः लड़की का विवाह किये बिना कहीं बाहर जाने की सोचें तो दहेज का जमा किया हुआ सब सामान नष्ट हो जायेगा। उनके घर तो अनाज भी लाकर रख दिया गया था। वे इन सबको लेकर कहाँ जा सकते थे।

मास्टर जी इसी सम्बन्ध में प्रायः भागवन्ती या जयदेव से चर्चा करते रहते थे। उनकी चर्चा का एक ही विषय था कि ऐसी हालत में बेटी का विवाह कैसे होगा। परन्तु उत्तर उनके पास एक ही था कि अगर औरों के व्याह होंगे तो हम भी करेंगे।

विवाह तो हो ही रहे थे, परन्तु बहुत ही संक्षिप्त और बैरोनक। उस समय विवाह की हर रस्म चुपचाप हो जाती थी। बाबू रामज्वाया और मास्टर जी इस बात से चिन्तित थे कि लाला सुखलाल अपने बेटे का विवाह ऐसे चुपचाप करना कैसे मन्जूर करेंगे।

तारा के परिवार वाले विवाह को कुछ दिन के लिए स्थगित करने को कह भी नहीं सकते थे—क्योंकि तारा की ब्याह के प्रति अनिच्छा की अफवाह को बड़ी

कठिनाई से दबाया जा सका था।

बाबू रामज्वाया मास्टर जी को लेकर लाला सुखलाल के यहाँ विवाह के सम्बन्ध में आदेश और निर्देश पाने के लिए गये थे। लाला जी ऊँचे स्वर में बोले—"अरे हमारा मतलब तुम लोगों को परेशान करना थोड़े ही है। जैसा समय आ गया है, वैसे ही काम होगा। हमें धर्म पूरा करना है, तमासबीनी नहीं करनी। शास्त्रों में आपने धरम भी तो लिखा है। ऐसी रीति-रिवाज का कोई झगड़ा नहीं करना है। हम करफ्यू के पास ला देंगे। कह दिया न कि आठ-दस से ज्यादा आदमी नहीं जायेंगे। व्याह तो करना ही है। अब हमारी-तुम्हारी इज्जत एक ही है।"

२३ जुलाई की संध्या को मास्टर जी गली में लौट कर अपना कोट सम्भालते हुए चबूतरे पर बैठ गये। उनका चेहरा कठिन परिस्थिति के बोझ से भारी था। गहरी श्वास छोड़ कर उन्होंने बाबू गोबिन्द राम को सूचना दी—"अब आप ही लोगों को सब कुछ करना है। लाला सुखलाल कह रहे हैं कि व्याह एतवार को ही होगा।"

पल भर में यह सूचना सारी गली में फैल गयी। पूरण देई की लड़की सीता ने भागवन्ती से गाना करवाने की बात कही तो भागवन्ती ने उत्तर दिया कि करफ्यू के दिनों में गाना कहाँ हो पायेगा। यह बात मर्दों तक पहुँची तो उन्होंने भी रात को गाना बैठाने को मना किया। फिर तय यह हुआ कि दिन में करफ्यू नहीं रहता है सो दोपहर के समय ही गाना होगा।

सीता ने रतन को आते देखा तो उसने उसे झट से बुला लिया और कहा—"भाप्पा जी हम लोग दोपहर में गायेंगी। तुम और पुरी भाई जी, शीलो बहन को उच्ची गली से ले आना।"

रतन अच्छा कह कर आगे बढ़ गया।

किला गुज्जरसिंह और मजंग की घटनाओं के बाद से लड़कियों और स्त्रियों को गलियों के रास्ते भी अकेले नहीं आने-जाने दिया जाता था। एक के बजाय दो ही आदमी चौकसी में साथ रहते थे। ग्यारह बजे के लगभग पुष्पा के फिर याद दिलाने पर पुरी और बीरसिंह शीलो को बुला लाने के लिए उच्ची गली चले गये।

पुरी लौटा तो उसे पता चला कि उसके नाम एक रजिस्टर्ड चिट्ठी आई थी जो कि तारा ने हस्ताक्षर करके ले ली थी।

पत्र आने पर भागवन्ती ने तारा से कहा कि खोलकर पढ़े कहाँ से आई है, परन्तु तारा ने भाई की चिट्ठी खोलने से इंकार कर दिया। तारा ने लिफाफा आलमारी के ऊपर के खाने में रख दिया।

पुरी आया तो तारा ने बताया कि पत्र नैनीताल से आया है और रसीद पर नाम के० दत्ता है, शायद कनक का हो।

तारा ने आलमारी के ऊपर के खाने से पत्र उठाकर पुरी को दे दिया। पुरी का रोम-रोम सतर्क हो गया था। लिफाफा लेकर भी उसने सबके सामने नहीं खोला। बरामदे में चला गया। पत्र कई पृष्ठ का था। मुड़े हुए पृष्ठों को खोलने पर सौ-सौ

रूपयेके दो नोट निकले । पुरी ने नोटों को मुट्ठी में छिपा कर पत्र पढ़ा ।

कनक ने छः पृष्ठों में अपनी विवशता की पूरी कहानी स्पष्ट लिख दी थी। पिता जी और नैयर के विरोध और उनके दबाव के कारण, दो मास तक उसे पत्र न लिखने और मिलने का यत्न न करने का प्रण करना पड़ा था। उसके हवालात में होने के समाचार से वह वश में न रह सकी थी । कनक ने लिखा था :—

"हम दोनों ने अपने जीवन को एक करने का जो निर्णय कर लिया है उसे कोई बाधा नहीं तोड़ सकती । यू० पी० में स्थिति पंजाब से भिन्न है। यहाँ साम्प्रदायिक झगड़ा नहीं है, कांग्रेस की सत्ता है और स्वराज्य है। आप की कद्र साम्प्रदायिकता और ईर्षा से जलते पंजाब में नहीं, यू० पी० में ही होगी । यह लोग देश-भक्ति और प्रतिभा दोनों को पहचानते हैं । एक पालियामेंटरी सेक्रेटरी से बात हुई है । हम दोनों के लिए लखनऊ पहुँचने पर दो-दो सौ मासिक का काम मिल सकने का निश्चय है । आप के लिए तो शायद इस से अधिक ही होगा । मैंने परिवार से अपनी प्रतिज्ञा निबाह दी है । अब मैं जीजा जी के सहयोग की भी आशा कर सकती हूँ ।

"यदि आप न आयेंगे तो मुझे ही आना पड़ेगा । मुझे बुलाना चाहते हैं तो तुरन्त लिखिये । मैं तो चाहती हूँ, अपने विरह के ताप और दुख का अन्त इस शीतल वायु में, इस मनोरम झील के किनारे ही करें । यहाँ के प्राकृतिक दृश्य का वर्णन शब्द नहीं कर सकते । पहाड़ी से घिरी झील है, सुनकर कल्पना नहीं कर सकोगे । रास्ते के खर्च और यहाँ होटल आदि के लिए कुछ रूपया रख रही हूँ । आवश्यकता न हो तो भी नाराज न होना । है तुम्हारा ही, चाहे नोटों को अपने हाथ से फाड़ कर फेंक देना, जला देना, लौटाना नहीं । आने के समय की सूचना तार से देना । आप के लिए अपरिचित स्थान है । मैं बस के अड्डे पर मिलूँगी ।" कनक ने यात्रा का मार्ग भी लिख दिया था । उत्तर रजिस्टर्ड भेजने का अनुरोध था ।

पिछले सप्ताह दो बार पानी पड़ चुका था और धूप निकल कर खूब उमस हो गयी थी। भागवंती के घर में औरतें गाने बैठीं तो सब का दम घुटा जा रहा था । मेलादेई ने सबको अपने कमरे में बुला लिया ।

मास्टर जी दोपहर की नींद ले रहे थे । बराम्दे में बैठा पुरी कनक का पत्र बार-बार पढ़ रहा था । उसने सोचा कि तारा के विवाह में अभी चार दिन बाकी है, उससे पहले तो वह जा नहीं सकता ।

जब दूसरों ने नैनीताल के पत्र के बारे में पूछा तो पुरी ने बताया कि उसने पंडित गिरधारीलाल का कुछ काम किया था । उन्हीं का पत्र आया है, उन्होंने उसके बारे में यू० पी० के एक पालियामेन्टरी सेक्रेटरी से बात की है और इसीलिए उसे मिलने को बुलाया है । सब ने पुरी की बात सुनकर कहा कि ऐसे कामों में देर नहीं करनी चाहिए । सब का कहना था कि अट्ठाइस को व्याह है, तो पुरी पहली-दूसरी तारीख तक चला जाये ।

पुरी ने तुरन्त ही पत्र लिख कर रजिस्ट्री से भेज दिया ।

●

पूर्व से मुस्लिम और पश्चिम से हिन्दू परिवार शरण के लिए लाहौर में चले आ रहे थे। उनकी सहायता के लिए मुस्लिम लीग, काँग्रेस, कम्युनिस्ट पार्टी और हिन्दू सभा के स्वयंसेवकों को रात के करफ्यू में आ-जा सकने के पास दे दिये गये थे। करफ्यू के समय बाहर जाने वाले कई मुसलमान और हिन्दू स्वयंसेवकों के मारे जाने या लापता हो जाने की घटनायें हो चुकी थीं, इसलिए स्वयंसेवक संध्या आठ-नौ बजे तक अपने मकानों में लौट जाते थे। यदि वे किसी कारण लौट न पाते तो स्टेशन पर या किसी कैम्प में ही रात काट लेते थे। एक रात मेवाराम बावली-साहब के कैम्प में रह गया था। वह रात उस के माता-पिता ने आँखों ही आँखों में काट दी थी।

उस संध्या रतन और मेवाराम तो लौट आये परन्तु बीरसिंह नौ बजे भी न लौटा। कर्तारो, खुशालसिंह और पीतो घबरा रहे थे। वे बार-बार रतन और मेवाराम से बीरसिंह के बारे में पूछ रहे थे। दोनों ने उन्हें आश्वासन दिया—"स्टेशन पर या किसी कैम्प में ठहर गया होगा। डरने की कोई बात नहीं है। सुबह रास्ता चलने लगेगा तो आ जायगा।"

कर्तारो ने प्रातः घण्टा भर रात रहते करफ्यू समाप्त होने का बिगुल सुना तो अपने दरवाजे के सामने चबूतरे पर आ बैठी थी। अच्छी खासी धूप भी चढ़ गई और बीरसिंह न आया तो कर्तारो और पीतो दहाड़ मार कर रोने लगीं। गली के लोगों ने उन्हें समझाया—"घबराने की क्या बात है, बीर सिंह क्या बच्चा है? आ जाएगा।"

बीरसिंह साढ़े नौ बजे भी नहीं लौटा तो गली के लोग खुशालसिंह और कर्तारो को आश्वासन देते रहने पर भी चिंतित हो गये। मेवाराम, रतन, पुरी कमीजों के नीचे टीन के कवच पहन कर और सिरों पर लाठी की चोट से बचने के लिए कुल्हों पर पगड़ियाँ पेशावरी ढंग की बाँध कर बीर सिंह का पता लेने गये। डाक्टर प्रभुदयाल और गोविन्दराम ने बच्छोवाली (डाक्टरों की गली) में पुलिस के सब स्टेशनों पर फोन कर पता लिया कि बीरसिंह किसी झमेले में फिर गिरफ्तार तो नहीं कर लिया गया।

खुशाल सिंह और कर्तारो का तो बुरा हाल हो रहा था। गली के लोग उन्हें सान्त्वना देते रहे, परन्तु उनका रोना न बन्द हुआ। डाक्टर प्रभुदयाल और गोविन्दराम भी असफल लौट आये। अब मास्टर जी ने राय दी कि प्रोफेसर प्राणनाथ से जाकर बात की जाये तो काम हो सकता है, क्योंकि प्राणनाथ तो गवर्नर का एडवाइज़र है। मास्टर जी मुकुन्द लाल को साथ ले कर प्रोफेसर के घर की ओर चल दिए।

मास्टर जी ने तारा के विवाह के निमंत्रण-पत्र तो नहीं छपवाये थे, परन्तु वे जान-पहचान वालों को सूचना देना आवश्यक समझते थे। उन्होंने सोचा कि इस तरह, प्रोफेसर प्राणनाथ को आने का निमंत्रण भी दिया जा सकता था।

दोपहर को शीलो और उसकी माँ आयीं। उनके आते ही भागवंती ने अपनी

जेठानी को वीर सिंह के लापता होने की बात बताई। यह सुनते ही वह भी कर्तारो के पास सांत्वना देने चली गयी। ऐसी अवस्था में गली में गाना नहीं हो सकता था।

पुरी, रतन, मेवाराम सभी सम्भव स्थानों में खोज करके चार बज के लगभग लौटे थे। अब भी लोग खुशाल सिंह और कर्तारो को आशा दिला रहे थे कि बीरसिंह लौट आयेगा। वे समझा रहे थे कि तास्सुबी (साम्प्रदायिक द्वेष रखने वाले) मुसलमान अफसर सिक्ख नौजवानों को झूठ-मूठ इल्जाम लगाकर गिरफ्तार करके तंग करते हैं। पता लग जाये तो तुरन्त छुड़वा लिया जायेगा। गली के सब लोग वीर सिंह की जमानत देने के लिए तैयार थे।

खुशाल सिंह से दूर जाकर रतन और मेवाराम दूसरों को बताने लगे कि काफी दिन से बीर सिंह को खतरा था। उसे गली से बाहर जाने को भी मना किया था। उन्होंने बताया कि हमने तो कोई जगह नहीं छोड़ी, न मालूम किसी ने उसे छुरा भोंक कर नहर में या जलते हुए मकान में फेंक दिया हो।

रात नौ बजे सब गली में वापस आ गये, परन्तु बीरसिंह नहीं आया।

कर्तारो छाती पीट-पीट कर रोने लगी थी। आत्मीय की मृत्यु का आघात एक बार लग जाना एक बात होती है। कर्तारो को पूरे जवान पुत्र की मृत्यु का आघात शनैः-शनैः, कभी वेग और कभी आशा दिलाकर, पीछे हट कर और भी प्रबलता से लग रहा था। पीतो चीख-चीख कर रो रही थी। मेलादेई, पूरनदेई, भागवंती, बीरूमल की बहू सब उसके समीप बैठी थीं। वे अब भी वीरसिंह के कहीं रुक जाने के अनेक कारणों की कल्पना करके उसे छाती न पीटने के लिए समझा रही थीं—"हाय ऐसा असगुन क्यों करती है बहिन, तेरा बेटा सौ-सौ बरस जिये।" पर उनका स्वर उनकी बात का साथ नहीं दे रहा था।

रविवार को संध्या समय तारा के विवाह का मुहूर्त था, परन्तु गली में वीर सिंह की मृत्यु का शोक छाया हुआ था। खुशाल सिंह अपनी गठरी-मुटरी समेट कर तीस बरस पूर्व छोड़े दोआब के अपने गाँव में चले जाने के लिए तैयार हो गया था। कर्तारो छाती पीट-पीट कर बैन और कोसनों से गली को अभिशाप दे रही थी। गली की स्त्रियाँ आँसू पोंछती हुयी गली के फाटक तक उसे छोड़ने गयीं। मेलादेई, भागवंती और मित्तां उनके साथ न जा सकीं। रतन, पुरी, मेवाराम और टीकाराम स्टेशन तक जाकर उन्हें गाड़ी में बैठा आये।

●

चौथे पहर के लगभग पुरी गरमी के कारण केवल बनियान और तहमत पहने नये खरीदे हुए बक्सों में तारा का दहेज रखवाने में माँ और शीलो को सहायता दे रहा था। मास्टर जी भी हाथ की पंखी से अपने शरीर पर हवा करते हुए पाँव पर बोझ दिये समीप बैठे थे। मास्टर जी केवल तहमत ही बाँधे थे।

रतन तेज़ी से जीना चढ़कर आया। उसने सूचना दी—"प्रोफेसर प्राणनाथ आप से मिलने आये हैं। ऊपर ला रहा हूँ।"

मास्टर जी स्प्रिंग की तरह उछल कर खड़े हो गये। पुरी भी खड़ा हो गया। मास्टर जी प्रोफेसर के प्रति आदर और उसकी सहृदयता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए उसे बेटी के विवाह में सम्मिलित होने का निमंत्रण दे आये थे। विनय और आदर के लिए वे अपने हेडमास्टर को भी निमंत्रण दे आये थे, परन्तु उनके स्तर के मिडिल तक के दो-तीन मास्टर ही आकर काम-धाम की बाबत पूछ गये थे। यह आशा नहीं थी कि हेडमास्टर या प्रोफेसर प्राण उनकी बेटी के विवाह में सहायता और सहयोग देने आयेंगे।

पुरी और मास्टर जी ने जल्दी-जल्दी कमीज पहन लिये। प्रोफेसर ने आते ही मास्टर जी को प्रणाम किया। उन्होंने कहा कि अगर मेरे लायक कोई काम हो तो बताइये। मास्टर जी केवल हाथ जोड़ कर रह गये। प्रोफेसर ने पुरी से उसके काम आदि के बारे में पूछा। इतने में तारा भी आ गयी। कुछ देर के बाद प्रोफेसर ने तारा से माथे के दाग के बारे में पूछा तो तारा ने कह दिया कि यह तो पहले भी था।

प्रोफेसर ने पुरी से पूछा कि बारात कहाँ से आ रही है? और जैसे ही उन्होंने अपना दूसरा प्रश्न—"उस बेवकूफ लड़के का क्या हुआ"—किया ही था कि बाहर से मास्टर जी की आवाज़ सुनाई दी। मास्टर जी पहले ही अन्दर से उठकर चले आए थे ताकि प्रोफेसर के नाश्ते का इंतजाम कर सकते। पुरी बाहर चला गया तो तारा ने प्रोफेसर से पूछा कि अब के गर्मी में वे पहाड़ नहीं गये? इस पर प्रोफेसर ने बताया कि घर के लोग इंश्योरेंस का सारा मामला उसके सिर पर छोड़ कर चले गये हैं, सो उसका बाहर निकलना असम्भव सा हो गया है।

पुरी एक हाथ में तश्तरी में कुछ मिठाई और दूसरे हाथ में जल का गिलास लेकर मास्टर जी के आगे-आगे लौटा। उसने आते ही पूछ लिया—"डाक्टर साहब, आप ने क्या सोचा है? आपके सामने भी तो प्रश्न है कि हिन्दुस्तान में काम कीजियेगा या पाकिस्तान में?"

"क्या कह सकता हूँ? यूनिवर्सिटी का तो विभाजन हो नहीं रहा।" प्राण ने उत्तर दिया, "यह बात भी चल रही है कि पूर्वी पंजाब में यूनिवर्सिटी स्थापित कर दी जायगी। मदनमोहन सिंह को ही रजिस्ट्रार बनाने की भी बात है। वह तो निश्चय ही जायगा। एडवाइज़र की पोस्ट की बात है, जाने कौन गवर्नर होगा, वह मेरी जरूरत समझे न समझे। जेंकिन्स की तो चाल है कि पाकिस्तान ब्रिटिश डोमीनियन में ही बना रहे। अनुमान है, इस सप्ताह कुछ निश्चय हो सकेगा। माउंटबेटन कुछ करके रहेगा।"

मास्टर जी ने प्रोफेसर से जलपान के लिए आग्रह किया तो उन्होंने कहा कि मैं बाराती थोड़े ही हूँ। मैं तो लड़की के ब्याह में काम करवाने आया हूँ। उन्होंने पुरी से फिर कहा कि कोई काम बताओ।

अब पुरी बोला कि अवसर ही ऐसा है, काम कोई खास है ही नहीं। अब तो किसी तरह लावा फेरे देने हैं। मास्टर जी के पुनः आग्रह करने पर प्रोफेसर ने एक

टुकड़ा उठा लिया और जेब से एक डिबिया निकाल कर मास्टर जी को देते हुए कहा, "यह मेरी ओर से।"

मास्टर जी ने ना-ना करते हुए डिबिया ली, खोलकर देखा तो उसमें नगीने जड़े हुए कान के छोटे-छोटे बुन्दे थे। मास्टर जी ने फिर कहा कि भई यह बहुत है। इतना बोझ सिर पर न चढ़ाओ।

इस पर प्रोफेसर ने कहा, "मेरा हक है। आपके लिए जैसा पुरी वैसा मैं।"

तारा का मन और मस्तिष्क बहुत विक्षिप्त हो गये थे। वह मुँह लपेट कर खाट पर पड़ गई। काले-काले आकाश में उड़ती जाती मशाल ने उसके सामने बड़े-बड़े अक्षरों में लिख दिया—असद तुम्हें पसंद है, बहुत भला नौजवान है।...तुम्हारे ताऊ ने किसी बेवकूफ लड़के से तुम्हारी सगाई करा दी है।......मैं तुम्हें पसन्द करता हूँ।

तारा उन अक्षरों और शब्दों को देखना नहीं चाहती थी, परन्तु कुछ शब्द मस्तिष्क में इस तरह गड़ जाते हैं मानो लोहे की तपी हुई मोहर से लगा दिये गये हों। तारा को अपने प्रति क्रोध अनुभव हुआ, इन बातों से क्या मतलब ? बीती हुई भूलें हैं। प्रोफेसर इस समय क्यों आ गया ?...स्मृतियों से लड़ती हुई वह घण्टे भर लेटी रही।

आज से छः वर्ष पूर्व जब सोमराज का व्याह हुआ था तो लाला सुखलाल ने खूब धूम-धाम की थी। परन्तु अब समय ही दूसरा था। सोमराज के सिर पर विवाह में मुकुट के स्थान पर दो-चार फूलों की मालायें ही थीं। बारात में भी केवल आठ-दस सम्बन्धी ही थे। कन्यापक्ष की ओर से भी लाउड-स्पीकर नहीं लगा था।

द्वार पर जयमाल की रीति हुई और फिर स्त्रियाँ भाँवरों से पहले सोमराज को ऊपर ले गईं ताकि उसे देख-समझ लें। शीलो को तीन वर्ष पूर्व अपने विवाह के समय की चहल-पहल और रौनक की तुलना में तारा के विवाह के समय की चुप्पी और भी खल रही थी। सोमराज भी बिना सेहरे के उदास सा लग रहा था।

मास्टर जी ने विवाह के पवित्र अवसर पर अभद्र परिहास करने या गाली-वाली बकने से पहले ही मना कर दिया था, परन्तु शीलो ने कुछ रस उत्पन्न करने का यत्न किया। उस ने साधारण रीति के अनुसार ऊषा और सीता को उकसा कर सोमराज के सामने कहलवाया—"जीजा-जीजा लाची (इलायची) दे, नहीं तो सक्की (सगी) चाची दे !"

सोमराज ने अपने कोट की जेब में हाथ डाला। सालियों ने और सब से आगे शीलो ने हँसते हुए इलायची के लिए उस के सामने हाथ फैला दिया। सोमराज ने बन्द मुट्ठी कोट की जेब से निकाल उन के हाथों पर खाली मुट्ठी खोल कर उन्हें भुठला दिया।

सालियाँ फिर किलक कर बोल उठीं—"जीजा-जीजा लाची दे," सोमराज ने फिर जेब से बन्द मुट्ठी निकाली, परन्तु लड़कियाँ विश्वास न कर गाली बोलती ही गयीं।

"लाची नहीं ते सक्की (सगी) चाची दे ।
"नहीं ते लौंग सुपारी दे,
"नहीं ते भैण क्वारी दे ।"

सोमराज ने इन्हें चुप कराने के लिए बँधी मुट्ठी उन की ओर बढ़ायी ।

शीलो ने संदेह प्रकट किया—"पहले मुट्ठी खोल कर दिखाओ तब हाथ बढ़ायेंगी ।"

सोमराज ने, इस अवसर के लिए उसकी जेब में रख दी गयी इलाचयी, लौंग, सुपारी मुट्ठी में दिखा दी । शीलो ने हाथ बढ़ाया तो उस ने इलायची न देकर उस की हथेली पर चुटकी काट ली ।

रिश्ते की और गली की सालियाँ इस शरारत के विरोध में किलक और चिल्ला कर गालियों और सिठनियों से उस की खबर लेने लगीं । उन्होंने उस की जेबें खाली करा लीं । घर हँसी और किलक से गूँज उठा ।

मास्टर जी ने कन्या-दान के धार्मिक अनुष्ठान का सब प्रबन्ध आँगन में विधिवत करवाया था । एक पंडित जी वर-वधू को आसनों पर एक साथ बैठा कर संस्कार विधि से वेदमंत्र पढ़कर हवन करवा रहे थे । उस समय भी शीलो की टोली सोमराज के जूते छिपा देने और उस का कोट नीचे बिछे आसन से सी देने में लगी हुई थी । सोमराज चुपके-चुपके अपना हाथ पीछे ले जाकर शरारत करती लड़कियों की उँगलियों को मसल देने या उन के हाथ पर चुटकी काट लेटे के यत्न में था ।

वेदी में भाँवरे हो जाने के पश्चात शीलो ने वर-वधू का परस्पर परिचय कराने और उनका परस्पर संकोच दूर करने के लिए रीतियाँ कीं । वर-वधू के बीच रखी, दूध मिले जल से भरी परात में अँगूठी फेंक कर 'मुन्दरी' (अँगूठी पहले पकड़ लेने का खेल) खिलाया । सोमराज सभी बातों में चुहल का उत्तर चुहल से देकर सब को हँसाता रहा ।

रात तीन बजे के लगभग संस्कार और रीतियाँ समाप्त हो गयीं । मेलादेई ने अपने बड़े कमरे में एक पलँग लगवा दिया था और लोहे की कुर्सी पर बिजली का पंखा रख दिया था । शेष रात विश्राम कर लेने के लिए सोमराज को वहाँ लिटा दिया गया ।

तारा भी सिकुड़-सिमट कर बैठे-बैठे थक गई थी । शीलो उसे खुली छत पर ले गयी और दोनों साथ-साथ खाट पर लेट गयीं । शीलो ने तारा के गले में बाँह डाल कर कहा, "देखा, कितना हँसमुख है ! कितना अच्छा है । अब सम्भालना तेरा काम है ।"

तारा स्वीकृति में आँखें मूंदें सोचने लगी—पुरानी सब बातें समाप्त ! यह ही मेरा भविष्य और संसार है ! सम्भालूँगी ही, जितनी और जैसी सँभावनाएँ होंगी, यत्न से क्या नहीं हो सकेगा ।

तारा को प्रातः ही नहला-धुला कर नये कपड़े पहना कर विदाई के लिए तैयार किया जा रहा था । दहेज के केवल चार ही बक्स मोटर में जा सकते थे, वे तैयार

थे। विदाई का मुहूर्त साढ़े-नौ बजे का था। लाला सुखलाल ने कह दिया था, ठीक नौ बजे आयेंगे। वे सोमराज की एक बहिन को साथ लेकर मोटर में ठीक समय पर आ गये थे।

गली की स्त्रियाँ आँसू बहाती हुई तारा को गली के फाटक तक छोड़ने गयीं। पुरी, किशोरी, रतन, मास्टर जी, रामज्वाया, बाबू गोविन्द राम सभी के आँसू बह रह थे।

गली के सिरे पर सब सम्बन्धियों ने तारा को बाँहों में ले-लेकर, रो-रोकर आशीर्वाद देते हुए विदाई दी। तारा, परिवार से विदाई और उनके करुण-क्रन्दन को अपना नया परिवार पाने की आशा से सह लेने का यत्न कर रही थी। लड़की का तो जन्म ही इस विदाई के लिए होता है।

३० जुलाई, नित्य की तरह सूर्योदय के पूर्व ही गली के मुहाने पर अखबार बेचने वालों की पुकारें सुनाई दीं—"हिन्दुस्तान में मुसलमानों को, पाकिस्तान में हिन्दू-सिक्खों को पूरी आजादी!" 'पैरोकार,' 'छत्रपति' और 'सियासत' की एक-एक प्रति गली में ले ली गयी। पुरी और मास्टर जी भी गली में उतर आए।

रतन ने अखबार पढ़कर सुनाया—हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता और पाकिस्तान की स्थापना के लिए १५ अगस्त १९४७ की तारीख निश्चित कर दी गयी थी। काँग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों की ही कार्यकारिणी समितियों ने घोषणाएँ प्रकाशित की थीं कि हिन्दुस्तान में अल्प-संख्यक मुसलमानों और पाकिस्तान में अल्प-संख्यक हिन्दुओं और सिक्खों के जानोमाल की पूरी रक्षा की जिम्मेदारी नयी सरकारें लेंगी। दोनों ही देशों में अल्प-संख्यकों को बहु-संख्यकों के सामान ही सब नागरिक अधिकार होंगे और उनके सांस्कृतिक तथा धार्मिक आचार-व्यवहार की स्वतन्त्रता की पूरी रक्षा की जायगी। यह निर्णय अभी नहीं हो पाया था कि कुछ समय के लिए हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के संयुक्त प्रमुख शासक वायसराय लार्ड माउन्टबेटन ही रहेंगे या दोनों देश अपने-अपने पृथक गवर्नर-जनरल नियुक्त कर लेंगे।

बाबू गोबिन्दराम ने संतोष से कहा—"आखिर क्या ले लिया पाकिस्तानियों ने? यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री की जगह लीग की मिनिस्ट्री कायम हो जायगी। जब पाकिस्तान में हिन्दू रहेंगे तो ये अपनी गरज को कुछ न कुछ हिन्दुओं को मिनिस्ट्री में रखेंगे। तब पूरे पंजाब पर हुकूमत करते थे, अब आधा ही मिला।"

डाक्टर प्रभुदयाल बोला—"धार्मिक स्वतन्त्रता है, नागरिक अधिकारों की समानता है तो फिर झगड़ा क्या है? मुस्लिम लीग पाकिस्तान में हिन्दुओं पर जुल्म करेगी तो यू० पी०, बंगाल, बम्बई में लाखों-करोड़ों मुसलमानों का ख्याल उन्हें नहीं होगा?"

मास्टर जी कमर पर तहमत बाँधे थे। कन्धों पर कमीज भी नहीं थी। अपनी पीठ पर गरमी से उछल आयी घाम को खुजाने के लिए जनेऊ को दोनों

हाथों से पीठ पर रगड़ते हुए उन्होंने विचार प्रकट किया—"भाई, अपने धर्म में दृढ़ विश्वास होना चाहिए। खिलजी, तुगलक और औरंगजेब वैदिक धर्म को नहीं मिटा सके तो बेचारा जिन्ना और मुस्लिम लीग क्या कर लेंगे ?"

गोबिन्दराम ने गहरी साँस लेकर कहा—"यह सब तो होनी थी, सो हो गयी, फिर सब लोग वहीं के वहीं रहेंगे।" घण्टे डेढ़ घण्टे इसी प्रकार बातचीत चलती रही।

मास्टर जी ने पुरी को सम्बोधन किया—"काका, तुम जरा जल्दी नहा-धो लो। मुल्कराज के यहाँ मोटर के लिए अभी चले जाओ। तारा को उसकी ससुराल से लाकर उनकी मोटर वापिस करनी होगी। बेचारे की मेहरबानी समझो कि इतना ख्याल करता है, नहीं तो आजकल के स्टूडेंट पुराने टीचरों को क्या समझते हैं, क्यों जी !" उन्होंने समर्थन की आशा से सब लोगों की ओर देखा।

"अभी जाता हूँ।" पुरी ने स्वीकार कर लिया और सरसरी नजर से 'पैरो-कार' के दूसरे पृष्ठ देखने लगा।

लाला सुखलाल ने यह मान लिया था कि लड़की पहली विदाई के बाद एक दिन और रात ससुराल में रहकर पाँच-सात दिन के लिए मायके लौट जायगी। पुरी को उसे लिवा लाने के लिए जाना था।

गोबिन्दराम फिर बोल पड़े—"लाला सुखलाल ने खामुखा इतनी जल्दी की। इस समय जरा टाल जाते। दो मास बाद भी तो फिर लगन है। अब सब शान्त हो जायगा। तब लड़की का ब्याह जरा ढंग से हो जाता। साहब, खरा सोना मिल गया है उन लोगों को। लड़की तो लक्ष्मी है..."

सब लोगों की आँखें गली के मुहाने की ओर उठ गयीं। बाबू रामज्वाया और उनका लड़का किशोरीलाल अस्त-व्यस्त हालत में मौन चले आ रहे थे। उनके पीछे-पीछे रोती हुई शीलो की माँ, शीलो और किशोरी की बहू गली में आयीं। गली के लोग मुँह और आँखें फैलाये अवाक रह गये।

रामज्वाया के घर के लोग बन्नी हाते का समाचार मिलते ही बिना नहाये धोये भोलापांधे की गली में आ गये थे। वे आँखें पोछने लगे। सैदमिट्ठा में मुसल-मानों की भीड़ ने आधी रात में बन्नी के हाते को घेर कर बहुत से मकानों में एक साथ आग लगा दी थी। दोनों तरफ से खूब बन्दूकें चली थीं। सोमराज की बुआ और तारा का पता नहीं चल रहा था। उनके पड़ोसी माधोदास का बाप भी आग से नहीं निकल सका था। लाला सुखलाल के कन्धे में गोली लगी थी। उनका मकान, उनके दोनों ओर के मकान और सामने माधोदास का मकान भी जल गये थे। सुखलाल के मकान के पिछवाड़े का खाली मकान भी, जहाँ खोजा रहता था, जल गया था।

गली में पाँव रखते ही शीलो और उसकी माँ ऊँचे स्वर में रोने लगी थीं। भागवन्ती ने खिड़की से झाँका और बिना कुछ पूछे ही दुहत्थड़ मार कर चीख उठी थी। मास्टर जी गली में खड़े-खड़े ऊँचे स्वर में रो पड़े।

भोलापांधे की गली में फिर कोहराम मच गया। लाला सुखलाल का परिवार सोमराज के मामा के यहाँ मुहल्ला मोहल्याँ में चला गया था। बाबू रामज्वाया, मास्टर जी, राजरानी, भागवन्ती, शीलो, बहू किशोरीलाल और पुरी को अपना दुःख लिये उनके यहाँ समवेदना के लिए जाना आवश्यक था।

संध्या समय पुरी, रतन और मेवाराम बन्नी हाते के जले हुए खण्डहर देखने गये। मास्टर जी की इच्छा थी यदि लड़की का अस्थिशेष मिल जाये तो उसकी आत्मा की शान्ति के लिए हवन करके अस्थितयों को रावी में प्रवाह कर दिया जाये।

बन्नी के हाते में पुराने समय से जेवर गिरवी रख कर सूद पर रूपया देने वाले सर्राफ लोग रहते थे। मकानों में पुराने ढंग के काठ के भारी-भारी किवाड़ थे और छतों में शहतीरों की धन्नियाँ थीं। उनके एक बार आग पकड़ लेने पर उन्हें बचाना कठिन था। अब जले हुए मकानों को घेर कर सशस्त्र पुलिस पहरा दे रही थी। पुलिस के कुछ लोग जली हुई जगह में जाकर मलबा हटा कर निरीक्षण कर रहे थे। दूसरे लोगों को समीप आने की आज्ञा नहीं थी। यह चौकसी इसलिए की गयी थी कि देखने आने वाले लोग मकानों में रह गया सोना-चाँदी उठा कर न ले जायें। जिन लोगों का सर्वस्व वहाँ जल गया था, वे बेबस दूर खड़े पुलिस को मन-मानी करते देख रहे थे और दबे-दबे स्वर में पुलिस को गाली दे रहे थे—"इन्हीं लोगों ने तो आग लगवाई है। नहीं तो करफ्यू के टाइम में गुंडे कैसे आ सकते थे। अब हमारे सामने ही सोना-चाँदी ढूँढ़-ढूँढ़ कर ले जा रहे हैं।"

पुरी, रतन और मेवाराम बन्नी के हाते की गली से सैदमिट्टा के बाजार में लौटे तो कोई अपरिचित ताना देकर कह रहा था—"सुखलाल अपनी शहजोरी की बहुत डींग मारता था। लोग कह रहे हैं, उसकी बहू को मुसलमान छीन ले गये हैं। इज़्ज़त बचाने के लिए बात बना दी है कि मर गई।"

पुरी के कदम ठिठक गये। अपमान से रोम-रोम जल उठा। मेवाराम ने तुरन्त घूम कर उस आदमी का गिरेबान पकड़ कर एक घूँसा उस के जबड़े पर रख दिया।

"हैं! हैं! ना, ना! क्या करते हो! अरे बेशर्मो आपस में लड़ते हो? तभी तो हिन्दुओं का बेड़ा गर्क हो रहा है।" कई लोगों ने बीच-बचाव किया। मेवा-राम और अपरिचित बहुत देर तक एक-दूसरे को माँ-बहिन की गालियाँ देकर सिर तोड़ देने और खून कर देने की धमकियाँ देते रहे। पुरी और रतन मेवाराम को अपने साथ खींच ले गये।

१४

पुरी के हवालात से छूट जाने के बाद पंडित गिरधारी लाल जी ने कनक को

कुछ समय के लिए लाहौर से बाहर भेज देना अनिवार्य समझ लिया था। नगर में उत्पात के कारण लाहौर हाईकोर्ट में दीवानी के मामले स्थगित कर दिये गये थे। नैयर को मसूरी में जगह न मिली तो उस ने नैनीताल में एक छोटी कोठी किराये पर ले थी। अपनी माँ, कांता और कनक तथा कंचन को भी साथ लेकर वह नैनीताल चला गया था।

नैनीताल में बहुत भीड़ थी। पंजाब दूर होने पर भी पश्चिमी पंजाब और लाहौर से आतंक के कारण भाग आये समृद्ध पंजाबी परिवार सब ओर भरे हुए थे। सब स्थानों पर पंजाब में हिन्दूओं पर हो रहे अत्याचारों की ही चर्चा सुनाई देती थी।

नैयर दो वर्ष पूर्व भी नैनीताल में रह चुका था। अतः वह वहाँ के क्लब और ब्रिज पार्टियों को अच्छी तरह जानता था। उसे ब्रिज खेलने की लत भी थी। कांता, कनक और कंचन सम्बन्धी अतिथि के रूप में क्लब में जा सकती थीं।

उस संध्या क्लब में एक छोटी सी पार्टी का आयोजन था। उस दिन उद्योग और नागरिक उपयोग विभाग के पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी श्री कृष्णनारायण अवस्थी आने वाले थे। अवस्थी जी यू० पी० कांग्रेस में प्रभावशाली व्यक्ति थे। इसी कारण क्लब में नोकीली गांधी टोपियाँ अधिक दिखाई दे रही थीं। क्लब में पुरुषों और स्त्रियों की संख्या लगभग बराबर ही थी।

अवस्थी जी से नैयर का परिचय दो ही वाक्यों में कराया गया था परन्तु कनक से परिचय कराये जाते समय नैयर ने स्वयं आगे बढ़कर कनक का परिचय कराया। नैयर ने बताया कि उनके पिता पंडित गिरधारी लाल जी कई बड़े नेताओं के साथ सन् १९११-१९१४ में के आन्दोलन में जेल में रहे थे। इनमें प्रबल साहित्यिक प्रतिभा है, ये एम० ए० हैं और प्रायः पत्रों में लेख या कहानी लिखती रहती हैं।

चाय पीते समय अवस्थी ने कनक से विशेष आग्रह किया।

अभी नैयर को नैनीताल पहुँचे सप्ताह भी पूरा नहीं हुआ था कि उसका छोटा भाई राजेन्द्र बहन और बहनोई, एवं बहनोई के परिवार के साथ वहाँ आ पहुँचा।

नैयर ने बड़ी कोठी के लिए सब जगह तलाश की परन्तु कहीं कोई मकान खाली नहीं मिला। सबको एक छोटे से बँगले में ही रहना पड़ा। दो भगवत-भक्ति के प्रदर्शन के लिए आतुर समधिन-वृद्धाओं और तीन उपद्रवी बच्चों के रहते चुपचाप बैठकर पढ़ने या लिखने का अवसर कैसे हो सकता था।

दोनों समधिनें प्रातः उठते ही पाठ आदि में लग जातीं। दोनों एक-दूसरे से अधिक भक्ति करना चाहती थीं। इसके लिए वे न जाने कितने देवी-देवताओं को पूजती रहतीं। नैयर, कांता और कनक अबूझ शब्दों के इस धार्मिक कोलाहल से ऊबते, परन्तु चुप रह जाते।

बँगले में पूजा-पाठ और बच्चों का शोर था और बाहर प्रायः निरन्तर वर्षा हो रही थी। अब तो सड़कों पर घूम कर या झील किनारे बैठे कुछ देर पढ़ कर समय काट देना भी सम्भव न था।

नैयर तो क्लब में जाकर ब्रिज खेलता रहता, कंचन क्लब में कैरम खेल लेती, परन्तु कनक को यह सब कुछ नहीं भाता था। वह सप्ताह भर में ही नैनीताल और क्लब से ऊब गयी थी।

नैयर के सम्मुख पुरी से साठ दिन तक कोई सम्पर्क न रखने की प्रतिज्ञा का समय समाप्त होने में चार ही दिन रह गये थे। नैयर सहायता के बजाय पुरी को अयोग्य प्रमाणित करने के लिए बहस करता था। कनक पुरी की निन्दा नहीं सुन सकती थी। उसे लगने लगा जैसे उसे कैद करने के लिए ही नैनीताल लाया गया था। इस विचार के आने से ही वह अपनी बात पर और दृढ़ होती गयी। जो करना हो कर लें, मुझ से जो भी बनेगा, करूँगी।

सन्ध्या समय वर्षा न होने पर अकेले ही झील की तरफ चली जाती और वहाँ बेंच पर बैठकर सोचती रहती। उसे पुरी को दिया हुआ वचन याद आ जाता तो वह सोचती कि परिवार से स्वतंत्र हो जाना ही आवश्यक है। पुरी की आर्थिक स्थिति बल्कि आत्म-सम्मान के विचार से भी जीविका के लिए कुछ कर सकना आवश्यक ही है।

संध्या वर्षा नहीं हुई थी। कनक झील के किनारे-किनारे सूनी बेंच की तलाश में तल्लीताल की ओर चली जा रही थी। सामने से अवस्थी जी आते हुए दिखाई दिए। पहले उन्होंने ही नमस्कार किया, कनक ने भी विनय से उत्तर दिया। अवस्थी जी ने कनक से बहन और बहनोई को साथ लेकर अपने घर आने को कहा। कनक ने कह दिया कि जीजा जी से पूछूँगी। इस पर अवस्थी जी ने कहा कि कल-परसों आपको जब सुभीता हो। पहले फोन कर लीजियेगा।

नैयर ने पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी के निमन्त्रण का स्वागत किया। कनक ने फोन कर सूचना दे दी। सन्ध्या समय नैयर, कांता और कनक शिष्टाचार के प्रति विशेष सतर्क हो कर अवस्थी जी के घर पहुँचे। अवस्थी जी ने अतिथियों का स्वागत किया और इन्हें ड्राइंग-रूम में ले गये।

अवस्थी जी के यहाँ चाय में विशेष तकल्लुफ नहीं दिखाई दिया। तिपाई पर बिछा कपड़ा, चाय के प्याले असावधानी से उठाये और धरे जाने की घटनाओं की गवाही दे रहे थे। ड्राइंग-रूम के आकार और फर्नीचर में कोई कमी नहीं थी, परन्तु सब ओर फूहड़पन और उपेक्षा बरस रही थी। अवस्थी जी इस कमी को प्रगल्भता से पूरा कर रहे थे। उन्होंने कई चुटकुले सुनाये और नेहरू जी के साथ दौरे पर जाने की घटनाएँ सुनाईं।

चाय के बाद कांता ने झिझकते हुए श्रीमती अवस्थी के बारे में पूछा तो पता चला कि वे चीनी के बर्तन में नहीं खाती-पीती हैं और पर्दे में ही रहती हैं। कांता के कहने पर अवस्थी जी कांता और कनक को अन्दर श्रीमती जी से मिलाने ले गये। जब वे लौटीं तो नैयर ने देखा कि मुँह में बहुत सारा पान भरा रहने के कारण उनके लिए बोल पाना कठिन हो रहा था।

अवस्थी जी ने कांता और विशेषतः कनक से सामाजिक कार्यों में सहयोग

देने का अनुरोध किया। उन्होंने बताया कि नैनीताल में श्रीमती के० पंत बहुत कार्य कर रही हैं, आपका परिचय उनसे होना चाहिए। वे कल प्रातः नौ बजे आयेंगी। आप लोग भी आइये।

वे तीनों अवस्थी जी से विदा लेकर चले आए। रास्ते में कांता ने खिन्नता से कहा कि इन लोगों का यह क्या कायदा है, अपनी स्त्रियों को तो परदे में रखते हैं और दूसरों की स्त्रियों के साथ उठना-बैठना पसन्द करते हैं। कांता को क्रोध आ गया, उसने कहा कि मैं तो अब कभी इनके घर नहीं आऊँगी।

नैयर ने समझाया कि नाराज होने की क्या बता है। यहाँ समय काटना भारी हो रहा है, कुछ सम्बन्ध और परिचय हो जाएगा।

तीनों सड़क पर ग्रांड होटल के नीचे अपनी कोठी की ओर चढ़ने वाली पगडण्डी के सामने पहुँचे तो नैयर ने कहा—"चलो क्लब में चलें, अभी से घर में क़ैद होकर क्या करेंगे, सात ही तो बजे हैं।"

"जीजा जी अभी समय है, मैं जरा आप से बात करना चाहता थी।" कनक बोली—"घर में तो भीड़ में कोई समय ही नहीं होता। सब के सामने आप को क्रोध आ गया तो भी ठीक नहीं।"

कांता समझ गई, कनक कैसी और क्या बात करना चाहती थी। छोटी बहन बहस में उत्तेजित होकर तीखी बात कहने में भी नहीं झिझकती थी, इसलिए कांता उस से घबराती थी। उसने कहा—"मैं जाकर नानो को देखूँ। उसे जरा घुमा लाने के लिए भेज दूँ। तुम लोग क्लब के रास्ते में बात भी कर लो और क्लब भी हो आओ, पर ग्यारह न बजा देना।" वह पगडण्डी पर चढ़ने लगी।

नैयर को अनुमान तो था, पर उस ने पूछा—"क्या बात है?"

"आप ने मुझ से साठ दिन के लिए प्रतिज्ञा कराई थी। कल साठवाँ दिन है।" कनक ने पहले से सोची हुई बात कह दी।

"इस चेतावनी का क्या अभिप्राय है?" नैयर ने कुछ, सोच कर पूछा।

"चेतावनी या चुनौती नहीं है।" कनक ने कहा, "प्रतिज्ञा का समय पूरा हो गया।" और फिर बोली, "मेरा भी तो मन और मस्तिष्क है?"

"और प्रतीक्षा सम्भव नहीं? एक दम विवाह ही कर लेना चाहती हो?" नैयर ने पूछा।

"एक दम हो या न हो, मैं प्रतीक्षा कर सकूँ या न कर सकूँ, पर दूसरे के मन की दुविधा और चिन्ता का भी ख्याल करना चाहिए। पिता जी का पत्र नहीं आया तो आप सब लोग व्याकुल नहीं हैं? मुझे व्याकुलता नहीं होगी?"

नैयर और कनक क्लब की ओर कैपिटल के दरवाजे तक पहुँच गये थे, परन्तु कनक की बात समाप्त नहीं हुई थी। वे सड़क पर लौट पड़े। नैयर ने सोच कर प्रश्न किया—"मैंने पुरी का उस की बहिन के प्रति व्यवहार तुम्हें बताया था। उस विषय में तुमने कुछ सोचा या पता लिया? मैं तुम्हें उसकी गली तक ले जाने के लिए भी तैयार था।"

"पता किससे लूँ और लेकर क्या करूँगी ? मुझे किसी न किसी पर तो विश्वास करना ही है ।" कनक ने उत्तर दिया, "मुझे उन्हीं पर विश्वास है ।"

"मतलब है, मैंने तुमसे झूठ कहा था ?"

"मैं उन्हें बेईमान नहीं मान सकती ।"

कुछ कदम तक दोनों चुप चलते रहे । कनक ने चुप्पी तोड़ी—"आपने यह अश्वासन दिया था कि आप मेरा विचार न बदल सके तो आप विरोध भी नहीं करेंगे ।"

नैयर ने उत्तेजना प्रकट न होने देने के लिए स्वर को धीमा कर कहा—"हाँ, मैं कोई शारीरिक या उस प्रकार का विरोध नहीं करूँगा, परन्तु मैं इस सम्बन्ध का समर्थन या अनुमोदन नहीं कर सकता । हम लोग यही यत्न करेंगे कि तुम्हारे प्रति अपना कोई उत्तरदायित्व न समझें । हम और क्या कर सकते हैं ?"

उत्तरदायित्व ?...या कैद या पराधीनता ?...क्या आवश्यकता है इन्हें मेरा उत्तरदायित्व सम्भाले रहने की ? कनक मन ही मन उबलती रही पर बोली नहीं । दोनों मौन तल्लीताल के डाकखाने तक चले गये ।

नैयर ने कहा कि मैं उस समय तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकता हूँ । उसने कनक से कह दिया कि मैं क्लब जाना चाहता हूँ । नैयर क्लब चला गया । अभी अँधेरा ज्यादा नहीं हुआ था सो कनक लायब्रेरी की ओर चली गयी । वहाँ वह सूनी बेंच पर बैठी पुरी के साथ छोटे से घर में अकेले रहने की कल्पना में डूबी रही । साढ़े आठ बज गये तो वह उठकर बँगले की ओर चल दी ।

रात से ही हल्की-हल्की झड़ी लग गई थी । प्रात: भी उसके रुकने का कोई लक्षण न था । कनक को ऐसी अवस्था में मिसेज पंत का परिचय पाने की इच्छा न थी, परन्तु बँगले में कैदी बन कर सब के सामने चुप बैठे रहना भी असह्य था ।

कनक अकेली ही बरसाती और छोटी छतरी लेकर अवस्थी जी के घर की ओर चल दी ।

अवस्थी जी के पास दो व्यक्ति पहले से ही बैठे थे । उन्होंने अपने पास वाली कुर्सी पर कनक को बैठने को कहा । कनक नमस्कार करके बैठ गई । अवस्थी जी ने चाय मँगवानी चाही, तो पिछली शाम की चाय की स्मृति के कारण कनक ने क्षमा माँगते हुए कह दिया कि मैं पीकर आई हूँ ।

वर्षा में मिसेज पंत नहीं आईं । अवस्थी जी अपनी ही बातें बताते रहे । उन्होंने बताया कि जिन पंजाबी लड़कियों ने सरकारी नौकरियाँ ली हैं, वे बहुत अच्छा काम कर रही हैं । कनक ने सूत्र पकड़ लिया और कहा, "मैं सामाजिक कार्य में तो सहयोग देना ही चाहती हूँ, परन्तु यदि हमें लाहौर छोड़ना पड़ा तो ऐसी परिस्थिति में मैं भी कोई नौकरी कर लेना चाहूँगी ।"

"अरे, वाह, आपके लिए नौकरी या काम की कमी है ? आप जैसी योग्य नवयुवतियों से तो राष्ट्रीय निर्माण में बहुत सहायता मिलनी चाहिए । अब तो सरकार का काम भी राष्ट्रीय काम ही है । एजुकेशन डिपार्टमेन्ट बढ़ रहा है । हमारा

सोशल-वेलफेयर डिपार्टमेन्ट है। सभी जगह काम है, जरूरत है। आप लखनऊ आ जाइये। निश्चय ही प्रबन्ध हो जायगा। आप हमें बता दीजियेगा, आपको किस प्रकार का काम सूट कर सकता है। उसमें कठिनाई क्या है।...''

अवस्थी जी ने अपने दोनों पाँव कुर्सी पर उठा लिये और फिर सुनाने लगे—''हमें तो पंजाब से बहुत स्नेह है। हम सन् २९ में लाहौर कांग्रेस में भी गये थे। पंजाबी लड़कियों में बहुत लाइफ होती है! बहुत निस्संकोच होती हैं।'' उनके चेहरे पर स्मृति की मुस्कान आ गई।

डेढ़ घण्टे के लगभग बीत गया। कनक ने अनुमान प्रकट किया—''मिसेज पंत शायद वर्षा के कारण नहीं आ सकेंगी ?''

''हाँ, अब क्या आयेंगी। आप फिक्र न कीजिये।'' अवस्थी जी ने आश्वासन दिया, ''हम आपको किसी दिन उन्हीं के यहाँ ले चलेंगे, वैसे यहाँ आती ही रहती हैं। यू० पी० असेम्बली की मेम्बर हैं। आप चाहेंगी तो हम आपके काम की बाबत सोचेंगे। आप यहाँ जब चाहें निस्संकोच तशरीफ लाइये।'' चलते समय कनक को अवस्थी जी ने मिसेज पंत की कोठी का भी पता बता दिया।

कनक अवस्थी जी के यहाँ से उनकी सहायता से नौकरी मिल जाने का विश्वास लेकर लौटी। चिंता के बोझ में हलकापन आ गया था। कल्पना भविष्य की ओर दौड़ने लगी थी। नये जीवन की कल्पनाओं के उत्साह में कनक तीसरे दिन संध्या समय मिसेज पंत के मकान पर चली गयी।

वहाँ अवस्थी जी पहले से ही उपस्थित थे। गरम-गरम पकौड़ियाँ और चाय चल रही थी। अवस्थी जी ने मिसेज पंत से कनक का परिचय बहुत प्रशंसा सहित कराया। उन्होंने मिसेज पंत को सुझाव दिया कि वे 'नारी कला मन्दिर' के संगठन में कनक की सहायता अवश्य लें।

अब अवस्थी जी कनक से बोले, ''आप लखनऊ में रहने का निश्चय कर लीजिए, जॉब का प्रबन्ध हो जाएगा। आप चाहेंगी तो किसी स्कूल में हो जाएगा। डेढ़-दो सौ की तो कोई बात नहीं। आप वहाँ आकर मिसेज पंत के साथ ठहर सकती हैं।''

अवस्थी जी ने मिसेज पंत से कहकर पिकनिक की योजना बनानी आरम्भ कर दी। तय हो गया कि परसों वे लोग कुछ और व्यक्तियों सहित नौकुचिया ताल देखने जायेंगे, यदि आकाश साफ रहा तो। अवस्थी जी ने कनक से कह दिया कि आप प्रातः नौ बजे बस-स्टैंड पर पहुँच जायें।

कनक ने घर आकर कांता और नैयर से पिकनिक और नौकरी की बात बतायी। पहले तो दोनों चुप रहे। फिर नैयर ने कहा कि पिकनिक में कंचन को साथ ले जाना ठीक रहेगा।

उस रात कनक पलँग पर कंचन के साथ लेटी तो अपनी ओर की पाटी से चिपकी बहुत देर तक सोचती रही कि मार्ग दीख रहा है, साहस से आगे बढ़ना होगा। पिता के घर में उसका समय समाप्त हो चुका है। नौकरी की आशा ने उसके

विचारों और आशा का रंग ही बदल दिया। निश्चय कर लिया, कल जीजा जी को कह दूँगी और जरूर लाहौर पत्र लिखूँगी। मेरे नाम आया पत्र लेने का अधिकार किसे है? लिख दूँगी, उत्तर रजिस्टर्ड लिफाफे में भेजें और उस पर स्पष्ट लिख दें, पर्सनल!

पिकनिक का निमन्त्रण आकाश साफ होने की अवस्था में दिया गया था। सूर्योदय से पूर्व ही वर्षा हो रही थी और दस बजे के बाद भी होती रही। दस साढ़े दस बजे सब के सब पोस्टमैन का इंतजार करने लगे। सब बाहर बैठे थे, परन्तु कनक अन्दर पलँग पर लेटी अपना भविष्य निश्चय कर रही थी।

इतने में पोस्टमैन आ गया। कनक भी उठकर बाहर आ गयी। पत्र पंडित जी का नैयर के नाम आया था। नैयर पत्र खोलने लगा तो तीनों बहनें पास आकर खड़ी हो गईं। पत्र आरम्भ करते ही नैयर ने बताया कि पिता जी को हमारा एक ही पत्र मिला है। शेष पत्र उसने ऊँचे स्वर में पढ़कर सबको सुना दिया।

पंडित जी के पत्र से लाहौर की स्थिति बहुत आशंकाजनक जान पड़ी··· प्रेस १३ जुलाई से बन्द था। सरकारी अफसरों को हिन्दुस्तान या पाकिस्तान का चुनाव कर सकने का अवसर दिये जाने की घोषणा से लोगों में बहुत आतंक फैल गया था। लोग व्याकुल थे कि लाहौर के इधर या उधर हो जाने का फैसला हो जाय। प्रेस में काम करने वाले मुसलमान कातिब, मशीनमैन और दफ्तरी ग्वालमंडी में आने का साहस नहीं करते थे। ग्वालमंडी के हिन्दुओं ने किलाबन्दी कर ली थी कि बाहर के लोग किसी ओर से भी प्रवेश नहीं कर सकते थे। सम्भवतः प्रेस का बुड्ढा मशीनमैन फतहमुहम्मद कत्ल हो गया था। पुस्तकों की बिक्री क्या होती, पंजाब भर में स्कूल बन्द थे। मौसम भी बहुत खराब था, उमस बेहद और वर्षा नहीं हो रही थी। लोग प्रायः अपना कारोबार लाहौर से पूर्व की ओर उठा ले जा रहे थे।

पंडित जी ने पछतावा प्रकट किया था! उन्होंने दो वर्ष पूर्व नई मशीनों में बहुत रुपया लगाया था। पूरे प्रेस और कारोबार को उठा कर ले जाते तो कहाँ? लोगों को हुकूमत और हाकिमों पर भरोसा नहीं रहा था। लोग बैंकों को भी सुरक्षित नहीं समझ रहे थे। अपनी रकमें, लाहौर से बाहर बैंकों की दिल्ली और यू० पी० शाखाओं में भिजवा रहे थे। बैंकों के 'लाकर' से अपना जेवर, सेक्योरिटी और शेयर सर्टीफिकेट और दूसरे कीमती क़ागज निकलवा रहे थे। पंडित जी लाहौर नहीं छोड़ सकते थे, परन्तु कैश, दिल्ली ब्रांच में बदलवा दिया था। आम लोग निश्चय कर चुके थे कि लाहौर पाकिस्तान में हो जाने पर भी उन्हें वहाँ ही रहना था।

पंडित जी ने नैयर को परामर्श दिया था कि वह भी बैंक से अपना हिसाब कुछ समय के लिए बदलवा दे और अपने लाकर्स भी खाली कर दे। शांति हो जाने पर फिर वापिस रख दिया जा सकेगा। अन्त में लिखा था कि उनकी भी इच्छा कुछ दिन के लिए नैनीताल आ जाने की थी, परन्तु उनके कुछ दिन के लिए जाने का

भी अर्थ उनका भयभीत होकर भाग जाना ही समझा जायगा। जो अन्ततः स्वयं उनके लिए भी हानिकारक होगा।

पत्र सुनकर सब लोग चुप रह गये। कुछ समय बाद कांता ने बात शुरू की—"बताओ न, क्या करना ठीक होगा ?"

"मेरा तो विचार है कि अभी कुछ दिन देखा जाय।" नैयर ने विचार प्रकट किया, "आखिर यही न कि लाहौर पाकिस्तान में हो जायेगा। क्या यह सम्भव है कि पूरे हिन्दुस्तान में दस-बारह करोड़ मुसलमान पेशावर से लाहौर तक की जगह में समा जायें ? मुसलमान हिन्दुस्तान में रह सकेंगे तो हिन्दू भी लाहौर में रह लेंगे। डाक्टर, वकील, इंजीनियर तो पाकिस्तान को भी चाहिए। मैं सम्पत्ति लाहौर से क्या उठा लाऊँ, मकानों को उठा लाऊँ ?"

कांता यह कैसे स्वीकार कर लेती कि उसके अनुभवी पिता की अपेक्षा पति का विचार ठीक था। स्त्री अपने पिता-माता की बुद्धि को अपनी ही वस्तु समझती है। उसने असन्तोष प्रकट किया—"पिता जी लाहौर की हालत देख कर लिख रहे हैं। दूसरे सब लोग जो लाहौर से जा रहे हैं, बेवकूफ हैं ? भूखे-नंगे सड़क पर खड़े हो जायेंगे तो पता चलेगा···।"

नैयर उस संध्या लाहौर जाने के लिए तैयार हो गया तो कांता ने विरोध किया—"भाड़ में जाय सम्पत्ति। यह नहीं सोचते कि पिता जी लाहौर छोड़ देना उचित समझ रहे हैं तो मैं तुम्हें कैसे वहाँ जाने दूँ ? मुझे तुम्हारी जान चाहिए या सम्पत्ति ? तुम से अकेले सिमिटेगा भी क्या ? बक्स में से अपने हाथों कमीज तो ढूँढ़ कर निकाल नहीं पाते।"

राजेन्द्र ने आगे बढ़ कर कहा—"मैं चला जाऊँ ?" उसकी बात का कुछ अर्थ न था। सम्पत्ति और हिसाब के सब कागजात तो महेन्द्र के समझे हुए थे। कनक इस बहस में नहीं बोली। वह अपनी बात सोचती रही। पंडित जी के पत्र ने पुरानी परिस्थितियों के बदलने की सूचना दे दी थी। प्रश्न था, अब कैसे कहाँ बसा जाये ? वह अब पिता जी के लिए बोझ और चिंता का कारण नहीं बनेगी। उसने लखनऊ में बसने का निश्चय कर लिया था। परन्तु अंतिम निर्णय पुरी को सब कुछ बता कर, उसके समर्थन से ही कर सकती थी। रात भर वह इसी कल्पना-विकल्पना में रही। दूसरे दिन उसने नौ बजे पुरी को पत्र लिखने के निश्चय की सूचना नैयर को दे दी और पूर्ण अधिकार से एक लम्बा पत्र लिख कर, पुरी को तुरन्त नैनीताल में आकर परामर्श करने के लिए लिख दिया। यह लिखना भी नहीं भूली कि यदि पुरी न आ सके या न आयेगा तो उसे स्वयं लाहौर पहुँचना पड़ेगा।

पंडित जी ने लाहौर से चलते समय चुपचाप कनक को सौ-सौ के तीन नोट दे दिये थे और कहा था कि अपनी और कंचन की जरूरतों का बोझ नैयर पर न ालना। कनक ने अभी तक कोई पैसा नहीं खर्च किया था। कनक पुरी की आर्थिक स्थति से परिचित थी। उसने दो नोट पत्र में रख दिये।

जब से पंडित जी का पत्र आया था, दिन में एक-दो-बार नैयर के लाहौर

जाकर सम्पत्ति का प्रबन्ध कर आने के सम्बन्ध में बहस हो जाती थी। कांता पिता जी के परामर्श की उपेक्षा भी नहीं कर सकती थी, और नैयर को संकट में भेज देने का साहस भी नहीं कर पाती थी। वह चाहती थी कि उसे भी साथ ले जाया जाये।

कनक ने इक्कीस को पुरी को पत्र लिखा था, परन्तु सत्ताइस तक उसका उत्तर नहीं आया। उसने सोचा कि मुझे लाहौर जाना ही पड़ेगा, सो जीजा जी के साथ ही चली जाऊँ। अब जब फिर नैयर के लाहौर जाने के बारे में बात उठी तो कनक ने अपना प्रस्ताव रखा। इस पर नैयर ने बहुत गहरे अर्थ की ध्वनि में विस्मय प्रगट किया, "अच्छा !"

कनक के हठ के कारण और उस विषय में कनक और नैयर के मतभेद के कारण दोनों में बातचीत बहुत कम हो गई थी और नोक-झोंक और हास-परिहास बन्द हो गया था। कनक ने तो अपने अधिकार के लिए लड़ने की उत्तेजना में इस अभाव को उतना अनुभव न किया था, परन्तु नैयर को पुराने अभ्यास पर लगा यह नियंत्रण खल रहा था। पाँच दिन पूर्व कनक ने पुरी को पत्र लिखने की सूचना दे दी थी। यह पारिवारिक लिहाज के अन्त और युद्ध की घोषणा ही थी। नैयर को अपनी नैतिक स्थिति और आत्म-सम्मान के विचार से असहयोग कर देना पड़ा था, परन्तु कनक से मैत्री और नोक-झोंक और हास-परिहास की भूख तो मिट नहीं गई थी। रोग के उपचार के लिए यह पथ्य उसे रोग से भी अधिक अप्रिय लग रहा था।

"मैं साथ चली जाऊँ," कनक की इस बात को नैयर ने असहयोग समाप्त कर देने का निमंत्रण समझा, परन्तु कनक के लिए तो अपना इष्ट प्राप्त किये बिना सहयोग या असहयोग का कुछ अर्थ न था। उसने उस गहरे विस्मय पूर्ण 'अच्छा !' के उत्तर में पूछ लिया—"क्यों ?"

नैयर का गाम्भीर्य टूट चुका था, बोला—"मैं वहाँ दूसरी सम्पत्तियों को समेटूँगा या तुम्हारी चौकसी करूँगा ?"

"मैं आप की सम्पत्ति हूँ ?" कनक ने तिनक कर पूछा। बीती घटनाओं की स्मृति से चौकसी शब्द उसे चुभ गया था।

"खैर, मेरी सम्पत्ति होने के विरुद्ध तो लड़ना नहीं पड़ेगा, परन्तु वहाँ अगर कोई जबरदस्ती तुम्हें सम्पत्ति की तरह उठा ले चलेगा तो उसे भी तिनक कर डाँट देने से काम चल जायगा ?" नैयर ने पूछा।

कनक ने जिस चौकसी का संकेत समझ कर क्रोध किया था उसे भ्रम पाकर वह भी परिहास का लोभ संवरण न कर सकी और बोली—"बस अपनी मर्दानगी पर इतना ही भरोसा है ? मैं तो केवल काके (छोटे लड़के) के लिए सूटकेस से कमीज-निकर निकाल देने और टूटे बटन लगा देने के लिए साथ जा सकती हूँ। नहीं जरूरत, न सही।" उसने अँगूठा दिखा दिया।

दो दिन तक साली-जीजा में खूब नोक-झोंक और परिहास चलता रहा। नैयर ने कहा—"हमारे पूर्वजों ने स्त्री को लक्ष्मी कहा है। लक्ष्मी का अर्थ ही सम्पत्ति

होता है।" वह पुकार लेता, "कांता, तो कब भेज रही हो मुझे लाहौर ? रक्षा के लिए एक सिपाही तैयार है, अब क्या भय है ?"

उन्तीस तारीख को भी कनक ग्यारह बजे तक बँगले के फाटक की ओर पोस्ट-मैन के लिए आँखें लगाये रही। आखिर निराश होकर भीतर पलँग पर जा लेटी। अपने में डूब जाने के लिए कम्बल से मुँह भी ढँक लिया। सोच रही थी, पत्र में सब कुछ स्पष्ट लिख चुकी हूँ फिर भी मुझ पर क्रोध करें तो क्या न्याय है ?

"कनक सुनो !" नैयर ने उसे पुकारा, परन्तु स्वर में असहयोग की ध्वनि थी। कनक ने सोचा अभी दस मिनिट पहले तक तो ठीक ढंग से बोल रहे थे।

"हूँ।" उत्तर दे कर कनक ने मुख पर से कम्बल हटा दिया।

"तुम्हारे लिए एक पत्र है।" नैयर ने अंग्रेजी में गम्भीर स्वर में कहा। बन्द रजिस्टर्ड लिफाफा कनक के तकिये के समीप रख कर वह बिना कुछ कहे चला गया। लिफाफे पर लिखा था, 'पर्सनल'। यह शब्द रेखांकित था। नैयर ने लिफाफा नहीं खोला था। स्वयं लाकर दे देने का अभिप्राय वह दिखा देना चाहता था कि पत्र आने की बात उसे मालूम थी।

कनक को पत्र पाकर जो संतोष और उत्साह हुआ उसमें नैयर के मौन विरोध की चिंता के लिए स्थान न रहा था। उसे उलटा नैयर पर क्रोध आया, मुँह फुलाते हैं तो फुलाते रहें, मैं किसी का क्या बिगाड़ रही हूँ ? इन्होंने अपनी पसन्द से विवाह नहीं किया ? विवाह से पहले चोरी-चोरी पत्र नहीं लिखते थे ? मैं ही दोनों के पत्र एक-दूसरे को देती थी। अब परिवार की प्रेस्टीज का प्रश्न इसलिए आ गया कि 'उन' के पास पैसा नहीं है। लखनऊ में हम दोनों को दो-दो ढाई-ढाई सौ की नौक-रियाँ मिल जायँगी तो सब ठीक हो जायगा। यह हम से नहीं बोलेंगे तो हमें इन लोगों की क्या जरूरत ? हमारा भी निर्वाह हो जायगा।

तीस जुलाई को दोपहर के समय दिल्ली, लाहौर और लखनऊ से आये दैनिक पत्र बाँटने वाले ने 'स्टेट्समैन' और 'ट्रिब्यून' नैयर के हाथ में दिये। कनक मौन एक पत्र ले लेने के लिए आगे बढ़ आई। नैयर बोल पड़ा—"देख लो, मैं तो कहता ही था, लाहौर में हिन्दुओं के न रह सकने का कोई कारण नहीं हो सकता। काँग्रेस और मुस्लिमलीग दोनों की ओर से घोषणा है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों को सभी नागरिक अधिकार समान रूप से दिये जायेंगे और उन्हें धार्मिक और सांस्कृतिक आचार-व्यवहार की पूर्ण स्वतन्त्रता होगी। नैनीताल हिन्दु-स्तान ही तो है। यहाँ मुसलमानों को कौन खाये जा रहा है ?"

कनक ने नैयर की बात सहसा नहीं मान ली। वह बोली—"जीजा जी, यहाँ की बात दूसरी है। यहाँ कांग्रेस का शासन है। कांग्रेस तो विभाजन चाहती ही नहीं थी, वह तो मुसलमानों को भी साथ सन्तुष्ट रखना चाहती थी। काँग्रेस हिन्दू-मुसल-मानों को दो भिन्न जातियाँ भी नहीं मानती।"

नैयर ने निश्चय कर लिया था कि उसे लाहौर जाने की आवश्यकता नहीं है। संध्या को क्लब में भी इसी विषय पर चर्चा होना अनिवार्य था। जैसे ही नैयर क्लब

पहुँचा, पाँडे—नैनीताल का एक वकील—ने कहा, "तुम तो लाहौर जाओगे ही, तुम्हें तो जिन्ना ने आश्वासन दिया है।"

नैयर सदा ही आबादियों के परिवर्तन को अव्यावहारिक बताता था। उसने कह दिया कि जायेंगे ही। वहाँ उनकी बातें एक सरदार जी भी सुन रहे थे। नैयर ने कहा कि शासन का अवसर मिलते ही मुस्लिम लीग के लोगों की हीनता की भावना मिट जाएगी, यद्यपि अभी उनके मन में हिन्दुओं के प्रभुत्व की आशंका है।

यह सुनते ही सरदार जी ने तर्जनी उठा कर अँग्रेजी में ऊँचे स्वर में चेतावनी दी—नहीं-नहीं, तुम कह क्या रहे हो? यह घोषणा केवल शब्दों का जाल है। मुसलमानों के मन में हिन्दू-सिक्खों के प्रति गहरा द्वेष भरा है। मुझे जवाब दीजिये, इन्टेरिम कैबिनेट में मुस्लिम मंत्रियों को कांग्रेसी और हिन्दू मंत्रियों से कौन अधिकार कम था? लेकिन मुस्लिम लीग के मंत्रियों ने कभी काम चलने ही नहीं दिया। हर कदम को असम्भव बना देते रहे। सर्दार जी का स्वर ऊँचा होता जा रहा था, "वे सहयोग चाहते ही नहीं, किसी शक्ल में नहीं चाहते। वह तो हम पर प्रभुत्व चाहते हैं। आखिर गाँधी को भी पटेल और नेहरू की व्यवहारिक बात माननी ही पड़ी।"

अचकन चूड़ीदार पायजामा पहने एक और पहाड़ी सज्जन आगे बढ़ आये थे। वे नैयर के समर्थन में बोले—"लेकिन हिन्दू और मुसलमान सदा ही युद्ध और परस्पर हत्या की अवस्था में तो रह नहीं सकते। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान तो बन गया, फिर भी दोनों को सहयोग से ही रहना पड़ेगा या दोनों ओर से तोपें ही चलती रहेंगी? हिन्दुस्तान में मुसलमान रहेंगे तो सिद्धांन्त रूप से हिन्दुओं को भी पाकिस्तान में रहना चाहिए। राजनैतिक रूप से यह आवश्यक भी है। गाँधी जी भी यही कहते हैं।"

गांधी कहता है," "सर्दार जी ने उत्तेजना से टोक दिया, "गांधी पहले विभाजन का भी विरोध करता था। गांधी कहता था, विभाजन मेरी लाश पर होगा! अब उसे अपनी गलती माननी पड़ी या नहीं, गांधी तुम्हारा खुदा है। कोई गांधी को शैतान समझते हैं। उस की बात को फरेब समझते हैं। वे उस की बात कैसे मानेंगे?"

नैयर ने सर्दार जी की उत्तेजना का कोई उत्तर नहीं दिया परन्तु बोला—"कांग्रेस और लीग के नेताओं ने व्यवहारिक दृष्टिकोण से एक नीति स्वीकार की है तो संदेह क्यों किया जाये?"

पांडे शांति से बोला—"लीग का दृष्टिकोण ही दूसरा है। वे लोग हिन्दू और मुसलमान को दो भिन्न जातियाँ मानते हैं। मिल कर रहना चाहते तो दो जातियों का सिद्धान्त क्यों बनाते? अलग पाकिस्तान की माँग क्यों करते?"

नैयर बोला—"परन्तु हम दो जातियाँ नहीं समझते। हमें दिखाना है कि महत्व सम्प्रदाय का नहीं देश का है। पंजाब मेरी मातृभूमि है, मेरा वतन है।"

पाण्डे ने नैयर की बात के प्रति वितृष्णा प्रकट करने के लिए गर्दन पीछे डाल ली और बोला—"यू आर सिली नैयर! क्या जर्मन यहूदी जर्मनी को अपनी मातृ-

भूमि नहीं मानते थे ? हिटलर ने सब को निकाल कर बाहर कर दिया ? अच्छा सुनो ! पन्द्रह अगस्त को पाकिस्तान बन जायगा।" पाण्डे के स्वर में गर्जन आ गया, "इसके बाद गांधी से कहना पाकिस्तान में जाकर लोगों का हृदय परिवर्तन करें !" पाण्डे ने मुक्का उठाकर चेतावनी दी, जिन्ना अपनी सीमा में उसके प्रवेश का निषेध कर देगा और यदि निरषेध कर देने पर भी कोई उसके देश में प्रवेश करेगा तो जिन्ना का उसे गोली मार देना भी अन्तरराष्ट्रीय नियम से न्याय होगा। उस समय आप 'रघुपति राघव राजाराम' चाहे जितना कीर्तन कीजियेगा, अन्तरराष्ट्रीय न्याय से, पाकिस्तान के विरुद्ध सैनिक कार्रवाई करने का अधिकार आप को नहीं होगा। "

सर्दार जी ने संतुष्ट होकर कहा—"यस देयर यू आर।"

नैयर ने सिर ऊँचा कर तर्क किया—"अन्तरराष्ट्रीय कानून भी मनुष्य के ही बनाए हुए हैं। वे कोई पूर्ण आदर्श नहीं हैं। हिटलर और उसके गिरोह पर व्यापक नर-हत्या के लिए मुकद्दमा चलाया जाना, नया अन्तर्राष्ट्रीय आदर्श है। मुझे भी मानवता में विश्वास है। मुझे आशा है कि गांधी अपने सदाशय से जिन्ना के हृदय में विश्वास उत्पन्न कर सकेगा।"

"नेवर ! नेवर ! इम्पोसीब्ल !" सर्दार जी गरज उठे।"

पांडे ने हाथ उठाकर सर्दार जी को धैर्य रखने का संकेत कर नैयर को चुनौती दी—"तुम मुझे एक उदाहरण दे दो, किस मामले में गांधी जिन्ना को अपने सदाशय का विश्वास दिला सका है ?"

"अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।" नैयर ने भरोसे से कहा, "क्राइस्ट ने तो मरने के बाद ही अपने विरोधियों का विश्वास पाया था।"

"ओ, हो, हो !" पांडे ठहाका लगा कर हँस पड़ा, "वह तो क्राइस्ट के मरने के हजार साल बाद हुआ और दोस्त, उसके जाने क्या-क्या आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक कारण थे। क्राइस्ट का धर्म तमाचा खाने के लिए गाल आगे कर देने से नहीं, तलवार के जोर से ही फैला था, तुम भी इस बात से इन्कार नहीं कर सकोगे। आज कितने क्रिश्चियन एक तमाचा खाकर दूसरा गाल सामने कर देते हैं ? अँग्रेजों ने अपना गाल कितनी बार तुम्हारे सामने किया है ? खैर, तुम्हारे तर्क के प्रति तो नहीं, तुम्हारे विश्वास के प्रति अवश्य सहानुभूति है।"

"वेल आबकार !" पाण्डे ने बार-रूम की ओर घूम कर ऊँचे स्वर में बैरे को पुकारा, "नैयर साहब के लिए एक बड़ा ह्विस्की।"

"एक हमारे लिए भी।" सर्दार जी ने पुकारा और अपना शेष गिलास एक साँस में खींच कर बैरे को थमा दिया।

नैयर ने आराम से खड़े होने के लिए कदम खोल दिया और पतलून की जेबों में हाथ धँसा कर जरा कमर तोड़ कर बोला—"पांडे विश्वास रखो, यह सब उपद्रव, स्पर्धा और हिंसा चल नहीं सकती।"

बहुत से लोग उन दोनों को घेर कर बोलने लगे थे।

सीधे बात करना सम्भव न रहा था। वे दोनों ब्रिज की टेबल की ओर बढ़ गये।

●

कनक ने पुरी को लिख दिया था कि ठहरने का प्रबन्ध हो गया है। उसने सोचा था कि होटल में ठहरा देगी। देसी होटल सभी भर गये थे। पुरी की तार आ गयी तो उसने अस्टोरिया होटल में फोन करके बात कर ली। [होटल वालों ने इस शर्त पर कमरा दिया था कि उसे बीस अगस्त तक छोड़ दिया जाये। कनक ने जे० डी० पुरी के नाम कमरा रिजर्व करा दिया।

कनक काठगोदाम से आने वाली बस के टाइम से पहले ही लाइब्रेरी में जाकर बैठ गयी। सुबह से ही गहरे बादल छाये हुए थे, कभी रिमझिम बरसते, कभी ठहर जाते और कभी जोर से छींटा आ जाता। कनक कांता की बरसाती और अपनी छतरी ले आयी थी पर बरसाती आकाश के नीचे बस के अड्डे पर प्रतीक्षा करना कठिन था। अड्डे पर पहले पहुँचना अनिवार्य था, क्योंकि यह स्थान पुरी के लिए अपरिचित था।

कनक डाकखाने के बराम्दे में जाकर खड़ी हो गयी। वर्षा रुक गयी। एक आध बूंद पड़ रही थी। इतने में एक बस आई, कनक जल्दी से आगे बढ़ गई, परन्तु उस बस से पुरी नहीं उतरा। फिर हल्की-हल्की बूंदें बरसने लगी थीं।

काठ गोदाम से दूसरी बस आयी। कनक बस के दरवाजे पर नज़र लगाये खड़ी थी। उसे कुलियों को हटा कर बस से उतरता हुआ पुरी दिखाई दिया। कनक उतावली हो रही थी, परन्तु भीड़ उसे रास्ता नहीं दे रही थी।

दोनों एक-दूसरे को देखकर गद्गद् हो गये। पुरी आदमियों से खींची जाती रिक्शा पर बैठने को तैयार नहीं था, परन्तु वर्षा के तेज छींटे ने उसके संकोच को समाप्त कर दिया, दोनों रिक्शा पर बैठ गये।

कुलियों ने रिक्शा को सामने और दायें-बायें तिरपालों से ढँक दिया। कनक और पुरी पर्देदार डोली में बन्द हो गये। उन्हें न सड़क दिखाई देती थी न कुछ और। रिक्शा दौड़ पड़ी। बन्द डोली में दोनों की आँखें मिलीं। उस अत्यन्त संकुचित सीमा ने उन्हें असीम स्वतन्त्रता दे दी। उन्हें न रिक्शा के पर्दों पर पड़ती बूंदों की टप-टप, न पानी भरी सड़क पर कुलियों के नंगे पाँवों की छप-छप और न रिक्शा की घण्टी की टन-टन सुनाई दे रही थी।

एकाएक कनक को लगा कि रिक्शे की गति बहुत मन्द पड़ गयी है। उसने थोड़ा सा परदा हटाकर झाँका तो पता चला कि मल्लीताल की चढ़ाई आ गयी है। कनक ने पुरी से कहा कि मैं तो अगले चौक से घर चली जाऊँगी। तुम होटल पहुँच कर नहाओ और लंच लेकर विश्राम करो, मैं संध्या पाँच या छः बजे आऊँगी तो बातें होंगी।

पुरी के लिए नैनीताल के सबसे अच्छे यूरोपियन होटल का परिचय जीवन का नया अनुभव था। होटल के दफतर से चुस्त सूट पहने एक आदमी उसे सफेद वर्दी पहने बैरे के सिपुर्द कर आया। बैरा पुरी का प्रत्येक कार्य करने को तत्पर था।

बैरे ने पुरी से पूछ कर गुसलखाने में नहाने के लिए गरम पानी रख दिया। उसके कपड़े हैंगर में लगा कर आलमारी में टाँग दिए।

पुरी विश्राम के लिए स्प्रिंगदार पलँग पर लगे कोमल बिस्तर पर बैठा तो एक बार उछल सा गया। पुरी लाहौर की बरसात की उमस भरी गर्मी से आया था। उसे नैनीताल में कुछ सर्दी मालूम हुई, उसने बिस्तर पर रखा कम्बल ओढ़ लिया। थकान के कारण पुरी को लेटने के कुछ देर बाद ही नींद आ गई।

सवा छः बजे के लगभग पुरी की नींद खुली तो उसने देखा कि कुर्सी पर बैठी कनक मुस्करा रही है। कनक ने बताया कि आज साढ़े आठ बजे तक घूमने की स्वतन्त्रता है, सब लोग सिनेमा गए हैं, और जीजा जी क्लब में हैं।

कनक ने पुरी को नैयर से की गई प्रतिज्ञा और अवस्थी जी द्वारा दिया गया दो सौ की नौकरी का आश्वासन आदि सब कुछ निःसंकोच होकर बता दिया। जब पुरी ने कहा कि नौकरी का आश्वासन तो तुम्हारे लिए है, तो कनक ने उत्तर दिया कि जब मुझे नौकरी मिल सकती है तो तुम्हारे लिए क्या कठिनाई होगी। कनक अवस्थी जी की सरलता, स्पष्टवादिता और उदारता की प्रशंसा करने लगी।

कनक और पुरी होटल से बाहर निकले तो सूर्य पश्चिम की ओर की पहाड़ियों के पीछे झुक रहा था। चौथे पहर से बादल बिखर गये थे। बादलों के बड़े-बड़े, मैले-उजले टुकड़े आकाश में जहाँ-तहाँ उड़े जा रहे थे। कुछ बादल देवदारों और घनी वनस्पती से ढँकी पहाड़ियों के कन्धों पर आ टिके थे। पूर्व की ओर की पहाड़ी की रीढ़ पर सूर्य की विदा लेती किरणें मखमली, सुनहली हरियावल पर चमक रही थीं। वर्षा के कारण दिन भर के रुके गाहक बाजार में उतर आये थे। अच्छी-खासी भीड़ थी। बाजार लाँघ कर दोनों अस्पताल के नीचे और मैदान के ऊपर की सड़क से उतर रहे थे।

"हैं! झील यहाँ ही है।" पुरी के कदम ठिठक गये। उसकी दृष्टि दायीं ओर थी।

"हम रिक्शा में झील के किनारे-किनारे ही तो आये थे! रिक्शा बन्द थी, तुम देख नहीं सके। बस से उतरे थे तब भी नजर नहीं गयी?" कनक ने पूछा।

"कहाँ देख पाया था। उस समय तो भीड़ ने पागल बना दिया था।" पुरी झील की ओर आँखें गड़ाये रहा।

इतनी देर तक कनक को अपनी बातों के सिवा और कुछ याद ही नहीं आया था। अब पूछा—"तारा बहन का विवाह ठीक-ठाक हो गया?"

पुरी की गर्दन झुक गयी थी। रुँधे गले से धीमे-धीमे बोला—"विवाह ऐसे समय जैसा हो सकता था, हो गया था। वह बेचारी रही भी नहीं।"

"क्या?" कनक ने आतंक से गहरी साँस ली।

पुरी ने संक्षेप में पिता जी, ताया जी और समधियों की इच्छा के कारण विवाह कर दिया जाने, उसी रात बन्नी के हाते पर आक्रमण होने और तारा के आग से बचायी न जा सकने की बात बता दी। दुख भरे शब्दों में अपनी और अपने परिवार की आलोचना की—"लाहौर के ऐसे वातावरण में यह कोई विवाह का अवसर

था ? पर लड़कियों के अभिभावक तो बोझ उतार देने का अवसर चूक जाना नहीं चाहते।"

"तारा बहिन क्या यह विवाह करना नहीं चाहती थीं ?" कनक ने पुरी की स्पष्टवादिता से साहस पाकर पूछ लिया, "सुनते हैं, उस लड़के की काफी बदनामी थी ?"

"नहीं, मैं तो···किसने कहा तुमसे ?" पुरी ने पूछा और बोला, "तारा की सगाई तो सन् ४४ के शुरू में हो गयी थी। मैं तो जेल में था।"

"कहते हैं, तारा ने विवाह का विरोध भी किया था।" कनक ने पूछा।

पुरी पल भर सोच कर बोला—"क्या तुम्हारा जीजा नैयर कहता है ?"

"हाँ, उन्होंने ही मुझसे कहा था।" कनक ने स्वीकार किया। पुरी से वह कोई बात क्यों छिपाती !

पुरी ने खिन्नता प्रकट की—"गलियों में बीसियों तरह की बातें उड़ती हैं। सुखलाल के विरोधी भी तो हैं। उन लोगों ने बात उठाई थी कि ऐसे लड़की-लड़के का क्या मेल ? मैं तो साफ स्वीकार करता हूँ, मुझे लड़का विशेष पसन्द नहीं था पर तीन बरस सगाई रह चुकी थी। सुखलाल, हमारे ताया जी, पिता जी सभी के लिए यह सम्मान का प्रश्न था। तारा की ओर से कोई बात उठे बिना मेरा बोलना जँचता न था। चाहे हिन्दू लड़की के पुराने संस्कार हों या जो कुछ हो, उसने आपत्ति नहीं की तो मैं क्या कहता ?"

"दोनों एक-दूसरे से परिचित नहीं थे ?" कनक ने जिरह की।

"मुझे उसका विशेष अनुमान नहीं, परन्तु मेरे अज्ञान में या मेरे जेल में रहते समय अगर कुछ हुआ तो मुझे मालूम नहीं।" पुरी ने उत्तर दिया।

पुरी से इतनी स्पष्ट, निश्छल, यथातथ्य बात सुनकर कनक क्या सन्देह करती ! समझ लिया, नैयर ने पुरी की अन्य झूठी निन्दा की है तो उसने ऐसी कहानी पर विश्वास कर लिया या कुछ बढ़ा भी लिया होगा। कनक को नैयर की चतुरता में छल दिखाई देने लगा। कनक ने उस कथा भरे प्रसंग को फिर नहीं उठाया।

दोनों झील के किनारे-किनारे तल्लीताल तक गये। अँधेरा हो गया था। लौटते समय कुछ देर तक बेंच पर बैठे। कनक पुरी को होटल के फाटक तक पहुँचाने गई।

सुख और समृद्धि को प्राप्त कर लेने की उत्तेजना ने नींद को मस्तिष्क से दूर भगा दिया था। बहुत देर के बाद पुरी सो पाया।

कनक ने पुरी को समझा दिया था कि नैयर, कांता या कंचन देख लेंगे तो कुछ कह न सकने पर भी खिन्न तो होंगे ही। इससे कुछ लाभ न था। दूसरे दिन प्रातः ही से वे घूमने निकल गए। चलते-चलते अपने भविष्य की योजना पर विचार करते रहते। भविष्य के प्रश्न को अवस्थी जी ने आश्वासन देकर आशामय और उत्साहपूर्ण बना दिया था।

पुरी ने नैनीताल आकर जिस सुख और सन्तोष का परिचय पाया था, वह उसकी कल्पना की अति उच्छृङ्खल उड़ानों से भी परे की वस्तु थी। पुरी का मस्तिष्क उस सुख को स्थायी बना लेने के लिए पूर्ण रूप से सजग हो गया था। अगले ही दिन उसने कनक से लखनऊ चल कर भावी जीवन की स्थिर नींव डालने के लिए बात की। बहन और जीजा से अनुमति माँगने में समाज के संस्कारों की झिझक अनुभव हुई। अतः कनक ने बात दूसरे दिन पर टाल दी।

कनक पहले भी काफी समय बँगले से बाहर बिताती थी। नैयर और कांता को उसके मानसिक क्लेश के प्रति सहानुभूति थी, अतः वे उससे कुछ नहीं कहते थे। परन्तु अब कुछ दिनों से कनक अधिकतर घर से बाहर ही रहती थी। घर से बाहर आने-जाने के समय उसकी मुद्रा में परिवर्तन आ गया था। सबका ध्यान उस ओर गये बिना नहीं रहा। सबके कौतूहल का समाधान भी शीघ्र ही हो गया।

आठ अगस्त को तीन बजे कनक आई और साड़ी बदल कर कांता से बोली कि मैं जा रही हूँ। कांता ने कहा भी कि मिसेज बाधवा के यहाँ चाय पर जाना है, परन्तु कनक ने कहा कि मैं मिसेज पंत से पहले ही आज के लिए कह चुकी हूँ। वे मेरी प्रतीक्षा करती रहेंगी। कांता ने कहा कि अपने जीजा जी से तो पूछ लो, परन्तु कनक यह कह कर नीचे उतर गई कि आप से तो कह दिया है।

कनक और पुरी बातचीत करते हुए भुवाली रोड पर काफी दूर चले गए थे। साढ़े-छः के लगभग वे झील की ओर जाने वाली सड़क से उतर रहे थे। कनक को पता नहीं था कि बाधवा-परिवार उस ओर रहता है। तीसरे मोड़ पर कदम रखते ही पुरी और कनक ने देखा कि नैयर, कांता आदि सब बाधवा परिवार के मकान के सामने खड़े बातें कर रहे थे।

दोनों कुछ सहम गए। नैयर ने आत्मीयता के ऊँचे स्वर में पुकार कर पुरी की ओर हाथ बढ़ा दिया और पूछने लगा कि मिसेज पंत के यहाँ आपकी मीटिंग समाप्त हो गई? पुरी का उत्तर सुनने से पहले ही नैयर ने बाधवा को उसका परिचय दिया। बाधवा ने पुरी से क्लब में आने की बात कही तो नैयर ने ही उत्तर दिया कि इनके पास बरबाद करने के लिए समय कहाँ है?

कनक और पुरी को नैयर, कांता, कंचन आदि के साथ ही चलना पड़ा। नैयर पुरी से बातें करता रहा कि नैनीताल कब आये, और कहाँ ठहरे? पुरी ने अस्टोरिया होटल का नाम बताया तो नैयर को कुछ विस्मय हुआ।

कांता तो घर चली गयी, परन्तु नैयर शेष सबको क्लब ले गया। नैयर ने क्लब में पुरी का परिचय लाहौर के विशिष्ट लेखक और पत्रकार के रूप में कराया।

नैयर ब्रिज की टोली में जा बैठा, कंचन कैरम खेलने चली। पुरी और कनक थोड़ी देर तो पत्रिकाओं से लदी मेज के पास बैठे पत्रिकाओं के पन्ने पलटते रहे। फिर पुरी ने बाहर चलने की बात कही तो कनक ने कहा कि अब उसका बाहर जाना ठीक नहीं होगा। सो पुरी नैयर से विदा लेकर चला गया। जाते-जाते वह कनक को लखनऊ चलने के सम्बन्ध में तय करने को फिर से कह गया।

नैयर क्लब में कनक से नहीं बोला। कनक ने सोचा कि इस निरर्थक नाराज़गी की मुझे चिन्ता नहीं, परन्तु ऐसी अवस्था में बहन और जीजा से लखनऊ जाने की अनुमति माँगना भी ठीक नहीं, क्योंकि उन्हें शक होगा कि पुरी के साथ जाना है। परन्तु टालने का भी समय नहीं था। पुरी परेशान हो रहा था। उन दोनों ने १५ अगस्त, देश के स्वतन्त्र होने पर अपना नया जीवन आरम्भ करने का निश्चय कर लिया था।

प्रात: नैयर बरामदे में टहल रहा था। कनक बात करने के लिए उसकी ओर गयी, परन्तु उसकी चुप्पी और गम्भीरता से अनुत्साहित हो लौट गयी। वह कांता के पास गई और उसके काम में हाथ बँटाने लगी। फिर उसने धीरे से कान्ता से दूसरे दिन लखनऊ जाकर नौकरी के लिए यत्न करने की अनुमति माँगी। कांता ने उत्तर दिया कि इतनी दूर अकेली कैसे जायेगी ? और पिता जी न जाने क्या कहें। इस पर कनक ने कहा कि जहाँ भी काम होगा वहाँ अकेले ही जाना होगा, और मेरे काम करने पर पिता जी को क्या आपत्ति होगी। कांता अपने घर की बातें ससुराल वालों को नहीं सुनाना चाहती थी, अत: उसने कनक से कह दिया कि वह पिता जी को पत्र लिख कर पूछ ले।

नैयर भी इनकी बातें सुनकर वहीं आ गया। कान्ता ने कनक का प्रस्ताव और अपना सुझाव दोनों नैयर को बता दिए। नैयर ने भी कांता के सुझाव का समर्थन किया।

कनक ने कहा कि लाहौर से उत्तर आने में कई दिन लग जायेंगे, मैं तो आज या कल जाऊँगी। इस पर नैयर ने पूछ लिया कि क्या किसी से खास अपाइंटमेन्ट है ? कनक के स्वीकार कर लेने पर नैयर ने कहा कि विवाह होने तक संयम रहना चाहिए। कनक इस बात से बिगड़ गई, वह बहन और जीजा से बहस करने लगी कि उसने कोई बुरा काम नहीं किया है। आप लोग भी तो शादी से पहले मिलते रहते थे। अपनी बातें याद करिये।

इतना सुनकर नैयर ने कहा, "संयम ही संस्कृति है। व्यवहार रूढ़ि बनकर संस्कृति कहलाता है। मोटर की तेज चाल उसका गुण है, परन्तु जिस मोटर में ब्रेक न हो, वह जरूर प्राणों का संकट बनेगी।"

कनक को नैयर की बातें अच्छी नहीं लगीं, वह जल-भुन कर गुमसुम हो गयी। उसने पिता जी को पत्र लिखा और उसे डाक में डालने के लिए घर से चल दी। उसने होटल जाकर पुरी को सारी स्थिति बतायी। पुरी को अकेले ही लखनऊ जाकर अवस्थी जी से मिलने का निश्चय करना पड़ा। कनक ने पुरी को अवस्थी जी का और मिसेज पंत का पता बता दिया और अवस्थी जी के नाम एक पत्र भी लिख दिया।

पुरी लखनऊ चला गया था। कनक दुविधा में थी। उसे विश्वास था कि लखनऊ में नौकरी की व्यवस्था होते ही पुरी उसे बुला भेजेगा और तब तक पिता जी की अनुमति न आयी तो वह क्या करेगी। उसने नौ तारीख को लाहौर पत्र लिखा

था, उसका उत्तर बारह नहीं तो तेरह तक तो आ जाना चाहिए। उसने निश्चय कर लिया कि वह तेरह को नहीं रुकेगी, चाहे जो हो।

डाक के समय कनक की दृष्टि फाटक पर लगी रहती। उसे पिता जी के और उससे भी अधिक पुरी के पत्र की प्रतीक्षा थी। तेरह को डाकिया आया, कनक उत्सुकता से आगे बढ़ी और उसने पत्र ले लिया। पत्र था तो पिता जी का, परन्तु नैयर के नाम था। उसने पत्र चुपचाप नैयर की ओर बढ़ा दिया।

नैयर ने पत्र एक बार मन ही मन पढ़ा और फिर पढ़कर सबको सुना दिया। कनक का पत्र पंडित जी को ११ तारीख़ को ६ बजे मिल गया था। उन्होंने उसी समय उत्तर लिख कर बड़े डाकखाने में डलवा दिया था। अभिप्राय था कनक अभी प्रतीक्षा करे। पंडित जी ने लिखा था कि मुस्लिम लीग और कांग्रेस की भावी सरकारों द्वारा अल्प-संख्यकों को सुरक्षा का आश्वासन देने का प्रभाव अच्छा हुआ है। अपेक्षाकृत शांति है। उन्होंने कनक के अपने पैरों खड़े होने और स्वतन्त्र राष्ट्रीय सरकार के काम में सहयोग देने की भावना की सराहना की थी, परन्तु लखनऊ जैसी दूर जगह में उसके जाने से पहले स्वयं यहाँ की कुछ खोज-खबर ले सकने के लिए प्रतीक्षा करने को कहा था। अन्त में लिखा था कि १५ अगस्त का परिवर्तन शांति से हो जाये तो फिर शांति का विश्वास हो जाएगा। वे १८ अगस्त तक नैनीताल पहुँच कर सब बातों पर विचार करेंगे।

कनक को पिता जी की पुरानी आदत पर क्रोध आ गया। ना नहीं करेंगे, हाँ भी नहीं करेंगे। रबड़ की जंजीर गले में डाल देंगे जो कुछ खिंच जाये पर बाँधे भी रहे। कनक ने उसी समय साफ़-साफ़ कह दिया—"मैं अवस्थी जी को वचन दे चुकी हूँ। मुझे आज या किसी भी समय लखनऊ से पत्र मिल गया तो मैं रुक नहीं सकती।"

कांता ने क्रोध से कहा—"यह तूने कैसे नये तरीके शुरू किए हैं? बाबा, हम तुझे नहीं रोकेंगे। जाना है तो ढंग से विवाह करके चली जा। फिर तू जाने।"

नैयर ने भी कनक को सुना कर कांता से कहा—"पिता जी की बात नहीं माननी थी तो उन्हें लिख कर पूछने की क्या आवश्यकता थी?"

कनक अपनी बात पर दृढ़ रही। वह जानती थी कि पुरी का पत्र आ जाने पर वह किसी तरह रुक नहीं सकेगी। वह कांता और नैयर की बातों का उत्तर कांता को दे रही थी। तभी अखबार वाला आ गया।

नैयर ने कनक की बात सुनते-सुनते भी पहले पृष्ठ पर नजर डाली और बोल उठा—"लार्ड माउंटबैटन कल सुबह कराची जाकर दस बजे पाकिस्तान सरकार को शासन-सत्ता सौंप देंगे। १४ अगस्त रात के बारह बजने पर पाकिस्तान के गवर्नर जनरल कायदे आजम जिन्ना हो जायेंगे। दिल्ली में रात के बारह बजने पर डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद की अध्यक्षता में भारत की कांस्टीच्यूएंट असेम्बली शासन-सत्ता सँभाल लेगी।"

उसी साँस में वह कह गया—"गाड़ी में एक भी जीवित व्यक्ति शेष न होने

के कारण गाड़ी लाहौर स्टेशन पर रोक दी गयी । अनुमान किया जाता है, शाहदरा स्टेशन पर एक हजार से अधिक हिन्दू स्त्री-पुरुषों और बच्चों की हत्या हुई है । गाड़ी को लाशों से भर कर शाहदरा स्टेशन से लाहौर की ओर भेज दिया गया । लाशों से भरी गाड़ी के पूर्व की ओर जाने के दुष्परिणाम का विचार कर अधिकारियों ने गाड़ी को लाहौर में स्थगित कर दिया । गाड़ी में मारे गए व्यक्तियों के नाम-धाम इत्यादि के विषय में कोई सूचना पा सकना सम्भव नहीं है ।" पत्र में ११ अगस्त की रात लाहौर में बहुत अधिक स्थानों पर आग लगाई जाने और हिन्दुओं के सामूहिक रूप से लाहौर छोड़ने के भी समाचार थे ।

"पिता जी ने ११ तारीख की सुबह पत्र लिखा और दोपहर बाद यह क्या हो गया...!" कांता का स्वर घबराया हुआ था । सब मौन रह गए, जाने क्या हुआ होगा ?

कनक का मन हजार से अधिक हिन्दू स्त्री-पुरुषों और बच्चों के तलवारों, बर्छों और गोलियों की मार के सम्मुख बिलबिला कर आर्तनाद करते हुए समाप्त हो जाने की कल्पना से अधिक और कुछ न सोच सका ।

१५

लाला सुखलाल सोमराज की एक बहिन के साथ बहू को विदा कराने गये थे । मोटर बन्नी के हाते की गली के सिरे पर आकर खड़ी हुई । सोमराज की माँ और बहनें गली के सिरे पर आ गईं । उन्होंने घूँघट से मुँह ढँके बहू को मोटर से उतारा, सहारा देती हुई अपने घर के द्वार पर ले आईं । सोमराज के इस विवाह में बहू के स्वागत के लिए, उसके गृह-प्रवेश के अवसर पर सब शगुन पूरे किए ।

ससुराल की स्त्रियों ने तारा को एक बड़ी सी कोठरी में बैठा कर चारों ओर से घेर लिया । मायके से बिदाई के समय उसे कीमती रेशमी कपड़े पहनाये गये थे । जुलाई की बादल घिरी दोपहर की उमस से उसका शरीर पसीना-पसीना हो रहा था । एक ओर फर्श पर बिजली का पंखा रख दिया गया था ।

स्त्रियों से घिरी हुई तारा को पंखे की हवा नहीं मिल रही थी । मुँह-दिखाई की रीति की गई । लाला सुखलाल कई बार बुलाने पर खाँसते हुए आये और तारा के सामने बैठ गये । ससुर ने सोने की एक चम्पाकली बहू की गोद में डाल दी और आशीर्वाद देकर उठ गये ।

ससुर के बाद सास ने रीति के अनुसार बहू का मुँह देखा और सोने के जेवर सहित आशीर्वाद दिया । दूसरे निकट-सम्बन्धियों ने कर्णफूल या अँगूठी देकर आशीर्वाद दिया । सास और ननदें आशीर्वाद देने वाले का परिचय तारा को देती जा रही थीं । पड़ोस का सम्बन्ध मानने वाली स्त्रियों ने परिवार से अपने व्यवहार के

अनुसार, किसी ने मुँह दिखाई के पाँच, किसी ने दो और किसी ने सवा रुपया बहू की गोद में डाला।

परिस्थिति के कारण विवाह बिना किसी समारोह और प्रदर्शन के किया गया था, फिर भी लाला सुखलाल के यहाँ पंद्रह-बीस अत्यन्त समीपी लोग खाने पर बुलाए ही गये थे। पूरा घर कढ़ाई में खौलते घी, मिठाई और मसालों की गंध से महक रहा था। बर्तनों के खटकने की झंकारें और लोगों से भोजन कर लेने के अनुरोध की पुकारें बार-बार सुनाई दे जाती थीं।

तारा को नहाने के बाद भी रेशमी और रंगीन कपड़े ही पहनने की मजबूरी थी। तारा नहा चुकी तो सास ने उसके भोजन के लिए थाल परोस कर भेज दिया। ससुराल में आने के पहले दिन की सिहरन, संकोच और नये वातावरण के आतंक में कौन बहू अच्छी तरह खा पाती है। तारा को भूख की अपेक्षा प्यास ही अधिक सता रही थी। बर्फ से ठंडे किये जल का एक गिलास उसने पी लिया, परन्तु कुछ खाये बिना भी छुट्टी नहीं हो सकती थी। डर रही थी, न खाना कहीं मिज़ाज ही न समझ लिया जाये। किसी तरह छोटी-छोटी दो पूरियाँ खाईं। उस समय भी वह सतर्क थी कि आस-पास बैठी लड़कियाँ और स्त्रियाँ उसके उँगलियों से पूरी तोड़ने, ग्रास मुँह में डालने, खाने और गिलास उठा कर होठों से लगाने के ढंग को ध्यान से देख रही थीं। तारा खा चुकी तो सास ने घेरा डाले लड़कियों को हटा कर उसे कुछ समय विश्राम के लिए अकेली लेट जाने का अवसर दे दिया।

सन्ध्या समय भोजन के बाद एक ननद तारा को तीसरी मंजिल पर ले गयी और एक कमरे में पलँग पर बैठा आयी। तारा ने अकेले बैठे-बैठे कमरे में चारों ओर देखना आरम्भ किया। दीवारों पर कुछ तस्वीरें और कुछ कलेन्डर थे। तारा ने सामान देख कर अन्दाज लगाया कि घर में पैसा बहुत है, पर आधुनिक सुघड़पन नहीं है।

तारा ने समझ लिया, प्रथम परिचय का क्षण अत्यन्त निकट आ गया है। थकावट के कारण वह एक ओर आड़ी होकर लुढ़क गई, और आहट पर कान लगाये रही कि जैसे ही पदचाप सुनाई देगी वह उठ जायेगी।

तारा ने जैसे ही आहट सुनी, वह सिमिट कर, झीने दुपट्टे का घूंघट मुँह पर खींच कर एक ओर बैठ गयी। सोमराज आया, वह लम्बा छरहरा जवान था, तारा को भला लगा। सोमराज ने दरवाजा मूँद कर चिटखनी चढ़ा दी। तारा ने रोमांच से सिहरन अनुभव कर गर्दन झुका ली।

सोमराज पलँग की ओर आया। एक क्षण मौन खड़ा रहा जैसे अवसर के लिए उचित शब्द सोच रहा हो। तारा के कान उन शब्दों के लिए आतुर थे, जैसे सीप स्वाती नक्षत्र की बूंद पा लेने के लिए अपने पुट खोल देती है।

"बहुत शरम आ रही है?" तारा ने स्वर की कठोरता अनुभव की। उसकी गर्दन तनिक और झुक गई।

"यहाँ शरम आ रही है? साड़ी पहन कर उघाड़े सिर, माल रोड और

अनारकली में, जुलूसों में घूमते शरम नहीं आती थी ?''

सोमराज कड़े अफसरी ढंग से जवाब तलब कर रहा था।

तारा की साँस रुकी और फिर गहरी चलने लगी। वह निश्चल बैठी रही।

सोमराज ने उत्तर के लिए अधिक अवसर न देकर पूछा—''तू यहाँ शादी नहीं करना चाहती थी न ?''

तारा मौन, निश्चल रही।

''किस से है तेरी दोस्ती ?'' सोमराज ने दाँत पीस कर पूछा।

तारा मौन रही। मुँदी हुई आँखों में आँसू आ गए। निचला होंठ दाँत से काट लिया।

सोमराज ने उसके कन्धे को घूँसे से ठेल कर धमकाया—''बोलती क्यों नहीं ? किसके साथ...?''

तारा का सिर उठ गया। आँसू बहती आँखों से सोमराज को घूर कर उसने दबे हुए स्वर में फुंकारा—''चुप !'' और मुँह अँजली में छिपा लिया।

तारा के अँजली से ढँके चेहरे पर दायें और बायें से दो जबरदस्त थप्पड़ पड़ गये।

तारा ने चेहरे पर से हाथ हटा कर चमकते आँसुओं से भरी लाल आँखों से सोमराज की ओर घूर कर धमकाया—''खबरदार, हाथ उठाया तो !''

सोमराज का अपने क्रोध पर लगाया हुआ बाँध टूट गया। उसने तारा को चोटी से पकड़ कर पलँग के नीचे गिरा दिया। दो लातें मार कर दाँत पीसते हुए वह गाली दी जो तारा ने कभी किसी भद्र पुरुष के मुख से नहीं सुनी थी—''भूखे मास्टर की औलाद, तेरी यह हिम्मत कि मुझसे शादी के लिए मिज़ाज दिखाये ?...बी० ए० पढ़ने का बहुत घमण्ड है ? तेरी जैसी बीसियों को मैंने देखा है ! देखूँगा तुझे ! गली-गली कुत्तों और गधों से न रौंदवा दिया...।'' सोमराज घुटे हुए स्वर में बोल रहा था।

तारा ने आत्म-रक्षा और आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए हाथ-पाँव से यथाशक्ति काम लिया। केवल चिल्ला न सकी। सोमराज अच्छे कद का स्वस्थ जवान था। अपना पूरा शारीरिक बल लगा देने पर भी वह तारा को पूर्ण रूप से कुचल कर अपमान स्वीकार करा लेने का सन्तोष न पा सका। तारा का उसके सम्मुख पूर्ण आत्म-समर्पण न कर देना ही उस का घोर अपमान था।

सोमराज तारा का स्वामी बन कर भी उसे अपमान सह जाने के लिए पूर्णतः विवश न कर सकने के क्षोभ और शारीरिक संघर्ष की थकावट से लेट गया। वह सोच रहा था, इस बदजात औरत से वह अपने अपमान और तिरस्कार का बदला लिए बिना न रहेगा। अब वह जा कहाँ सकती है ? वह उस का सब कुछ तिल-तिल तोड़ डालेगा।

तारा कमरे के कोने में पड़ी सिसकियाँ भर रही थी। वह सोचने लगी कि

यह जालिम उठ कर जाये तो वह गले में दुपट्टे का फंदा लगा कर मर जाये। उसने सोचा कि मेरे साथ ऐसा अन्याय करने वाला भी मर जाये, परन्तु उसके मरने से तारा के दुःख का अंत नहीं हो सकता था। दुःख तो उसके स्वयं मर जाने से ही समाप्त हो सकता था।

तारा का मन चाह रहा था कि चुपचाप घर से निकल कर रावी में कूद जाये। परन्तु नीचे का दरवाजा बन्द था और उसे रास्ता भी नहीं मालूम था।

इतने में ही बन्दूकों के धमाके का स्वर सुनाई दिया और साथ ही चीखें, पुकारें भी सुनाई दीं। सोमराज चौंका और तड़प कर पलँग से कूद गया और कमरे से बाहर निकल गया। तारा ने अनुमान लगाया कि मुसलमानों ने आक्रमण किया है। वह भी उठकर कमरे के बाहर आ गयी।

बाईं ओर पड़ोस से पर्दे के लिए झरोखेदार दीवार थी। दीवार के दूसरी ओर की छत पर कोई नहीं था। वह उस छत पर चली गयी। उस छत से लगते मकान की छत काफी नीची थी, परन्तु तारा मर जाने की परवाह किए बिना उस छत पर कूद गयी। उसके गिरने की आवाज से उस घर के रहने वाले चौंक गए। वह घर मुसलमानों का था।

एक जवान टार्च लेकर ऊपर आया और तारा से पूछने लगा कि वह कौन है और कहाँ से आयी है। परन्तु तारा मौन रही। उस जवान ने नीचे से अपने चाचा को भी बुला लिया। चाचा ने भी वही प्रश्न किए तो तारा ने बताया कि उधर आग लग गयी है, मुसलमान आकर गोली चला रहे हैं, सो मुझे गली में उतरने का रास्ता दे दो।

मुसलमान अपने घर में हिन्दू लड़की को रख कर मुसीबत नहीं उठाना चाहते थे अतः वह जवान तारा को दरवाजा खोलकर गली में पहुँचाने आया। तारा बाहर निकल कर सोचने लगी कि किस ओर जाये? उस जवान ने उसकी दुविधा भाँप ली और बताया कि बायें हाथ से कूचा लाल मिसर से माटी दरवाजे का रास्ता है। तारा बायें घूम गयी।

गली तंग थी, प्रायः सभी मकानों के लोग जाग गये थे। औरतों ने घर बैठे-बैठे ही एक-दूसरे से बातें आरम्भ कर दीं। तारा चुपचाप कदम बढ़ाती जा रही थी। गली में अफवाह और बातचीत उससे आगे फैलती जा रही थी। वह गली के मोड़ के साथ घूम गयी।

अभी वह ज्यादा दूर नहीं गयी थी कि पीछे से आकर किसी ने पकड़ लिया, और उसका दुपट्टा उसके मुँह और आँखों पर लपेट दिया गया। वह मुँह बँधा होने के कारण चिल्ला भी नहीं सकती थी। बेबस, साँस के लिए छटपटाती कंधे पर लदी चली जा रही थी। तारा को उठा कर ले जाने वाला अपने घर पहुँच गया। दरवाजा खुलवा कर अन्दर गया तो उसकी बीवी ने तारा को घर में रखने से इन्कार कर दिया, परन्तु उस आदमी ने बीवी को डाँट कर चुप करा दिया। स्त्री के बहुत

चिल्लाने पर आदमी ने कहा कि इसे घर में थोड़े ही रखना है, इसे खलीफा को बेंच देंगे, खामु-खाह झगड़ा मत करो।

वह तारा को घसीट कर कोठरी में ले गया—आँगन में खड़ी स्त्री ऊँचे स्वर में विरोध करती रही। उस आदमी ने तारा की विवाह के समय पहनाई गयी चूड़ियाँ, गले का हार आदि उतार लिया। तारा काँप रही थी, वह फर्श पर बैठ गयी। इस कल्पनातीत परिस्थिति में उसका मस्तिष्क सोचने योग्य भी नहीं रहा था।

उस मर्द ने तारा को अपने पास बुलाया, तारा निश्चल बैठी रही। उस मर्द ने उठकर तारा को बाँह से पकड़ लिया। तारा ने उससे छोड़ देने की प्रार्थना की, परन्तु उस जालिम ने उसकी एक न सुनी। तारा का शरीर सोमराज के साथ लड़ाई से थका और चोटें खाया हुआ था। गली में दबोच ली जाने और साँस घुटने से भी वह शिथिल थी पर वह सामर्थ्य भर लड़ी। वह कहती जा रही थी—"बेशक तू मुझे मार डाल, मेरा गला काट दे....।"

तारा को उठाकर लाने वाले मर्द का नाम नब्बू था और वह जाति का मुसलमान था। उसने तारा का विरोध समाप्त करने की हर मुमकिन कोशिश की। इस पर भी तारा ने आत्म-समर्पण नहीं किया तो नब्बू ने चिढ़कर तारा की बाँह को पीठ के पीछे कंधे की ओर इतने जोर से मरोड़ा कि वह तड़प कर और चीखकर बेहोश हो गयी।

●

ताजो तायी और उसके साथ रहने वाली बदरू और कादिरा प्रातः चार बजे ही आसावरी के स्वर में प्रार्थना गाकर रोजा रखने वाले मुसलमानों को सचेत कर देती थीं।

नब्बू अपने आचरण के सम्बन्ध में बदनामी की परवाह नहीं करता था, परन्तु मजहब, खास कर रोजे के मामले में मुहल्ले के मत की उपेक्षा नहीं कर सकता था।

नब्बू नींद तोड़ने के लिए उठ बैठा। उसने सिगरेट सुलगा कर अपनी बीवी रुक्का को चाय बनाने के लिए कहा। परन्तु उसने चाय बनाने से इंकार कर दिया। नब्बू ने उसे धमकाया, परन्तु वह उत्तर में नब्बू को गालियाँ देने लगी। इससे नब्बू को ताव आ गया और वह मारने के लिए रुक्का की ओर बढ़ा तो रुक्का ने मसाला घोटने का डंडा उठा लिया और आत्मरक्षा में आक्रमण के लिए डंडा दोनों हाथों में सिर से ऊपर उठा लिया।

तारा को होश आया तो छुपा अँधेरा था। उस का सिर और शरीर पीड़ा से फटा जा रहा था। कन्धे दरद से कट रहे थे। हाथ पीठ पीछे बँधे होने के कारण घुटने समेट या फैला लेने और सिर को हिला सकने के अतिरिक्त हिलने-डुलने में भी असमर्थ थे। कुछ देर वह हाय-हाय करती रही। गला सूख जाने के कारण वह भी

अब नहीं बन रहा था। कोई सुनने वाला भी नहीं था। अँधेरे के कारण यह भी मालूम न था कि कोठरी में कोई और है या वह कोठरी में अकेली बन्द पड़ी है। जान पड़ रहा था, उसे बाँध कर मर जाने के लिए ही डाल दिया गया है और वह पीड़ा सहते-सहते प्यास से गला रुँध कर मर जायगी।

चीखने-चिल्लाने की पुकारें सुनकर तारा ने आँखें खोलीं। उसने देखा कि मर्द स्त्री की ओर लपका तो स्त्री ने डण्डा चलाया और डंडा मर्द के कन्धे पर पड़ा। मर्द ने स्त्री को उठा कर फर्श पर गिरा दिया और डंडा उसके हाथ से छीन कर उसके शरीर पर चोटें करने लगा। स्त्री जोर-जोर से चीख कर नब्बू को गालियाँ देने लगी। नब्बू ने उसे फिर पीटा और हाँफता हुआ खाट पर बैठ कर दम लेने लगा।

तारा विवश पड़ी यह दृश्य देखती रही। इतने में करफ्यू का बिगुल जोर से चीख़ उठा। नब्बू उठा, उसने रात का बचा हुआ खाना उठाया, और तारा के छीने हुए जेवरों को सम्भाला और बाहर निकल गया। नब्बू के जाते ही रुक्का ने आँगन में आकर पास-पड़ोस वालियों को सुनाकर रोना-चिल्लाना आरम्भ कर दिया।

तारा के लिए पीड़ा समाप्त करने का मृत्यु ही एक साधन था। उसके हाथ बँधे थे, इसलिए वह दुपट्टे से गला नहीं बाँध सकती थी, अतः वह खिसक कर दीवार के पास पहुँची और अपना सिर फोड़ कर मर जाने के लिए सिर दीवार पर पटकने लगी।

आँगन में रुक्का पड़ोसिनों को नब्बू द्वारा तारा को लाये जाने का किस्सा सुना रही थी। तारा के सिर फोड़ने की आवाज़ बाहर सुनाई दी तो रुक्का ने समझा कि वह उसका बक्सा तोड़ रही है। रुक्का सहित सारी औरतें अन्दर पहुँचीं। तारा को एक औरत ने पकड़ लिया। वह गिर पड़ी और बेहोश हो गयी। औरतों ने उसके बँधे हुए हाथ खोल दिए। उन्होंने उसके लिए दुआयें पढ़ीं और एक स्त्री पानी ला कर उसके मुँह पर छींटे मारने लगी।

बड़ी मुश्किल से तारा आँखें खोल पायी।

हाथ खुले जानकर वह फर्श पर हाथ टेककर उठ बैठी। रुक्का अब भी तारा और नब्बू दोनों को ही गालियाँ दे रही थी। बदरू ने रुक्का को समझाया कि यह गरीब अपनी मर्जी से थोड़ी आयी है, इस पर गुस्सा करना ठीक नहीं। इतने में एक औरत तारा के लिए चाय बनाकर लाने को चली गयी।

इतने में ही अजां की पुकार सुनाई दी। औरतें रुक्का को समझा कर कि कहीं यह बेचारी कुछ और न कर बैठे इसका ध्यान रखना, सब के सब नमाज़ पढ़ने चली गयीं। औरतें जाने से पहले तारा को सहारा देकर खाट पर लिटा गयी थीं। अब कोठरी में केवल तारा और रुक्का रह गयी थीं। ताजो तायी, बदरू आदि के द्वारा आस-पास के घरों के मर्दों को भी नब्बू के कारनामे के बारे में पता चल गया। ताजो तायी ने मुहल्ले वालों से कहा कि रमजान के पवित्र महीने में मुहल्ले में ऐसे गुनाह नहीं होने चाहिए।

मर्दों ने इस विषय पर विचार किया। ताजो तायी नमाज़ पढ़ने के बाद चाय का गिलास लेकर फिर तारा के पास आ गई। वह लगातार दुआ करती जा रही थी। ताजो तायी के बहुत अनुरोध करने पर तारा ने चाय के कुछ घूँट पी लिए।

सूर्यास्त के लगभग एक घण्टे बाद नब्बू घर लौटा। पड़ोस के लोग उसके आने की ही प्रतीक्षा कर रहे थे। आते ही नब्बू पर सब ओर से फटकार पड़ने लगी। नब्बू ने पड़ोसियों के हस्तक्षेप का विरोध किया कि मैंने किसी मुसलमान औरत की तरफ तो आँख उठाकर नहीं देखा। मैं इसे उठा थोड़ी लाया हूँ, यह तो खुद ही भाग रही थी। यह सुनते ही मुहल्ले वाले बिगड़ गए कि अगर भाग रही थी तो तू क्यों पकड़ लाया, उसे भागने देता।

अब समस्या यह थी कि औरत का क्या किया जाये। नब्बू पर कोई विश्वास नहीं कर सकता था। औरत को पुलिस के हवाले किया जाता तो नब्बू के खिलाफ रपट हो जाती। आखिर तो वह मुसलमान था। सोच-विचार से तय हुआ कि हाफिज जी को खबर कर दी जाये, वह जैसा कहें, किया जाये।

●

भाटी दरवाजे के मुस्लिम मुहल्लों में हाफिज इनायत अली साहब का बहुत प्रभाव और आदर था। हाफिज जी ने तीस बरस से अधिक समय तक इंटेलीजेंस (गुप्तचर) विभाग में नौकरी की थी। ऊँचे पद पर पहुँच कर पेंशन ली थी। उन्हें पूरा कुरान शरीफ कंठस्थ होने के कारण लोग सम्मान से हाफिज जी पुकारते थे। उन्हें अरबी भाषा का खूब ज्ञान था। वे बरसों तक अरब देशों में भेस बदल कर अँग्रेज सरकार के गुप्तचर के रूप में रहे थे। अँग्रेज सरकार की इस सेवा के परिणाम-स्वरूप उनके बड़े पुत्र को पी० डब्ल्यू० के महकमे में अच्छी नौकरी मिल गई थी और छोटा पुत्र फिल्लौर के पुलिस स्कूल से इम्तहान पास करके अमृतसर में सब-इंसपेक्टर के पद पर था।

पेंशन पा लेने के बाद हाफिज इनायतअली के मन में इस बात के लिए बहुत ग्लानि हो गई थी कि वे जीविका के लिए अपने सहधर्मियों के साथ धोखा करते रहे थे। उस पाप का प्रायश्चित करने के लिए, पेंशन पा कर वे 'जमायते-इस्लामी' का काम अवैतनिक कर रहे थे। उनका सब समय और शक्ति इस्लाम को वैज्ञानिक धर्म सिद्ध करने में, गैर-मुस्लिमों को मुसलमान बनाने में और मुसलमानों को पक्का और सच्चा मुसलमान बनाने में लगता था। सभी मुसलमान और मुसलमान अफसर उनका बहुत आदर करते थे।

हाफिज जी के यहाँ से एक मुसलमान बुढ़िया तारा को लेने आयी, परन्तु तारा ने जाने से इन्कार कर दिया। बुढ़िया लौट गई।

फिर खबर मिली कि हाफिज जी स्वयं आये हैं और औरतें बाहर चली गयीं, केवल ताजो तायी ही तारा के पास रह गयी। कोठरी में पहले वर्दी पहने पुलिस के दो सिपाही आये, उनके पीछे हाफिज जी आये। हाफिज जी तारा की खाट

के समीप पीढ़ी पर बैठ गए, जैसे डाक्टर मरीज की खाट के समीप बैठ जाता है। हाफिज जी ने पुलिस के दोनों आदमियों को बाहर भेज दिया। हाफिज जी ने तारा को बेटी कहकर सम्बोधन किया और उससे कहा, "बेटी हमारे घर चल, चोटों पर दवाई लगवा दें और जहाँ तेरी तबियत होगी पहुँचा दिया जायेगा।"

तारा ने सिर हिलाकर इंकार कर दिया। हाफिज जी ने तारा को समझाना आरम्भ किया, "बेटी, उस पाक परवर दिगार पर भरोरा कर। वह अपने सब बन्दों को देखता है। उसी ने मुझे तेरी मदद के लिए भेजा है। अगर तू अपने घर या किसी अज़ीज के घर नहीं जाना चाहती तो मेरे घर ही रहना। यह जगह तेरे लायक नहीं है।"

तारा ने फिर धीमे स्वर में इंकार किया, "मैं तो मर चुकी। मुझे यहाँ नहीं रहने देना चाहते या मुझ पर रहम करना है तो मुझे उठवा कर दरिया में फिकवा दीजिये।"

हाफिज जी धैर्य और सहानुभूति से बोले—"बेटी, तेरी गुफ्तगू जाहिर कर रही है कि तू ख्वान्दा (शिक्षित) है, समझदार है। बेटी, समझ से काम ले। खुदा का हुक्म है कि यह बन्दा तेरी मदद करे वर्ना मैं यहाँ कैसे आ सकता था? बेटी, जिद्द करने से क्या फायदा? यहाँ दवा-दारू का भी इन्तजाम ठीक नहीं हो सकता। यहाँ तेरा रहना नामुनासिब है, नामुमकिन है। तू रजामन्दी से नहीं जायगी तो पुलिस तुझे उठा कर ले जायगी। पुलिस तुझे उठा कर ले आने वाले बदनाम बदमाश के यहाँ कैसे रहने दे सकती है? यह बदमाश तुझे जबरन उठा लाया है। उसके सामने तो जिद्द काम नहीं दे सकती थी। पुलिस का भी वही तरीका है। पुलिस के हाथ पड़ने से ख्वार ही होना पड़ेगा। मेरे यहाँ तू रज़ामन्दी से जायगी तो अपनी तबियत से जब-जहाँ चाहेगी, जा सकेगी। मुझे इससे कुछ लेना-देना नहीं है। तेरी हालत सुन कर, तेरी मुसीबत में मदद करना फर्ज़ समझ कर आया हूँ, यानी खुदा ने मुझे तेरी खिदमत के लिए भेजा है। यह खुदा का हुक्म है। बेटा, इन जाहिल लोगों के बीच में पड़ी रहने में तो हर तरह का खतरा है......। जानबूझ कर खतरे में पड़ना समझदारी नहीं है।"

तारा कुछ देर मौन होकर सोचती रही। पुलिस के हाथ पड़ना सान्त्वना का कारण नहीं हो सकता था। पुलिस से सद्-व्यवहार की बात उस ने कभी नहीं सुनी थी। उसकी कल्पना में पुलिस क्रूरता और आतंक का ही प्रतीक थी। उस ने हाफिज जी के घर जाना स्वीकार कर लिया।

हाफिज जी का मकान बहुत बड़ा नहीं था। पर पूरे मकान में उन्हीं का परिवार रहता था।

हाफिज जी की तीन बेटियाँ थीं, तीनों का विवाह हो चुका था। उनका बड़ा लड़का अहमद अली, जो नहर विभाग में एस० डी० ओ० था, अक्सर दौरे पर रहता था, इसीलिए उसकी बहू अपने तीनों बच्चों को लेकर सास-ससुर के पास रहती थी।

हाफिज जी के विचार और व्यवहार का प्रभाव घर के वातावरण पर भी था। आफिज जी की बेगम और बहू ने तारा को हाथों-हाथ लिया। उसकी चोटों पर दवा लगायी, उसे नहला कर हवादार कमरे में लिटा दिया।

तारा ने मर सकने के लिए ही हाफिज जी के यहाँ आना स्वीकार किया था। सब के सहृदय व्यवहार के बावजूद वह कुछ खाना-पीना नहीं चाहती थी। हाफिज जी ने तारा से कहा कि इस तरह भूखे रहने से तबियत और खराब होगी, तो तारा ने स्वीकार किया कि उसकी जिन्दगी जिन्दा रहने के योग्य नहीं रही। सिवाय अनशन करके मरने के कोई दूसरा उपाय नहीं है।

हाफिज जी ने तारा को समझाया, गुनाह की सजा गुनाहगार को दी जानी चाहिए। यदि जुर्म की सजा जालिम के बजाय मजलूम पर पड़ेगी तो इससे गुनाह और बढ़ेगा। उन्होंने कहा कि उसके खुदकशी कर लेने से नब्बू पर क्या असर पड़ सकता है? हाफिज जी ने तारा को राय दी कि वह तन्दुरुस्त होकर दुनिया से गुनाह को दूर करने में लोगों की मदद करे।

हाफिज जी के सीधे-सादे तर्क का तारा के पास कोई उत्तर न था। निस्वार्थ भाव से उसकी सेवा करने वालों के प्रति वह कितनी उपेक्षा दिखा सकती थी। वह जैसे-तैसे कुछ खा लेने लगी।

तीन-चार दिन में तारा की तबियत कुछ सम्भल गई। हाफिज जी तारा की खाट के पास बैठ कर उसे कुरान शरीफ पढ़कर सुनाया करते।

हाफिज जी उपदेश देते रहते, परन्तु तारा का मस्तिष्क दूसरी कल्पनाओं में उलझा रहता।

जब तक तारा बिस्तर पर पड़ी रही, बेगम और बहू उससे ज्यादा बातें नहीं करती थीं। जब तारा खाट से उतर कर उठने-बैठने लगी तो बहू—खुरशीद—ने उससे सारी बातें पूछीं। तारा ने अपने ससुराल पर रात में आक्रमण की बात बता दी। इच्छा न होते हुए भी तारा ने बेगम और खुरशीद के आत्मीयता पूर्ण व्यवहार के प्रति कृतज्ञता में सुहागरात का सारा किस्सा सुना दिया।

तारा की बातें सुनकर बेगम और खुरशीद ने कहा कि हिन्दुओं में ऐसा अन्याय होता है, परन्तु मुसलमानों में कभी लड़की पर ऐसा जुल्म नहीं हो सकता।

इतनी दुर्गति सह लेने पर भी तारा को हिन्दू-समाज के आचार-व्यवहार पर लांछन सुनना अच्छा नहीं लगा। उस सन्ध्या हाफिज जी रोजा खोलने के बाद ऊपर ही बैठे थे, और बेगम, बहू तथा पोते-पोतियों से बातें कर रहे थे। बेगम ने हिन्दुओं और मुसलमानों में स्त्री की तुलनात्मक अवस्था की बात उनके सामने आरम्भ कर दी। हाफिज जी बताने लगे कि हिन्दुओं की सभ्यता आदिम और बर्बर है। इस्लाम में मर्द को चार से ज्यादा बीवियाँ रखने का हक नहीं है, परन्तु हिन्दुओं में चार हजार पर भी बन्दिश नहीं है।

तारा उनकी बातें सिर झुकाये सुनती रही। उसे धार्मिक विश्वासों और साम्प्रदायिक भावना से कोई अनुराग नहीं था, परन्तु अपनी रीति-नीति की निंदा भली

न लगती थी। तारा को लेटे-लेटे सोचते रहने के सिवा और काम ही क्या था। वह सोचते-सोचते थक गयी। सोचने से काम भी क्या था। जो कुछ उसने सोचा, कभी न हुआ। हुआ वही जो कभी न सोचा था, जिस की कभी कल्पना भी नहीं की थी। तारा सोचना नहीं चाहती थी, परन्तु मस्तिष्क रिक्त और निष्क्रिय नहीं रह सकता था।

तारा अपने साथ उपकार और सहानुभूति करने वाले परिवार के प्रति कृतज्ञता अनुभव कर रही थी। वह खुरशीद का काम में हाथ बँटाने लगी। घर के लोगों के साथ वह सुबह ही रुचि न होते हुए भी खा लेती और दिन भर कुछ न खाती। तारा का व्यवहार देखकर परिवार के सब लोग उसके प्रति अधिक ममता और आदर प्रकट करने लगे।

हाफिज जी को मालूम हो गया था कि तारा बी० ए० तक पढ़ी थी। उन्होंने उसे इस्लाम धर्म के बारे में कुछ पुस्तकें पढ़ने को दीं। तारा का मन ऐसी पुस्तकों में नहीं लगता था। वह उन लोगों के सिर पर बोझ बनकर नहीं रहना चाहती थी। परन्तु सोचने पर उसे समझ ही न आता कि वह जाये तो कहाँ जाये?

तारा का सिर चकरा जाता। सोचती—सोचने से क्या लाभ? सोचा हुआ तो कभी होता नहीं।

असद की भी याद आई, परन्तु उस स्मृति में उत्साह, आकर्षण और मिठास न था। उसे पुरुष-मात्र से विरक्ति हो गई थी। वह सोचना नहीं चाहती थी, परन्तु मस्तिष्क सोच में इतना डूब जाता कि आधी रात तक नींद न आती। सोचना सिर की पीड़ा और चक्कर बन जाता।

तारा ने हाफिज जी को ताया जी, बेगम को माँ जी और खुरशीद को भाभी जी कहना आरम्भ कर दिया। एक दिन उसने खुरशीद से कहा कि कब तक आप लोगों के सिर पर बोझ बन कर रहूँगी, मुझे पिता जी के घर पहुँचवा दीजिये।

खुरशीद ने यह बात ससुर तक पहुँचा दी। हाफिज जी ने तारा और बेगम को ऊपर बुला लिया। उन्होंने तारा से कहा कि तुम हमारे लिए बोझ थोड़े ही हो। अगर तुम्हारी मर्जी है तो हम भोलापांधे की गली से पता मँगवा लेंगे। वैसे सुना है कि वहाँ के सब हिन्दू पूरब की ओर चले गये हैं।

दूसरे दिन सुबह हाफिज जी ने तारा को इस्लाम धर्म की कुछ बातें बतायीं और उसे विश्वास दिलाया कि वे दोपहर में बजाज हट्टा और भोलापांधे की गली से खबर मँगाने का यत्न करेंगे।

ईद में एक सप्ताह ही बाकी था। खुरशीद मशीन पर ईद के लिए नये कपड़े सी रही थी। उसने तारा को सुनाकर सास से कहा कि यह हमारे साथ रोज रोजे रखती है, अगर धर्म-विश्वास कर ले तो इसे कितनी शान्ति मिले। तारा को इस सहानुभूति में छलना का संकेत अनुभव हुआ।

सन्ध्या समय हाफिज जी ने तारा को बताया कि रंगमहल और शहालमी के बीच के इलाके के सब हिन्दू चले गए हैं और उनकी जगह बाहर से आए हुए मुसल-

मान आबाद हो गए हैं। तारा गहरी साँस लेकर मौन रह गई। हाफिज जी ने तारा को समझाया कि अल्लाह की हर बात बन्दे के हित के लिए होती है। नादान इंसान उसके तरीके नहीं समझ सकता। उसी ने तुझे हमारी गोद में दिया है ताकि तू उस पर ईमान लाये और उम्मत में शरीक हो। हाफिज जी तारा को समझाते ही गये, फिर जरा ऊँचे स्वर में बोले कि अल्लाह ने तुझ पर जो रहम किया है, उसके लिए तुझे उसका शुक्रगुजार होना चाहिए।

तारा ने उनका उपदेश सुन लिया और चुप रही। उस रात उसे देर तक नींद न आयी। वह सोचती रही, स्पष्ट है कि हाफिज जी ने उसे मुसलमान बनाने के लिए ही अनशन करके मरने नहीं दिया था।

तारा को इतने समय तक कालेज के वातावरण में रह लेने के बाद, विशेष कर कामरेडों की संगति मिलने के बाद से हिन्दू-धर्म के विश्वासों में कोई आस्था या प्रेम नहीं रहा था। स्वर्ग-नर्क, पूजा-श्राद्ध और अवतारों के धार्मिक विश्वास उसे उपहासास्पद लगते थे, परन्तु इस्लाम स्वीकार करने का दबाव उसे मानसिक यंत्रणा अनुभव हो रहा था।

ग्यारह तारीख की दोपहर में हाफिज जी जौहर की नमाज़ के पहले सो रहे थे। एकाएक करफ्यू के विगुल की चीत्कार से उनकी नींद टूट गई। नमाज़ के बाद वह करफ्यू का कारण पता लगाने चले गए। वह रोजा खोलने की अजां होने के कुछ मिनट बाद आए। वह बहुत परेशान थे। उन्होंने बताया कि अमृतसर में हिन्दू पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ने सब मुसलमान सिपाहियों के शस्त्र धोखे से रखवा कर उनकी वर्दियाँ उतरवा ली हैं। सब को वर्खास्त करके पाकिस्तान चले जाने को कह दिया है। अमृतसर में हालत बहुत नाजुक है।

यह सुनकर बेगम और खुरशीद की आँखों से आँसू बहने लगे और दोनों क़ाफिरों को दंगा और जुल्म करने के लिए बददुआएँ देने लगीं।

हाफिज जी रात के समय फिर पता करने कोतवाली चले गये। वह लगभग दो घण्टे बाद लौटे तो पहले से अधिक परेशान थे। उन्होंने बताया कि कुछ खबर नहीं मिल रही है। हाफिज जी परवर दिगार पर भरोसा कर कमर सीधी करने के लिए लेट गए। खाना खाने के लिए कहा गया तो उन्होंने कह दिया कि अभी नहीं खाऊँगा, अभी जी ठीक नहीं है।

इतने में ही साँकल जोर से झनझना उठी। नौकरानी ने ऊपर से झाँक कर देखा और ख़ुशी से जल्दी-जल्दी नीचे उतर गई। सब के सब अमजद को लेने नीचे चले गए। तारा ही ऊपर रह गई थी। थोड़ी देर में सब ऊपर आ गए। तारा रसोई में जाकर आड़ में हो गई।

अमजद बताने लगा कि मैं खाँ साहब अब्दुलगनी के पास रुक गया था, उनके साथ ही मैं यहाँ तक सुरक्षित पहुँच गया। सुबह ही सबइन्सपेक्टरों को बड़ी कोतवाली में बुलवाकर उनकी रिवाल्वर और पेटी उतरवा ली गई और उन्हें रिलीविंग सार्टिफिकेट देकर बाहर कर दिया गया।

खुरशीद ने रसोई में आकर तारा से परोठे बनाने को कह दिया था। खाना सामने आया तो पहला ग्रास तोड़ते ही अमजद बोला कि पराठे हिन्दुआनी क्यों बने हैं। हाफिज जी ने उसे तारा की बात बता दी। और यह भी कह दिया कि यहाँ आ गयी है तो मुसलमान बन जायगी।

हाफिज जी ने दो दिन तक फिर तारा को इस्लाम की सच्चाई से प्राप्त होने वाली मुक्ति का उपदेश दिया और तीसरे दिन उन्होंने तारा से मुसलमान बन जाने का प्रस्ताव किया। तारा ने धीमे से कह दिया, "आप लोगों के मुझ पर बहुत एहसान हैं, लेकिन अपनी समझ और दिमाग को क्या करूँ? ईश्वर की इच्छा से जैसी पैदा हुई हूँ, मुझे वैसे ही मर जाने दीजिये। मेहरबानी करके मुझे पहुँचा सकें तो हिन्दुओं में पहुँचा दीजिये या इजाजत दीजिये, मैं चली जाऊँ। आपका एहसान कभी नहीं भूलूँगी।"

हाफिज जी ने उसे समझाया कि कुरान शरीफ की फिलासफी और कानून इटर्नल हैं। वह कभी नहीं बदले और न बदलेंगे। इंसान की निजात उन्हीं पर ईमान लाने में है।

अमजद दूसरे दिन से ही लाहौर में ड्यूटी पर लग गया। वह आकर बताता कि पाकिस्तान की राजधानी कराची में कायम होगी। पाकिस्तान का इनआगुरेशन ईद के दिन अठारह तारीख को होगा। अमजद ने माँ और भाभी से कहा कि तुम लोगों ने काफिर को घर में क्यों रख रखा है। बेगम ने कह दिया कि हमारे धर्म में आ जायेगी तो काफिर थोड़े ही रह जायेगी।

तारा के इस्लाम स्वीकार करने के लिए अनिच्छा प्रकट करने पर भी हाफिज जी ने धैर्य नहीं छोड़ा। वह वज़ीफ़े पढ़-पढ़ कर तारा के दिमाग से शैतान का प्रभाव दूर करने के लिए उस पर फूँकें छोड़ते रहते।

तारा उस क़ैद से मुक्ति पाने के लिए छटपटा रही थी, परन्तु फिर नब्बू जैसे खूँखार अत्याचारियों के हाथ में न पड़ जाने के लिए हाफिज जी को चिढ़ाये बिना, उनकी सहायता से ही उस घर से सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दी जाने की आशा कर रही थी। निराशा के क्षणों में वह लड़कर चली जाने के लिए भी तैयार हो जाती, सोचती, इस बार वैसी परिस्थिति आने पर वह उठा ली जाने के बजाय लड़कर जान दे देगी।

सत्तरह अगस्त रमजान का अंतिम दिन था। दूसरे दिन ईद थी। सन्ध्या समय उन्होंने तारा को पास बुला कर कहना आरम्भ किया कि अगर वह इस्लाम धर्म कबूल कर ले तो इसका पहला निकाह रद्द हो जाएगा और बिना इसके उसे कोई भी शरीफ मुसलमान स्वीकार नहीं करेगा। तारा ने शादी के प्रति अनिच्छा प्रकट की तो हाफिज जी ने कहा कि जवान औरत का निकाह लाजमी है।

तारा ने फिर इन्कार कर दिया तो हाफिज जी और बेगम दोनों ने उसे सोचने के लिए कहा। तारा के इस्लाम स्वीकार न करने की इच्छा की बात घर में सबको मालूम हो गयी, तारा के प्रति सब का आदर कम हो गया।

अठारह अगस्त ईद का पवित्र दिन था। सब ने नहाकर नये-नये कपड़े पहने। जब हाफिज जी ने तारा को साफ कपड़ों में देखा तो उससे कहने लगे कि आज ईद का मुबारक दिन है, तू कलमा पढ़कर उम्मत में शरीक हो जा तो तुझे शांति मिलेगी।

तारा ने विवश होकर कहा कि मैं आजमाने के लिए तैयार हूँ। अगर मुझे कुछ फर्क न मालूम हुआ तो आप मेरा कसूर न कहियेगा।

तारा की यह बात अमजद को खल गयी। वह बिगड़ गया कि क्या कलाम-पाक आजमाइश की चीज है? खुरशीद ने भी क्रोध प्रकट किया कि कलाम-पाक की तौहीन कराने की क्या जरूरत?

हाफिज जी के अलावा सब लोग तारा से नाराज थे। अजमद और खुरशीद कहते रहते कि इस बला को सिर से हटाओ।

तारा को आशा बँधी, अमजद स्वभाव का कड़वा है, उससे घृणा करता है, परन्तु उसकी सहायता से ही मुक्ति मिलेगी। उसने दूसरे दिन सुबह ही बेगम से हिन्दुओं के कैम्प पहुँचाने की प्रार्थना की। बेगम ने कह दिया कि हम औरतें क्या जानें, तू खुद ही मर्दों से बात कर ले।

अगले दिन तारा साहस करके अमजद के पास गयी और उसने उससे कैम्प में पहुँचा देने की प्रार्थना की। अमजद ने कह दिया—"मैं कुछ नहीं जानता।"

तारा के लिए यह क़ैद यंत्रणा बन गई। ये लोग उसे पहुँचाने को तैयार न थे और स्वयं अकेले चले जाने पर नब्बू जैसे बदमाशों का भय था।

तार ने सोचा, सोमराज और नब्बू ने शरीर को कुचला, भ्रष्ट किया और यंत्रणा दी। यह लोग तो दिमाग को कुचल कर समाप्त कर देना चाहते हैं। तारा को खयाल आया कि जबान से कलमा पढ़ लेने में क्या हर्ज है, उससे मन या मस्तिष्क का क्या बिगड़ जायेगा। और इन लोगों से कह दूँ कि मेरी शर्त है कि मैं विवाह नहीं करूँगी। यहाँ से तो मैं किसी तरह निकलूँ। फिर वह ठिठक गयी, कि एक बार कबूल कर लेने पर यह लोग मुझ पर अपना अधिकार बना बैठेंगे। फिर उसने सोचा कि अनशन करूँ, पर खयाल आया कि यहाँ मेरे अनशन की परवाह कौन करेगा? अनशन से हाथ-पाँव न हिला सकने की अवस्था में इन लोगों ने उठाकर फेंक दिया तो क्या हाल होगा? उससे भी मुक्ति तो नहीं परन्तु एक और मुसीबत ही मिलेगी।

ईद के दिन वैसे ही सब प्रसन्न थे, परन्तु हाफिज जी का परिवार दुगना प्रसन्न था, क्योंकि लाहौर से हिन्दू अफसरों के चले जाने के कारण अमजद प्रोमोशन पाकर इन्सपेक्टर के ग्रेड में हो गया था।

बाईस तारीख की सन्ध्या को अमजद ने बताया कि गवर्नमेन्ट का आर्डर है कि लाहौर में जहाँ कहीं भी हिन्दू औरतें हों, उनकी रिपोर्ट पुलिस में की जानी चाहिए। उसने हाफिज जी से कहा कि अब इस लड़की का मामला पेचीदा हो गया है। यह इस्लाम कबूल कर ले तो ठीक, नहीं तो यह हमारे घर में रहेगी तो हम पर कानूनन जुर्म आयद होगा।

हाफिज जी ने बेटे को कानूनी संकट में डालना उचित नहीं समझा और अमजद से कह दिया कि तुम जैसा मुनासिब समझो करो।

दूसरे दिन सुबह दफ्तर जाते समय अमजद तारा के सामने आकर उसे सम्बोधन किये बिना बोला—"तुम्हारा हिन्दुओं के कैम्प में रहना ही मुनासिब है। तुम यही पसन्द भी करोगी। दोपहर में सिपाही और गाड़ी भेज दूँगा। वे लोग तुम्हें हिफाजत से कैम्प पहुँचा देंगे।"

तारा सुन कर निहाल हो गई।

१६

१४ अगस्त, बहुत सवेरे से ही लोग दूकानें और मकान सजाने लग गये थे। आते-जाते लोगों के हाथों में केसरिया-सफेद-हरे रंग के तिरंगे, बीच में चक्र बने हुए झण्डे नजर आ रहे थे। सभी लोग उस दिन आधी रात के समय या कुछ पहले ही अपने मकानों और दूकानों पर स्वतंत्रता की राष्ट्रीय पताका फहरा देना चाहते थे। कुछ लोगों ने तो राष्ट्रीय पताकाएँ फहरा भी दी थीं।

बाजार में स्थान-स्थान पर लोग झुंड बाँधे रेडियो के सम्मुख बड़ी उत्सुकता से उस दिन के लिए निश्चित कार्यक्रम की घोषणा सुन रहे थे। बाजारों में और सड़कों के किनारे भी रस्सियों में पिरोई हुई तिरंगी झंडियों से बंदनवार लगाये जा रहे थे। बाजारों, और सड़क पर जगह-जगह बल्लियाँ गाड़ कर और बाँस बाँध कर द्वार बना दिये गये थे। द्वारों को हरियावल और झण्डियों से सजाया जा रहा था। बाजार में खौलते घी और शक्कर की, खास कर गरम जलेबी की महक भर गयी थी। कहीं अगरबत्तियों की सुगंध की लपटें उठ रही थीं। नैनीताल के बोट-हाउस-क्लब और थियेटर, जहाँ काँग्रेस के बहुत प्रबल आन्दोलन के दिनों में और १९३७ में काँग्रेसी मंत्रिमण्डल के शासन के समय भी सदा ही यूनियन जैक फहराते रहे थे, तिरंगी झण्डियों से सजाये जा रहे थे।

नैनीताल में अगस्त में सर्दी की खासी खुनकी हो जाती है, परन्तु बहुत से लोग सफेद खद्दर के कपड़े पहने दिखाई दे रहे थे। जिन लोगों ने कभी खद्दर का उपयोग नहीं किया था, उस दिन वे भी गर्व से खद्दर की सफेद नोकदार टोपी सिर पर रखे घूम रहे थे। दो दिन पूर्व पंजाब में हिन्दुओं से भरी पूरी ट्रेन कत्ल कर दी जाने के समाचारों से पंजाबियों के चेहरे मुर्झाये हुए थे, परन्तु वे भी अपने दुःख को दबाकर, देश भर के जीवन में पहली बार आये इस दिन को उत्साह से मनाने में तत्पर थे।

क्लब में चौदह की रात के लिए बहुत बड़े भोज की तैयारी थी। मेम्बरों से सहयोग देने का अनुरोध किया गया था। प्रत्येक परिवार ने कोई एक व्यंजन यथेष्ट

मात्रा में प्रस्तुत करने का आश्वासन दिया था।

कांता समझ नहीं पा रही थी कि वह क्या बना कर ले आये। अन्त में बहनों और सास से सलाह करके उसने दही-बड़े बनाकर ले जाने का निश्चय कर लिया। घर में बड़े बनाने का काम आरम्भ हो गया। सुबह नाश्ते के बाद ही पीठी पीसने का काम आरम्भ कर दिया गया था। कनक भी काम में सहयोग दे रही थी, परन्तु उसका मन व्याकुल था। लखनऊ से पुरी का पत्र नहीं आया था। कनक नाना प्रकार के तर्क मन ही मन करती रही। उसने मन में निश्चय कर लिया कि अगर आज ग्यारह बजे तक पत्र न आया तो वह फोन करके अस्टोरिया होटल से पता करेगी।

कनक ने साढ़े दस बजे तक पिसाई का काम किया, और फिर कांता से कह कर अपनी सहेली से मिलने लायब्रेरी की ओर चल दी। उसे लायब्रेरी में किसी सहेली से नहीं मिलना था पर घर से बहाना बनाना आवश्यक था।

फोन पर अस्टोरिया होटल से उत्तर मिला कि मि० पुरी कुछ समय पहले आ गये हैं, अभी उन्हें फोन पर बुला दिया जाता है।

फोन पर पुरी के स्वर में खिन्नता ने कनक के हृदय पर डंक-सा मार दिया। पुरी ने कहा कि मिल कर सब बताऊँगा, तुम लायब्रेरी की ओर चलो, मैं राह में मिलूँगा।

कनक के सुझाव के अनुसार पुरी लखनऊ स्टेशन से सीधा एक्ट रोड पर 'कौंसिलर्स रेजीडेंस' में मिसेज पंत के यहाँ पहुँचा। मिसेज पन्त स्नान कर रही थीं। डेढ़ घण्टे के लगभग बरामदे में प्रतीक्षा कर चुका तो उसने विवश होकर अपनी याद दिलाने के लिए दरवाजे पर उँगली से टंकोर की। भीतर से प्रश्न हुआ—"कौन साहब हैं?"

"मेरा नाम जयदेव पुरी है। नैनीताल से आया हूँ। आप के लिए कनक जी का पत्र है।" पुरी ने नेपथ्य से सुने प्रश्न का उत्तर दिया।

मिसेज पन्त खद्दर की साड़ी पहने दरवाजे में दिखाई दीं। पुरी ने कनक का पत्र उन्हें दिखाया। मिसेज पन्त ने दरवाजे में खड़े-खड़े ही पत्र पढ़कर मोड़ कर हाथ में दबा लिया और पूछा—"अच्छा, वह जो नैनीताल में पंजाबन जवान लड़की थी? आप उसके क्या लगते हैं?"

पुरी ऐसे प्रश्न के लिए तैयार न था।

'कज़न' (सम्बन्धी), उसने उत्तर दे दिया।

"हम तो उसे अधिक जानते नहीं। अवस्थी जी से उसकी कोई बात हुई होगी। अवस्थी जी से मुलाकात होगी तो हम पूछेंगे। तुम फिर किसी दिन आ जाना। आज तो हम 'सेलीब्रेसन-कमेटी' की मीटिंग में रहेंगे।

पुरी को और कुछ कहने का अवसर न देकर मिसेज पंत ने 'अच्छा' कह कर बात समाप्त कर दी। वे भीतर जाकर किवाड़ बन्द कर लेना चाहती थीं। पुरी को 'तुम और हम' का ऐसा प्रयोग सम्माजनक न लगा। उसने अपने आहत मन को

सँभाल कर पूछ लिया—"श्री अवस्थी जी से कहाँ मुलाकात हो सकेगी ?"

"भई सेक्रेटेरियेट में जाकर पता ले लो।" मिसेज पन्त ने किवाड़ मूंद लिये।

पुरी टिकने के स्थान की खोज में बड़ी देर घूमता रहा। बड़ी मुश्किल से एक धर्मशाला में जगह मिली।

मिसेज पन्त के व्यवहार से पुरी के मन में राष्ट्रीय सरकार की सेवा का तीन चौथाई उत्साह समाप्त हो गया। फिर भी वह अवस्थी जी से मिलने सेक्रेटेरियट पहुँचा। वह उनके कमरे के सामने पहुँचा तो चपरासी ने एक चिट पर नाम लिख कर देने को कहा। पुरी ने कनक के पत्र सहित नाम लिखकर चपरासी को दे दिया। इतने में कमरे से एक सज्जन निकल कर बाहर चले गये। चपरासी घण्टी सुनकर अन्दर गया, लौटकर उसने पुरी को बताया कि अब साहब नहीं लौटेंगे।

यह सुनकर पुरी के चेहरे पर निराशा छा गई। चपरासी ने पुरी को साहब से मकान पर ही मिलने की राय दी। पुरी दूसरे दिन प्रातः नौ बजे ही अवस्थी जी के मकान पर पहुँच गया। सौभाग्य से कल वाला चपरासी उसे वहाँ मिल गया। उसने पुरी का नाम अन्दर पहुँचा दिया और पुरी को आश्वासन दिया कि दोपहर बाद वह दफ़्तर में साहब से मुलाकात कर पायेगा।

कनक ने अवस्थी जी के आत्मीयता के व्यवहार का बखान किया था। उसकी तुलना में ऐसी उपेक्षा और निरादर पाकर पुरी का मन पुनः अवस्थी जी के द्वार पर जाने को न था, परन्तु बिना उनसे मिले वापस लौटना भी मूर्खता थी। चपरासी ने पुरी को सुझाया कि वह साहब के 'पीए' से पक्का पता कर ले। चपरासी की सिफारिश पर पुरी को अन्दर बुलवा लिया गया।

पी० ए० साहब खद्दर का कोट-पतलून पहने थे पर मुद्रा अफसरी थी। पुरी की ओर आँख उठाये बिना ही अँग्रेजी में बोले—"कृपया बैठिये। आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?"

पुरी ने बहुत सुचारु ढंग से नैनीताल में कनक से अवस्थी जी के परिचय और अवस्थी जी के लखनऊ आकर राष्ट्र-निर्माण के काम में सहयोग देने का अनुरोध करने की बात बताई।

पी० ए० साहब मेज पर पड़े एक कागज को पढ़ते हुए पुरी की बात सुन रहे थे। सहसा पुरी से निगाह मिला कर उन्होंने प्रश्न किया—"आपका अभिप्राय जाब (नौकरी) से है ?"

"जी हाँ, एक तरह से, जाब के थ्रू ही सहयोग दिया जा सकता है।" पुरी ने स्वीकार किया।

"यह कुमारी कनक जी कौन हैं ? कभी इनका नाम नहीं सुना। काँग्रेस की लीडर हैं ? पंजाब कांग्रेस में हैं क्या ? श्री अवस्थी जी से इनका कैसे परिचय है ?"

यह जानकर कि कनक इक्कीस वर्ष की, एम० ए० की विद्यार्थी युवती है, पी० ए० साहब ने माथे पर त्योरियाँ चढ़ा कर पूछा—"मिस कनक दत्ता से आपका

क्या सम्बन्ध है ?"

पुरी ने झिझक छिपा कर कहा—"मेरी कज़न है ।"

पी० ए० के चेहरे पर व्यंग की मुस्कान आ गई । अंग्रेजी में बोले—"आपका क्या खयाल है, पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी की स्थिति में व्यस्त रहने वाले व्यक्ति ऐसी कितनी लड़कियों को याद रख सकते हैं ? ठीक से याद दिलाने के लिए आप मिस कनक को साथ नहीं ले आये ?" पी० ए० फिर हिन्दी में बोले—"क्या कहा जाये साहब, आप पंजाबी लोग बहुत तेज होते हैं, किसी तरह भी काम होना चाहिए ।"

पुरी व्यंग से तिलमिला उठा—"ह्वाट डू यू मीन सर !"

पी० ए० ने अंग्रेजी में उत्तर दिया—"मतलब कोई खास नहीं है । मतलब है, आप लोग बहुत साहसी होते हैं । आपके यहाँ की लड़कियाँ भी बहुत साहसी होती हैं, बहुत ढंग से अपनी बात सब जगह कह सकती हैं । खैर, असली बात पर आइये । आप पंजाब से आ रहे हैं । हम यहाँ कितने पंजाबियों के लिए प्रबन्ध कर सकते हैं ? काँग्रेस गवर्नमेन्ट के कन्धों पर एक नये उत्पन्न राष्ट्र को अपने पाँव पर खड़ा करने का बोझ है । आप लोग अपने लिए नौकरियाँ ढूँढ़ने का बोझ भी सरकार पर ही डालेंगे तो सरकार क्या कर सकेगी ? आप अगर प्रसिद्ध लेखक हैं तो आपको जनता में स्वावलम्बन का भाव पैदा करना चाहिए और आप सरकार के सामने हाथ फैला रहे हैं ! यू० पी० में, लखनऊ में भी कितने ही पत्र हैं, आप वहाँ कोशिश कीजिये ।"

पुरी को आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए कहना पड़ा कि स्वयं अवस्थी जी के कहलाने पर ही वह लखनऊ आया था । उसे नौकरी की उतनी चिन्ता नहीं थी जितनी काँग्रेसी सरकार की सहायता की इच्छा थी । वह नमस्ते करके उठा और चल दिया ।

पुरी का मन लखनऊ से फट गया था । इतना व्यय करके वह लखनऊ पहुँचा था, इसलिए एक दिन और ठहर कर दोनों दैनिक-पत्रों के कार्यालयों में जाकर, पत्रकारों से भेंट करके काम के अवसर के सम्बन्ध में पता लगा लेना ही ठीक समझा । पुरी को मालूम हुआ कि लखनऊ के हिन्दी के पत्रों में पत्रकारों के वेतन लाहौर के पत्रों की अपेक्षा कम थे । उसे यह भी पता चला कि पत्र में जगह के लिए 'बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स' तक पहुँच होनी आवश्यक थी ।

पुरी ने नैनीताल लौटकर, कनक को सब कुछ सुना दिया । उसे लाहौर लौट जाने के सिवा कोई और मार्ग नहीं सूझ रहा था । वह लाहौर में परिचय के आधार पर कुछ तो कर सकता था ।

कनक और पुरी लाइब्रेरी के समीप झील के किनारे पड़ी बेंच पर बैठे चिन्ता कर रहे थे । वे विश्वास कर बैठे थे कि अवस्थी जी से पाये आश्वासन के मेघ पर चढ़ कर वे सुनिश्चित, पर्याप्त जीविका के स्वर्ग में पहुँच जायेंगे । वह मेघ यथार्थ की धूप का स्पर्श पाकर अदृश्य हो गया था । पुरी समृद्धि के मेघ पर सवारी

का स्वप्न छोड़ कर कम से कम इतनी जीविका की छाँव तो चाहता ही था कि अभाव की आँच में सूख न जाये। वह अवस्थी जी की छलना पर और कभी कनक की सरलता पर खिन्नता प्रकट कर रहा था।

कनक पुरी का अनुभव सुन कर व्याकुल थी।

एकाएक पीछे सड़क पर शोर सुनाई दिया, दोनों ने घूम कर देखा तो स्थानीय पहाड़ी लोगों का एक दल, गाता-बजाता, विजयोल्लास में ललकारता मल्लीताल की ओर जा रहा था। कनक और पुरी के मन में उन लोगों के गीत का अर्थ जान लेने की उत्सुकता थी, परन्तु कैसे जान पाते ?

पुरी और कनक के सिर फिर जीविका के उपाय सोचने की चिन्ता में झुक गये। लखनऊ से लौटकर पुरी फौरन लाहौर लौट जाने के लिए छटपटा रहा था। लाहौर में कष्ट होने पर भी वह अपने स्थान पर तो था, किसी न किसी प्रकार जीविका तो कमा ही सकता था। अपने और कनक के भविष्य का मेल उसे फिर अपने सामर्थ्य से परे, लँगड़े के पहाड़ लाँघने की कल्पना के समान जान पड़ने लगा था।

कनक ने आग्रह से कहा, "चाहे जो हो, आज स्वतन्त्रता की घोषणा के समय तो हम लोग अवश्य साथ रहेंगे।"

"हमारे लिए क्या स्वतन्त्रता है ?", पुरी खिन्नता से बोला, "हम लोगों के तो घर-बार उजड़ रहे हैं। हम लोग बलिदान हो रहे हैं। यह लोग तो दूसरों के बलिदानों से होम करके उसका श्रेय ले लेना जानते हैं। यह लोग अपने-आपको समझते क्या हैं ? सन् ४२ में जब संकट था तो फोन करके जेल चले जाते थे कि पुलिस का थप्पड़ न सहना पड़ जाये। हमने भी स्वतन्त्रता के लिए संकट सहा है, जेल भुगती है। अब हमारे लिए राष्ट्र-निर्माण के उपदेश रह गये हैं ?"

"हम क्या इन लोगों के मोहताज हैं ? उत्सव मनाने का अधिकार तो तुम जैसे ही लोगों को है। तुम क्या किसी आशा से जेल गये थे ? हमारे भी दो हाथ-पाँव हैं। हमें इन लोगों की परवाह ही क्या है, देख लेंगे ! मैं एक बार उन अवस्थी जी से पूछूँगी तो जरूर ! मेरी बात मानो, जहाँ इतना किया है, जैसे भी हो, पाँच दिन और ठहर जाओ। पिता जी ने १८ तारीख को यहाँ आने के लिए लिखा है। एक बार हम दोनों साथ-साथ लखनऊ चलें। मैं देखूँगी, अवस्थी जी मेरे सामने क्या कहते हैं ?"

"तुम्हारा मतलब है, मुझे उन लोगों से बात करना नहीं आया ?" पुरी झल्ला उठा।

"हाय, यह बात नहीं। तुम्हारे बराबर मैं क्या बात कर सकती हूँ, परन्तु मैं उन्हें उनका वचन याद दिलाना चाहती हूँ।" कनक ने पुरी के चुटियाये मन के प्रति सहानुभूति से कहा।

पुरी बौखला उठा। उसके पुरुष के संस्कारों के अनुसार, कनक आत्म-समर्पण कर चुकी थी तो उसे पति के मत का विरोध करने का अधिकार भी न रहा था।

बोल उठा—"तुम क्या समझती हो, उस से फ्लर्टेशन (उस का बहलाव) करके मुझे नौकरी दिला दोगी ? ऐसी नौकरी पर मैं लात मारता हूँ ।"

"फ्लर्टेशन का क्या मतलब ?" कनक ने चौंक कर आपत्ति की ।

"पी० ए० का संकेत तुम समझना न चाहो तो उपाय क्या है ?"

कनक कुछ देर सोच कर बोली—"तुम पी० ए० की बात पर ही क्यों जाते हो ? तुम एक बार अवस्थी जी से मिल लिये होते तो दूसरी बात थी । हो सकता है, वे उस समय बहुत ही व्यस्त रहे हों । इन छोटे लोगों का तो दिल भी छोटा होता है । हम दोनों साथ-साथ ही उन से मिलेंगे ।"

पुरी कनक का सुझाव मानने के लिए तैयार न हुआ ।

कनक ने बहुत अनुरोध से कहा—"सोचो तो, मुझे सदा क्या ऐसे ही दूर रखोगे ? हम दोनों का भविष्य तो इसी बात पर निर्भर करता है...।"

कनक एक बजे के लगभग लौटी तो नैयर बराम्दे में कुर्सी पर अधलेटा सा हाथों से सिर को पीछे से थामे मौन और निश्चल पड़ा था । अन्दर गयी तो कांता की आँखों में भी रोने और आँसू पोंछे जाने की सुर्खी दिखायी दी ।

कंचन ने धीमे-धीमे बताया कि बैरिस्टर मिर्ज़ा का पत्र आया है कि जीजा जी की कोठी पर अमृतसर के किसी मुसलमान ने ताला तोड़कर कब्जा कर लिया है। मिर्ज़ा ने लिखा था, पुरानी अनारकली की तिलक गली में नैयर के दोनों मकानों पर भी लोगों ने कब्जा कर लिया था । उसने आश्वासन भी दिया था कि वह नैयर की जायदाद की रक्षा के लिए स्थिति के अनुकूल हर संभव प्रयास करेगा।

नैयर की माँ और बहन भी निरन्तर रो रही थीं । कांता की आँखों में भी आँसू बार-बार आ जाते थे । कनक कांता के पास जाकर सहानुभूति के लिए कुछ कहना ही चाहती थी कि तार वाले की पुकार सुनाई दी । तार नैयर के नाम था, परन्तु कनक ने ही ले लिया और लिफाफा खोल लिया । पंडित जी का दिल्ली से तार आया था कि वे माँ सहित तेरह की सन्ध्या सुरक्षित पहुँच गए हैं, और पत्र में सारी बातें लिख रहे हैं । सब के सब एकत्र हो गए । सोचने लगे कि ग्यारह तारीख की घटनाओं के कारण उन्हें लाहौर से भागना पड़ा होगा । कांता यह सोचकर फिर रोने लगी कि ग्वालमण्डी का मकान और प्रेस भी गया ।

आहें और लम्बी-लम्बी साँसें भरते हुए कान्ता ने बड़े तलने की कढ़ाई चढ़वा दी।

बड़े तैयार होते-होते सवा छः बज गये थे । नैयर ने चेतावनी दे दी थी कि सात बजे के पहले सब तैयार हो जायें ।

दो घण्टे आग के सामने बैठने से सब स्त्रियाँ पसीना-पसीना हो गई थीं । कनक को ध्यान था कि पुरी सात बजे उसकी प्रतीक्षा करेगा, परन्तु नहाना भी आवश्यक था । एक गुसलखाना और इतने लोग नहाने वाले । विलम्ब हो रहा था, सब सोचने लगीं कि कौन से कपड़े पहनने जरूरी थे । कनक यत्न करते पर भी जल्दी तैयार होकर पहले न निकल सकी ।

मालरोड की दुकानों पर दीवाली सजी हुई थी । कनक आँखें-फाड़-फाड़ कर पुरी को ढूँढ़ रही थी, परन्तु कैपिटल के सामने फाटक तक पुरी उसे कहीं नहीं दिखायी दिया । कुछ पलों में कनक की दृष्टि पुरी पर पड़ी तो उससे आगे चलते नैयर ने पहले ही पुरी को पुकार लिया और उसे भी साथ ले चला । कनक ने सोचा कि यदि पुरी परिवार के मित्र के तौर पर साथ है तो वह सब के सामने निस्संकोच उसके साथ रह सकेगी ।

क्लब के द्वार पर भीतर से कोलाहल की गूँज सुनाई दी, जिससे अन्दर जमा भीड़ का आभास मिल रहा था । नैयर के प्रवेश करते ही कई लोग उससे मिलने आये । सभी पी रहे थे । सरदार जी ने नैयर से देर से आने की शिकायत की । पाण्डे भी गिलास लिए ही लिए नैयर से मिलने आ गया । नैयर के परिवार से मिलने के बाद उसने अँग्रेजी में घोषणा की—"आज कोई राजनीतिक मतभेद और विवाद नहीं । विदेशी दासता से मुक्ति का उत्सव है ।"

क्लब में तेज प्रकाश और सजावट आँखों को चौंधिया रही थी । दो बड़े हालों में बड़े-बड़े मेजों पर बड़े-बड़े थालों में अनेक प्रकार के व्यंजन रखे हुए थे । लोग अलग-अलग टोलियों में अपनी-अपनी रुचि के अनुसार चले गए । बहुत से लोगों के हाथ में गिलास थे ।

पौने ग्यारह बजे तक सब खा चुके थे । खाने की लगभग प्रत्येक वस्तु काफी मात्रा में बच गयी थी, परन्तु पीने का मामला बिलकुल समाप्त हो गया था । सब अपनी-अपनी बातों में लगे थे ।

"साइलेंस प्लीज ! साइलेंस प्लीज ! सुनिये ! सुनिये !"

क्लब के हाल में भरी हुई गूँज शान्त हो गई । अँग्रेजी में सुनाई दिया :—

"...काँस्टीच्युएंट असेम्बली के मेम्बर अपने-अपने स्थानों पर बैठे हुए हैं । असेम्बली के प्रधान डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद सभा-भवन में पधार रहे हैं । डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद श्वेत खादी के वस्त्र पहने हैं...।

"गैलरियों में प्रतिष्ठित दर्शक बैठे हैं । प्रधान की कुर्सी के दोनों ओर अनेक देशों के राजदूत उपस्थित हैं । इस समय ग्यारह बज कर पाँच मिनट हो रहे हैं, श्रीमती सुचिता कृपलानी और श्रीमती नन्दिता कृपलानी वन्देमातरम् गान करेंगी......"

रेडियो से 'वन्देमातरम्' गान सुनाई दिया । सूट या योरोपियन पोशाक पहने अधिकांश लोग सावधान (अटेन्शन) की मुद्रा में बिलकुल सीधे खड़े हो गये । पश्चिमीय व्यवहार से अपरिचित, विशेषत: बहुत से खद्दरधारी लोगों ने अभी राष्ट्रीय गान का सम्मान करना नहीं सीखा था । वे शरीर को ढीला छोड़े ऐसे खड़े थे जैसे मदारी का खेल देख रहे हों ।

"...अपने इतिहास के इस महत्वपूर्ण अवसर पर जब अनेक वर्षों के संघर्ष के पश्चात हम देश का शासन सँभाल रहे हैं...।"

"डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद बोल रहे हैं ।" किसी ने कहा ।

"इन हिन्दी ! हिन्दी में ?" कई लोगों ने विस्मय प्रकट किया।

नैयर ने बचपन में हिन्दी नहीं पढ़ी थी। शब्द उसे समझ नहीं आये परन्तु देश के प्रधान को देश की भाषा में बोलते सुनकर एक अद्‌भुत रोमांच अनुभव हुआ।

डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद बोल रहे थे—"हम उस सर्वशक्तिमान भगवान को, जो मनुष्यों और राष्ट्रों का भाग्य निर्णय करता है, धन्यवाद देते हैं। हम अपनी श्रद्धा राष्ट्र के पिता, राष्ट्र के गुरु और पथ-प्रदर्शक महात्मा गाँधी के प्रति अर्पण करते हैं। हम उन सब लोगों के प्रति भी अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं, जिन्होंने देश की स्वतंत्रता के संग्राम में त्याग और बलिदान द्वारा सहयोग दिया है।"

कनक ने समीप खड़े पुरी की बाँह से अपनी बाँह का स्पर्श कर दिया, मानो कह रही थी—सुनो, यह तुम्हारे लिए कहा जा रहा है ! तुम्हें कौन भुला सकता है ? कनक को इसका गर्व था।

लोगों में व्याख्यान सुनने के लिए धैर्य और सन्तोष नहीं था। उन्हें किसी से कुछ सुनने-समझने की आवश्यकता नहीं थी। वे जानते थे, कुछ मिनट में रात के बारह बजे की टंकोर के साथ उनका देश संसार के दूसरे राष्ट्रों के समान स्वतन्त्र और सार्वभौम सत्तापूर्ण राष्ट्र बन जायगा। सदियों की गुलामी का कलंक दूर हो जायगा। वही उनके लिए पर्याप्त था। वे केवल अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा करने वाली टंकोर सुनने के लिए आतुर थे।

रेडियो विधान-परिषद् देहली में दिये जाने वाले भाषण सुना रहा था, परन्तु क्लब का हाल फिर लोगों की आपसी बातचीत से गूँजने लगा था।

"नेहरू ! पंडित जी ! जवाहरलाल जी ! पंडित नेहरू !" पुकारें सुनाई दीं और हाल में एक बार फिर सन्नाटा हो गया।

पंडित नेहरू का स्वर था—"बहुत बरस पहले हमने कुछ अहद करके अपनी किस्मतें दाँव पर लगा दी थीं। आज उन अहदों को पूरा करने का वक्त आ गया है...। आजादी के साथ ही बहुत बड़ी-बड़ी जिम्मेवारियाँ भी हम पर आयद होती हैं। इस असेम्बली को उन जिम्मेवारियों को पूरा करना है। हमारे लिए अब आराम और चैन का वक्त नहीं आ गया है बल्कि हमें और भी ज्यादा लगन और मेहनत से और त्याग से काम करने की, अपने वायदों को पूरा करने की कोशिश करनी होगी।"

जनता को आजादी की जिम्मेवारियों की चिन्ता नहीं थी। जनता को आजादी के लिए दिये गये मूल्य की भी चिन्ता नहीं थी। यह भी चिन्ता नहीं थी कि उनके हाथ क्या आयेगा ? आजादी न होना उनके लिए राष्ट्रीय अपमान का कारण था। वे केवल आजादी चाहते थे। वे आजादी की घोषणा करने वाली टंकोर सुनना चाहते थे।

क्लब के हाल में फिर लोगों की आपसी बातचीत की गमगमाहट भर गई। पंडित नेहरू का भाषण भी उसी में डूब गया।

रेडियो पर घड़ी ने सुरीली टंकोरों में बारह बजने से पूर्व का संकेत बजाया और ऊँचे स्वर में—टन्न ! टन्न ! टन्न ! टन्न !...

कनक और पुरी के हाथों ने छिपे-छिपे एक-दूसरे के हाथों को दबा लिया। बारह टंकोरे समाप्त होते ही रेडियो से बहुत ऊँचे स्वर में शंख की मंगल-ध्वनि हुई। रेडियो में से ऊँची ललकार सुनाई दी—"पन्द्रह अगस्त—जिन्दाबाद !"

शरीरों में बिजलियाँ तड़प गयीं।

"हुर्रे ! हुर्रे ! हुर्रे !हुर्रे !"

"भारत माता की जय ! महात्मा गांधी की जय !"

लोग उछलने लगे। उछल-उछल कर, कूद-कूद कर गले मिलने लगे। इस में अधिकांश ऊँचे मध्यम वर्ग के शासन के सूत्रों से जीविका और लाभ पाने वाले लोग थे, जो कभी विदेशी दासता से विद्रोह करने का, स्वतन्त्रता के आन्दोलन में भाग लेने का साहस नहीं कर सके थे। आज उनके अन्तरमनों में भी दबी-छिपी स्वतन्त्रता की स्वाभाविक कामना उफन पड़ी थी।

रेडियो से असेम्बली के मेम्बरों के प्रतिज्ञापत्र पढ़ने की आवाज़ें आ रही थीं। क्लब की खास मित्र-मण्डली जामे-आजादी पी रही थी। झील के किनारे आतिश-बाजियाँ छूट रही थीं। वहाँ कई टोलियाँ अलग-अलग नाच-गा रही थीं, और रह-रह कर प्रमुख नेताओं के नाम ले-लेकर नारे लगा रही थीं।

क्लब से सर्दार जी, नैयर, पाण्डे आदि भी झील की ओर चल दिए। और उनके पीछे नैयर के परिवार के लोग और पुरी चले जा रहे थे। तीनों बहक में बातें कर रहे थे।

एकाएक नैयर गम्भीर होकर पुरी की ओर घूम गया—"हम लोगों में से भाई पुरी ने ही स्वतन्त्रता के संघर्ष में जेल काटी है। भाई पुरी, आप जैसे लोग तो आज के उत्सव के हीरो हैं, शासन की गद्दी पर चाहे जो बैठ जाय।"

"कोई परवाह नहीं। मैं बहुत प्रसन्न हूँ, संतुष्ट हूँ !" पुरी ने उत्तर दिया, "हम ने किसी आशा से स्वतंत्रता के संघर्ष में सहयोग नहीं दिया था।"

पाण्डे सिगरेट से लम्बा कश खींच कर राख झाड़ते हुए बोला—"आशा ! स्वतंत्रता से क्या आशा ? स्वयं स्वतंत्रता ही क्या सब कुछ नहीं है ?"

सर्दार जी ने उद्‌गार प्रकट किया—"स्वतन्त्रता दिलायी है नेता जी ने, पर नेता जी कहा हैं आज ?"

"इन लोगों को स्वतन्त्रता से क्या मिलेगा ?" नैयर ने मैदान में ताली बजाते, कूदते, नाचते कुलियों की ओर संकेत कर पूछा, "सुबह फिर रिक्शाओं में जुत जायेंगे, पर उन्हें भी कुछ अभनुव हो रहा है।"

"नेता जी जिन्दाबाद ! इन्कलाब जिन्दाबाद ! भगत सिंह जिन्दाबाद ! इन्कलाब जिन्दाबाद !" राष्ट्रीय पताका उठाये, जोश से नारे लगा-लगा कर चक्कर लगाती हुई टोली नैयर और पाण्डे के दल के समीप से गुजर गई।

१५ अगस्त, प्रातः, पुरी की नींद खुली तो पहला खयाल उसे लाहौर लौट जाने का आया। बहुत देर तक सोचता रहा। वह घर में और गली में सब लोगों से कह कर आया था कि नैनीताल नौकरी के लिए बुलाया गया है। अब जाकर क्या मुँह दिखायेगा ? उसने देश की स्वतंत्रता के लिए प्राणों की बाजी लगा दी थी, अपने लिये कुछ न चाहा था परन्तु......देश की स्वतंत्रता मुझे जीविका देने का भी उत्तरदायित्व नहीं लेना चाहती ! क्या यह देश की कृतघ्नता नहीं है ? कैसी विडम्बना है !......पर देश, केवल अवस्थी जी और मिनिस्टर बन जाने वाले लोग ही तो देश नहीं हैं।...सभी लोग तो मिनिस्टर नहीं बन सकते। रात कूद-कूद कर नाचने-गाने वाले पहाड़ी लोग क्या आशा कर रहे हैं ? रात स्वतंत्र हो जाने के बाद वे आज फिर रिक्शाओं में जुत गये होंगे ?......

पिछले दिन दोपहर को पुरी कनक के बहुत अनुनय करने पर भी नैनीताल में २० तारीख तक ठहरने और उसके साथ दूसरी बार लखनऊ में अवस्थी जी से मिलने जाने के लिए किसी तरह तैयार नहीं हो रहा था, परन्तु लाहौर असफल लौट कर गली और घर के लोगों के सामने लज्जित होने की चिन्ता ने उसका विचार बदल दिया।

उस दिन दोपहर में पुरी कनक से मिला तो उसने कनक से कह दिया कि वह इस शर्त पर उन्नीस तक यहाँ रहेगा कि बीस को वह उसके साथ लखनऊ चले। पंडित जी के अठारह तक नैनीताल पहुँचने की आशा थी। कनक ने पुरी को विश्वास दिलाकर वचन दे दिया।

कनक ने घर में लखनऊ जाने की तैयारी शुरू कर दी। नैयर और कांता ने कुछ कहना आवश्यक नहीं समझा। उन्होंने सोचा, पिता जी आ जायेंगे तो हमारा क्या उत्तरदायित्व रहेगा।

१५,१६,१७ को लाहौर से आने वाले उर्दू और अंग्रेजी के समाचार-पत्र नहीं आये। देहली से आने वाले पत्रों में समाचार थे, अमृतसर और लाहौर के बीच रेलगाड़ी का आना-जाना बन्द हो गया था। केवल सैनिकों की सुरक्षा में ही सवारी की बसें सड़कों के रास्ते आ-जा रही थीं। इन अधूरे समाचारों से नैनीताल में एकत्र पंजाबियों के मन और भी अधिक आशंकित हो रहे थे।

२० अगस्त, दोपहर से पहले पुरी ने देहली से आये अखबार में पढ़ा : पाकिस्तानी सेना और पुलिस ने लाहौर के 'रंगमहल' 'लोहे का तालाब' समीप की गलियों और 'ग्वालमण्डी', 'पुरानी अनारकली' में शेष रहे हिन्दुओं को अपने घरों से हटाकर सुरक्षा के लिए डी० ए० वी० कालेज की इमारतों में बना दिये गये कैम्पों में इकट्ठा कर दिया था। गुजरांवाला और लायलपुर में भी सब हिन्दुओं को कैम्पों में इकट्ठा कर देने और उपद्रवियों द्वारा बाजारों को लूटने, हिन्दू स्त्रियों को निरावरण करके उनके जुलूस निकाले जाने के भी समाचार थे।

पुरी का हृदय धक्क से रह गया। उसने समाचार को कई बार पढ़ा और निश्चय कर लिया कि जिस तरह से भी हो, उसे तुरन्त लाहौर जाना होगा। ऐसी स्थिति में वह किसी भी कारण से रुक नहीं सकता। उसने तुरन्त अपना सामान समेट कर

बाँध लिया। साढ़े बारह बजे वह लायब्रेरी में कनक से मिलने गया। कनक बहुत ही चिंतित थी। पिता जी १८ की संध्या भी नहीं आये थे। उनका पत्र आया था। पंडित जी दिल्ली में माँ के साथ एक होटल में ठहरे थे। विधिचन्द का परिवार एक कैम्प में था। पंडित जी दिन-रात, सिर छिपा सकने लायक जगह की खोज में थे। दिल्ली में लाखों आदमी पंजाब से चले आ रहे थे। भय था, यदि मकान का प्रबन्ध किये बिना वे नैनीताल चले आयें तो लौट कर मकान मिल सकना और भी कठिन होगा।

पुरी ने कनक को लाहौर के सम्बन्ध में पढ़ा समाचार सुना कर तुरन्त लाहौर लौटने का अपना निश्चय बता दिया।

कनक विरोध नहीं कर सकी। परिस्थिति ऐसी ही थी।

१७

बरेली स्टेशन पर पुरी को छोटी लाइन की गाड़ी बदल कर बड़ी लाइन पर पश्चिम जाने वाली डाक गाड़ी में बैठना था। डिब्बे में बहुत भीड़ थी। पुरी डिब्बे में बड़ी मुश्किल से घुस पाया। डिब्बे में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही मौजूद थे। एक मुसलमान बैठना चाहता था, तो एक हिन्दू से उसकी लड़ाई हो गई। पुरी ने मुसलमान को जगह दे दी तो सब हिन्दू पुरी पर बिगड़ उठे और फिर हिन्दू-मुसलमान की बहस चालू हो गई। एक प्रौढ़ ने थोड़ा दबकर पुरी के लिए जगह बना दी।

हर स्टेशन पर भीड़ की भीड़ डिब्बे में घुसने का यत्न करती। डिब्बे में इतनी भीड़ थी कि अन्दर बैठे मुसलमान भी घुसने वाले मुसलमानों का विरोध कर रहे थे।

डाक गाड़ी सब स्टेशनों पर थोड़ा-बहुत पिछड़ती-पिछड़ती बहुत लेट चल रही थी। भीड़ के कारण ठीक से बैठने की भी जगह नहीं थी। पुरी ने कुछ पढ़ना चाहा, परन्तु भीड़ के दबाव के कारण उठकर सूटकेस से पुस्तक निकालना संभव न था। रात पलक झपके बिना बोझ से दबते-दबते बीत गई थी।

अम्बाला स्टेशन पर इतनी बड़ी भीड़ गाड़ी की ओर लपकी कि भीतर बैठे सभी लोग घबरा गये। प्लेटफार्म पर खड़ी गाड़ी के भीतर आना चाहने वाली भीड़ ऐसी आतुर और आतंकित थी जैसे उसी गाड़ी में न चढ़ जाने से वे निश्चय ही मृत्यु के मुँह में चले जायेंगे।

गाड़ी बहुत अधिक भर जाने और छतों पर भी लोगों के लद जाने के कारण स्टेशन से चल ही नहीं पा रही थी। लाठी और बन्दूकें लिए बहुत से सिपाहियों ने भय दिखाकर रोते-कलपते लोगों को छतों पर से उतारा। गाड़ी चल देने पर भी गाड़ी के दरवाजों के साथ डण्डे पकड़ कर लोग पाँवदान की पटरियों पर खड़े चल रहे थे।

गाड़ी चलने के कुछ मिनट बाद इतनी शांति हो गई कि ऊँचे स्वर में कही गई बात सुन ली जा सकती थी। मुसलमान आपस में एक-दूसरे को अपने नुक़सान आदि के बारे में बताने लगे। अब डिब्बे में केवल दो ही हिन्दू थे। ऐसी बात सुनकर पुरी को आशंका हो रही थी। परन्तु चारों ओर बैठे लोगों की आँखों में धमकी नहीं, कातरता और भय की छाप थी।

अम्बाला स्टेशन के बाद गाड़ी की चाल बहुत धीमी हो गई। हर स्टेशन पर सैंकड़ों मुसलमान उन्हें ले जा सकने वाली गाड़ी की प्रतीक्षा में बैठे हुए थे। दोपहर को गाड़ी सरहिन्द स्टेशन पर रुकी। स्टेशन के परे से भीड़ का हो-हल्ला सुनाई दे रहा था। केवल डाक उतारी और लादी गयी और गाड़ी चल दी।

गाड़ी सिगनल को लाँघ कर कुछ ही दूर गयी थी। लाइन के साथ-साथ लगे तारों के परे शहर की बस्ती अभी बिलकुल पीछे नहीं छूट पायी थी। गाड़ी के पहिये रगड़ खा कर चेंचियाये और गाड़ी रुक गयी। बहुत समीप बन्दूकें चलने के धमाके के साथ गाड़ी की काठ की दीवारों पर गोलियों की चोटों की आहटें हुईं। तारों के पीछे बस्ती में से बर्छे, फर्से, तलवारें और बन्दूकें लिये भीड़ गाड़ी की ओर झपट पड़ी। गाड़ी पर गोलियाँ पड़ रही थीं। पुरी के समीप खिड़की में बैठा प्रौढ़ चीख उठा। उसके कंधे से खून बह गया।

पुरी ने बचने के लिये सिर आड़ में कर लिया।

एक और आदमी चिल्लाया—"हाय, मार डाला!"

हाय-हाय और चीख-पुकार से गाड़ी भर गयी।

"खिड़कियाँ बन्द करो।" घबराये हुए लोग चिल्लाने लगे।

आक्रमण करने वाले गाड़ी के पाँवदानों पर चढ़ कर खुले दरवाजे और खिड़कियों से बर्छे और फर्से चलाने लगे और सामने पड़ने वालों को बाँहों से पकड़-पकड़ कर बाहर खींच कर गिराने लगे। आक्रमणकारियों को गाड़ी के दरवाजे में आते देखकर भीतर के लोगों ने पीछे दबकर उन्हें जगह दे दी थी। तीन जवान, दो तलवारें और एक जवान बर्छा लिये भीतर आ गये। बर्छे या तलवार का एक वार और गाड़ी से बाहर धक्का। सवारियों के साथ असबाब की गठरियाँ और बक्स भी फेंके जा रहे थे। आस-पास गोलियाँ भी दग रही थीं। एक-साथ बैठी एक प्रौढ़ा और जवान स्त्री बहुत जोर से चीख कर एक-दूसरी से लिपट गयी थीं। बर्छा हाथों में लिये आदमी ने बर्छा बायें हाथ में लेकर दायें हाथ से जवान स्त्री के दुपट्टे में से केसों को पकड़ कर उसे दरवाजे की ओर लुढ़का दिया और लात के धक्के से नीचे गिरा दिया। बर्छा उठा और दोनों हाथ उठाये भय से रँभाती हुई बुढ़िया के खुले मुँह और गले को फाड़ कर उठ गया। सफेदपोश मुसलमान ने कातरता से गिड़गिड़ा कर प्राणों की भिक्षा के लिए तलवार उठाये जवान के घुटने पकड़ लिये। तलवार उसकी पसलियों के नीचे धँस कर उठ गई। उसके समीप बैठी स्त्रियाँ भय से लुढ़ककर गिर पड़ीं।

आधी गाड़ी खाली हो गई थी। आक्रमण का प्रतिरोध करने की शक्ति किसी

में नहीं थी। पुरी की आँखों के सामने अँधेरा छा रहा था। गला सूख गया था।

पुरी के साथ यात्रा करते सिक्ख की पुकार सुनाई दी—"भाइयो, मैं सिक्ख और यह हिन्दू भाई है।"

पुरी भी चिल्ला उठा—"मैं हिन्दू ! मैं हिन्दू !"

"हिन्दू ! हिन्दू !" और भी कई पुकारें सुनाई दीं।

बहुत सी राइफलें एक साथ दगने के धमाके सुनाई दिये। फर्से-भाले लिये लोग गाड़ियों से कूद कर फिर बस्ती की ओर भागने लगे। बाड़ की तार के साथ की ऊबड़-खाबड़ जमीन पर कई जीपें दौड़ती चली आ रही थीं। राइफलें लिये सिपाही जीपों से कूद पड़े थे।

राइफलों और बन्दूकों के फायर बन्द हो गये। केवल हाय-हाय, चीखने, रोने और सिसकने के शब्द सुनाई देने लगे।

सिपाहियों ने हुक्म दिया—"सब लोग गाड़ी पर चढ़ जाओ।" हुक्म कई बार दोहराया गया।

गाड़ी के नीचे गिरा दिये गये लोगों में से कुछ लोग चढ़ आए। पुरी के समीप की खिड़की के नीचे पड़े एक मुसलमान ने पुरी से उसे ऊपर उठाने को कहा। पुरी ने सहारा देकर उसे ऊपर खींच लिया। सब सहमे हुए थे। बच्चे स्तब्ध और सुन्न थे। कई सिपाही जख्मियों को उठाकर गाड़ी में डाल रहे थे।

गाड़ी प्रायः घण्टे भर बाद चल सकी। लाइन के दोनों ओर बहुत सी लाशें, गठरियाँ और बक्से पड़े रह गये थे।

गाड़ी लुधियाना स्टेशन पर रुकी। हुक्म सुनाया गया—

"सब लोग गाड़ी से दो मिनट में उतर जायँ। आगे लाइन पर हमले का खतरा है। गाड़ी आगे नहीं जायेगी। सवारियों को स्टेशन के बाहर जाने की इजाज़त नहीं है। सवारियों को हिफाजत के लिए मुस्लिम-पनाहगुज़ी कैम्प में जाना होगा।"

सवारियाँ गाड़ी से उतर कर अपना असबाब सम्हालने लगीं। पुरी का सूटकेस गाड़ी में नहीं दिखाई दिया। वह विचित्र स्थिति में था। खोजने का अवसर भी नहीं था।

पुरी ने अपने बिस्तर को बगल दबा लिया और एक अफसर के पास जाकर उसने कहा कि मैं हिन्दू हूँ और मुस्लिम कैम्प में नहीं जाना चाहता। अफसर ने पुरी से नाम, और काम पूछा तथा पूछा कि वह जाना कहाँ चाहता है ? इस पर पुरी ने बताया कि अपने परिवार की सहायता के लिए मेरा लाहौर जाना जरूरी है। अफसर ने उसे स्टेशन से बाहर पहुँचवा दिया।

लुधियाना पुरी के लिए अपरिचित स्थान था। पिछले अनुभवों के कारण उसका मन और शरीर इतने विक्षिप्त और शिथिल थे कि सोचना या काम करना उसके लिये सम्भव न था। वह दो घण्टे तक लेटा-लेटा सोचता रहा कि घर वालों का पता कैसे चलेगा। लुधियाना में भी लाहौर से काफी लोग आये होंगे—यह सोचकर

पुरी ने अपने परिवार को हर कैम्प में ढूँढ़ने का निश्चय किया ।

पुरी ने आधी रात तक और दूसरे दिन घूम-घूम कर सब कैम्पों में पता लगा लिया । उसके परिवार का कहीं पता न लगा । अफवाह थी कि पश्चिम से हिन्दुओं के आने के लिए 'बल्लो की हैड' और 'फिरोजपुर' का रास्ता दिया गया है ।

पुरी तीसरे दिन प्रातः फिरोजपुर के लिए चल पड़ा । गाड़ी में भीड़ नहीं थी । मोगा तहसील स्टेशन वीरान सा लगा । प्लेटफार्म पर जगह-जगह खून फैला हुआ था, लाशें पड़ी हुयी थीं ।

गाड़ी मोगा स्टेशन से चलना ही नहीं चाहती थी । पुरी भूख से परेशान था, परन्तु गाड़ी छूट जाने के डर से प्लेटफार्म पर उतर कर कुछ खाने का साहस भी नहीं कर पा रहा था ।

पुरी के डिब्बे में चार-पाँच जाट दो लड़कियों को घसीट कर ले आये । लड़कियों की दशा बुरी हो रही थी । वे लड़कियाँ देहाती मुस्लिम परिवारों की लग रही थीं । पुरी इस दृश्य को देखकर स्तब्ध रह गया, और करवट लेकर लेट गया ।

अगले ही स्टेशन पर वे जाट लड़कियों को लेकर उतर गये । डिब्बे में बैठे लोग बात करने लगे—न जाने लोगों को क्या हो गया है ? भलमनसाहत और आदमियत खत्म हो गयी है । जिसे देखो तमंचा-बन्दूक लिये फिर रहा है ।

पुरी का मस्तिष्क जड़ सा हो रहा था ।...वह सोचने लगा—क्या हो गया है सबको ? यह हिंसा, ध्वंस और वीभत्सता की दानवी प्रवृत्ति कहाँ से जाग उठी है ! वह अपने परिवार और मुहल्ले की स्त्रियों के बारे में सोचने लगा । ऐसी अवस्था में उसे चित्तौड़ की पद्मिनी के चिता में कूदकर प्राण देने की बातें याद आने लगीं । उसने अपने से प्रश्न किया—क्या स्त्री के लिए अपमान और यातना से बच सकने के लिए मृत्यु की शरण लेना ही एकमात्र उपाय है ?

गाड़ी फिरोजपुर छावनी स्टेशन तक पहुँच गयी । यहाँ लुधियाना से भी अधिक भीड़ थी । पुरी को गाड़ी से उतरना कठिन हो गया । थोड़ी देर पहले धीमे-धीमे बरसते पानी ने अब जोर पकड़ लिया । पुरी के लिए यह जगह अपरिचित थी । वर्षा में वह कहाँ जाता ? वह अपना बिस्तर बगल में दबाकर मुसाफिरखाने की ओर बढ़ गया । उसे ऊँची पुकार सुनाई दी—जिस भाई-बहन ने भोजन न पाया हो, लंगर में आकर ले लें ।

पुरी भूख की उपेक्षा न कर सका । उसके कदम लंगर की ओर उठ गये । पुरी ने मुसाफिरखाने में जाकर चारों ओर दृष्टि दौड़ाई पर बिस्तर बिछाकर लेटने को उसे कहीं जगह न दिखाई दी । बड़ी कठिनाई से थोड़ी सी जगह मिली । वह वहीं किसी तरह बिस्तर का तकिया बनाकर लेट गया ।

बहुत सवेरे ही पुरी अपने परिवार का पता लेने के लिए स्टेशन से चल पड़ा । सब कैम्पों, मंदिरों, गुरुद्वारों, अनाथालयों आदि में देखते-देखते रात हो गयी । बगल में दबा बिस्तर पुरी के लिए संकट बन रहा था, परन्तु अपनी एकमात्र सम्पत्ति को वह किसे सहेज सकता था ?

दूसरे दिन पुरी फिरोजपुर शहर के कैम्पों की छानबीन के लिए छावनी से शहर गया। कुछ कैम्पों में देखकर व सर्राफा बाजार से चल रहा था कि उसे एक दुकान पर कालीचरण कौल अपने परिवार सहित खड़ा दिखायी दिया। परिवार के सब लोगों की हालत खराब हो रही थी। पुरी कौल के पास चला गया। दोनों गले मिले। पुरी ने कौल से अपने परिवार के बारे में पूछा तो कौल ने कहा कि मैंने उन्हें कहीं नहीं देखा।

कौल ने बताया कि आज ही हम लोग यहाँ पहुँचे हैं। जेब में पैसा नहीं है, बच्चे के लिए दूध लेना जरूरी है। चूड़ियाँ बेच रहे हैं, सुनार बहुत कम दाम दे रहे हैं। पुरी ने कौल के मना करने पर भी बच्चे के लिए दूध लिया और बाकी सबको लस्सी पिलायी और पैसे स्वयं ही दिये।

पुरी कौल के परिवार को अच्छी जगह दिखाने के लिए एक स्कूल तक गया। कौल ने पुरी को समझाया कि या तो तुम्हारे घर वाले अमृतसर भेज दिये गये होंगे नहीं तो एक-दो दिन तक यहाँ आ जायेंगे। तुम अमृतसर चले जाओ मैं यहाँ देखता रहूँगा।

फिरोजपुर से अमृतसर जाने वाली लाइन सतलज पार कसूर जंकशन होकर जाती थी। अब वह भाग पाकिस्तान में था। अतः अमृतसर जाने के लिए फिरोजपुर से लोहिया-खास और जालन्धर होकर जाना पड़ता था।

पुरी सूर्योदय के कुछ समय बाद जालन्धर पहुँचा। जालन्धर में नगरों से आये दुकानदार और व्यापारी हिन्दू-सिक्खों की संख्या अधिक थी।

स्टेशन के बाहर अच्छा खासा बाजार लगा हुआ था। लोग हर तरह का सामान बेच व नीलाम कर रहे थे। पुरी ने किसी ओर भी ध्यान नहीं दिया, चुपचाप अपना बिस्तर बगल में दबाए सेवा-समिति की छोलदारी में गया। वहाँ कुछ पता नहीं मिला तो वह दूसरे कैम्पों में पता लगाने चला गया। पुरी बहुत थक गया। सवारियाँ बहुत मँहगी थीं। कनक का दिया कुछ पैसा पुरी के पास था, ऐसी अवस्था में वही पैसा उसका सहारा था, अतः वह पैदल ही चलता रहा।

पुरी का शरीर दिन भर धूप में पैदल चलते रहने से पसीने से चिपचिपा रहा था। अब बगल में दबा बिस्तर जान की मुसीबत बना हुआ था। उसने दो तंदूरी रोटियाँ दाल से खाकर पानी पी लिया। अब थकान के कारण बिस्तर को दबाये परिवार को ढूँढ़ने के लिए दूसरी जगह को चल देना उसके बूते का न था।

वह कालेज की एक ओर इमारत के बरामदे में कुछ स्थान खाली देखकर उसी ओर चला गया। वहाँ पहले से ही काफी लोग जगह-जगह अपना डेरा जमाये बैठे थे। पुरी ने भी एक जगह अपना बिस्तर रख लिया था।

एकाएक उसने बायें हाथ पर एक कमरे में बाधवामल नारंग को परिवार सहित बैठे देखा। नारंग जी ने पुरी को देखा तो दोनों ही एक-दूसरे से मास्टर जी के बारे में पूछ बैठे।

इतने में नारंग जी की पत्नी बे जी उठ गयीं। उन्होंने पुरी से पूछा कि क्या वह लाहौर से नहीं आया है। उसने उन्हें संक्षेप में नैनीताल जाने, अखबारों से खबर

पाकर लौटने एवं रास्ते की सारी घटनायें बता दीं।

नारंग जी ने अपने बारे में बताना शुरू किया कि कैसे वे सब कुछ छोड़कर थोड़ा सा सामान लेकर जान बचाकर चले आये। पुरी का मन अपने परिवार की चिन्ता में ही डूबा हुआ था। उसने नारंग जी से पाकिस्तान जाने वालों के साथ जाने के विषय में बात की तो नारंग जी ने समझाया कि व्यर्थ मौत के मुँह में क्यों जाते हो।

नारंग जी पुरी को अपने दायें-बायें बैठे लोगों के दुःख के बारे में बताने लगे। उन्होंने उसको धैर्य रखने का उपदेश दिया—हजामत बनाकर, नहा-धो लो, दाढ़ी बढ़ी हुई है, कहीं कोई मुसलमान ही न समझ बैठे। पुरी ने कहा कि उसका हजामत का सामान सूटकेस में था, सूटकेस ही गुम हो गया। नारंग जी ने उर्मिला से कहकर बड़े लड़के जगदीश का हजामत का सामान मँगवा कर उसको दिया।

पुरी ने जगदीश और प्रवीण के बारे में पूछा तो नारंग जी ने बताया कि जगदीश शहर से मेरे लिए दवाई लेने गया है। प्रवीण बैठा-बैठा ऊब रहा था, सो उसे भी साथ ले गया है।

पुरी की दृष्टि उर्मिला की ओर चली गयी। वह बिल्कुल बदल गयी थी—अगर वह उसे कहीं अकेले में देखता तो पहचान भी न पाता। उसने पुरी की ओर एक बार भी नहीं देखा, चुपचाप सामान लाकर रख दिया और चली गई।

वह हजामत बना रहा था तो नारंग जी अपनी गली में झेले संकटों का ब्योरा सुनाते जा रहे थे।

पुरी अपने संकट की बात सोचते-सोचते उर्मिला की बात सोचने लगा था—क्या हो गया? प्रेम की चाह का दुर्दम झरना, आँसुओं का गँदला चहबच्चा बन गया है!

पुरी हजामत बनाकर नहा भी आया। वह कम्बल बिछा कर लेट गया। भूख मालूम हुई पर थकावट से नींद आ गयी।

पुरी की नींद टूटी तो घना अँधेरा हो गया था। नारंग जी के कमरे की साँकल अन्दर से बन्द हो गयी थी। उसने सुबह आठ बजे दो रोटियाँ खायी थीं। अब नौ बज रहे थे, उसे बड़ी भूख मालूम हुई। बाजार मील भर दूर। पहले तो वह लेटा रहा, परन्तु भूख व्याकुल करने लगी। उसने उठकर बिस्तर लपेटा और कनक के दिये पैसों में से बचे तेइस रूपये सवा सात आने पतलून की जेब में रख कर चलने को हुआ। उसने जाते-जाते पास बैठे बूढ़े से अपना बिस्तर देखते रहने की प्रार्थना की।

अभी पुरी कालेज की इमारत से सौ कदम ही आगे बढ़ा था कि लुटेरों ने आकर उसे लूटना चाहा, उसने कहा कि मैं तो हिन्दू हूँ, इस पर लूटने वालों ने कहा, यहाँ तो सब हिन्दू हैं। हम लुटकर आये हैं तो हमें भी तो अपना और बच्चों का पेट भरना है। लुटेरे उसकी कलाई-घड़ी और उसकी कुल जमा-पूंजी भी ले गये।

पुरी कुछ देर असहाय मौन खड़ा रहा, फिर कालेज की ओर वापस लौट गया। बरामदे में पहुँच कर उसने बिस्तर बिछाया और सिर पकड़ कर लेट गया।

अब यह जान सकने का भी साधन नहीं था कि रात कितनी गयी, कितनी शेष थी ? सुबह वह क्या करेगा, यह सोचना भी व्यर्थ था ।

प्रात: की धूप उसके मुँह पर पड़ने लगी तो उसकी नींद खुली । वह धूप से बचने के लिए उठकर बैठ गया । नारंग जी दरी पर बैठे सिगरेट पी रहे थे । वह नहा-धो चुके थे । बे जी परौठे सेंक रही थीं ।

एकाएक फाटक की ओर से पुकारें सुनाई दीं—"ओ ए लोगो दौड़ो, जल्दी दौड़ो । सड़क पर मुसलमानियों का तमाशा देखो ।" बहुत से लोग दौड़ गये ।

वही बिस्तर जो चार दिन से जान का बवाल हो रहा था, अब एकमात्र सहारा था । स्टेशन के सामने बिस्तर को बेचकर ही कुछ मिल सकता था । पुरी ने बिस्तर को समेटकर लपेट लिया और बगल में दबाकर नारंग जी से नमस्ते कह कर चल दिया । नारंग जी ने बिस्तर उनके कमरे में ही रख देने को कहा, पर उसने कहा कि बोझ थोड़ा ही है, शायद आगे चला जाऊँ, और बिस्तर बगल में दबाये वह उसी मार्ग पर चल दिया जिधर रात को गया था । कुछ दूर आगे बढ़ा तो बस्ती के पहले मकानों से कुछ इधर ही लोग तरह-तरह की चीजें बेच व नीलाम कर रहे थे । पुरी ने सोचा मैं भी यहीं बैठकर अपना बिस्तर बेच दूँ, इतनी दूर स्टेशन जाने का क्या फायदा ।

एकाएक पुरी का ध्यान बस्ती की दीवारों के पास खड़े भीड़ के चक्कर की ओर चला गया । भीड़ में आती आवाजें साफ सुनाई दे रही थीं । पुरी समझ गया कि वहाँ भी नीलाम हो रहा था । उसने अन्दर झाँक कर देखा तो स्तब्ध रह गया और उसके कदम पीछे हट गये । भीड़ के बीचो-बीच एक आदमी चोटी से पकड़-पकड़ कर निर्वस्त्र लड़कियों को नीलाम कर रहा था । लड़कियाँ सब ही मुसलमान थीं ।

एकाएक विनोद के कहकहों में एक आदमी का कुछ स्वर सुनाई दिया—"कुछ शर्म करो । आगा-पीछा सोचो । तुम लोग इनकी इस तरह बेइज्जती करोगे तो कोई भलामानस इन्हें घर में कैसे बसा सकेगा ? इससे तो अच्छा है इनकी गर्दन काट कर परे फेंक दो । तुम मुसलों से किस बात में अच्छे हो ? उन्होंने क्या बुरा किया जो तुम नहीं कर रहे हो !"

कुछ लोगों ने उस व्यक्ति का समर्थन किया । पुरी सिर झुकाये लौट आया और स्टेशन की ओर चल पड़ा ।

स्टेशन के सामने अस्थायी बाजार में अपनी दरी बिछा कर अपना कम्बल, चादरें और तकिया अलग-अलग रख कर बैठ गया । बेचने के लिए उससे पुकार लगाते न बनता, परन्तु वह आवश्यक था । वह समीप से गुजरते लोगों से सहमता हुआ कह लेता, "भाई, नई चीजें हैं, सस्ती दे दूँगा ।"

पुरी ने अपनी निर्बलता के लिए अपने-आपको ही फटकारा कि मैं क्या कर रहा हूँ । वह भूख और सिर दरद से विवश हो गया । सिर दरद की दवाई खाना आवश्यक था । पीड़ा से जड़ होते मस्तिष्क में वह कल्पना करने लगा कि वह भी

लूले, लँगड़े भिखारियों के साथ भीख माँग रहा है। उसे ग्लानि हुई कि मुझे क्या होता जा रहा है।

पुरी की आँखें दरद के कारण खुल नहीं रही थीं। वह किसी तरह उठा, उसने बिस्तर लपेट कर बगल में दबा लिया और लोगों से मुफ्त राशन बँटने वाले स्थान का पता पूछने लगा। पता चल जानेपर वह उसी ओर चल दिया।

पाव-पाव भर आटा और छटाँक भर दाल बाँटने वाला खद्दरधारी व्यक्ति सामने खड़ी भीड़ को बार-बार धैर्य से काम लेने के लिए कह कर चेतावनी दे रहा था—"भाइयो, अपना धर्म-ईमान समझ कोई दो बार न ले। कोई भाई-बहिन खाली हाथ रहेगा तो दो बार देने वाले को पाप होगा।

भीड़ में से किसी ने समर्थन किया—"हाँ भाई, पिछले जन्म में किये पापों का दंड भगवान क्या कम दे रहा है ? यहाँ धोखा देने से जाने क्या होगा ?"

"सब्र से परसाद लो भाई, सब्र से ! यह स्वराज का परसाद है।" किसी दूसरे ने अपनी पीड़ा में व्यंग का पुट देना चाहा।

"यह क्या स्वराज हुआ ?" कोई खिन्नता से झुँझलाया, "पाव भर आटे के लिये मोहताज हो गये !"

"कांग्रेस वालों ने राज पाया है, हमें पाव भर आटा बाँट कर पुण्य भी कमायेंगे।" हँसने वाले ने फिर कहा और उसने जोर से कहकहा लगा दिया।

पुरी उन लोगों की तरफ देखता रहा और क्यू में उसके पीछे खड़े कई आदमी उस को लाँघ कर आगे बढ़ गये।

१८

दोपहर बाद लगभग पाँच बजे का समय था। तारा के सतर्क कानों ने नीचे बैठक से हाफिज जी की पुकार सुनी—"बेटा कमरू, सुनो !"

कमरू के जीने से धम-धम नीचे उतरने की आहट सुनाई दी। फिर सुनाई दिया, कमरू जीना चढ़ कर लोहे के जाल को अपने कदमों से झमझम बजाती, रसोई के समीप बरामदे में बैठी अपनी माँ और दादी के पास जाकर कुछ कह रही थी। तुरन्त ही कमरू तारा के सामने आ गयी और हाँफती हुई बोली, "नीचे गली में सिपाही खड़े हैं। आपको कैम्प में ले जाने के लिए आये हैं।"

तारा तुरन्त उठ खड़ी हुई। दुपट्टे से सिर और कन्धों को लपेट लिया। खुरशीद और उसकी सास उसे विदा देने के लिए आगे नहीं बढ़ीं। तारा ने उन्हें दूर ही से मौन नमस्कार किया और जीने से उतर गयी।

तारा को बैठक के दरवाजे पर आराम-कुर्सी पर बैठे हाफिज जी दिखाई दिये। तारा ने उन्हें झुक कर सलाम किया।

"अल्लाह तुझ पर रहम करे !" हाफिज जी ने बैठे ही बैठे उदास स्वर में आशीर्वाद दे दिया।

तारा ने झाँक कर देखा, गली में एक जवान उसकी प्रतीक्षा में खड़ा था। वह पुलिस की वर्दी नहीं पहने था, परन्तु लगता पुलिस का ही आदमी था। उसके हाथ में पुलिस अफसर का बेंत था। उसने तारा से प्रश्न किया, "तुझे ही कैम्प जाना है ?"

तारा ने सिर झुकाकर हामी भरी। उसने बताया कि गाड़ी उधर खड़ी है। तारा को उस आदमी के चेहरे से आश्वासन न हुआ। परन्तु अब उसे हाफिज जी के घर से भेजा जा रहा था तो कैसे न जाती ? गली के सामने ही एक जीप खड़ी थी। ड्राइवर के स्थान पर पुलिस की वर्दी की कमीज पहने एक जवान बैठा था। तारा को उसी के सामने बैठाया गया और उसे बुलाकर लाने वाला जवान उसके पास ही बैठ गया। तारा के पास ही नीचे एक टोकरी में चार-पाँच मुर्गे थे, जिनकी टाँगें बँधी हुई थीं।

जीप बाजार लाँघ कर सड़क पर पहुँच गयी। गाड़ी की चाल तेज हो गई। कुछ दूर जाने पर उसे लगा कि गाड़ी रावी के पुल की ओर जा रही थी। तारा घबरा गई। साहस करके उसने टोका—"मुझे डी० ए० वी० कालेज के कैम्प में जाना है।"

तारा के पास बैठे जवान ने कहा कि वहाँ जगह नहीं है, शाहदरे के कैम्प ले जाने का हुक्म है। तारा दो-तीन बार अपने कालेज के विद्यार्थियों के साथ शाहदरे जा चुकी थी। जब जीप आगे ही बढ़ती गयी तो उसने फिर आपत्ति की—"शाहदरा तो पीछे रह गया।"

सामने बैठे जवान ने उसे डाँटकर चुप रहने को कहा। तारा ने जोर से कहा कि जीप रोक दो, मैं नहीं जाऊँगी। जब उसकी बात का इन जवानों पर कोई असर न हुआ तो तारा मरने के लिए जीप से कूदने को अपनी सीट पर घूम गई। पास बैठे जवान ने उसे पकड़ लिया। तारा के छुड़ाने की कोशिश करने पर दोनों जवानों ने उसे घुटनों के नीचे दबा लिया और कई मुक्के और चोटें उसकी पीठ पर पड़ीं और वह बेहोश हो गई।

तारा ने आँखें खोलीं तो धुँधला सा एवं अपरिचित बड़ा सा आँगन दिखाई दिया। उसे मुख पर जलन और सिर में दरद और चक्कर जान पड़े। पलकें खोलने पर उसे तीन स्त्रियाँ आपस में झगड़ती हुई दिखायी दीं। एक निरवस्त्र थी, एक के शरीर पर केवल सलवार और एक केवल लम्बा सा कुरता पहने थी। तारा सुध सँभालने के लिए अपना सिर झटक कर सोच रही थी, कहाँ हूँ ?

तारा बाँह टेक कर उठी और घुटने समेट कर बैठ गयी। कुछ देर सिर की पीड़ा से जलती हुई आँखें झपकती रही। केवल कुरता पहने स्त्री, जिसका नाम वंती था, तारा को उठी देख उसके समीप आ गई और उसने तारा से पानी पीने का अनुरोध किया, परन्तु तारा ने इंकार कर दिया। उन तीनों स्त्रियों की बातों से तारा ने समझ लिया कि उसकी मूर्छित अवस्था में विवस्त्रा स्त्री उसका कुरता उतार

वस्त्ररहित, नंगा,

कर पहनना चाहती थी ।

तारा बहुत देर तक घुटने पर ठोढ़ी रखे परिस्थिति को समझने का यत्न करती रही, सोचती रही । तारा आँगन के बीचो बीच, जहाँ उसे सुध आयी थी, वहीं घुटने समेट कर बैठ गयी थी । बैठी-बैठी थक गयी तो वहीं फर्श पर लुढ़क गयी । इसी तरह तारे धुँधले हो गये । अन्धकार में पौ फटने की सफेदी मिलने लगी । तारा ने स्थान नहीं बदला था, केवल करवटें बदलती रही थी ।

सवेरा होने पर स्त्रियों ने बिना झिझक निपटने और नहाने का काम आँगन में ही आरम्भ कर दिया । तारा ने घृणा से मुँह फेर लिया तो एक स्त्री ने समझाया कि हर तरफ तो ताला बन्द है, कोई कब तक इन्तजार कर सकता है ।

बंती नित्य ही अपने धर्म-विश्वास का अनुष्ठान पूरा कर लेती थी । वह अपना काम करके तारा को समझाने लगी कि भूखे-प्यासे रहने से क्या होगा । यहाँ कौन अपना है जो भूखे देखकर दुःखी होगा । तारा ने बंती की बात सुनी तो उसे रोना आ गया । उसने कहा कि मैं तो मरने का यत्न करके हार गई । मर जाऊँ और क्या चाहिए ?

बंती ने तारा को समझाया कि मरना-जीना मनुष्य के हाथ की तो बात है नहीं । वह बोली कि मुसीबतें तो सब ने झेली हैं । इसी प्रसंग में वह अपने गाँव की बातें भी बताने लगी कि कैसे मुसलमानों ने उन्हें स्टेशन तक केवल बदन के कपड़े और जेवर एवं सफर का खर्च लेकर एक जगह एकत्र होने का हुक्म दिया । इतने में सतवंत भी वहाँ आ गई और उसने बंती को टोक कर अपने गाँव की बात बतानी आरम्भ कर दी । उसने बताया कि कैसे स्टेशन पर मुसलमान सिपाहियों ने हमारे मर्दों की बन्दूकें ले लीं और हम लोगों को लुटवा दिया । इतना बताकर वह ऊँचे स्वर में रोने लगी ।

बंती ने सतवंत के रोने की ओर ध्यान नहीं दिया और फिर अपनी बात कहने लगी कि जब हम लोग एक जगह जमा हो गए तो मुसलमानों ने हम लोगों को घेर लिया । उसने बताया कि उसकी ननद को एक मुसलमान खींच कर लिए जा रहा था, जब मैंने उसे बचाना चाहा तो उन लोगों ने मुझे भी खींच लिया । उसकी गोद का बच्चा चिल्ला उठा तो उसकी सास ने आकर बच्चे को उसकी गोद से खींच लिया ।

सतवंत ने उसे फिर टोका और बताने लगी कि वह अपने बेटे को लेकर, छिप गई थी, परन्तु जालिम मुसलमानों ने उसे पकड़ लिया और उसके बच्चे को छीन कर अलग फेंक दिया । सतवंत फिर रोने लगी ।

बंती ने सतवंत के रोने की परवाह न की और कहती गई कि मुसलमानों ने तीन जवान औरतों और तीन कवाँरी लड़कियों को पकड़ लिया था । हमारे लोग आँखों से परे हो गए थे । एक लड़की तो पास के कुए में जाकर कूद गई । और बंती ने आगे बताया कि कैसे उन लोगों ने मारपीट कर उन लोगों का बुरा हाल किया था । यह कहकह वह रोने लगी ।

सतवंत कहने लगी कि सब के साथ बुरा हुआ है। जब से यहाँ आई है तब से समझो मिट्टी ख्वार नहीं हुई। बंती ने बताया कि वह रात भर बेहोश पड़ी रही। सुबह उसे होश आया था। उसने बताया कि धूप चढ़े यही मूँछों वाला उसे यहाँ ले आया, जो तुझे लाया था।

बंती बात कर रही थी तो केवल सलवार मात्र पहने स्त्री नहा रही थी। नहाकर वह भी इनके पास आ बैठी। उसका नाम दुर्गा था। उसने भी अपना किस्सा सुनाया। बंती ने दुर्गा से कहा कि अमरो को भी नहला दे तो दुर्गा ने बताया कि उसे बुखार है। इस पर बंती और सतवंत ने चिन्ता प्रकट की। सतवंत तारा को बताने लगी कि स्टेशन पर सबसे पहले इसके ही पाँच महीने के बच्चे को छीनकर कसाइयों ने कुचल डाला था।

बंती ने अब तारा से उठकर नहाने को कहा। उसने कहा कि जिस परमात्मा ने नरक में डाला है वही उबारेगा। उठ, नहा कर कुछ खाले, न जाने तूने कब से नहीं खाया ?

बंती ने तारा की बाँह पकड़ कर उसे उठाया और कहा, "चल नहा ले।"

तारा को दूसरी स्त्रियों के सामने नहाने में संकोच हो रहा था, परन्तु वहाँ लज्जा दिखाना दूसरों की हेठी करना होता। अभी उसके सामने बंती, सतवंत और दुर्गा नहा चुकी थीं। तारा नहा चुकी तो बंती ने रूखी तन्दूरी रोटी का आधा टुकड़ा तारा को दे दिया। तारा को ऐसी रोटी खाने की इच्छा न हुई। उसने खाने से इंकार किया तो बंती ने कहा कि न खाने से मुश्किल होगा। लक्खी का हाल देख, वह भी नहीं खाती थी। फिर खाया तो बीमार हो गयी। अब बुरा हाल है। यह सुनकर तारा ने कह दिया कि वह ठहर कर खा लेगी, और पानी पीकर रह गई।

बंती ने बताया कि जब उसे यहाँ लाया गया था तो लक्खी के साथ तीन और भी लड़कियाँ थीं। दूसरे दिन सुबह ही मरा मूछों वाला कसाई दो मर्दों को लेकर आया और उन तीनों को ले गया। लगता है यह सिरसड़ा हम लोगों को भी कहीं बेच देगा।

इतने में ड्योढ़ी के दरवाजे के खुलने की थर्राहट सुनाई दी और दो पल में एक बुढ़िया दरवाजे के सामने आ गई। वह रोटियाँ लाई थी। वह इन लड़कियों से प्यार से बोली—"मेरा बस चले तो तुमको कभी भूखा न रखूँ, पर क्या करूँ, वह जालिम पैसे ही नहीं देता। मैं तो आज रोटियों में नमक भी लगवा लाई हूँ।"

रोटियाँ पन्द्रह थीं। पहले तो कुछ छीना-झपटी हुई, फिर सबने रोटी बाँट कर खा ली। बुढ़िया को पता चल गया कि एक लड़की और आयी है तो वह जाते समय कह गयी कि कल ज्यादा रोटियाँ ले आऊँगी।

तीसरे पहर गरमी और अधिक हो गयी, जम्हाई लेती हुई दुर्गा ड्योढ़ी के साथ की दूसरी कोठरी में चली गयी। अमरो आँखें खोले छत की ओर टकटकी लगाये देखती रही। सतवंत और बंती फर्श पर लेट कर ऊँघने लगीं। तारा भी लेट गयी। उसने आँखें मूँद लीं, परन्तु नींद नहीं आयी। अब तक वह रुचि न होने पर

भी स्त्रियों की बातें सुनती रहने के कारण अपनी परिस्थिति के विषय में सोच नहीं पायी थी। अब गहरी चिन्ता से सोचने लगी। मुक्ति की इच्छा करके वह कड़ाही में से उछल कर भट्ठी की आग में आ गिरी थी। इस आँगन की अपेक्षा हाफिज जी की कैद स्वर्ग थी। अब यह भी नहीं जानती थी कि कहाँ है ?

तारा को सतवंत, बंती, दुर्गा पर हुए अत्याचारों की बातें मस्तिष्क में घूम गयीं। किस प्रयोजन के लिए सब को यहाँ बन्द करके रखा गया होगा। क्या ये सब जानती नहीं होंगी ? ये लोग क्या अभी और सहने को तैयार थीं ? जान पड़ता था कि भगवान ने तो उन्हें भुला दिया था, परन्तु ये लोग भगवान को नहीं भुला सकती थीं। भगवान मनुष्य की जितनी चिन्ता करता है, उससे कहीं अधिक मनुष्य भगवान की चिन्ता करता है। मर जाने का उपाय भी क्या था ? सिर फोड़ कर मरने का यत्न किया था तो बेहोश होकर ही रह गयी। तारा बहुत देर तक इसी उधेड़बुन में ही पड़ी रही।

तारा ने आँखें खोलकर आँगन की ओर देखा तो धूप वहाँ से जा चुकी थी और आँगन में ठंडा होने के कारण स्त्रियाँ वहीं बैठी हुई थीं।

संध्या का धूमिल प्रकाश चाँदनी में बदल गया।

रात बढ़ जाने पर स्त्रियां इधर-उधर लुढ़ककर सो गयीं। नींद खुलने पर कोई दो फिर बैठकर बतियाने लगतीं। पिछली रात तारा के अर्ध-मूर्छित अवस्था में होने के कारण जैसे-तैसे बीत गयी थी। पर यह रात अधिक कठिन मालूम पड़ रही थी। तारा कभी लेट जाती, कभी बैठ कर सोचने लगती। उसे गत जीवन की बातें याद आने लगतीं। वह केवल कष्ट उठाने के लिए ही पैदा हुयी थी। गरीब घर में पैदा ही क्यों हुयी ? गरीबी को पिछले जन्मों का कर्मफल मान कर संतोष क्यों न कर सकी ? गरीबी से मुक्ति की इच्छा क्यों हुयी ? अपनी इच्छा से ही विवाह करने का विचार क्यों आया ? वह भी क्या शीलो की तरह सुख-दुख मिला जीवन नहीं बिता सकती थी ? ससुराल की रात ! नव्वू का अत्याचार ! हाफिज जी का स्नेह भरा छल ! मुसलमान बन जाने में ही क्या हरज था ? हाफिज जी की बात अस्वीकार कर उसने क्या अपने को बचा लिया ? उसके हिन्दुत्व ने उसे क्या दे दिया ? उसका क्या सहायता कर दी ? बन्ती, सतवंत, दुर्गा अब भी हिन्दुत्व को लिए बैठी थीं। यह सब तो हुआ, अब क्या होगा...?

तारा को कभी सिर पकड़ कर सोचते और कभी ऊँघते उसी आँगन में पौ फटी। वह बेचैनी में आँगन में इधर-उधर चहल-कदमी करती रही।

धूप आधे आँगन तक उतर आयी थी। साँकल गिरने की झनझनाहट सुन सारी स्त्रियाँ कोठरियों में हो गईं। इस बार भी आने वाली बुढ़िया ही थी। बुढ़िया को देख बन्ती, सतवंत और दुर्गा आँगन में चली आयीं। तारा एक ओर खड़ी रही। तारा ने देख लिया कि बुढ़िया दुर्गा की ओर ममता भरी आँखों से देख रही थी।

बुढ़िया की दृष्टि तारा की ओर गयी तो उसने झट तारा से बात आरम्भ करनी चाही, परन्तु तारा ने मुँह फेर लिया।

चौथा पहर बीत रहा था। स्त्रियाँ फिर बतियाने लगी थीं। तारा फिर आँगन में आकर चहल-कदमी करने लगी। बन्ती और सतवंत बातें कर रही थीं। बन्ती ने तारा को भी बुला लिया। तारा ने बैठकर कहा—"कब तक इस कैद में पड़ी रहेंगी ?"

सतवंत ने कहा—"भला हम कर क्या सकती हैं ? हमें तो यह भी नहीं मालूम कि हम किस शहर या किस गाँव में हैं"

इनको बातें करते देख दुर्गा भी इनके पास आ गई।

"मेरी बहना, घबराहट तो होती ही है पर घबड़ाने से बनता क्या है ?" बन्ती गहरी साँस लेकर तारा को समझाने लगी, "बचाने वाले तो महाराज जी ही हैं। जब उन्हें उबारना होगा, नीले अम्बर को फाड़ कर प्रकट हो जायेंगे। उन्होंने प्रहलाद जी को भी जलती आग से बचा लिया था। इस कसाई ने तो हमें यहाँ ऐसे ही बन्द कर रखा है जैसे कसाई नूरा हलाल करने के लिए खरीदी बकरियों को बाँध कर रखता था।"

"बहन जी, ठीक ही कहती हो। बचाने वाला तो वही है पर अपने करने से ही कुछ होता है।" तारा बोली, "यहाँ से निकलने का कोई भी उपाय नहीं हो सकता ?"

"कैसे निकलेंगी, निकलने का रास्ता कहाँ है ? ड्योढ़ी पर बाहर ताला है। जायेंगी कहाँ ?" बन्ती बोली।

"मैं बताऊँ ?" तारा उनकी तरफ झुक कर बोली, "बुढ़िया रोटी लेकर आये तो सब उसको पकड़ लें। उसे बाँध कर डाल दें और निकल जायें।"

सतवंत ने टोका—"क्या पागलों जैसी बातें करती हैं ? यहाँ चार-दीवारी के पर्दे में मर्दों की आँखों से बची तो बैठी हैं। दरवाजे के बाहर क्या होगा, इसका क्या पता है ? बिल से निकल कर बिल्ली के मुँह में जायें। मालूम होता है, तू भुगती नहीं है ?"

"तुझे पता क्या है ?" तारा की ओर देखकर दुर्गा बोली, "यहाँ सल्लम-साबत तो बैठी हैं। बाहर जाकर अपने चीथड़े उड़वाने हैं ?"

बन्ती ने अपनी नंगी पिंडलियों को छूकर कहा—"इस हालत में मर्दों के सामने निकलें ?" उसने दुर्गा की ओर संकेत किया, "यह बाहर निकलेगी ?" उसने कोठरी में पड़ी लक्खी के प्रयोजन से संकेत किया, "वह बाहर जायगी ? रात-बिरात का अँधेरा दस-बीस कदम जाना हो तो एक बात है। खुद ही अपनी मिट्टी को रौंदवाना हो तो फिर किसी को क्या दोष दें ? यूँ तो मिट्टी खराब होने में रह ही क्या गया है पर महाराज जी जानते हैं कि अपना तो कोई दोष नहीं था, वही क्षमा और दया करने वाले हैं।"

बन्ती ने दोनों हाथ जोड़ कर माथे को छुआ, लम्बी साँस ली और फिर कहने लगी—"केवल का बाप तो हफ्ता भर पहले ही कह रहा था कि अमृतसर चले चलें। चले ही जाते पर कर्मों का फल भोगना था, चले कैसे जाते ? महाराज जी

चाहें तो क्या नहीं हो सकता ? सीता माता रावण की कैद में रह कर भी भगवान रामचन्द्र जी के पास पहुँच गयी थीं।''

''तू भी क्या कहती है ?'' दुर्गा बोली, ''घर से एक बार निकली, दर-दर ख्वार हुई, तीमी (अबला) को फिर कौन रखता है ? घर से निकली तीमी और डाल से टूटा फल, उनका फिर मेल क्या ?'' दुर्गा ने बहुत गहरी साँस छोड़ दी मानो हृदय से सब आशा फेंक दी हो।

''मैं घर से निकली हूँ ?'' बन्ती को क्रोध आ गया, ''सब कुछ तो वह सब कुछ देखने वाले महाराज देखते हैं। सब कुछ सभी की आँखों के सामने हुआ है। घर से हम निकली हैं या वो लोग हमें डर से छोड़ गये या इन्होंने जबरन छीन लिया ? जो हुआ, उसमें कोई क्या कर सकता था ? किसे दोष दें ?''

''मरना ही है तो जालिमों के हाथ बिक कर, अपनी और मिट्टी खराब करा लेने से पहले मरो। वह बुढ़िया आये तो दरवाजा खोल कर बाहर निकल जायँ। क्या कहीं बाहर कुआँ भी नहीं होगा ?'' तारा ने कहा।

''बल्लो (प्यारी) हर समय तो मरा भी नहीं जाता। मैंने क्या मरने की, कुएँ में कूद जाने की कोशिश नहीं की ? महाराज जी, उस परमेश्वर की इच्छा बिना कोई मर सकता है, मरना-जीना तो उसी के हाथ है। जाने उनके मन में क्या है ?'' बन्ती ने समझाया।

दुर्गा बोल उठी—''जाने किन कर्मों का यह फल है। आत्मघात का पाप करें तो मोरी के कीड़े बन कर जन्मेंगे।''

तारा चुप रह गई।

दूसरे दिन दोपहर में बुढ़िया रोटी लेकर नहीं आई तो स्त्रियाँ घबराने लगीं। दोपहर ढल गई तो स्त्रियाँ नित्य की तरह अपनी बातों में डूब गई। साँझ तक बुढ़िया न आई। स्त्रियों के चेहरे उतर गये। दूसरे दिन स्त्रियाँ भूखी होने पर भी नहायीं। दोपहर आ गयी। रोटी लेकर कोई न आया तो निराश होने लगीं।

बन्ती दीवार के सहारे बैठी हुई कोई जप या पाठ कर रही थी। भूख के कारण तारा को बहुत रात गए तक भी नींद न आई। रात समाप्त हुई, पौ फटी। बन्ती, सतवंत और दुर्गा नहायीं और बड़ी देर तक भजन, पाठ और जप करती रहीं। तारा को लगा भगवान अपने कर्म में शिथिल हो सकता है, यह स्त्रियाँ उसकी पूजा में शिथिल नहीं हो सकतीं। भगवान की इतनी उपेक्षा पर भी यह भगवान के प्रति दयालु हैं।

अमरो प्राय: चुप रहती थी। आज उसका रोता-कुर्लाता स्वर सुनाई दिया—''इस कसाई को हमें बेचना है तो भूखा क्यों मार रहा है ?''

दिन का दूसरा पहर भी आधा बीत गया। ड्योढ़ी के किवाड़ों की साँकल गिरने की आहट हुई। बुढ़िया सिर पर छोटी गठरी लिए आँगन के बीचोबीच आकर बैठ गई। उसने गठरी खोली तो सतवंत, दुर्गा और बंती में लड़ाई हो गई।

बुढ़िया ने विवशता प्रकट करने के लिए अपने होठों पर हाथ रख कर

समझाया, "बेटियो, तुम लड़ती क्यों हो ? मैं क्या करूँ ? सदके (बलिहारी जाऊँ) रोटियाँ क्या तुमसे अच्छी हैं ? मैं तुम्हें भूखा थोड़े ही रखना चाहती हूँ। बेईमान गफ़ूरा पैसे ही नहीं दे गया था। तीन दिन बाद बस एक रुपया दे गया है। मैं आठ रोटियाँ ले आयी हूँ। मैं क्या करूँ ?"

किसी तरह सबने एक-एक रोटी ले ली, परन्तु दुर्गा और सतवंत पहले ही दो-दो रोटियाँ लेकर अलग हो गयी थीं। बुढ़िया जाने लगी तो तारा के पास रुक गई और बोली, "तू भूखी क्यों मरती है, तू मेरे साथ चली चल।"

तारा ने उत्तर नहीं दिया और मुँह फेर लिया।

दूसरे दिन भी बुढ़िया दोपहर तक न आयी। स्त्रियाँ निराश होने लगीं। अकारण ही सतवंत दुर्गा और बंती से लड़ी। तीनों बहुत देर तक बक-बक करती रहीं। दुर्गा कुछ देर तक रोती रही। चौथे पहर ही ड्योढ़ी के किवाड़ खुले और बुढ़िया भीतर आयी। रोटियों की गठरी खुलने पर और भी अधिक झगड़ा हुआ। रोटियाँ पाँच ही थीं। दुर्गा ने सबसे पहले दो उठा ली थीं। सतवंत ने दुर्गा को गाली देकर केशों से पकड़ लिया। दुर्गा ने एक हाथ में रोटियाँ दबाये दूसरे हाथ से सतवंत का कुरता कंधे से खींच कर फाड़ दिया। दोनों में बहुत लड़ाई हुई। दोनों ने एक-दूसरे की इज्जत बिगड़ने की, बच्चे मरने की गालियाँ दीं। एक-दूसरी के बाल नोचे, कोहनियों से एक-दूसरी को मारा और दाँत भी काट लिए। रोटियों के भी टुकड़े-टुकड़े होकर आँगन के फर्श पर बिखर गये।

बुढ़िया चिन्ता और विवशता प्रकट करने के लिए होठों पर हाथ रखे इस दृश्य को देख रही थी।

बंती और तारा ने रोटियाँ को उठाकर सँभाला। बुढ़िया ने बहुत संवेदना के स्वर में अपनी विवशता प्रकट की —"मैं कुर्बान, मैं सदके ! रोटियाँ क्या तुम से अच्छी हैं ? मेरा बस चले तो हलवे और मण्डे (पतली रोटियाँ) खिलाऊँ। क्या करूँ बेईमान गफ़ूरा कुछ दे ही नहीं गया। मेरे पास दस आने थे। मैं पाँच रोटियाँ ले आयी और क्या करती ?"

बंती रोटियाँ के टुकड़े इकट्ठे करके बराबर-बराबर हिस्से कर रही थी। बुढ़िया चलने लगी तो उस ने फिर तारा को संबोधन किया—"बेटी, मैं कुर्बान जाऊँ ! सुन, तू यहाँ आकर बेकार मर रही है। तुझे बता दूँ, बदमाश गफ़ूरा बहुत बुरा आदमी है।"

तारा ने ग्लानि से मुँह फेर लिया।

तारा ने बुढ़िया की बात दूसरी स्त्रियों को बताई और अनुमान प्रकट किया कि वह हमें भूखा रख कर यहाँ से फुसला कर ले जाना चाहती है। बंती ने बताया कि यह बुढ़िया यहाँ से ले जाकर शहर में पेशा करवायेगी।

दो दिन बाद अभी धूप आँगन में उतर भी नहीं पायी थी कि साँकल झन-झना उठी। स्त्रियाँ दरवाजा खुलते ही भय से कोठरियों में चली गयीं। गफ़ूरा (मूछों वाले आदमी का नाम गफ़ूरा था) और उसके साथ एक आदमी और दो

लड़कियों को घसीटते हुए लाये थे। वे लोग लड़कियों को आँगन में छोड़कर चले गए।

उनके जाते ही सारी स्त्रियाँ बाहर आँगन में आ गईं। पूछताछ करने पर स्त्रियों ने पता लगा लिया कि वे दोनों 'टोबाजारा' की थीं। एक कुआँरी थी, उसका नाम केसरी था और दूसरी उसकी भाभी थी बिशनी।

दोपहर में फिर किवाड़ खुलने की आहट हुई। स्त्रियों ने बुढ़िया के आने की आशा से ड्योढ़ी में झाँका, परन्तु फिर वही मूछों वाला गफूरा था। वह रोटी की गठरी लाया था। सारी स्त्रियाँ कोठरियों में दुबक गईं। जब कोई न निकली तो गफूरे ने गठरी रख दी और कह दिया कि रोटियाँ रखी हैं और चला गया। उस दिन रोटियों की ढेरी नित्य से बड़ी थी। सब ने जी भर रोटी खायी।

अगले दिन फिर बुढ़िया रोटियाँ लेकर आयी तो रोटियों की संख्या कम थी। आज सतवंत उससे कुछ झगड़ गई। बुढ़िया बड़बड़ाती हुई वापस चली गई। दूसरे दिन कुछ ज्यादा रोटियाँ ले आयी।

बुढ़िया के जाने के बाद फिर दरवाजा खुलने की आवाज सुनकर स्त्रियाँ डर गईं और जल्दी से कोठरी में घुस गईं। इस बार गफूरे के साथ एक प्रौढ़ और एक जवान और था। वे तीनों कोठरी में आ गये। स्त्रियाँ भय के कारण दीवारों के साथ सिर झुकाये कोनों में सिमट गयीं। प्रौढ़ और जवान बाप-बेटा थे। वे दोनों घूम-घूम कर स्त्रियों को देखने लगे। सब को देखने के बाद वे आँगन में जाकर बात करने लगे। तीनों फिर कोठरी में आये। गूफरे ने दुर्गा को बाँह से पकड़ कर बाहर की ओर खींचना आरम्भ किया।

स्त्रियों के कलेजे धक-धक कर रहे थे। वे भयभीत और विवश थीं। दुर्गा के चीखने-रोने की पुकार ड्योढ़ी के दरवाजे की ओर चली गई। किवाड़ों के खुलने और मुँदने की आहट हुई। स्त्रियाँ बहुत देर तक सहमी हुई चुपचाप बैठी रहीं और फिर रो पड़ीं—हाय, हमारा जाने क्या होने को है, जाने क्या बीतेगी ? कोई इस तरह पकड़ कर उठाकर ले जायगा तो क्या कर सकेंगी ? परमेश्वर ही रक्षा करेगा !

दूसरे दिन बुढ़िया दोपहर से कुछ पहले ही रोटियाँ लेकर आ गई। दुर्गा को न देखकर बोली—"ले गया न उसे ? मैं कहती तो थी ···" उसने गाली दी, "सब को बेच डालेगा। बेचारी भली लड़कियाँ हैं।"

प्रत्येक दिन बीतने पर तारा को अनुभव होता है कि वह निराशा के अन्धकूप में गहरी उतरती जा रही थी। सोचती, अगर वह अकेली होती तो कुछ न कुछ कर बैठती। उसे अन्य स्त्रियों की संगति असह्य जान पड़ने लगी थी। सोचती, यह सब तो भगवान की कृपा से उद्धार की आशा किये बैठी रह सकती हैं, कभी निराश न होंगी। इनके देखते दुर्गा चली गई। यह सोचती हैं, भगवान दुर्गा की नहीं, इनकी ही चिन्ता करेगा। मैं कैसे बैठी रहूँ ? भगवान तो हमारी अपेक्षा हमें यहाँ कैद करने वाले ज़ालिम गफूर और उसकी बूढ़ी कंजरी के ही पक्ष में जान पड़ता है।

तारा को जान पड़ रहा था कि भूख और कैद से वह पशु बनती जा रही थी।

उसका आत्म-सम्मान और व्यक्तित्व समाप्त होता जा रहा था। निराशा में सोचने लगती, इस कैद से छूटने के लिए, इन मूर्ख स्त्रियों से पिंड छुड़ाने के लिए बूढ़ी कंजरी की बात मानकर यहाँ से तो किसी तरह निकले। किसी प्रकार मर सकने का तो अव-सर मिले। यह जीवन तो मृत्यु से भी बुरा है। सोचा, यदि आज भी बुढ़िया आकर स्नेह दिखाये तो 'हाँ' कर दे।

दिन लगभग एक पहर चढ़ गया था। सूर्योदय से पूर्व ही बादल घिर आये थे। समय का अनुमान कठिन था। ड्योढ़ी के किवाड़ों पर जोर-जोर से चोटों की आहट हुई। स्त्रियों का ध्यान उस ओर गया। किवाड़ों की साँकल गिरने की झनझनाहट नहीं हुई। खट-खट का शब्द हो रहा था। स्त्रियाँ भय से कोठरियों में हो गई थीं। बुढ़िया इतने सवेरे कभी नहीं आई थी। स्त्रियों को गफूर के आने की ही आशंका हुई। उसके आने पर सदा ही भय का कारण होता था। स्त्रियों के कान सतर्क थे। कुछ समझ न पाने से स्त्रियाँ बहुत डर गई थीं।

धक्के से किवाड़ों के खुलने का शब्द हुआ और उस के साथ ही बहुत से लोहा लगे बूटों के कदमों की आँगन में आने की खटपट सुनाई दी। सतवंत और बंती किवाड़ों की ओट से आँगन में देख रही थीं। वे सहम कर पीछे हट गयीं। दूसरी स्त्रियों की ओर देखकर उन्होंने आतंक से कहा—"पुल्स-पुल्स, (पुलिस) सिपाई (सिपाही) !"

स्त्रियों के दिल डूबने लगे। उत्पात के आरम्भ से पुलिस और सिपाहियों से उन्हें अत्याचार ही मिला था। उनके अधिक सशक्त होने से, उन्हें और अधिक भय और आशंका थी।

आँगन से हुक्म सुनाई दिया—"कोठरियों में जो हैं बाहर आ जायँ! हम तुम्हारी मदद के लिए आये हैं।"

स्त्रियाँ आतंक और मूढ़ता की अवस्था में एक साथ सिमट गईं। सब तारा की ओर देखने लगीं। क्या करें? अब क्या होगा?

तारा उत्तरदायित्व समझ कर साहस से आगे बढ़ी। उसने किवाड़ों की ओट से झाँका। आँगन में उसे वर्दी पहने पुलिस का एक इन्स्पेक्टर, चार पुलिस सिपाही, कुछ वर्दी पहने सैनिक और एक सैनिक अफसर भी दिखाई दिये। उनके साथ दो सफेद-पोश नौ-जवान थे। एक साधारण कमीज-पतलून पहने था, दूसरा कमीज-सल-वार पहने था। एक जवान हिन्दू स्त्री, खद्दर की कमीज-सलवार में और हिन्दुआनी ढंग से दुपट्टा ओढ़े हुए थी। स्त्री के चेहरे पर भय की स्तब्धता नहीं थी।

तारा सब की ओर से बोली—"बहन जी, आप इधर आ जाइये!"

जवान स्त्री के समीप आ जाने पर तारा ने कहा—आप भीतर आ जाइये, हम लोगों के पास पहनने-ओढ़ने का कपड़ा नहीं है, मर्दों के सामने कैसे हों।"

जवान स्त्री कोठरी के भीतर आ गई। उसने कोठरी में सिमटी हुई स्त्रियों को देखा, तारा से बात की और उन्हें प्रतीक्षा करने के लिए कह कर बाहर चली गई।

दो-तीन मिनट पश्चात वह स्त्री कपड़ों की एक गठरी लेकर कोठरी में लौट

आई । स्त्रियों ने दुपट्टे ओढ़ लिए । बंती के लिए सलवार भी थी । ओढ़-पहन लेने पर भी स्त्रियाँ बाहर निकलने में झिझक रही थीं ।

तारा दुपट्टे से सिर ढँके सब से पहले और शेष स्त्रियाँ घूँघटों में चेहरे छिपाये निकलीं ।

"यू हियर (तुम यहाँ) !" तारा के कानों ने सुना । उसकी आँखें ऊपर उठीं। वह काँप उठी । जान पड़ा, गिर पड़ेगी । उसकी गर्दन झुक गई ।

"आँखों पर विश्वास नहीं कर पा रहा हूँ ।" असद विस्मय से फैली आँखों से तारा को एकटक देख रहा था ।

तारा का सिर चकरा रहा था । बोल पाना सम्भव नहीं था । नवागन्तुक स्त्री ने आगे बढ़ कर उसकी सहायता की । तारा को सम्बोधन कर उसने पूछ लिया—"यहाँ कितनी बहनें हैं ?"

"हम यहाँ अब सात हैं ।" तारा ने उत्तर दिया और लक्खी की चिन्तनीय अवस्था बताती हुई वह नवागन्तुक स्त्री को दूसरी कोठरी की ओर ले गई ।

स्त्री के कहने से सिपाही एक स्ट्रेचर, कुछ कपड़े और कुछ चादरें ले आये । लक्खी पिछली संध्या से पीड़ा के कारण बहुत व्याकुल थी । न लेट पाती थी, न बैठ पाती थी । इस समय भी वह बल खा-खा कर कराह रही थी । बंती और तारा ने लक्खी को कपड़े पहना कर चादरों में लपेट कर स्ट्रेचर पर लिटा दिया । लक्खी सीधे लेट न पा रही थी, परन्तु मर्दों के सामने दाँतों से ओठों को दबाये और स्ट्रेचर के डण्डे को पकड़े अपने को बस में किये थी ।

दो सिपाही स्ट्रेचर को बाहर ले चले । नवगंतुक महिला ने अफसर के साथ सब कोठरियों में झाँक-झाँक कर देखा । अफसर सिपाहियों को लेकर, जीने का ताला तोड़ कर छत पर भी गया ।

नवागन्तुक स्त्री ने तारा से कहा—"हमें तो खबर मिली थी कि यहाँ दस-बारह स्त्रियाँ बन्द हैं ?"

तारा ने उसे विश्वास दिलाया कि इस समय तो यहाँ सात ही थीं ।

सिपाहियों ने सब से पहले स्ट्रेचर पर पीड़ा से कराहती हुई लक्खी को आँगन से बाहर किया । उन के पीछे-पीछे सब स्त्रियाँ बाहर निकलीं ।

बाहर कई सिपाही राइफिलें लिये चौकसी में खड़े थे । तारा ने पहचाना, असद के साथ दूसरा व्यक्ति जुबेर था । तारा को पहचान कर उसके भी ओंठ खुले रह गये। बड़ी कठिनता से केवल नमस्ते कह सका । जुबेर ने भी विस्मय प्रकट किया—"तुम यहाँ कैसे आ गईं ?"

भारतीय सरकार की प्रतिनिधि श्रीमती कौशल्या देवी, परिवारों से छीनकर पाकिस्तान में रोक ली गई हिन्दू स्त्रियों का उद्धार करने के लिए सुरक्षा के पूरे प्रबन्ध से शेखूपुरा गई थीं । सबसे आगे जीप पर पाकिस्तानी पुलिस का सब-इंस्पेक्टर सशस्त्र पुलिस सिपाहियों के साथ था । दूसरी जीप में भारतीय सशस्त्र सैनिक थे । दो जीपों के पीछे एक छोटी बस उद्धार की हुई स्त्रियों के लिए थी । बस के पीछे रक्षा

के लिए भारतीय सशस्त्र सैनिक गाड़ी थी। बस में ड्राइवर के साथ भी एक भारतीय सैनिक छोटी मशीनगन लिए बैठा था।

बस में सब से आगे कौशल्या देवी जुबेर के साथ बैठ गईं। असद ने तारा को सबसे पीछे की सीट पर बुला लिया था, स्त्रियों को बैठा कर खाली स्थान में कराहती हुई लक्खी का स्ट्रेचर रख दिया गया था।

जीपें और बस शेखूपुरा की उजड़ गई-सी बस्ती के बीच से जरनैली सड़क की ओर बढ़ने लगीं। तारा के समीप बैठा असद अंग्रेजी में बोला—"मैं तो अब भी अपने विस्मय को वश में नहीं कर पा रहा हूँ।"

तारा सिर झुकाये चुप रही।

असद ने बताया—"चार दिन पूर्व यहाँ एक जवान मुसलमान पार्टी-आफिस में आया। भय के कारण उसने अपना नाम-धाम नहीं बताया। वह खबर दे गया था कि मण्डी के पीछे के मुहल्ले में, उधोदास के मकान में दस-बारह हिन्दू-स्त्रियाँ कैद है। हम लोगों ने 'इंडियन-लियासों अफसर', (सम्पर्क अधिकारी) से कार्रवाही करने के लिए कहा। इंडियन मिलिटरी पाकिस्तानी गवर्नमेन्ट की अनुमति के बिना और पाकिस्तानी पुलिस को साथ लिये बिना कोई जाँच-पड़ताल नहीं कर सकती। इसी कार्रवाई में चार दिन लग गये पर यह क्या मालूम था कि तुम यहाँ होगी! यह हुआ कैसे?"

तारा मौन खिड़की से बाहर देखती रही। एक वाक्य में क्या उत्तर दिया जा सकता था, बोलते भी नहीं बन पड़ रहा था। मन में आ रहा था, क्या बोले, क्या कहे, वह तो मिट्टी का ढेर बन चुकी थी। उसकी आँखें सड़क के किनारे जगह-जगह ध्वंस के निशान देख रही थीं। टूटी हुई बैलगाड़ियाँ, लाशें, कहीं बैलों के पिंजरों के समीप गिद्धों और कुत्तों में झगड़ा चल रहा था, तीव्र दम-घोंट देने वाली दुर्गन्ध...।

"पुरी मुझे जुलाई की इकत्तीस या अगस्त की पहली तारीख को मिला था। बहुत ही उदास था। मैं कुछ समझ नहीं पा रहा हूँ। तुम्हारे परिवार के लोगों का विश्वास है कि तुम्हें बन्नी-हाते की आग से बचाया नहीं जा सका। उन्हें किसी दूसरी बात का अनुमान या संदेह भी नहीं था।" असद धीमे स्वर में बोल रहा था जैसे स्वगत बोल रहा हो।

उन्हें तो ब्याह कर देने से मतलब था। उनके लिए तो मैं मर ही गयी। वे मुक्ति पा गये—तारा ने मन ही मन उत्तर दिया पर बोल न सकी।

उधोदास की हवेली से उद्धार की हुई स्त्रियों को लिए सैनिक दल रावी नदी का पुल पार करके लाहौर की सीमा में आ गया। तारा की आँखों के सामने से पहचाने हुए स्थान गुजर रहे थे, परन्तु उनकी रंगत बदल गई लगती थी। गाड़ियाँ रावी के पुल पर थीं तो सुबह से घिरे हुए बादल बरसने लगे थे। सड़क के किनारे-किनारे लगे इमारती लकड़ी, ईंधन और बाँस के टाल आँसू बहा कर रोते हुए जान पड़ रहे थे। आकाश रो रहा था, वृक्ष रो रहे थे और दुकानों और मकानों पर से वर्षा आँसुओं की धाराओं की तरह बह रही थी।

तारा बचपन में उस सड़क पर शीलो, धन्नो और विद्दो के साथ कई बार रंगीन चुन्नियाँ ओढ़े, रावी-स्नान के लिए जाती हुई मां और दूसरी स्त्रियों के आगे-आगे किलकती-कूदती हुई दौड़ लगा कर पुल तक गई थी। तब वहाँ क्या भय था ? तब हिन्दू-मुसलमान आपस में बैरी नहीं थे।

असद तारा की ओर झुक कर आहिस्ता से बोला—"तुम्हारा परिवार तो लाहौर से जा चुका होगा। पुरी तभी नैनीताल या यू० पी० में कहीं नौकरी के लिए जाने की बात कह रहा था। हिन्दू लगभग सभी चले गये हैं या निकाल दिये गये हैं, शेष को निकाला जा रहा है। यही पालिसी है। नरेन्द्रसिंह का परिवार तो बहुत संकट में फँस गया था। उसे तो हम लोग अमृतसर तक पहुँचा कर आये हैं। प्रद्युम्न, महाजन सभी लोग चले गये हैं। पुरी को खबर कैसे दी जा सकती है ? तुम्हें उसका पता मालूम है ?"

तारा ने इन्कार में सिर हिला दिया।

"तो फिर क्या विचार है ?"

तारा ने मौन रह कर हाथ से कुछ न जानने का संकेत कर दिया।

गाड़ियों की पंक्ति डी० ए० वी० कालेज और टिब्बा फरीद पुलिस चौकी के बीच, कालेज की इमारत के सामने खड़ी हो रही थी। इमारत के माथे पर सोने से 'ॐ' बना हुआ दमक रहा था।

"अपने-आपको हिन्दू कह कर तो तुम लाहौर में रह नहीं सकोगी !" असद ने तारा की ओर झुककर झिझकते हुए कहा।

तारा की गर्दन झुकी हुई थी। उसकी कल्पना में हाफिज जी के घर में बिताये हुये दिन कौंध गये।

तारा ने असद से आँखें बचाने के लिए और मन में भर आया उच्छ्वास छोड़ सकने के लिए आकाश की ओर मुख उठा कर गहरी साँस ली।

इमारत के शीर्ष पर बना 'ॐ' भी भक्तों द्वारा पीछे छोड़ दिया जाने के कारण, वर्षा में रोता हुआ जान पड़ रहा था।

लक्खी को स्ट्रेचर पर बस में लिटा कर किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया था कि उसकी कराहट कब बन्द हो गयी थी। गाड़ी रुकने पर मालूम हुआ कि लक्खी समाप्त हो चुकी थी।

कौशल्या देवी और जुबेर गाड़ी से उतर गये। दूसरी स्त्रियाँ रास्ते में रखा स्ट्रेचर उतार लिये जाने की प्रतीक्षा में थीं।

असद ने तारा के कान के समीप मुख कर बहुत दबे हुए स्वर में कहा—"अब अपने भविष्य का निश्चय तुम्हें स्वयं ही करना होगा, यही समय है।"

भारतीय सैनिक अफसर चाहता था कि लक्खी के शव का उत्तरदायित्व पाकिस्तानी पुलिस ले, क्योंकि उसकी मृत्यु हिन्दू कैम्प की सीमा के बाहर, पाकिस्तान में हुयी है। पाकिस्तानी पुलिस इन्सपेक्टर जीवित भारतीय प्रजा को भारतीय अधिकारी को सौंप देने के बाद उसके शव का उत्तरदायित्व लेने के लिए तैयार न था।

डी० ए० वी० कालेज और स्कूल के छात्रावासों की, बड़े-बड़े आँगनों को घेरे हुए, छोटे-मोटे नगर के क्षेत्रफल में फैली हुई दो-मंजिली इमारतें, उनमें भरी हुयी भीड़ के शोर से मधुमक्खियों के छत्तों की तरह भनभना रही थीं। बीच के आँगनों के मैदान खेमों और छोलदारियों से भरे हुए थे। उनके बीच-बीच बची धरती पर बरसात में घास बढ़ आयी थी। वातावरण दुर्गन्ध और कोलाहल से भारी था।

असद तारा के साथ निधड़क हिन्दू कैम्प में चला गया। कौशल्या देवी उसे विश्वास योग्य और सहायक मानती थीं। असद ने तारा से अंग्रेजी में कहा—"अभी तुम्हारा मन बहुत विक्षिप्त है। कुछ विश्राम कर लो और सोचना। मैं संध्या पाँच और छः बजे के बीच आऊँगा। असद तारा के ठहराये जाने का स्थान देख कर चला गया।

श्रीमती कौशल्या देवी ने शेखूपुरा से लायी गयी अनाथ स्त्रियों को डी० ए० वी० कालेज के कैम्प में उद्धार की हुयी स्त्रियों के लिए नियत कमरे में ठहरा दिया। एक नौजवान रजिस्टर ले आया। कौशल्या देवी नयी आयी स्त्रियों और उनके अभिभावकों के नाम-धाम लिखवाने लगीं। तारा का नाम जानने के कारण सबसे पहले उसी का नाम लिखवा दिया और उसके अभिभावकों का नाम-धाम पूछा।

"मेरे परिवार के लोग लाहौर से चले गये हैं।" तारा ने उत्तर दिया।

"पर उनका नाम-धाम ?"

"कोई लाभ नहीं।"

"आखिर तुम जाना कहाँ चाहती हो ?"

"अभी कुछ नहीं कह सकती, सोचूंगी ?"

"शेखूपुरा कैसे पहुँचीं ?"

"मुझे उठाकर मोटर में डाल कर ले गये थे।"

"किसके घर से ? किसी गली या बाजार से ?"

"नहीं मालूम, मैं नहीं जानती।"

कौशल्या देवी और नौजवान चिढ़ गये—"कोई तो नाम बताओ, जिसे तुम्हारा पता दिया जाये !"

"मेरा कोई नहीं है।"

कौशल्या देवी और नौजवान को इतनी फुरसत न थी कि घण्टों एक ही स्त्री के लिये माथा-पच्ची करते रहते। वे दूसरी स्त्रियों से पूछ-ताछ करने लगे। कौशल्या देवी ने सभी स्त्रियों को दो-दो मुट्ठी भुना हुआ अन्न और थोड़ा गुड़ दिलवा दिया। वह इन स्त्रियों को लेकर संध्या से पूर्व अमृतसर पहुँच जाने के लिए गाड़ी की व्यवस्था करने के लिए चली गईं।

बन्ती निरन्तर तारा से चिपकी हुई थी और अनुरोध कर रही थी—"बहना, मुझे अमृतसर पहुँचा कर मेरे घर वालों का पता ढूँढ़ दे। तू ही कुछ कर सकती है। तू पढ़ी-लिखी है। मैं अपढ़-गंवार, किसी से बात करना भी नहीं जानती।"

तारा बराम्दे के फर्श पर दीवार से पीठ लगाये बैठी एक हथेली पर कनपटी

टिकाये सोच रही थी, क्या करें ? पिता, माँ, भाई मालूम नहीं यू० पी० में कहाँ चले गये हैं ? उनके लिए तो मैं मर चुकी हूँ, जल भी चुकी हूँ, संसार में शेष नहीं हूँ।

असद पाँच-छः बजे आयेंगे। एक बार मैंने स्वयं ही उनसे कहा था, आज वह कह रहे हैं···न न, किसी भी पुरुष का विश्वास नहीं।···तभी मान लिया होता तो दूसरी बात थी, तो यह सब होता ही क्यों ? ···पर वह होता कैसे···क्या मालूम, वह मान भी जाते तो हिन्दू-मुसलमान और पाकिस्तान का झगड़ा तो रुक नहीं जाता ! ···सोमराज, नब्बू, हाफिज जी और गफूर के हाथों तो न पड़ती।

····अपने-आपको हिन्दू कह कर तो तुम लाहौर में नहीं रह सकोगी। असद की बात याद आई। भाई और वह हिन्दू-मुसलमान के भेद को मानते ही कहाँ थे ? सुरेन्द्र, नरेन्द्र, जुवेदा, प्रद्युम्न, जुबेर, महाजन कोई भी ऐसा भेद नहीं मानता था, परन्तु उनके न मानने से क्या हुआ ? उस भेद का वीभत्स व्यवहार और परिणाम सब ओर मौजूद था।

···असद कुछ भी हो, जैसा भी हो जन्म से तो मुसलमान है पर वह गफूर, नब्बू, हाफिज जी और अमजद जैसा तो नहीं, उन लोगों से बिलकुल उलटा है। वह और जुबेर ही तो हिन्दू स्त्रियों को छुड़ाने के लिए गये थे।

···लेकिन जाऊँ तो कहाँ ? परिवार के लिए तो मर चुकी ! जल चुकी, जीवित हूँ तो ससुराल से भागी हुई।···असद की शरण ले लूँ ? पहले क्या उससे स्वयं शरण नहीं माँगी थी ? वह तो प्रेम था। प्रेम···? शीलो-रतन···नानसेंस !··· पुरुष-पशुओं से दूर।

···अन्य स्थान और परिचित भी कौन है ? क्या करूँ, पाँच बजे असद आयेंगे तो क्या उत्तर दूँगी ? असद का वेदना से भर्राया हुआ धीमा स्वर कानों में गूँजने लगा।···वही परिचित हैं, उन्हें ही मेरी चिन्ता है।

"चलो री चलो, उठो चलो !" कौशल्या देवी की पुकार सुन कर तारा की आँखें बाईं ओर घूम गईं। कौशल्या देवी लम्बे बराम्दे में छोटे-छोटे कदमों की तेज चाल से चली आ रही थी। ओढ़नी की एक खूंट हाथ में पकड़े हुए थी। ओढ़नी उसके पीछे वायु से भरे नाव के पाल की तरह फूली हुयी थी।

"जल्दी चलो ! तुम लोगों के लिए गाड़ी मिल गई है, नहीं तो फिर तीन दिन यहाँ ही पड़ी रहोगी।"

सतवंत, दुर्गा, अमरो, बिशनी, केसरी और बंती उठने के लिए सिमटने लगीं। उनकी आँखें तारा की ओर थीं।

"जल्दी करो ना !" कौशल्या देवी ने उन्हें एक बार और सम्बोधन किया और अभी तक शिथिल बैठी तारा को उग्र स्वर में चेतावनी दी, "उठ न !"

"बहन जी मुझे अभी रहने दीजिये।" तारा झिझकते हुए बोली।

"क्या ?" कौशल्या देवी के माथे पर त्योरियाँ पड़ गयीं, "क्यों ! तेरा यहाँ क्या है ?"

"मेरे मिलने वाले हैं।"

"अभी कह रही थी मेरा कोई नहीं है, अब कह रही है मिलने वाले हैं। यह क्या चरित्तर है ? अभी कम भुगता है जो और खेल खेलना चाहती है ! देखो तो इसे !" कौशल्या देवी ने ऊँचे स्वर में धमकाया, "हमारा काम तुझे पाकिस्तान से निकाल कर हिन्दुस्तान में पहुँचाना है, फिर चाहे जो खेल खेलना ! चुपचाप चल कर गाड़ी में बैठ जा, नहीं तो कैम्प से बाहर निकाल दूँगी ! क्या तमाशा है ?"

"बहन जी मुझे सोच लेने दीजिये !" तारा ने अनुनय किया।

"सोचना-साचना अम्बरसर (अमृतसर) जाकर कर लेना। चल उठ !" कौशल्या देवी ने तारा की बाँह पकड़ कर उसे उठा दिया और शेष स्त्रियों के साथ उसे ले चली।

•

फौलादी टोपियाँ पहने सशस्त्र सैनिकों से भरी सैनिक मोटर गाड़ी के पीछे शेखूपुरा से उद्धार की गयी स्त्रियों को लिये स्टेशन-वैगन थी। स्टेशन-वैगन के पीछे शरण के लिए भारत भेजे जा रहे हिन्दू परिवारों से ठसाठस भरी हुई पाँच बसों के पश्चात् एक सशस्त्र सैनिक गाड़ी और पाँच बसें थीं। उनके पीछे दो और सैनिक गाड़ियाँ भी थीं। प्रत्येक बस में ड्राइवर के साथ फौलादी टोपी पहने, मशीनगन लिये सिपाही बैठा था। शरणार्थियों का यह काफिला अमृतसर की ओर चला जा रहा था।

ठसाठस

कौशल्या देवी को इस मार्ग का अनुभव था, इसलिए उसने ड्राइवर के पीछे की सीट पर तारा को खिड़की के साथ बैठा दिया था, स्वयं वह खिड़की से हटकर बैठी थी। उन दोनों के पीछे शेष स्त्रियाँ थीं। तारा आँखें मूँदे सोचती जा रही थी···असद पाँच-छः बजे आएगा। जो मैं चाहूँगी वह कभी नहीं हो सकेगा। मुझे सदा पिसते-कुचले जाते रहना होगा। मैं सदा भाग्य की धारा में बहता जाता कूड़ा-करकट ही बनी रहूँगी। मैं अड़ कर खड़ी क्यों नहीं हो सकती हूँ ?···इसीलिये मैं मर भी नहीं सकती हूँ।

गाड़ी सहसा धीमी हो जाने के कारण झटका लगकर तारा की आँख खुल गई। तीखी दुर्गंध अनुभव हुई। सड़क के दोनों ओर बहुत सी आधी खाई, धूप से सूख कर, वर्षा से सड़ कर काली हो गई लाशें पड़ी हुई थीं। लाशों पर बहुत से गिद्ध कूद और उछल रहे थे, कुछ बैठे चोंचें मार रहे थे। जहाँ-तहाँ टूटे हुए बक्स मुँह बाये पड़े थे। आधी जली हुई कई बसें सड़क के दायें-बायें पड़ी थीं। जली हुई दो बसें सड़क के बीच में फँस जाने से रास्ता रुका हुआ था। सड़क तंग हो जाने के कारण शरणार्थी काफिले की गाड़ियों के दाहिने पहिये कच्ची रेतीली जमीन पर उतर गये थे। मोटरों को बहुत धीमे चलना पड़ रहा था।

कौशल्यादेवी ने सिख ड्राइवर को सुना कर परेशानी प्रकट की—"यह रास्ता कभी साफ होगा भी कि नहीं ? नौ दिन से बसें यहीं पड़ी हैं।"

"बहन जी, आप नौ दिन से देख रही हैं !" ड्राइवर ने उत्तर दिया, "मैं महीने भर से यही हाल देख रहा हूँ। कैसी बदबू फैल रही है ! लाशें हिन्दुओं की

हैं पर इस सड़ांध से बीमारी फैलेगी तो मरने वाले तो पाकिस्तान की ही रिआया होंगे। इस सरकार को अपनी रिआया के मरने-जीने का भी ख्याल नहीं। बहिन जी, सुना है इस काफिले में से एक भी हिन्दू नहीं बचा था। दो सौ से कम आदमी नहीं कटा होगा। जनाना को तो बेईमान मिमियाती, रँभाती बकरियों की तरह खींच ले जाते हैं।

"परमेश्वर ही अक्ल दे इन लोगों को।" कौशल्या देवी ने दुख प्रकट किया। अड़चन पार करके मोटरें फिर तेजी से चलने लगीं। सड़क के दोनों ओर थोड़े-बहुत अन्तर पर लाशें, कटे हुए अंग या ध्वंस के दूसरे चिन्ह निरंतर दिखाई देते जा रहे थे। वह सब न देखने के लिए तारा ने आँखें मूँद ली थीं।

मोटर की गूँज के कारण ड्राइवर और कौशल्या देवी ऊँचे स्वर में बात करते जा रहे थे। तारा को उनकी बातचीत का शब्द सुनाई दे रहा था पर उधर उसका ध्यान नहीं था। वह सोचती जा रही थी, क्या होगा? वह मृत्यु से भी अधिक यंत्रणा सह चुकी थी। माता-पिता, भाई को कैसे कहाँ ढूँढ़ पायेगी। उन्हें ढूँढ़ कर करेगी भी क्या? भाई से इतना सह कर भी उन्हीं के पास जायेगी? उनके सामने अपराधी बन कर खड़ी होगी? अब उसे पाँव रखने की भी जगह कहाँ मिलेगी, पर उसे कोई जगह तो चाहिए।

गाड़ी धीमी होकर थम गई। तारा की आँखें झटके से खुल गईं। ड्राइवर गाड़ी की खिड़की से सिर निकाल कर सामने की ओर देख रहा था। परेशानी में बोला—"ओह, बेड़ा गरक! अब रास्ता कैसे मिलेगा बहिन जी! कल यह लोग अटारी में थे। एक दिन में छः मील आये हैं। चलने की ताकत ही कहाँ रह गई है इनमें। सुना है, मुसलमानों का यह काफिला जालन्धर, लुधियाना और अम्बाला जिलों से आ रहा है। इस भीड़ के बीच से मोटर आदमी की चाल से चल पाये तो बहुत समझो। आधी रात से पहले अम्बरसर नहीं पहुँच सकेंगे...।"

सामने चलने वाली फौजी मोटरों से कोई हुक्म सुनाई दिया।

सिपाही मोटरों से कूद पड़े और शस्त्र सँभाल कर स्टेशन-वैगन और काफिले की मोटरों के दोनों ओर चौकसी के लिए खड़े हो गये। सवारियाँ आतंक से सिमिट कर बसों से बाहर देखने लगीं। सामने से मोटरों के दाहिने-बायें लड़खड़ाते-लँगड़ाते लोग चले आते दिखाई दिये।

"हाय-हाय! आ गये! आ गये! आ गये!" अमरो, सतवंत और बिशनी भय से चिल्ला उठीं।

"चुप रहो! चुप रहो! डरो मत!" ड्राइवर और कौशल्या देवी ने स्त्रियों को डाँट कर आश्वासन दिया, "यह क्या मारेंगे, खुद मरे हुए हैं, देखती नहीं हो, कमर टूटे हुए कुत्तों की तरह कढ़िल रहे हैं।"

मोटरों के दोनों ओर लँगड़ाती-लड़खड़ाती भीड़ बढ़ती आ रही थी। कतरी हुयी और उलझी हुई दाढ़ियाँ, दबी हुई टोपियाँ, रस्सी की तरह लपेटी हुई मैली पगड़ियों में से झाँकते मुँड़े हुए सिर, काले, नीले, चीथड़े कपड़े, स्त्री-पुरुषों के चेहरे

आँसुओं और पसीने से जमी गर्द से ढँके हुए, कमरें झुकी हुई, घिसटते-लँगड़ाते हुए कदम। भीड़ फट कर मोटरों के दाहिने-बायें, दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह आदमियों की लहरों में आती जा रही थी। भीड़ के ऊपर मँडराती मक्खियों को साँस के साथ नाक में घुसने से रोकने के लिए उन्हें दोनों हाथों से निरन्तर हटाते रहना आवश्यक था। उबकाई पैदा करने वाली भयंकर दुर्गन्ध, मानो वे शरीर चलते-फिरते भी सड़ते-गलते जा रहे थे। भीड़ के घसिटते कदमों से उड़ती धूल से साँस लेना और भी दुष्कर हो रहा था।

भीड़ के प्रायः सभी लोग कुछ न कुछ, छोटा-मोटा बोझ उठाये थे। बहुत सी स्त्रियों की कमर या पीठ पर, पुरुषों के कन्धों पर सोये हुए, सूखे-से मारे घिनौने बच्चे चिपके हुए थे। किसी की पीठ पर बोरी, किसी के सिर पर कनस्तर काट कर बनाया हुआ बक्सा, किसी के कन्धे पर गठरी, कोई सिर पर रखी उल्टी खाट पर अपनी गृहस्थी उठाये लिये जा रहा था। कोई स्त्री-पुरुष दोनों ओर से उल्टी खाट को सिरों पर उठाये थे। खाट पर गठरी-मुठरी रखी थी और मैले, कुम्हलाये हुए बच्चे बैठे थे।

काफिले के बहुत से मर्दों के हाथ में सांत्वना का और थकावट दूर करने का एक मात्र सहारा मिट्टी के हुक्के थे। कई स्त्रियों के सिरों पर मिट्टी के चूल्हे थे। कोई-कोई सिर पर अपनी एक मात्र सम्पत्ति परात या पतीला औंधाये चले जा रहे थे। कोई स्त्री सिर पर हल्की चक्की ही उठाये लिए चली जा रही थी। किसी के सिर पर पंजे बँधी दो मुर्गियाँ या एक मुर्गा रखा था। कोई रस्सी से बकरी या भेड़ को खींचे लिये जा रहा था। किसी की बगल में या कन्धे पर नया पैदा हुआ मेमना लदा था। कहीं-कहीं कोई पेट चिपका, सूखा, मरियल कुत्ता इस अवस्था में भी अपने स्वामी की भक्ति में पीछे-पीछे चला जा रहा था। भीड़ घनी होती जा रही थी।

शरणार्थी काफिले की मोटरें कई मिनट तक निश्चल खड़ी रहीं। ड्राइवर, कौशल्या देवी, तारा और सभी स्त्रियाँ परेशान थीं। वे दुर्गन्ध से बचने के लिए नाक को दबाये या हाथों से मक्खियों को हाँके जा रहे थे।

सामने चलने वाली सैनिक मोटरों का इंजन चालू हुआ तो ड्राइवर ने अपनी मोटर का इंजन भी चालू कर दिया और संदेह में बोला—"देखें कैसे चल पाते हैं। कप्तान साहब ने सिपाहियों को आगे मार्च करके रास्ता बनाने का हुक्म दिया होगा।"

शरणार्थी काफिले की गाड़ियाँ धीमे-धीमे सरकने लगीं। जैसे हल धरती को फाड़ कर दोनों ओर मिट्टी फेंकता जाता है वैसे ही मोटरों के भागने से मुस्लिम शरणार्थी भीड़ फटती जा रही थी। सशस्त्र सिपाही गाड़ी को भीड़ से बचाये रखने के लिए दोनों ओर साथ-साथ पैदल चल रहे थे। गाड़ियाँ पहली गियर में चल रही थीं। इंजनों की गूँज कानों को बहरा किये थी। दुर्गन्ध और मक्खियाँ बढ़ती जा रही थीं। ड्राइवर एक हाथ से गाड़ी का 'स्टियरिंग' पकड़े था, दूसरे हाथ से मक्खियों से लड़ रहा था। परेशानी में और भीड़ के कारण विकलता में 'वाह गुरु ! वाह गुरु !" पुकारता

और होठों में घुसती मक्खियों को हटाने के लिए "थू-थू, थू-थू" करता जा रहा था।

कौशल्या देवी और दूसरी स्त्रियाँ एक हाथ से नाक दबाये और दूसरे हाथ से मक्खियों को हटाती जा रही थीं। स्त्रियाँ आतंक और विपद की उस बाढ़ में पैदल काफिले के बजाय गाड़ी में सुरक्षित होने की सान्त्वना के लिए निरंतर भगवान को याद करती जा रही थीं।

ड्राइवर को ऊँचे स्वर में ही बोलने का अभ्यास था, बोला—"देख लो जी, यह पाकिस्तानी जन्नत का जुलूस आ रहा है। क्या मिला किसी को रसी-बसी परजा को उजाड़ कर?"

"इन्हें हिन्दुस्तान में रहना मंजूर नहीं है तो जायें, अपने लोगों के साथ रहें। पाकिस्तान बनाया किस लिये है?" कौशल्या देवी मुख से भीतर जाती मक्खियों को हाथ से रोक कर बोली।

"इन्हें मंजूर नहीं?" ड्राइवर ने विस्मय प्रकट किया, "क्या कह रही हो बहिन जी! मार-मार कर निकाले गये हैं बेचारे! इधर से हिन्दू, उधर से मुसलमान। पर बहिन जी हिन्दुओं के काफिले भी देखे होंगे आपने, इनका भी देख लीजिये! हिन्दू मारे गये, लूटे गये, उनकी औरतें छीनी गईं, उनकी औरतों पर जुल्म हुआ, पर जो आये हैं अक्सर सवारियों पर। गावों से किसान बैलगाड़ियों पर आ रहे हैं। बल्लो की हैड के रास्ते हिन्दू-सिक्खों का बैलगाड़ियों, घोड़ों और ऊँटों पर पचास मील लम्बा काफिला आया है।

"हिन्दू-सिक्ख लाये हैं बक्से, सन्दूक, नकदी, जेवर और 'बांड'। यहाँ लोग मिट्टी के हुक्के, टूटी चारपाइयाँ, चूल्हे, चक्की, मुर्गियाँ लिये चल रहे हैं। यही इनकी गृहस्थी थी। जिसके पास जो कुछ होगा, उसी से ममता करेगा, वही तो उठाकर ले जायेगा। ठीक ही कहते थे, होते का नाम हिन्दू, मुफलिसी का मुसलमान!"

कौशल्या देवी ने दुखे हुए स्वर में ड्राइवर का समर्थन किया—"भाई ठीक ही कहते हो, पर एक दिन यह सभी हिन्दू रहे होंगे। यह सब हिन्दुओं की अपनी करतूत का नतीजा है। जाने अभी भगवान उन्हें क्या-क्या दण्ड देगा? हरी ओम्! हरी ओम्!"

"बहिन जी सच है, मुसलमानों ने हिन्दुओं को लूटा है।" कौशल्या देवी के समर्थन से उत्साहित होकर ड्राइवर बोला, "पर हिन्दू सैकड़ों बरस से इन लोगों को लूटते, निचोड़ते चले आ रहे हैं, नहीं तो एक ही जमीन पर रहने वालों में अमीरी, गरीबी का इतना फरक क्यों होता? पंजाब की सब जायदाद हिन्दुओं के ही हाथों में क्यों चली जाती? गरीब पहले गुस्से में मुसलमान हुआ, दूसरा गुस्सा यह है। गुस्सा मज़हब का भी है, पर गरीबी का भी है बहिन जी!"

"भाई यह तो कहने की बात है।" कौशल्या देवी ड्राइवर से सहमत न हुई।

तारा आँखें मूँदे, दुर्गन्ध से बचने के लिए एक हाथ से नाक को दबाये, दूसरा हाथ मक्खियों को हटाने के लिए हिलाती जा रही थी। जब एक हाथ थक जाता तो उससे नाक को पकड़ लेती और दूसरा हाथ हिलाने लगती। धीमे चलने के लिए

विवश मोटरों की गूँज से कान बाहरे हो रहे थे। सोच रही थी, यह उस पर अत्याचार करने वालों, हिन्दुओं को मारने वालों की अवस्था है। यह तो मारने वाले नहीं हैं। हिन्दू भी मारे गये। मुसलमान भी मारे गये। मारने वाले पागल जालिम भी इन्हीं में से थे।

गाड़ी खड़ी हो जाने पर तारा को आँख खोलनी पड़ी। दाहिनी ओर सूर्य वृक्षों की चोटियों पर ढल आया था। तारा के मुख पर धूप पड़ रही थी। दोनों हाथ मक्खियों को हटाने में व्यस्त रहने के कारण धूप से आड़ भी नहीं कर सकती थी। गाड़ियों के दोनों ओर लाहौर की ओर सरकते काफिले के कदमों से उठी धूल से दम घुट रहा था।

"क्या 'वागा' आ गया ?" कौशल्या देवी ने पूछ लिया।

"जी, बहन जी ! डेढ़ घण्टे में चार मील आये हैं। वाह गुरू ! वाह गुरू !" ड्राइवर ने उत्तर दिया, "वाहगुरु, चाहे तो आगे रास्ता कुछ साफ मिले। उस तरफ सिपाही ट्रैफिक के लिए कुछ रास्ता बनाये रखते हैं। यहाँ पाकिस्तान का सरहद का चेकिंग है।"

पुलिस के कुछ सशस्त्र सिपाही मोटरों की खिड़कियों से भीतर झाँकते हुए समीप से गुजर गये। गाड़ियाँ चार-पाँच मिनट ठहर कर फिर चल दीं और दो मिनट बाद फिर खड़ी हो गईं।

हिन्दुस्तान की सीमा पर चेकिंग हो रहा था।

●

मोटरें गति के अवरोध की पीड़ा से ऊँचे स्वर में गुर्रा-गुर्रा कर भीड़ को फाड़ती हुई धीमी चाल से चलती जा रही थीं। सूर्य वृक्षों की आड़ में हो गया था। धूल में गुलाबी जान पड़ती किरणें बिदा ले रही थीं।

तारा आँखें मूँदे, एक हाथ से नाक दबाये, दूसरे हाथ से मक्खियों को चेहरे पर न बैठने देने के लिए हिलाती जा रही थी। मोटरों के इन्जनों की गुर्राहट में कान बहरे हो रहे थे, तिस पर भी नगाड़े की तरह कनस्तरों के पीटे जाने की भड़-भड़ाहट सुनाई दे रही थी, परन्तु तारा आँखें मूँदे थी। उसका मस्तिष्क जन्म के देश को छोड़ कर दूसरे देश में प्रवेश की सिरन से थर्रा रहा था।

सूर्य क्षितिज से नीचे उतर गया था। लाहौर की ओर जाने वाले काफिले ने सूर्यास्त का संकेत पाकर सड़क छोड़ दी। काफिला बँटकर सड़क के दोनों ओर बैठ गया, लुढ़क गया और बिछ गया। अमृतसर की ओर जाने वाले काफिले की गाड़ियों की गति बढ़ गई। शेखूपुरा से आई हुई स्त्रियों ने सांत्वना की साँस ली। अँधेरा घना हो रहा था। सड़क के दोनों ओर मीलों दूर तक बिछे काफ़िले के लोग जहाँ-तहाँ आग जला रहे थे। मोटरें चलती जा रही थीं। परन्तु काफ़िले का अन्त नहीं था। मोटरें जरनैली सड़क से फटती दूसरी सड़क पर हो गईं।

शरणार्थियों की बसों का काफिला, नीची दीवार से घिरे हुए एक बड़े से हाते के

फाटक के सामने रुक गया। दीवार के भीतर बिजली का तीव्र प्रकाश था। दीवार के भीतर छोलदारियों और शामियानों की छतें दिखाई दे रही थीं। अहाते से भीड़ के कोलाहल की गूँज सड़क पर भी सुनाई दे रही थी।

"लो बहनो पहुँच गये !" कौशल्या देवी ने सांत्वना की आह भर कर स्त्रियों का सम्बोधन किया, "उतरो ! तुम्हारा 'वतन' तो छूटा पर अपने 'देश' में, अपने लोगों में पहुँच गईं। परमेश्वर को धन्यवाद दो।"

वतन और देश ! वतन ! देश ! तारा के मस्तिष्क में गूंज रहा था।

तारा कौशल्या देवी की बात समझ नहीं पा रही थी। तारा कौशल्या देवी को धन्यवाद दे सकती थी, परन्तु कौशल्या देवी चाहती थी कि तारा और उसकी साथिनें अपने पर बीती के लिए, अपना वतन छुड़ा देने के लिए परमेश्वर को धन्यवाद दें ! वह चुप रही। उसके मस्तिष्क में गूंज रहा था, वतन और देश !

ड्राइवर अपने स्थान से उतर कर सामने खड़ा हो गया था। तारा गाड़ी से उतरी। ड्राइवर कह रहा था—

"यह काफिला भी वतन छोड़कर अपने देश को जा रहा है। मनुखों के देश, धर्मों के देश बन गये !"

ड्राइवर ऊँचे स्वर में बोला—

"रब्ब ने जिन्हें एक बनाया था, रब्ब के बन्दों ने अपने वहम और जुल्म से उसे दो कर दिया।"

• • •

देश का भविष्य | भाग दो

१

जयदेव पुरी शरणार्थियों को मुफ़्त राशन बाँटने वाले डिपो के सामने क्यू में खड़ा था। उसके आगे तीन स्त्रियाँ और तीन पुरुष थे। क्यू में सबसे पहले खड़ी स्त्री राशन देने वाले से अनुरोध कर रही थी :

"भाई, हम चार आदमी, दो बच्चे भी हैं। डेढ़ पाव आटा, छटाँक भर दाल से हमारा क्या बनेगा? भाई, सेर भर आटा तो दो!"

"भाई, फी आदमी डेढ़ पाव आटा, छटाँक भर दाल का ही आर्डर है। जो यहाँ आयेगा, उसी को मिलेगा।" राशन बाँटने वाले ने नियम की विवशता प्रकट की।

कुछ लोग स्त्री का समर्थन करने लगे।

दूसरे लोगों ने राशन बाँटने वाले का साथ दिया—"आदमी तो सभी के साथ हैं। किसी के साथ पाँच हैं, किसी के साथ दस हैं। कोई चार का राशन ले जाकर बेच भी सकता है। सच्चाई इसी में है कि जिसे लेना हो, सामने आकर ले।"

पुरी ने देखा, दो पुरुष और एक स्त्री राशन लेकर एक ओर खड़े थे। दोनों पुरुषों ने अँगोछे में लिया आटा और दाल स्त्री की ओढ़नी की झोली में दे दिया। अधिक आयु के पुरुष ने लड़के से कहा—"तुम चलो, मैं बालन (ईन्धन) लेकर आता हूँ।"

पुरी अपना बिस्तर बगल में दबाए था। सोचा, आटा-दाल के लिए बिस्तर से चादर निकाल ले। वह बिस्तर खोलने के लिए क्यू से हटता तो कई आदमियों के पीछे हो जाना पड़ता।

पुरी बगल में अपना बिस्तर दबाये रहा। उसने कमीज के छोर में डेढ़ पाव आटा और दूसरे छोर में छटाँक भर दाल ले ली और मण्डी बाजार में निकल आया। वह किसी ढाबे की खोज में चला जा रहा था। लगभग सौ कदम चल कर बाजार में ताजी गरम रोटी की महक अनुभव हुई और ढाबा दिखाई दे गया। आटे की लोई को गोल और चपटी करने के लिए दोनों हथेलियों के बीच से पट-पट आवाज़ गूंज रही थी।

ढाबे के महरे ने डेढ़ पाव आटे की बनी हुई रोटी और पकी हुई दाल—बदले में दे देने के लिए एक आना माँगा।

पुरी ने मजदूरी में आटे और दाल का ही भाग रख लेने का अनुरोध किया।

महरा हाथ में आटे की लोई को दबाकर रोटी का रूप देने के लिए दोनों हथेलियों में पीटता रहा और पुरी को सिर से पाँव तक अंदाजा—"चार पैसे भी नहीं हैं ? मुफ्त राशन लाया है ?"

पुरी को स्वीकार करना पड़ा।

"दो रोटियाँ और दाल-सब्जी मिलेगी।"

पुरी ने अपनी झोली का आटा-दाल महरे को सौंप दिया। वह दुकान के भीतर बिछे टाट की पट्टी पर बैठ गया।

पुरी भोजन पा कर दुकान के बाहर आया। उसने स्टूल पर रखे ड्रम में लगी टोंटी से हाथ धोकर, कुल्ला किया। वह अपना बिस्तर उठाने के लिए झुक रहा था, महरे ने उसे सम्बोधन किया—

"अच्छा भला जवान है, फिर क्या मुफ्त राशन लेने जायेगा ? दूसरा कोई काम नहीं मिलता तब तक जैसी दिहाड़ी (मजदूरी) मिलती है, कर ले !"

"हाँ, जरूर कर लूंगा।" पुरी ने महरे की ओर देखा। बिस्तर वहीं पड़ा रहने दिया।

"हमारे मुंडे (छोकरे) को ताप (बुखार) हो गया है। हमारे यहाँ कौन कड़ा काम है। बर्तन माँजने हैं। दोनों वक्त पेट भर रोटी-दाल खा लेना, चार आने और दे दूँगा।"

"मंजूर है।" पुरी ने स्वीकार कर लिया।

"शावाश !" महरे ने प्रसन्नता प्रकट की, "जवान, लगा दे हाथ। उठा थालियाँ। अपनी थाली भी ले ले। काम करने में बुरा क्या है ?"

पेट में अन्न पड़ जाने से पुरी की निर्बलता दूर हो गई थी। उसने अपनी पतलून घुटनों तक समेट ली और कमीज की आस्तीनें चढ़ा लीं। वह उकड़ूँ बैठ गया और राख के कनस्तर में पड़ा मूंज का जूना लेकर थालियाँ माँजने लगा। सिर में अब भी दरद था, उसकी परवाह न की। ढाबे पर एक-एक, दो-दो ग्राहक आते और खाकर चले जाते थे।

पुरी लाहौर में अपने घर पर रहता था। उसे ढाबे या तंदूर पर खाना खाने का अवसर अधिक बार नहीं पड़ा था। सन् '४२ के आन्दोलन के दिनों में या सन् '४७ की मार्च-अप्रैल में कामरेडों के साथ शांति-स्थापना के प्रयत्नों में बहुत व्यस्त रहने पर, भोजन के लिए घर लौटने का समय न मिलता था। तब वह तन्दूर पर ही खा लेता था।

पुरी महरा के सहायक का काम कर रहा था। ग्राहक आते तो वह थाली सजा कर उनके सामने रख आता, और उनके खा लेने पर बर्तन उठाकर माँज लेता। पुरी ने सोचा कि आज रात तो यहीं बितायी जाए, कल देखा जाएगा।

सन्ध्या समय अँधेरा उतर आया था। ग्राहकों की संख्या बढ़ती जा रही थी। ढाबे में एक खद्दरधारी आदमी आया और उसने महरा से पास ही सूद जी के घर

खाना पहुँचाने को कहा। महरा चंदन ने पुरी से उस व्यक्ति के साथ जाकर सूद जी का मकान देख आने को कहा। वह मकान देख आया, और फिर यत्न से लगाई थाली लेकर सूद जी के घर की ओर चला गया।

पुरी ने सूद जी के घर पहुँच कर, उनके सामने जाकर सूचना दी कि वह ढाबे से खाना लाया है। परन्तु जब उसने अपने सामने बैठे व्यक्ति का चेहरा देखा तो वह स्तब्ध रह गया। थाली उसके हाथ से गिरते-गिरते बची।

पुरी ने अपने-आपको सँभाला। एक प्रबल आवेग, आँतों की गहराई से उठकर गले तक आ गया था। उसने गर्दन झुकाये, तिपाई उस व्यक्ति के सामने रख कर उस पर थाली रख दी। वह व्यक्ति कुछ कागज देखने में तल्लीन था। पुरी चाहता था कि उस व्यक्ति से आँखें मिलने से पहले ही वह वहाँ से लौट जाये, परन्तु ठिठक कर रह गया।

व्यक्ति ने पुरी को ध्यान से देखा। विस्मय की गहरी साँस खींची—"पुरी ! जयदेव ! अरे पुरी भाई, यह क्या ?"

उसने पुरी को बाँह से पकड़ कर समीप के तख्त पर बैठा लिया।

पुरी की गर्दन झुक गयी। पलकों में आ गये आँसुओं को रोक कर और गले में आ गये अवरोध को निगल कर बोला—"सूद जी, क्या बताऊँ....?"

तख्त के कोने पर रखे टेलीफोन की घण्टी बज उठी। सूद जी ने हाथ बढ़ा कर फोन उठा लिया।

पुरी को सँभलने का अवसर मिला।

सूद जी ने स्नेह और उपालम्भ से पुरी को डाँटा—"यह क्या हरकत है तुम्हारी ? जो भी हो गया था, तुम्हें नहीं मालूम था, क्या नाम जालंधर में सूद रहता है। यह तो नहीं है कि शहर में लोग सूद को जानते-पहचानते नहीं हैं। कहीं भी पूछ लिया होता। क्या नाम सेवा-समिति में, कांग्रेस दफ्तर में, किसी भी दुकान पर, किसी टाँगे-टमटम वाले को ही कह देते तो पहुँचा देता।"

सूद जी के स्नेह-अधिकार का सहारा पाकर पुरी ने संक्षेप में बता दिया कि वह अगस्त के आरम्भ में यू० पी० के एक पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी के आश्वासन पर नैनीताल और लखनऊ चला गया था। १५ अगस्त के दिन नैनीताल में था। बँटवारे के सम्बन्ध में काँग्रेस और लीग में समझौता हो जाने के कारण १०-११ अगस्त तक तो किसी को झगड़े की आशंका नहीं रही। १६ अगस्त को उसे नैनीताल में समाचार मिला कि लाहौर में शहर की चारदिवारी के भीतर से सब हिन्दुओं को निकाला जा रहा है। वह परिवार की सहायता के लिए दौड़ा। सूद जी के गलत समझ कर कुछ और अभिप्राय लगा लेने की आशंका नहीं थी। पुरी ने ट्रेन में मुसलमानों पर आक्रमण में अपना सूटकेस खो जाने और पिछली रात अँधेरे में इस्लामिया कालेज के समीप लूट लिये जाने की घटनायें भी सुना दीं। वह किसी तरह लाहौर जाकर या जैसे भी हो अपने परिवार का पता लेने के लिए बहुत व्याकुल था।

चंदन महरा परेशान था कि दोपहर में रखा नया जवान सूद जी के यहाँ थाली पहुँचाने गया था, वह लौटकर ही नहीं आया था। रात के दस बज गये तो

चंदन खोज के लिए सूद जी के यहाँ गया ।

चंदन देखकर हैरान हो गया । उसका नया नौकर 'लीडर' के साथ तख्त पर बैठा बात कर रहा था । उसने सूद जी से विनय से नमस्कार की । सूद जी ने चंदन को डाँटा कि उसने पुरी को उनका नाम व पता क्यों नहीं बताया, यह तो उनका भाई है, लाहौर में रहता था । चंदन ने हाथ जोड़ कर क्षमा माँगी कि उसे क्या मालूम था । उसने कहा कि इन्होंने भी उससे कुछ पूछा नहीं था ।

पुरी की लायी थाली वैसे ही पड़ी थी । सूद जी ने उससे वह थाली ले जाकर दूसरी दो थालियाँ लाने को कहा । चंदन थालियाँ लाया तो पुरी का बिस्तर भी बगल में दबा कर लेता आया ।

दिन भर बरसात के अन्त की कड़ी धूप रही थी । आधी रात बादल घिर कर पानी बरसने लगा था । सूद जी का नौकर बुखार में पड़ा था । वे बगल के बरामदे से एक चारपाई स्वयं भीतर ला रहे थे ।

पुरी आगे बढ़ कर बोला—"ठहरिये ठहरिये, मैं लाता हूँ ।"

"सब हुआ जाता है, तुम बैठो ।"

फिर फोन की घण्टी बज उठी ।

पुरी ने आग्रह किया—"आप फोन सुनिये, यह मैं कर लेता हूँ ।"

"फोन तो बजता ही रहता है ।" सूद जी ने कहा । वह खाट बिछा कर फोन सुनने लगे ।

सूद जी ने पुरी के लिए खाट पर दरी और चादर बिछा दी । स्वयं तख्त पर लेट गये । कमरे में प्रकाश बुझा दिया था । बाजार की ओर खिड़की से फुहार लिये ठण्डी हवा के झोंके आ जाते थे । छत में लगा हुआ पंखा भी धीमे-धीमे चल रहा था । पुरी को बहुत विश्राम और शांति अनुभव हो रही थी ।

सूद जी के शरीर पर दिन भर धूप में घूमने की मजबूरी से घाम निकल आयी थी । ठण्डी हवा का स्पर्श घाम को शांति दे रहा था । वे अँधेरे में अपने कन्धों और जाँघों पर घाम को और पुराने एक्जीमा को सहलाते हुए पुरी से गम्भीर बात करने लगे—

"... पंजाब में कांग्रेस-मिनिस्ट्री बनाने का अवसर आया है तो यह लोग फिर सब कुछ अपने गुट्ट के हाथ में समेट लेना चाहते हैं । हाईकमान्ड ने तो क्या नाम सब कुल दो आदमियों के हाथ में दे दिया है । यह लोग क्या नाम सब जिम्मेवारी तो हमारे पूर्व जिलों से चुने गये मेम्बरों पर डाल देना चाहते हैं और पावर सब अपने हाथ में ले ली है । हम भी देख लेंगे, कैसे गवर्नमेन्ट चला लेते हैं । यहाँ की हालत हम जानते हैं कि क्या नाम यह बाहर से आये हुए लोग..."

सूद जी अपने प्रति अन्याय अनुभव कर उत्तेजना से बोले—"जानते हो,... डाक्टर तो पुराना गुट्टबाज है । क्या नाम अपने-आपको लाला लाजपतराय का वारिस समझे बैठा है । तुम्हें याद है, सन् '४५ दिसम्बर में तुम मुझे उसके यहाँ मिले थे । मैंने तभी तुम्हें सब बात बता दी थी । अब तो वह क्या नाम अपने-आपको

मालिक समझ बैठा है ।'

पुरी को याद था वह अपनी गली के डाक्टर प्रभुदयाल के साथ, डाक्टर राधेबिहारी के यहाँ 'पैरोकार' में नौकरी के लिए गया था । वहाँ सूद जी से भेंट हो गई थी । पुरी मुल्तान कैम्प जेल में सूद जी के साथ था । मुल्तान कैम्प जेल में हजार से अधिक राजनीतिक कैदी थे । पंजाब की कांग्रेस दलबन्दी और राजनीतिक सिद्धान्तों के भेद के आधार पर और कुछ व्यक्तिगत पसन्द और लगाव के कारण जेल में पंडित देवीदास और सूद जी की अलग-अलग पार्टियाँ बन गई थीं । पंडित देवीदास कांग्रेस के सत्ताधारी दल के प्रतिनिधि थे । वे अपने-आपको लाला लाजपतराय की परम्परा निवाहने वाला समझते थे । डाक्टर राधेबिहारी द्वारा उन्हें कांग्रेस हाईकमाण्ड का सहारा प्राप्त था । सूद जी कांग्रेस में 'गद्दी के अधिकार' के स्थान पर 'काम' की माँग करने वाले उग्र दल के प्रतिनिधि थे ।

सूद जी को वकील होने के कारण जेल में स्पेशल क्लास की सुविधा दी गई थी, परन्तु वे उसे अस्वीकार कर साधारण राजनीतिक कैदियों के साथ ही रहते थे । उन्हें कांग्रेसी-समाजवादियों का समर्थन प्राप्त था । जेल में पुरी सूद जी के समर्थकों में था ।

पुरी को याद था, सूद जी ने उसे जेल का विश्वासपात्र साथी और अपने विचारों का मान कर, उसका डाक्टर राधेबिहारी के यहाँ जाना पसन्द नहीं किया था । राय दी थी कि वह फिर मैदान में आये और अपनी योग्यता से कांग्रेस के वामपक्ष को सबल बनाये । सूद जी ने डाक्टर की तिकड़म उसे बता दी थी । डाक्टर जानता था कि जालन्धर में सूद जी का प्रभाव था । वहाँ से वह पंजाब असेम्बली के चुनाव के लिए कांग्रेस का टिकट अपने गुट्ट के व्यक्ति रायजादा नौबतराय को दिलाना चाहता था । उसके बदले में सूद जी को सेन्ट्रल असेम्बली का टिकट दे रहा था ।

सूद जी ने डाक्टर की चाल से खिन्न हो कर कहा था, "इसका पैंतरा मैं खूब जानता हूँ । सेन्ट्रल असेम्बली के इतने बड़े क्षेत्र में लड़ने के लिए मेरे पास साधन कहाँ हैं ? यह मुझे दिल्ली में दफा करके पंजाब में शक्ति अपने आदमियों के हाथ रखना चाहता है ताकि 'खिजर' से सौदा पटा सके । मैं टिकट लूंगा तो पंजाब असेम्बली का । सेन्ट्रल असेम्बली की मेम्बरी का प्रभाव जालन्धर में क्या होगा ? आदमी अपने घर में ही कुछ कर सकता है । दूर जाकर बेकाम हो जाये तो मेम्बरी का क्या फायदा ?"

पुरी ने अपनी भूल स्वीकार करने के लिए अपनी बीती सूद जी को सुना दी । उसने मार्च के आरम्भ में ही उत्पात और रक्तपात रोकने के लिए लाहौर में कांग्रेस और अकाली लीडरों के भाषणों पर चेतावनी दी थी । डाक्टर कम्युनलिस्ट तो है ही । उसे अखबार की नौकरी से ही निकलवा दिया था । यह लोग तो चाहते हैं कि इनके समर्थन में रात को दिन और दिन को रात कहा जाये''' ।

सूद जी पुरी की बात पर, नींद से बोझिल स्वर में हुँकारी भरते जा रहे थे । शनैः-शनैः हुँकारे के बजाय उनकी नाक बजने लगी । उनकी बाँहें, टाँगें, सब शिथिल

हो गयी थीं । वे खूब परिश्रम से थके व्यक्ति की नींद में डूब गये थे ।

पुरी विचारों और परिस्थितियों में सूद जी के साथ एक पथ और उनकी मानवीय सहानुभूति देखकर, सूद जी के प्रति फिर मुलतान जेल की आत्मीयता अनुभव कर रहा था । उसे कुछ समय तक नींद न आ सकी ।...ढावे के नौकर की स्थिति में थाली उठाकर भोजन पहुँचाने आया था और पंखे के नीचे सो रहा था । वर्षा से शीतल, मन्द पवन खिड़की से आ रहा था । इस्लामिया कालेज के हाते में, छत के नीचे स्थान न पा सकने वाले शरणार्थी इस समय क्या कर रहे होंगे ? उसका परिवार जाने कहाँ होगा, किसी दम घोटती कोठरी में, पेड़ों के नीचे या बादलों के नीचे ?...मेरा भाग्य परिवार के भाग्य से भिन्न ही है । इस समय कर भी क्या सकता हूँ । दिन निकलने पर ही फिर सोचूँगा ।...अमृतसर में देखना होगा ।

नैनीताल के होटल में स्प्रिंगदार पलँग के गद्दे पर कनक के समीप होने की स्मृति मस्तिष्क में उमड़ आयी । गत दिनों की वीभत्स स्मृतियाँ...करवटें लेते-लेते पुरी को भी नींद आ गयी ।

●

विश्वनाथ सूद ने लाहौर से वकालत पास की थी । विद्यार्थी जीवन से ही सामाजिक और सार्वजनिक आन्दोलनों में उनकी रुचि थी । सन् १९२१ ई० में ही उन्होंने खद्दर का व्रत ले लिया था । १९३१ ई० से १९३४ ई० तक, कांग्रेस के संकट काल में, ऐसा कोई कांग्रेस-आन्दोलन नहीं था, जिसमें सूद जी ने अपने जिले या दोआबे में नेतृत्व न किया हो और जिसमें वे जेल न गये हों ।

सूद जी के प्रति जनता जितनी भक्त थी, उनका परिवार उनसे उतना ही विरक्त था । वे वकील और नेता बन जाने पर भी घर के लिए बोझ ही थे । उनके परिवार को उनके विवाह से अच्छे-खासे दहेज की आशा थी, परन्तु जनसेवा का जोग रमाये सूद जी विवाह के लिए तैयार न हुए ।

पिता की मृत्यु के बाद भाइयों में बँटवारा हुआ तो सूद जी के हिस्से केवल आटे की पुरानी चक्की आयी । वे चक्की स्वयं क्या चलाते, उन्होंने किराये पर दे दी । लोग उन्हें श्रद्धा से फकीर वकील कहते थे । उनकी इस निःस्वार्थ सेवा का ही परिणाम था कि सन् १९४६ ई० में, जब पंजाब में कांग्रेस के विरुद्ध अंग्रेज सरकार का प्रबल आतंक था, जालंधर क्षेत्र से चुनाव में पंजाब असेम्बली के हिन्दू और मुसलमान दोनों ही सदस्य कांग्रेसी चुने गये । हिन्दू क्षेत्र में स्वयं सूद जी निर्वाचित हुए थे ।

सूद जी का प्रभाव असेम्बली की मेम्बरी पाकर और भी बढ़ गया । आमदनी बढ़ जाने पर भी उनके रहन-सहन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ । पोशाक वही खद्दर का कुर्ता और पायजामा या धोती । सवारी में वही पुरानी साइकिल ।

जालंधर में विभाजन के समय की विकट स्थिति को कांग्रेस की ओर से सूद

जी सँभाल रहे थे । सरकारी अफसर प्रायः सभी बातों में उनसे परामर्श ले रहे थे। पूर्वी पंजाब में नया मंत्रिमण्डल बनाने का प्रश्न था। मंत्रियों की नियुक्ति में अनेक प्रभावों का समन्वय आवश्यक था । कांग्रेस के पुराने प्रतिष्ठित नेताओं की स्थिति और अधिकार, कांग्रेस हाईकमान्ड की सम्मति, स्थानीय कांग्रेस के प्रभाव। सूद जी इस विषय में बहुत चिन्तित और चौकस रहते । इसी कारण सूद जी कभी दिन भर और रात भर भी घर से बाहर घूमते रह जाते थे ।

●

पुरी की नींद टूटी तो सूद जी नहा चुके थे । उसने उठकर बिस्तर समेटा । सूद जी का नौकर सुदामा बाजार से नाश्ता और लस्सी ले आया था । सूद जी नाश्ता करने बैठे तो उन्होंने सुदामा को समझा दिया कि ये हमारे भाई हैं, जो कहें लाकर नाश्ता करा देना और अगर हमें देर हो जाए तो भोजन भी खिला देना ।

नाश्ता करते-करते उन्होंने पुरी से पूछा कि अब उसका क्या इरादा है ? पुरी ने कहा कि वह अपने परिवार के लोगों को ढूँढ़ना चाहता है। इस पर सूद जी ने कहा कि ऐसे कैसे पता लगा सकेगा, उन्होंने उससे ताऊ जी का नाम पता आदि कागज पर लिख कर देने को कहा ताकि वह कोतवाली में फोन करके पता लगा लें । वहाँ से तो सब कैम्पों की लिस्ट की जाँच-पड़ताल के बाद पता लग ही जायगा । पुरी ने कहा कि अमृतसर जा कर पता लगाना चाहता है। सूद जी ने उसको राय दी कि ट्रेन से जाने में खतरा है, कल-परसों तक कोई न कोई गाड़ी (मोटर) अमृतसर जाएगी, उस पर चले जाना ।

दो दिन बाद एक स्टेशन-वैगन अमृतसर भेजा गया। पुरी को उसमें जगह मिल गयी । अमृतसर, जालंधर की अपेक्षा बहुत बड़ा नगर था । सब ओर शरणार्थी अपार टिड्डी दल की तरह छाये हुए थे। पुरी ने सब से पहले बड़े डाकखाने जाकर कौल के पत्र का पता लगाया, पत्र तो नहीं था, उसने डाकखाने में लिख कर दे दिया अगर उसके नाम कोई पत्र आए तो वह जालंधर में सूद जी की मार्फत भेज दिया जाए । उसने सब कैम्पों, सारे डेरों में घूम-घूम कर अपने परिवार को ढूँढ़ा । कहीं कुछ पता न चला । वह रात को जालंधर लौट आया ।

पुरी ने अम्बाला और लुधियाना जाकर अपने परिवार को ढूँढ़ने की इच्छा प्रकट की तो सूद जी ने कहा कि अकस्मात मिल जाने की आशा में घूमते रहना तो समझदारी नहीं है। पहले अनुमान करो कि कहाँ हो सकते हैं, फिर वहाँ ढूँढ़ने जाओ। उन्होंने पूछा कि तुम्हारे पिता कुछ जमा-पूँजी तो लाए ही होंगे । हाथ में पैसा हो तो सब हो जाता है। इस पर पुरी ने दुःखी स्वर में सूद जी को अपनी आर्थिक स्थिति बता दी । और कहा कि वह सब कुछ करने को तैयार है, परन्तु परि-स्थिति वश उसे कुछ सूझ ही नहीं रहा है ।

सूद जी ने कुछ पल सिर और कनपटियाँ खुजा कर खिड़की से बाहर शून्य में देखा और सोच कर बोले—"भाई, सब से पहली बात तो होनी चाहिए कि तुम

कहीं अपने कदम जमाओ। जहाँ तुम जगह बना लोगे, वहाँ क्या नाम तुम्हारा परिवार भी आ जाएगा।"

पुरी आतुरता से बोला—"भाई जी, यही तो मैं भी चाहता हूँ। जो भी काम हो, क्लर्की हो, चाहे चपरासी का काम हो। दो या एक ही समय की रोटी का ठिकाना हो जाए। अभी तो पहनने के लिए कपड़े भी नहीं हैं।"

सूद जी खिड़की से बाहर देखते रहे और ठेठ पंजाबी में आपत्ति की—"यह क्या बकते हो, क्या नाम यह तुम्हारा घर नहीं है ? एक रोटी होगी तो आधी-आधी खा लेंगे, ऐसी क्या बात है। तुम नंगे तो घूम नहीं रहे हो। क्या नाम पतलून न सही, पाजामा तो है। ऐसी बात है तो जाओ पतलून ही सिलवा लो। उल्टी-पुल्टी बातें मत किया करो।"

"पर भाई जी..." पुरी कृतज्ञता से भींगे स्वर में अपनी बात कहना चाहता था।

सूद जी ने उसे बोलने न दिया। खिड़की से बाहर देखते रहे और अपनी बाँहों पर फूली हुई घाम को सहला कर बोले—"हम कहते हैं तुम, क्या नाम जालंधर में ही ठिकाना बनाओ। हम लोग पुराने साथी हैं कि नहीं ?" सूद जी ने समर्थन के लिए पुरी की आँखों में देखा।

"ठीक है भाई जी, यही मैं चाहता हूँ।"

"तुम अखबार में, क्या नाम 'पैरोकार' में काम करते थे।" सूद जी ने पुरी की ओर देख कर गम्भीरता से बात की, "प्रेस का काम तो समझते होगे ?"

प्रेस में कभी-कभी जाना ही पड़ता था। प्रूफ-व्रूफ तो देख ही लूँगा। मैं तो कहता हूँ, जो भी हो..."

" 'पैरोकार' का अपना प्रेस था ?"

"नहीं जी, नसीरुद्दीन के प्रेस में छपता था।"

"कैसी मशीनें थीं ?"

"अखबार तो लिथो-सिलेन्डर पर छपता था।"

"लाहौर में तो उतना बड़ा प्रेस बिजली से ही चलता होगा। यहाँ एक ट्रेडल और एक लिथो सिलेन्डर है। सम्भाल लोगे ?"

"प्रूफ, हिसाब-किताब और प्रबन्ध का काम तो कर ही लूँगा। ज़रा कोई बताने वाला हो तो···।"

"बताने वाले भी मिल जायेंगे।" सूद जी फिर खिड़की से बाहर देख कर बोले, "ईसाक बेचारे को छोड़ कर जाना पड़ा है। अपने 'कमाल प्रेस' की चाभी दे गया है। उसका ट्रेडल चलाने वाला हिन्दू था। वह यहीं है। तुम प्रेस चालू करो। काम की क्या कमी है। जरूरत के समय लोगों को दिल्ली दौड़ना पड़ता है। जरूरत होगी तो एडवांस भी दिला देंगे।"

सूद जी ने शरणार्थियों के प्रबन्ध के लिए पुलिस-विभाग से जीप ले ली थी। वे पहले पुरी को काँग्रेस के दफतर ले गये। वहाँ उन्होंने मंत्रिमण्डल की नियुक्ति के

बारे में बड़ी देर तक बातचीत की। फिर दोपहर के समय वे 'माई हीरा गेट' के बाजार पहुँचे और पुरी को बहादुर गढ़ मुहल्ले की एक गली में ले गये। एक छोटी सी कोठरी पर बोर्ड लगा था, जिस पर अँग्रेजी और फारसी में लिखा था—"कमाल प्रेस।"

कोठरी की दहलीज पर काँगड़े का एक पहाड़ी बैठा हुक्का पी रहा था। उसने उठकर फौरन ही सूद जी की चरण-वन्दना की। उसका नाम रुल्दू था। सूद जी ने जेब से निकाल कर रुल्दू को चाबी दी और उससे कोठरी का दरवाजा खोलने को कहा।

रुल्दू ने कोठरी के पीछे दीवार में लगा दरवाजा खोल दिया। कोठरी के पीछे छोटा सा हाता था। हाते में लाल ईंट का छोटा दो-मंजिला मकान था। मकान के निचले भाग में जीने के समीप छोटा कमरा था। कमरे में एक मामूली-सी मेज, लोहे के तार की तीन कुर्सियाँ और दीवार के साथ भारी-सी बेंच पड़ी थी। साथ के कमरे के एक कोने में सिलेन्डर मशीन थी और दूसरे कोने में एक छोटी ट्रेडल खड़ी थी। दीवारों के साथ मशीनों में स्याही देने वाले बड़े-बड़े रूल खड़े थे। दीवार के साथ दो जगह कागज के बन्द रिम छत तक अटे थे। एक ओर दीवार के साथ नीचे-से चबूतरे पर कागज काटने की मशीन थी। प्रेस में नियम और सावधानी का ढंग जान पड़ता था। उस समय सब चीजों पर छाई हुई गर्द उपेक्षा की दुहाई दे रही थी।

●

'कमाल प्रेस' का मालिक ईसाक मुहम्मद शांतिप्रिय और व्यवसायी स्वभाव का था। उसके पिता ने हैंड-प्रेस से काम शुरू किया था। मैट्रिक पास करके वह भी प्रेस में काम करने लगा था। उसने धीरे-धीरे व्यवसाय बढ़ाया। वह एक ट्रेडल खरीद लाया, उसे बिजली से चलाने लगा। फिर उसने लिथो-सिलेन्डर भी खरीद ली थी। उसका काम अच्छा चल रहा था। फिर धीरे-धीरे उसने मकान-मालिक से प्रेस वाली कोठरी और उसके पीछे का मकान भी खरीद लिया।

जालंधर में पाकिस्तान के आन्दोलन का जोर था। मुसलमानों का विश्वास था कि जालंधर पाकिस्तान में रहेगा, परन्तु बँटवारे में जालंधर भारत में आ गया। इस कारण बहुत से मुसलमान पश्चिम की ओर भागने लगे थे। और कई मुसलमानों की तरह ईसाक का निश्चय भी जालंधर में रहने का था। पुश्तों से उसका परिवार वहीं था, और उसके जीवन भर की कमाई, उसका प्रेस भी जालंधर में था।

१५ अगस्त, ४७ के दिन ईसाक के समझाने पर उसके मुहल्ले के शेष रह गए मुसलमानों ने अपने मकानों पर भारत के राष्ट्रीय झंडे फहरा लिए। पश्चिम से आए हिन्दुओं को उनकी भारत-भक्ति नहीं सुहा रही थी। वे पश्चिम में हिन्दुओं पर अत्याचार करके बाहर निकालने वाले सम्प्रदाय के लोगों को अपनी छाती पर कैसे बैठा रहने देते?

मुस्लिम मुहल्लों पर बार-बार हमले हो रहे थे। बहादुर गढ़ मुहल्ले के सत्ताइस

मुसलमान कत्ल हो गये थे। परन्तु इतना सहकर भी ईसाक जालंधर छोड़ने को तैयार नहीं था। २३ अगस्त को प्रातः ही अफसर और सैनिक बहादुरगढ़ आ पहुँचे और उन्होंने मुसलमानों को फौरन ही मुहल्ला छोड़कर 'मुस्लिम पनाह गुर्जी कैम्प' में जाने का हुक्म दिया।

ईसाक मुहम्मद घबरा गया। ईसाक ने रुल्दू से वहीं रहने को कहा और उसे उसकी तनख्वाह का आश्वासन भी दे दिया और साथ ही एक माह की पेशगी दे दी। उसने प्रेस की चाबियाँ और एक पत्र सूद जी के घर भिजवा दिया।

उसने पत्र में लिखा था कि उसे कैम्प से घर वापिस भिजवा देने की कृपा करें। और यदि यह मुमकिन न हो तो प्रेस की चाबियाँ अपने पास ही रखें। यदि कभी वह लौट कर आया तो ले लेगा। और अगर वह लिखे तो स्वयं मशीनें बिकवा कर पैसा भेज दें। उसने रुल्दू को प्रेस की रखवाली करने को रख लेने के लिए भी लिख दिया। उसने यह भी लिख दिया कि आप रुल्दू को तनखाह हर माह दे दिया करें। साथ ही उसने मशीनों का दाम एवं प्रेस में रखे कागज का दाम भी लिख दिया।

सूद जी को ईसाक का पत्र पाकर बहुत दुःख हुआ। इस विषय में वे कुछ न कर सकते थे। उन्होंने रुल्दू को होशियारी से प्रेस की रखवाली करने की ताकीद कर दी थी।

२७ अगस्त को पश्चिमी पंजाब से आया रिखीराम नामक व्यक्ति सूद जी के पास आया। उसने सूद जी से कहा कि जेहलम में उसका प्रेस था, जिसे उसे छोड़कर आना पड़ा। उसने कहा कि जब दूसरे लोगों ने मुसलमानों की दूकानों पर कब्जा कर लिया है तो ईसाक का प्रेस उसे मिल जाना चाहिए। सूद जी ने उसे डाँट दिया कि ईसाक ठेके पर प्रेस चलाता था। अब प्रेस हमारी है, हम चलायें या न चलायें, किसी को क्या मतलब ? रिखीराम ने प्रेस ठेके पर दे दिए जाने की प्रार्थना की। सूद जी ने उसे और किसी दिन आकर बात करने को कहा।

जिस दिन पुरी अमृतसर गया था, रिखीराम फिर आया। सूद जी ने उसे जवाब दे दिया कि वह प्रेस ठेके पर नहीं देंगे, स्वयं चलायेंगे। इस पर रिखीराम ने नौकरी के लिए प्रार्थना की। उसने कहा कि वह प्रेस का हर काम जानता है। उसकी किस्मत फूट गई। जालिमों ने प्रेस और घर में आग लगा दी, उसे परिवार को बचाकर जैसे-तैसे भाग आना पड़ा।

●

जयदेव पुरी छः मास से काम कर सकने के अवसर के लिए तड़प रहा था। उसे 'कमाल प्रेस' को सँभालने का काम मिल गया। रिखीराम भी प्रेस में नौकरी करने को तैयार हो गया था। प्रेस चालू होते ही काम आने लगा। पुरी मुँह से बहुत कम बोल कर, रिखीराम का काम देखता रहता था। रिखीराम को तो सारा काम पहाड़ों की तरह याद था। वह रिखीराम के किसी काम में आपत्ति न करता, परन्तु कोई भी बात अपनी आँखों से ओझल न होने देता। वह परिश्रम की चिन्ता न कर हर काम

समझता । कभी रात भर मशीनें चलानी पड़तीं और अक्सर अधिक काम हो जाता था । पुरी को अपने श्रम की सार्थकता देखकर गर्व अनुभव होता । इस व्यस्तता में वह अपने परिवार की चिंता और कनक की याद को भी कुछ समय के लिए भूल जाता । जान पड़ता वह परिवार और कनक को दूर रखने वाली अड़चनों को हटा सकने का उपाय संचय कर रहा था ।

प्रेस में काफी काम आ रहा था । रात-रात भर मशीनें चलती रहतीं । पुरी अब प्रेस के ऊपर बने मकान में ही रहने लगा था । रिखीराम ने प्रेस का काम आरम्भ करते समय अपना वेतन निश्चित करने की चिन्ता नहीं की थी । प्रेस को चलते बीस दिन हो चुके थे । उसने पुरी से वेतन निश्चित करके, खर्च के लिए कुछ दिलवा देने का अनुरोध किया । रिखीराम महीने के ढाई-सौ पाना चाहता था ।

जयदेव ने सूद जी से बात की । उन्होंने कहा ढाई सौ तो बकवास है । सौ रुपया काफी है, और अगर उसका काम अच्छा है तो दस-पाँच और बढ़ा दो, और अगर न माने तो उसे अपना रास्ता नापने दो । उसने अपने वेतन की भी बात की । सूद जी ने उसी से पूछा कि वह क्या चाहता है, पुरी ने कह दिया कि जो आप दे दें ठीक है ।

सूद जी ने पुरी से पूछा कि उसके परिवार की कोई खबर मिली या नहीं । उसने बताया कि रेडियो स्टेशन को पत्र लिख दिया है और अपना पता आपकी मार्फत ही दिया है । परन्तु अभी तक कोई उत्तर नहीं आया । सूद जी ने पुरी से कह दिया कि अभी अकेले हो, सवा सौ या डेढ़ सौ ले लिया करो । जब तुम्हारे परिवार वाले आ जायेंगे तो फिर सोच लेंगे ।

अब प्रेस का नाम 'कमाल प्रेस' की जगह सूद जी ने 'कमल प्रेस' कर दिया । पुरी का मन संतुष्ट था । वह इससे अधिक की आशा भी नहीं कर सकता था । जब रिखीराम ने सौ रुपया मासिक सुना तो उसका चेहरा फक रह गया । पुरी को उससे सहानुभूति थी, परन्तु वह क्या कर सकता था । जब रिखीराम सवा सौ पर भी तैयार नहीं हो रहा था तो उसने कड़ाई से कह दिया कि अगर वह अपने प्रेस में किसी को नौकर रखता तो क्या देता ? रिखीराम होंठ काट कर चुप रह गया । वह दूसरे प्रेसों में पूछताछ कर चुका था । कोई दूसरा इतना भी देने को तैयार न था ।

पुरी कई दिन से कनक को पत्र लिखने का विचार कर रहा था । डेढ़ मास पूर्व कनक के साथ नैनीताल की झील पर बितायी संध्याओं, और कनक की संगति की स्मृति, अब केवल प्रेम की भावना या पुकार ही नहीं बल्कि पत्नी के रूप में कनक की आवश्यकता की तड़प बन रही थी ।

एक दिन सोने से पहले उसने कनक को पत्र लिख ही डालना चाहा । वह बड़ी देर तक प्रेस के लाभ आदि का हिसाब लगाता रहा । इतने बड़े हिसाब से उसका सिर चकरा गया । वह सिर झटक कर खड़ा हो गया और बिजली जलाकर पत्र लिखने बैठ गया । कहीं दूर एक बजने की टंकोर सुन कर उसने पत्र को जल्दी-जल्दी समाप्त किया और लिफाफा बन्द कर प्रातः ही रजिस्ट्री से नैनीताल भेज देने के

लिए रख लिया।

प्रेस में काम हो रहा था। मशीनों पर दोनों छोकरों को फुरसत न थी। पुरी प्रेस के काम में विघ्न नहीं डालना चाहता था। अपना काम करके वह समीप के ढाबे पर खाना खाने के लिए बाजार की ओर जा रहा था। बाजार में कदम रखते ही वह ठिठक कर रह गया। उसने दाँयी ओर देखा तो बाधवामल नारंग जी का परिवार अपना सामान उठाये चला जा रहा था। सभी लोग पसीने से लथपथ थे। उसने विस्मय से स्तब्ध मुद्रा में उन लोगों को सम्बोधन कर पूछ लिया कि वे कहाँ जा रहे हैं। जगदीश ने बताया कि पिता जी की तबियत खराब होने के कारण वे लोग दिल्ली न जा सके थे। और अब उन्हें इस्लामिया कालेज के कैम्प से एक दम बाहर निकल जाने को कहा गया था।

पुरी इन सबको प्रेस में ले गया। उसने छोकरों को बुलवाकर उनका सामान ऊपर पहुँचवा लिया। उसने उनसे नहा लेने को कहा और सबके लिए खाना मँगवा लिया। उसने भी स्वयं उनके साथ बैठकर खाया। पुरी ने दूसरा कमरा खोलकर सफाई करवा ली। वह नारंग परिवार से पायी पुरानी कृपा तथा सहानुभूति का ऋण चुका देना चाहता था। उसका मन संतोष से गद्गद् था।

उस संध्या घर में खाना बना। पुरी ने भी उनके साथ ही खाया। वह उनके परिवार के बीच परिवार के सदस्य की भाँति बैठा बातें करता रहा।

उर्मिला का शोक में आत्म-विस्मृत रूप, पुरी के हृदय में काँटे की तरह गड़ा जा रहा था। उसने एक दिन उर्मिला के सामने ही उसकी माँ (बे जी) से बात की कि उर्मिला का यह क्या ढंग है, जो हो गया उस पर किसका बस था। आदमियों की तरह रहना-सहना, बोलना चाहिए। बे जी ने कहा कि उसे कितना समझाते हैं पर मानती ही नहीं। उसने आग्रह किया कि यह ठीक नहीं। इंसान को इंसान की तरह रहना चाहिए।

नारंग-परिवार के आ जाने पर पुरी ने ईसाक का बिगड़ा हुआ पड़ा पंखा ठीक होने को दे दिया था। वह बन कर आ गया तो उसने ऊपर जाकर बे जी से कहा कि उर्मी गरमी से परेशान होती है। पंखा ठीक करा दिया है। यह कह कर उसने पंखा उर्मिला की ओर कर दिया।

नारंग जी, बे जी और जगदीश परिस्थिति पर विचार करते रहते थे। तीन दिन पुरी के घर रह लेने पर नारंग जी ने उससे कहा कि वह और जगदीश दिल्ली जाकर प्रबन्ध करना चाहते हैं। अगर तुम्हें तकलीफ न हो तो बाकी तीनों प्रवीण, उसकी माँ और उर्मिला यहीं रह जाएँ। जब प्रबन्ध हो जाएगा तो वे उन्हें ले जायेंगे।

नारंग जी और जगदीश दिल्ली चले गए।

बे जी सौदे के लिए भी बाजार या कीर्तन के लिए जातीं तो पुरी भी थोड़ी दूर तक उनके साथ चला जाता। ऐसे समय में वे उस से वह बातें कह लेतीं जो उर्मिला के सामने नहीं कह सकती थीं। उन्होंने एक दिन उससे कहा कि थोड़े

समय में लड़की का जी हल्का हो जाए और कोई ढंग का मिल जाए तो वह उर्मिला का विवाह कर दें। पुरी ने बे जी के विचार का बल पूर्वक समर्थन किया।

उर्मिला का अपने अथाह शोक में आत्म-उपेक्षा से जड़ बने रहना, पुरी को भाग्य का असीम अन्याय जान पड़ रहा था। उर्मिला का दुख उसके हृदय को चीर देता था। वह उर्मिला के दुर्भाग्य को रोकने में असमर्थ रहा था, इसलिए वह अपने को उर्मिला के सामने अपराधी समझता था। उसके मन में उर्मिला के प्रति एक और अपराध की, अत्यंत सूक्ष्म और गुप्त अनुभूति भी सर उठा लेती थी। उसने 'मरी' में उर्मिला की अवहेलना की थी, उसे ठुकराया था। उसने उस प्रसंग का सब अपमान, असफलता, लज्जा और कुण्ठा उर्मिला पर ही डाल दी थी। वह सोचता कि यदि उस समय साहस करता तो बे जी जैसी उदार माँ प्रसंग को शायद दूसरी तरह सँभाल लेती। उस अवस्था में उर्मिला का भाग्य इस तरह क्यों फूटता ?

दिल्ली से नारंग जी या जगदीश के पत्र चौथे-पाँचवे आते रहते थे। दिल्ली में स्थान की बहुत कठिनाई थी। कुछ स्थायी प्रबन्ध हो जाने पर ही वे परिवार को ले जाना चाहते थे। पुरी उर्मिला को सुनाकर बे जी से कहता कि दिल्ली में प्रबन्ध हो जायगा तो देखा जायगा। यह भी आपका ही घर है। जब तक मेरे परिवार का कुछ पता नहीं चलता, मेरे लिए आप ही सब कुछ हैं। मैं आप लोगों के स्नेह और आशीर्वाद का सहारा कैसे छोड़ सकता हूँ।

पुरी के कानों में प्रेस की मशीनों की खड़खड़ाहट और गूँज भरी रहती थी और मस्तिष्क में—ऊपर कमरे में बैठी, भाग्य से प्रताड़ित, ओलों की मार से बिना खिले ही क्षत-विक्षत हो गयी कली की भाँति असहाय उर्मिला का ध्यान बना रहता। उसके साथ ही 'विमल-विला' नैनीताल के पते पर कनक को लिखे पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा भी बनी रहती। कनक उर्मिला की अवस्था देख कर कितनी द्रवित हो जायेगी...

उर्मिला के मौन में पुरी उस अथाह दुख के अतिरिक्त अपनी कल्पना में एक और चुटकी भी अनुभव करता—मरी में मैंने उसे क्या कम कुंठित किया था। उसे मुझसे बोलने की इच्छा क्यों हो ? वह अपने अपराध के लिए लज्जित था, उसका मार्जन कर देना चाहता था।

कनक के पत्र का कोई उत्तर नहीं आया था। बारहवें दिन पत्र लौट आया। लिफाफे पर लाल स्याही से लिखा था—लेफ्ट स्टेशन (नगर से चली गयी है)। उसका मन डूब गया। कनक भी बिछुड़ गयी, परिवार भी। पुरी का सिर चकरा गया।

वह कनक से सूत्र टूट जाने की चिंता से दुःखी था। उसने स्वयं दुःखी होकर भी उर्मिला के प्रति संवेदना से उसे सान्त्वना देने का प्रयत्न किया। उसके प्रति उर्मिला के मन में जो गाँठ पड़ गई थी, वह खुलने में नहीं आ रही थी। कई छोटे-छोटे अवसरों का सहारा लेकर पुरी ने बिगड़ी बात बनानी चाही, परन्तु उर्मिला ने सदा ही उसे झटक कर पीछे कर दिया। वह अपने किसी दबे हुए दुःख के कारण मौका-

बे-मौका रोती रहती थी। और उसकी इस हरकत से बे जी और पुरी को बहुत दुःख होता था। पुरी ने संसार का ऊँच-नीच समझा कर बीती बातों को भुला देने की सलाह दी, परन्तु लगता था उर्मिला के मन पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ रहा था।

अन्त में उसको लगा कि उसकी कोशिश सफल हो रही है। न केवल उर्मिला का रोना स्वयं रुक गया, बल्कि उसके व्यवहार में उतनी आत्म-उपेक्षा और जड़ता भी न रही।

पुरी को अपने परिवार का समाचार मिल गया। वे लोग यू० पी० के बस्ती जिले के सोनवा नामक स्थान में रह रहे थे। डाक्टर प्राणनाथ के पिता अर्जुनलाल शाह ने उन्हें अपनी चीनी की मिल में शरण दे दी थी। मास्टर जी को गोदाम के मुंशी का काम मिल गया था और वह शाह जी के बच्चों को पढ़ाया भी करते थे। घर का खर्चा चल ही रहा था। उन्होंने जयदेव को फौरन ही मिलने को बुलाया।

प्रेस और राजनीति के महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व के अतिरिक्त पुरी बे जी, प्रवीण और उर्मिला को कठिनाई में छोड़ कर कैसे जा सकता था? उसने पिता को पत्र में विस्तार से अपनी महत्वपूर्ण उलझनों का आभास देकर आश्वासन दिया कि वह शीघ्र ही उनके पास पहुँचेगा।

कभी-कभी कनक और उर्मिला के कारण पुरी के मस्तिष्क में अजीब धुँधलका छा जाता।

पुरी कनक के अधिकार का दावा अनुभव करता था, परन्तु उर्मिला के प्रति उसका अपना अधिकार और उत्तरदायित्व भी तो था। कनक उसके प्रति उत्तरदायी थी। वह स्वयं उर्मिला के प्रति उत्तरदायी था। सुडौल, सशक्त कनक उसे चलने का सहारा देना चाहती थी। परन्तु उर्मिला को बाँहों में लेकर सम्हालना आवश्यक था...।

उर्मिला की जड़ता दूर होने और उसे स्वाभाविक स्थिति में आते देख बे जी के मन में जो बोझ उतरने लगा था वह शीघ्र ही दूसरी दुश्चिन्ता बन गया। पुरी और उर्मिला आपस में कुछ ऐसे डूबते जा रहे थे कि अपने आस-पास कुछ देख नहीं पाते थे।

एक दिन बे जी उर्मिला को डाँटे बिना न रह सकीं। उर्मिला ने उलझ कर उल्टा उत्तर दे दिया—"तुम्हें अपने मन से जाने क्या-क्या दिखाई देता रहता है। तुम्हें मेरा बोलना-चालना नहीं सुहाता तो तोला भर अफीम दे दो"

अब बे जी उर्मिला को चुटिया से खींच कर दो चाँटे या थप्पड़ लगा देने का साहस नहीं कर सकती थीं। वह उनकी बेटी थी, पर अब उन्हीं की तरह स्त्री भी थी। बे जी बिल्कुल चुप हो गयीं। पुरी को वह क्या कह सकती थीं? पुरी के व्यवहार में स्पष्ट टोक देने लायक कोई बात भी नहीं थी। वे उसे बुरा आदमी नहीं मानती थीं। उसकी अनुगृहीत भी थीं। दोष अपनी बेटी का ही था। उसकी आघात और निराशा से दबी हुई पुरानी प्रवृत्ति फिर जाग उठी थी। बे जी को याद आता—बेटी के व्यवहार के कारण पहले भी उनका सिर नीचा हुआ था। अपने ही

माल में खोट हो तो दूसरे को क्या दोष दिया जाये ? समझ नहीं पाती थीं, लड़की को क्या कहें ? उसका रोना-बिसूरना, आत्म-उपेक्षा में घुल-घुल कर मरना भी नहीं देख सकती थीं । अब उसके चेहरे पर पुलक और किलक देख कर भी आँखें नीची हो जाती थीं । मन ही मन सोचतीं—इसके बाप और भाई आकर देखेंगे तो उनका क्या हाल होगा ? दूसरा ख्याल भी आता—इसका कहीं हो जाना ही अच्छा है, परन्तु यह काम चुपचाप, इज्जत से हो जाता तो अच्छा था । मैं इसके बाप और भाई को क्या मुँह दिखाऊँगी ? हे ईश्वर, उन्हें यह न देखना पड़े...।

नवम्बर के पहले सप्ताह में पुरी संध्या समय राज्य-कांग्रेस-कमेटी के दफ्तर में गया था । रात भर एक स्थान से दूसरे स्थान तक घूम-घूम कर लोगों से मिलता रहा, लौट न सका । दूसरे दिन प्रातः साढ़े नौ बजे घर लौटा । रुल्दू ने पहली सूचना यही दी कि बे जी ने सुबह छः बजे टाँगा मँगवाया था । तीन बक्स और प्रवीण को लेकर स्टेशन चली गयी हैं । कह गयी हैं, दिल्ली जा रही हैं ।

पुरी जानता था, साढ़े सात बजे दिल्ली के लिए गाड़ी छूटती थी । वह क्या कर सकता था । ऊपर गया तो देखा, उर्मिला दुपट्टे में सिर लपेटे चटाई पर पड़ी थी । पुरी की पुकार सुन कर वह फफक-फफक कर रो उठी । पूछने और समझने को कुछ शेष नहीं था । पुरी ने उर्मिला के समीप बैठ कर, उसके आँसू अपने हाथों से पोंछ दिये । और बोला—कहा "क्यों रोती हो ? क्या मैं नहीं हूँ । मेरे सिर की कसम । हम दोनों हैं तो किसी का क्या डर है ?"

उर्मिला उसके सीने पर अपना सिर रख कर फफक उठी ।

२

पुरी ने नैनीताल से चलने के पूर्व पत्रों में पढ़ा था कि पाकिस्तान की सरकार हिन्दुओं को लाहौर से निकाल रही थी । वह तुरन्त अपने परिवार की सहायता के लिए चल पड़ा था । उस अवस्था में कनक ने उसे रोकना उचित न समझा था । कलेजे पर पत्थर रख कर वह चुप रह गई थी ।

कनक ने पुरी को जाने से तो न रोका, परन्तु उसके जाने के दूसरे दिन से ही वह पुरी के संकटमय परिस्थिति में चले जाने के कारण घोर चिन्ता में डूब गई । पुरी का समाचार जान सकने के लिए कनक का रोम-रोम छटपटाता रहता । लायब्रेरी में जितने भी अखबार मिलते, उत्सुक आँखों से सभी को ध्यान से देख जाती । पंजाब के समाचारों के लिए खास स्थान 'न्यू क्लब' था । वहाँ पंजाब से नित्य नये पंजाबी लोग आते रहते थे ।

पूर्वी पंजाब से बदला लिये जाने की चर्चा अक्सर क्लब में होती रहती । कनक पुरी की यात्रा की परिस्थितियों का आभास पाकर सिहर-सिहर उठती थी ।

जयदेव पुरी को नैनीताल से गए पूरा सप्ताह बीत गया था, परन्तु उसका कोई पत्र नहीं आया था। कनक भयंकर आशंकाओं और क्षोभ में स्वयं पर ही क्रोध उतारने लगती।

कनक जानती थी कि इस समय नैयर भी बड़ी परेशानी में था। नैयर नैनीताल अधिक रुपया तो लाया नहीं था। अगस्त के अंतिम सप्ताह में खबर मिली कि बैंकों के भारत से पाकिस्तान और पाकिस्तान से भारत रुपया भेजने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। वह बहुत घबरा गया कि इतने बड़े परिवार का खर्चा कैसे चलेगा। कांता ने कुछ हाथ खींच कर खर्चा करना आरम्भ किया तो नैयर की बहन सुभद्रा और खासकर सुभद्रा की सास ने घर में कोलाहल मचा दिया। उन्होंने अपना खाना अलग बनाने की बात कर ली।

'विमल विला' का सन्तुष्ट अभिजात वातावरण सहसा भयंकर महाभारत में बदल गया। नैयर क्षोभ में गहरे साँस लेकर सोचता रहता था कि हाथ में पैसा कम होना कितना बड़ा दोष होता है।

कनक ने अवस्थी जी के आश्वासन की याद दिलाकर नैयर से नौकरी के लिए पत्र लिखने की अनुमति चाही। यह सुनकर नैयर ने सीधे प्रश्न कर डाला—"पुरी लखनऊ में है?"

कनक ने सारी बात नैयर को बता दी। उसने कहा "वे तो लाहौर जाने, के विचार से गये थे। चौबीस दिन हो गए एक भी पत्र नहीं आया।"

नैयर सहानुभूति में चुप हो गया। फिर उसने कहा कि इस बारे में पिता जी से बात कर लेनी चाहिए। शायद वे आज या दो-चार दिन में यहाँ आ जायें।

सोलह सितम्बर तक भी न पिता जी आये और न उनका पत्र आया। संध्या समय उनका तार मिला। उन्होंने नैयर को परिवार सहित तत्काल दिल्ली बुलाया था। उन्होंने तार द्वारा ही मकान तक पहुँचने का मार्ग ब्योरे से लिख दिया था। तार के कारण सभी के मस्तिष्क में अनेक कल्पनायें और आशंकायें उठने लगी थीं। तार में पता भी 'नया हिन्द प्रेस' का था। इसका अर्थ यह था कि प्रेस भी दिल्ली पहुँच गया था।

पंडित गिरधारी लाल जी अपनी पत्नी के साथ प्राण-रक्षा के लिए लाहौर से भाग कर १३ अगस्त को दिल्ली पहुँचे। बड़ी मुश्किल से एक मुलतानी परिवार के मकान में उन्हें एक कमरा मिल सका था। वह रोज ही मकान की तलाश में निकल जाया करते थे। पंडित जी ने किसी तरह मकान ढूँढ़ ही लिया। भोजन बना लेने और बरसात में सिर छिपा सकने भर के लिए स्थान हो गया था।

पंडित जी को मुसलमानों के बीच रहने में भी अधिक आपत्ति न थी। वह ऐसे मकान की खोज में लग गए जिसमें स्वस्थ रह सकने लायक स्थान, वायु और जल मिल सके। एक दिन पंडित जी को एक मौलाना मिल गए। पंडित जी ने उसे

किराये पर मकान दिलवाने को कहा। मौलाना जी इनको फैज बाजार में एक मकान दिखाने ले गये। वह मकान दुर्रानी गली में था। उसके मालिक सैयद अब्दुल समद की तम्बाकू की फैक्टरी थी।

सैयद समद के मकान में जगह काफी थी। वह मकान बेचना चाहते थे, परन्तु पंडित जी लाहौर में छूट गई अपनी जायदाद से बदली कर लेना चाहते थे। सैयद समद ने उन्हें सारे कागजात आदि दिखाये। वह दस हजार में भी अपनी जायदाद बेचने को तैयार थे। पंडित जी ने उनसे एक बार अपने कागज देख लेने का अनुरोध किया। और दूसरे दिन सुबह कागज दिखा जाने का आश्वासन दिया और लौट आये।

दूसरे दिन मुस्लिम मुहल्लों में दंगा हो जाने के कारण करफ्यू लग गया। ऐसी हालत में पंडित जी ने दुर्रानी गली तक जाना उचित नहीं समझा।

पाँचवें दिन पंडित जी सैयद अब्दुल समद के पास गए। बड़ी देर तक दोनों में शहर के दंगे के बारे में बातचीत होती रही। उन्होंने अपने कागज सैयद साहब को दिखाये। अंत में उन्होंने मकान की अदली-बदली के साथ दो हजार रुपया देना भी स्वीकार कर लिया। परन्तु वह यह लिखा-पढ़ी कर लेना चाहते थे कि अगर वे खुद लाहौर लौटकर वहाँ रहना चाहें तो कोई हर्जाना दिये और वसूल किए बिना उन्हें अपने मकान पर कब्जा मिल जायगा।

रजिस्ट्री और अदालत के प्रश्न का अवसर ही न था। दोनों ने इकरारनामे के दो कागजों पर लिखकर दस्तखत कर देना तय कर लिया। पंडित जी ने सैयद के नौकर बिजंग (बजरंग) को भी रख लिया। वह सैयद के जाने से पहले ही अपनी पत्नी को और अपना सारा सामान वहाँ ले आये। दुर्रानी गली के मुसलमानों ने सैयद को मकान छोड़कर जाते देखा तो वे भी वहाँ से भागने लगे।

गली से मुसलमानों के निकलते ही पश्चिम से आये लोग अपना असबाब उठाए गली में घुस आए। वे लोग पंडित जी के घर में घुसकर जगह लेना चाहते थे। पंडित जी उन्हें बाहर रहने को कह रहे थे। बात बहुत आगे बढ़ गई। पुलिस आ गई। पहले तो उसने भीड़ का समर्थन किया, परन्तु जब पंडित जी ने मकान का खरीदनामा दिखाने और नेहरू जी को फोन करने की धमकी दी तो पुलिस ने भीड़ को भगा दिया।

इस घटना के बाद फौरन पंडित जी ने फाटक पर चौखटे में लगे सैयद अब्दुल समद के नाम पर 'नया हिन्द प्रेस' मालिक गिरधारीलाल दत्ता लिख दिया। इस आशंका से कि कहीं फिर यह झंझट न हो, उन्होंने नैनीताल तार देकर नैयर, कांता, कनक, कंचन और नैयर की माँ और उसके भाई को दिल्ली बुलवा लिया।

पंडित जी ड्योढ़ी में खाट डाले प्रतीक्षा में बैठे थे। परिवार के पहुँच जाने पर वे उछल पड़े। वह बहुत प्रसन्न थे कि सब लोग फिर मिल गए। परिवार वालों ने भी पंडित जी को स्वस्थ देखा तो उनके चेहरे खुशी से खिल गए। खाना खाने के बाद जब सब आराम करने को लेट गए तो इधर-उधर की और दंगे एवं लोगों की

अवस्था पर बातचीत होने लगी ।

दूसरे दिन नैयर ने जालंधर जाकर प्रेक्टिस करने की बात की तो भविष्य की चिन्ता आरम्भ हो गई । पंडित जी ने नैयर से कहा कि वह आठ-दस दिन रुक जाए और अपने मुंशी से पत्र डालकर पता कर ले तो बाकी लोगों को छोड़कर स्वयं जाये और मकान आदि का प्रबन्ध हो जाने पर सबको ले जाए । उन्होंने अपने कारोबार से संबंधित बातें भी बतायीं ।

दिल्ली आकर कनक का मन गहरी चिन्ता और अवसाद से भर गया । पुरी का समाचार न मिलने के कारण उसका मन आशंका से अधीर हो जाता था । कनक का मन किसी से बोलने को भी नहीं चाहता था ।

कांता पति को अकेले जालंधर भेजने से डर रही थी । पिता जी ने समझाया कि तुम्हारे साथ जाने से नैयर की असुविधा बढ़ेगी । पंडित जी ने नैयर को कुछ दिन और ठहरने को कह दिया । कांता पति के अकेले जाने की संभावना से उदास थी, उसे अपनी उदासी छिपाने की आवश्यकता भी नहीं थी, परन्तु कनक अपनी उदासी का कारण सबके सामने कैसे कह सकती थी ।

दिन के समय कुछ न कुछ हँसी-मजाक चलता रहा । माँ जी, पंडित जी या कांता चिंता की कोई बात न कह दें, इसलिए नैयर, कनक या कंचन कुछ-न-कुछ बोलते ही रहे ।

कनक परेशान थी कि पुरी को नैनीताल से गए एक महीना हो गया, परन्तु उनका कोई पत्र नहीं आया था । वह सोचती कि न जाने वे कहाँ, किस हालत में हों ।

कनक ने बचपन से ही साहित्य और पत्रकारिता को गम्भीरता से अपनाने की कल्पनायें की थीं । इस लक्ष्य के लिए उसे पिता जी ने भी प्रोत्साहित किया था । पुरी ने भी उसे इसी कार्य की दीक्षा दी थी । इसी कार्य में वह पुरी की सह-धर्मिणी बन सकती थी । वह इस कार्य को अब नहीं तो कब करेगी ? भाग्य को कौन जानता है ? यदि जीवन अकेले ही बिताना पड़ा तो भी 'उनका' सिखाया काम करती हुई, उनकी स्मृति में ही जिन्दा रहूँगी ।

दिल्ली आकर पंडित जी के घर का ढंग बदल गया था । अब लड़कियाँ दिन चढ़े देर तक नहीं सोती रहती थीं । ऐसा करने से माँ किसी को कुछ कहे बिना अकेले सब काम करने लगती थी । तीनों ने पंडित जी से और नैयर की माँ जी से उन्हें जल्दी छः बजे उठा देने के लिए अनुरोध कर दिया था । कंचन उठते ही रात के जूठे रह गये बर्तन माँजने लग गयी । कान्ता नानो के और दूसरे लोगों के मैले कपड़े उठा कर नल के नीचे बाल्टी रखकर धोने लगी । कनक ने दुपट्टे से सिर, नाक-मुँह लपेट कर कोठरियों और आँगन में झाड़ू लगाना आरम्भ कर दिया ।

एक दिन अवसर पाकर, नाश्ता देते समय कनक ने पंडित जी से अकेले में बात की—"पिता जी, मेरी इच्छा है मैं यहाँ किसी अखबार के दफ्तर के काम के लिए यत्न करूँ ?"

पंडित जी ने स्वीकार कर लिया—"हाँ हाँ बेटा, क्यों नहीं...।"

गाँधी जी कलकत्ता से पश्चिम पाकिस्तान में शान्ति-स्थापन का प्रयत्न करने के लिए आये थे, परन्तु दिल्ली की अवस्था देख-सुनकर उनका सिर दुःख और लज्जा से झुक गया। भारत में शान्ति स्थापित किये बिना वे पाकिस्तान को क्या कह सकते थे ? गाँधी जी ने प्रण कर लिया, दिल्ली में पूर्ण शान्ति स्थापित किये बिना वे दिल्ली नहीं छोड़ेंगे, इसके लिये चाहे प्राण ही दे देने पड़ें। कांग्रेस सरकार ने पूरे नगर में बहुत कड़ा सैनिक नियन्त्रण लागू कर दिया था। उपद्रव की शंका होते ही उपद्रव-कारियों को गोली मार देने का हुक्म दे दिया गया था। गढ़वाली और सिख पल्टनों को बदलकर दूर दक्षिण की पल्टनें दिल्ली में तैनात कर दी गयी थीं। यह सिपाही उत्तर के हिन्दू और मुसलमानों में कोई भेद न कर सकते थे।

अधिकांश मुसलमान कैम्पों में चले गये थे। दिल्ली न छोड़ना चाहने वाले मुसलमानों को उर्दू बाजार, अजमेरी गेट, हौज काजी के मुहल्लों में एकत्र करके सुरक्षा के लिए उन्हें कड़े सैनिक पहरे में घेर दिया गया था।

स्त्रियाँ और लड़कियाँ आवश्यकता के कारण गली-बाजारों में आने-जाने के लिए विवश थीं। परस्पर परिचय न होने के कारण किसी को किसी का लिहाज न था। स्त्रियों से छेड़खानी की जाने पर स्वयं पंजाबियों में ही झगड़े हो जाते थे। कांता, कनक, कंचन बाहर जातीं तो नैयर अथवा राजेन्द्र के साथ ही जाती थीं।

नौ बजे के लगभग घर के लिए कुछ आवश्यक वस्तुएँ ले आने और जरा घूम आने के लिए कनक, कंचन और नैयर बाहर जा रहे थे। घर से निकलते ही कनक नैयर से बोली—"जियाई, आप जालन्धर जा रहे हैं। आज मेरा काम करा जाइये। यहाँ के बाजारों और रास्तों को जानती नहीं। दो-चार अखबारों में पूछकर तो देखें।"

नैयर और कनक सोच रहे थे, किन अखबारों के दफ्तरों में जाकर बात करना उचित होगा। दिल्ली के पुराने जमे हुए सम्मानित अंग्रेजी, उर्दू और हिन्दी के पत्रों के अतिरिक्त लाहौर के 'पैरोकार' और 'सरदार' ने भी एक मास पूर्व दिल्ली से प्रकाशन आरम्भ कर दिया था।

नैयर ने राय दी—"यदि पत्रकारिता को गम्भीरता से अपनाना चाहती हो तो मेरी राय में किसी अँग्रेजी के पत्र में काम शुरू करो, चाहे कुछ मास अप्रेंटिस (अवैतनिक) भी रहना पड़े।"

कनक ने पूछा—"क्यों ?"

नैयर ने विचार प्रकट किया—"ख्याल है, अँग्रेजी पत्रों के दफ्तरों का वाता-वरण और क्षेत्र कहीं बेहतर होगा। उर्दू के पत्रों का स्तर बहुत थिथला लगता है। लेडीज के लिये उन लोगों की संगति क्या ठीक होगी ?" नैयर अँग्रेजी में बोला था।

कनक ने भी अँग्रेजी में विरोध किया—"नानसेंस।" उसे सन्देह हुआ, नैयर पुरी को लक्ष्य करके कह रहा था, "मैं तो ऐसा नहीं समझती। न मुझे अँग्रेजी पर अधिकार है, न उसमें मेरी अभिव्यक्ति स्वाभाविक हो सकेगी।" वह

तर्क करने लगी, "क्या अँग्रेजी द्वारा हमारे सर्व-साधारण तक पहुँच हो सकती है ?"

"आई डोंट नो, लेकिन बिक्री तो अँग्रेजी पत्रों की ही अधिक होती है।" नैयर ने अपने विचार का कारण बताया।

"क्षमा कीजिये।" कनक ने उत्तर दिया, "यह तो विदेशी दासता से उत्पन्न विकृत स्थिति है।" और कहा, "बिक्री भी, यदि सब अँग्रेजी पत्रों को और दूसरी भाषाओं के पत्रों को अलग-अलग देखिये तो अंग्रेजी पढ़ने वाले अधिक नहीं होंगे। मुझे तो अपनी भाषा में ही गति है।"

नैयर कनक को सबसे पहले 'पैराकार' के दफतर में ले गया। उसने सम्पादक कर्मचन्द 'कशिश' से कनक का परिचय कराया और उसकी मर्जी बतायी। कशिश जी पंडित जी जैसे आदरणीय व्यक्ति की पुत्री के लिए सब कुछ करने को तैयार थे। उन्होंने अपनी राय दे दी कि एक शरीफजादी के लिए पत्रों के दफतर में मर्दों के साथ बैठना उचित नहीं है।

वे लोग दिल्ली के अन्य कई पत्रों के कार्यालय में गए, परन्तु कहीं भी जगह न मिल सकी। 'सरदार' के संचालक और स्वामी सत्यप्रकाश 'असीर' ने कनक की सहायता करने का आश्वासन दिया। उसके बातचीत के ढंग से और व्यवहार से कनक को वह भरोसे का आदमी लगा।

कनक 'सरदार' के दफतर से लौटी तो उसके मन में उत्साह था। पंडित जी ने भी उसे अखबार में लिखने के काम के लिए कई सुझाव दिए और कुछ पुस्तकें पढ़ने को कहा।

कनक संध्या समय पंडित जी के साथ गांधी जी की प्रार्थना में गयी थी। गांधी जी सहृदयता, सहिष्णुता और उदारता के प्रचार के लिए अपनी संध्या प्रार्थनायें दिल्ली के भिन्न-भिन्न भागों में कर रहे थे। प्रार्थना रेडियो और लाउडस्पीकरों द्वारा पूरे नगर में सभी जगह सुनी जा सकती थी, परन्तु कनक गांधी जी के दर्शन और प्रार्थना के वातावरण को प्रत्यक्ष जानने के लिए उस संध्या पंडित जी के साथ करोलबाग गई थी।

प्रार्थना के स्थान पर एक ओर कुछ बुर्कापोश मुसलमान स्त्रियाँ और कुछ मुसलमान मर्द भी थे। उन्हें सुरक्षा के लिए स्वयं-सेवक घेरे थे। श्रोताओं के लिए दरियाँ बिछी हुई थीं, लेकिन अधिकांश लोग दरियों पर न बैठ कर आस-पास घूम रहे थे और क्रोध प्रकट कर रहे थे--प्रार्थना क्या ढोंग है। गांधी मुसलमानों का हौसला बढ़ाने के लिए आ रहा है।

गांधी जी, उन की पोतियाँ और उनके साथ के लोग चार मोटरों में आये। गांधी जी के गाड़ी से उतरते ही कुछ भक्त उन के चरण-स्पर्श के लिए दौड़ पड़े। स्वयं-सेवकों ने एक-दूसरे का हाथ पकड़ कर गांधी जी के चारों ओर घेरा डाल लिया और उन्हें भक्तों के आक्रमण से बचाया।

गांधी जी के शरीर पर केवल कमर में घुटनों से ऊपर ही छोटी सी धोती

थी। गर्दन झुकी हुई और चेहरा बहुत उदास था। उपस्थित लोगों में केवल वे ही बिना कपड़ों के थे, सब से भिन्न! उन्हें पहचानने के लिए किसी से पूछने की आवश्यकता नहीं थी। दुबला, गठीला, गहरा साँवला शरीर—सुडौल सुरूप और सुवर्ण न हो कर भी भव्य जान पड़ रहा था। कनक ने श्रद्धा का रोमांच अनुभव किया।

गांधी जी को घेरे हुए स्वयं-सेवकों ने शेष श्रद्धालुओं को रोक कर मुस्लिम स्त्रियों के लिए रास्ता दे दिया। बुर्कापोश स्त्रियाँ गाँधी जी के घुटनों से लिपट, बिलख-बिलख कर रो पड़ीं। गांधी जी के नेत्रों से आँसू टपकने लगे। उन्होंने स्त्रियों के बुर्कों से ढँके सिरों पर करुणा का हाथ रख कर अल्लाह-ईश्वर का भरोसा करने के लिए कहा और प्राणपन से उन की रक्षा करने का आश्वासन दिया।

एक मुस्लिम स्त्री ने एक दूध पीता बच्चा गांधी जी के सामने करके, रो-रो कर बताया—"यह यतीम हो गया है। इस के जवान माता-पिता दोनों कत्ल हो गये हैं।"

गांधी जी ने बालक को हृदय से लगा कर उस के कल्याण के लिए ईश्वर से प्रार्थना की।

गांधी जी और उन के साथियों ने गीता के श्लोकों से प्रार्थना आरम्भ की। गीता के श्लोकों के पश्चात 'गुरु ग्रंथ साहब' से वाणी पढ़ी गयी। उस के पश्चात 'कुरानशरीफ' से आयतों की तलावत शुरू हुई।

"बन्द करो! गांधी मुरदाबाद! हो! हो! हो! बन्द करो! बन्द करो! कुरान को बन्द करो! गांधी मुरदाबाद! कुरान नहीं पढ़ा जायेगा। हम नहीं पढ़ने देंगे!"

भयंकर कोलाहल मच गया। जान पड़ता था भीड़ सब कुछ रौंद डालेगी, तोड़-फोड़ डालेगी।

प्रार्थना के लिए बैठे हुए बहुत से लोगों ने पुकारा—"चुप रहिये! शान्त रहिये! शेम! शेम!"

गांधी जी मौन निश्चल हो गये थे। उन का चेहरा अवसाद की प्रतिमा जान पड़ रहा था। उन के साथी भी मौन हो गये।

कनक को भीड़ की अभद्रता असह्य हो रही थी। पंडित जी ने खेद और ग्लानि प्रकट की—"च्च-च्च-च्च? शेम! शेम! ओफ!"

गांधी जी ने दोनों हाथ जोड़ कर भीड़ से शान्त होकर सुनने के लिए अनुरोध किया।

भीड़ क्रोध में उत्तेजना से उबल रही थी, परन्तु गांधी जी के संकेत की अवहेलना न कर सकी। शनैः-शनैः शान्ति हो गयी।

"भाइयो और बहनो!" गांधी जी का सन्ताप, करुणा और आत्म-विश्वास से भरा स्वर सुनायी दिया, "इस दुख और मुसीबत में हमें भगवान पर विश्वास ही सहारा दे सकता है। ईश्वर या अल्लाह तो एक है। उसे किसी भी धर्म की पुस्तक से याद करने में क्या एतराज और क्रोध हो सकता है......"

"हम कुरान की आयतें हरगिज नहीं सुनेंगे !" भीड़ में से कुछ लोगों ने क्रोध से आपत्ति की, "इन आयतों को पढ़ कर हमारे हजारों भाइयों का कत्ल किया गया है। इन आयतों को पढ़ने वालों ने हमारी माँ-बहनों पर बलात्कार किया है। आप अहिंसा और किसी का दिल न दुखाने का उपदेश देते हैं। आप यह आयतें सुना कर हमारे भाइयों और बच्चों के कत्ल और हमारी माँ-बहनों का बेइज्जती की याद दिला रहे हैं, हमारे दिलों को दुखा रहे हैं। हम इसे हरगिज बरदाश्त नहीं करेंगे।" बोलने वालों के चीत्कार में पीड़ितों का क्रोध, प्रतिशोध के लिए हुंकार रहा था। यह हुंकार क्रोध और पीड़ा का चीत्कार था। भीड़ स्तब्ध हो गयी। विघ्न डालने वालों के प्रति 'शेम ! शेम !' पुकार कर ग्लानि प्रकट करने वाले भी स्तब्ध रह गये।

कनक मूढ़ता अनुभव कर रही थी। उसके मस्तिष्क में अन्याय के विरोध, प्रतिहिंसा और सहिष्णुता का द्वन्द्व-भँवर उठ खड़ा हुआ—इसका क्या उत्तर है ? क्या समाधान है ? वह आशा से गांधी जी की ओर टकटकी लगाये थी।

गांधी जी निर्भय स्वर में बोले—"कुछ भाइयों को कुरान-शरीफ की आयतें पढ़ी जाने में आपत्ति है। मैं उनके दिल नहीं दुखाना चाहता, लेकिन अगर प्रार्थना में मैं कुरान-शरीफ की तलावत नहीं कर सकता तो प्रार्थना में दूसरी धर्म-पुस्तकों का भी पाठ नहीं करूँगा।"

"कोई जरूरत नहीं ! बेशक मत करो !" भीड़ ने उपेक्षापूर्ण विरोध में ललकारा।

"मैं अपने हिन्दू और सिख भाई-बहनों से इंसानियत के नाम पर प्रार्थना करता हूँ।" गांधी जी भीड़ के शान्त हो जाने पर बोले, "दिल्ली में मौजूद सब मुसलमान भाई और बहनें हमारी और हिन्द-सरकार की अमानत हैं। अगर उनका रोम भी दुखता है या उनके लिए किसी किस्म का खतरा रहता है तो यह हमारा सब से बड़ा अपराध होगा, हमारे लिए निहायत शर्म की बात होगी...।"

"पाकिस्तान में अब भी रोज हजारों हिन्दू काटे जा रहे हैं। उन्हें लूट कर नंगा कर के निकाला जा रहा है। आपको उनका कोई दरद नहीं है ? आप वहाँ क्यों नहीं जाते ?" विरोधियों ने ललकारा।

गांधी जी ने हाथ जोड़ कर सुनने का अनुरोध किया—"मेरे दिल में पाकिस्तान में मारे जाने वाले और पाकिस्तान से निकाले जाने वाले अपने भाई-बहनों के लिए भी उतना ही दरद है। मैं पाकिस्तान जाना चाहता हूँ और जाऊँगा। मैं कायदे-आजम के सामने हाथ जोड़ कर दया और शान्ति के लिए प्रार्थना करूँगा। मैं उन से कहूँगा कि इस कत्ल और खून को बन्द करायें, अमन कायम करायें। हिन्दू भाई-बहनें फिर अपने घरों में लौट कर शान्ति से निर्भय रह सकें, लेकिन उससे पहले यहाँ से गये मुसलमानों का लौट आना जरूरी है। जब तक दिल्ली और हिन्दुस्तान में मुसलमानों के लिए खतरा मौजूद है, मैं किस मुँह से पाकिस्तान गवर्नमेन्ट पर कत्लो-खून और बदअमनी के लिए दोष लगा सकता हूँ, किस मुँह से उन्हें शान्ति कायम करने के लिए कह सकता हूँ ? मैं हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों जगह शान्ति और

अमन कायम करने के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा रहा हूँ ।"

लौटते समय कनक का मन क्षुब्ध था । पंडित जी मौन, सिर झुकाये चल रहे थे । कनक गर्दन झुकाये पिता के साथ चलते हुए सहसा बोल उठी—"बदले से तो शत्रुता का अन्त नहीं हो सकता, पुरी जी ने यही बात मार्च में लिखी थी और उन्हें नौकरी से हटा दिया गया था ।"

"बिलकुल ठीक है बेटी !" पिता स्वीकार कर मौन रह गये ।

असीर चौथे पहर अपने दफ्तर में मौजूद थे । उन्होंने कनक का लिखा लेख लेकर पढ़ा । उन्होंने शैली को तो जोरदार करार दिया, परन्तु दृष्टिकोण को ठीक नहीं बताया । उन्होंने कहा कि उन्हें गांधी के कारण बहुत हानियाँ उठानी पड़ी हैं । कनक ने कहा कि उसने मानवता का दृष्टिकोण अपनाया है । दोनों में कुछ देर इसी विषय में बहस हुई ।

असीर से पहली मुलाकात में कनक ने जो उत्साह और आशा पायी थी, वह पाँच-छः सप्ताह के अनुभव से क्षीण होती जा रही थी । उसके लिखे लेख की शैली और घटनाओं को लेकर उनके निष्कर्ष बिलकुल बदल दिए गए थे । कनक को असीर का अधिकाधिक निस्संकोच होते जाना भी अच्छा नहीं लग रहा था ।

कनक अपने विचार में निधड़क थी । उसे रूढ़ियों की परवाह नहीं थी । असीर के साथ 'चेम्सफोर्ड-क्लब' में जाने पर उसे लगा, अभी तक वह बहुत संकीर्ण जगत में थी । उसे ऊँचे स्तर के लोगों के विचारों और व्यवहारों का परिचय न था ।···सिगरेट और ड्रिंक्स (शराब) तो सत्कार की साधारण वस्तुयें हैं । इन्हें स्वीकार कर लेने में स्त्रियों और पुरुषों के लिए भिन्न-भिन्न मान्यतायें क्यों हों ? बात-चीत करते समय पुरुषों के स्पर्श से सकुचाना या आँखों और होठों से भाव-भंगिमा प्रकट न कर सकना फूहड़पन नहीं तो क्या है ? वह ड्योढ़ी और गली के संसार में सीमित रहने वाली स्त्रियों की अपेक्षा अपने-आप को स्वतंत्र और समर्थ समझती थी । इस स्तर के सम्मुख उसे अपनी न्यूनता जान पड़ी ।

क्लब के वातावरण में बहुत उत्तेजना थी । 'काश्मीर', 'बारामूला, 'पाकिस्तान', 'ऊड़ी', 'पट्टन' आदि शब्द गूँज रहे थे । मिस्टर सिन्हा ने गांधी जी के प्रति क्रोध से उबल कर इतने जोर से मेज पर हाथ मारा था कि गिलास गिरते-गिरते बचे थे । उन्हें क्रोध था कि ऐसे संकट की अवस्था में गांधी जी मुसलमानों को दिल्ली और भारत में से न निकालने देकर देश के गले पर छुरी चला रहे हैं । वे बोले—"अगर हमारी सेना ने बारामूला पर पाकिस्तान की मेकेनाइज्ड (यंत्र सज्जित) सेना को रोक न लिया होता तो श्रीनगर पर निश्चय पाकिस्तान का कब्जा हो जाता । मेजर सोनी कह रहा है कि ब्रिटिश अफसर पाकिस्तान आर्मी और रेडर्स (आक्रमणकारी भीड़) को खुले आम कमांड कर रहे हैं । ऐसी हालत में अगर यहाँ मुसलमान साबोटाज करने लगें तो ? मुसलमान तो यहाँ केवल अवसर की प्रतीक्षा में हैं······।"

"साबोटाज ?" असीर बोला, "साबोटाज क्या, यह लोग तो कूप (सहसा विप्लव) से दिल्ली पर कब्जा करने के प्लान बनाये हुये थे। उनके घरों से फौजी बमों, राइफलों, मशीनगनों के जखीरे पकड़े गये हैं। सरदार पटेल ने गांधी को सबूत दिये हैं, पर वह मानता ही नहीं। पटेल बिल्कुल ठीक कहता है, हम ओवर नाइट नेशनलिस्ट (रात भर में राष्ट्रवादी) बन जाने वाले मुसलमानों का भरोसा कैसे कर लें।"

मिसेज बलूजा पेंसिल से बनी भवें उठाकर बोली—"यस, हाओ डेंजरस, इजंट इट ?"

असीर ने क्रोध प्रकट किया—"इस समय हजारों रिफ्यूजी मसजिदों, मकबरों में, मसजिदों में क्या पुराने किले के खँडहरों में भी जहाँ गीदड़ और चमगादड़ भरे रहते थे, सिर छिपाये हैं। गरीबों ने कब्रें उखाड़-उखाड़ कर किसी तरह सिर पर साया बनाया है। गांधी कहता है, मसजिदों-मकबरों से सब को निकाल दो। लोगों की जान बचाना जरूरी है कि उजाड़-खाली पड़ी मसजिदों का सिजदा करना जरूरी है ? गांधी को मुसलमानों के फिनेटिक सेंटीमेंट का खयाल है, हिन्दुओं की जान का कोई खयाल नहीं ?"

"हिन्दुओं को तो पटेल ही बचाये हैं। गांधी और नेहरू तो हमें मरवा डालते।"

असीर ने मुस्कान के साथ समर्थन किया—"अरे भाई, नेहरू को मुसलमानों के लिए सहानुभूति होनी ही चाहिए। उसी कल्चर में पला है।"

सिन्हा फिर उत्तेजित हो गया—"खबर रोक दी गयी है, इसने बिहार में, मुसलमानों को खतम करने वाले गाँवों पर हवाई जहाज से बम गिरवाये हैं। सैकड़ों हिन्दू मारे गये हैं। मैं कहता हूँ···।" सिन्हा ने फिर मेज पर हाथ पटका, "गांधी बिहार में जाकर देखे। जिन्दा लौट आये तो कहना····। मुसलमान का मजहब ही ऐसा है, वह कभी नेशनलिस्ट और पेट्रियाटिक (राष्ट्र और देश का भक्त) हो नहीं सकता। मैंने खुद हसरत मोहानी को कानपुर के आम जलसे में एलान करते सुना है······।"

"इनके इकबाल ने क्या कहा है ?" असीर ने टोक दिया, "मुस्लिम हैं हम, वतन है सारा जहाँ हमारा ! क्या वे हिन्दुस्तान को छोड़ेंगे ?"

कनक का मन यह बातें सुनकर बहुत भारी हो गया। राष्ट्र-विरोध को कैसे सहा जा सकता था ? राष्ट्र के लिए संकट था। राष्ट्र के प्रति जोखिम नहीं सही जा सकती थी। जोखिम के प्रति सतर्क होने का विरोध कैसे किया जा सकता था···?

पंडित गिरधारीलाल जी राजनीतिक कारणों से भी सिद्धांत से च्युत हो जाना उचित नहीं समझते थे। वे राजनीति को क्षणिक और सिद्धान्त को स्थायी समझते थे। कनक को पिता का दृष्टिकोण ठीक जँचता था।

कनक ने विचार-भेद के कारण दिल्ली में पत्रकारिता के क्षेत्र में अपने लिए स्थान न देखा और लखनऊ में अवसर की आशा पायी। कनक ने पिता जी से लखनऊ चले जाने की बात की।

पंडित जी ने कह दिया, 'बेटी, एतराज कुछ भी नहीं है। यह जरा सोचने-समझने की बात है। इस इतवार को महेन्द्र जालन्धर से आयेगा। उसकी भी राय ले लें, जल्दी क्या है ?"

बिहार, उत्तर प्रदेश और दिल्ली के नेशनलिस्ट मुसलमानों के एक प्रतिनिधि-मण्डल ने बिड़ला भवन में गांधी जी के समीप आकर दुहाई दी थी कि मुस्लिमों को पाकिस्तान भेजा जाना रोक दिया जाय। सरकार उनके भारत में ही निर्भय हो कर रहने का प्रबन्ध करे। गाँधी जी ने इस सम्बन्ध में अपनी संध्या-प्रार्थना में रेडियो पर बिड़ला भवन से बहुत द्रावक और जोरदार अपील की थी—"....जो मुसलमान भाई साम्प्रदायिकता से दूर और राष्ट्रीय भावना के पक्ष में रहे हैं, जो अपने-आप को भारत के राष्ट्र का अंग समझते हैं, इस देश को अपनी मातृभूमि मानते हैं, उन्हें अपनी मातृभूमि की गोद से धकेल कर निकाल देना भयंकर अन्याय है !"

कनक ने अपने विचारों को स्वतंत्रता से प्रकट कर पाने का अवसर न देख और लिखने का कोई आर्थिक लाभ भी न देख कर, सप्ताह भर से कुछ नहीं लिखा था, परन्तु गाँधी जी की इस अपील के समर्थन और अन्याय के विरोध के लिए वह बेचैन हो उठी। दो दिन में भी मन शान्त न हुआ तो उसने एक छोटा सा लेख लिख डाला। उसका तर्क था, यदि मातृभूमि से निकाल दिया जाना हम पर अन्याय था तो भारत न छोड़ना चाहने वाले मुसलमानों को भारत से निकाल देना भी अन्याय है।....अन्याय का अनुकरण करना, अन्याय का समर्थन करना ही है। उसे विश्वास था कि मानवता और न्याय के नाते इस लेख को असीर अवश्य ही छाप देंगे।

कनक उसी समय गयी, जिस समय असीर दफ्तर में रहते थे। असीर ने कनक का लेख पढ़ा, फिर थोड़ी देर दोनों में लेख के विषय में बातचीत होती रही।

कनक घर लौट रही थी तो उसने देखा कि उसके घर के सामने बड़ी भीड़ थी। वह डर गई। पंडित जी बहुत क्षुब्ध थे। उन्होंने बताया कि सैयद पाकिस्तान से लौट आया है। वह पुलिस को साथ लाया है, अपना मकान वापस लेना चाहता है। उसका कहना है कि ग्वालमण्डी में हमारा कोई मकान ही नहीं है। मैंने कागजात की बात कही तो वह झूठ बोल गया कि उसे कोई कागज दिये ही नहीं गए हैं। और अपने दस्तखत किए कागजों के लिए कहता है कि हमने उसका बक्सा तोड़ कर निकाले हैं। कनक को सैयद की ऐसी हरकत पर बहुत क्रोध आया। सारी भीड़ पंडित जी के साथ थी। सब सैयद को मजा चखाने को तैयार थे।

पंडित जी गांधी जी के वक्तव्यों को ध्यान से पढ़ते थे। तीसरे दिन प्रातः ही अखबार देख कर पंडित जी विस्मित रह गए। कंचन ने पढ़कर सुनाया।

गाँधी जी का वक्तव्य था—"इस देश को भय से छोड़ जाने वाले मुसलमानों को भारत-सरकार ने आश्वासन दिया है कि वे लोग चाहें तो लौट कर अपने मकानों में बस सकते हैं। सरकार उनकी और उनके जान-माल की रक्षा के लिए जिम्मेवार होगी। कल दिल्ली के एक बहुत सज्जन, नेशनलिस्ट मुसलमान अपने परिवार की पर्दापोश स्त्रियों के साथ बहुत ही परेशान हालत में मेरे पास आये थे। यह मुसलमान

सज्जन पुराने राष्ट्रवादी हैं। आतंक के कारण मातृभूमि को छोड़कर चले गये थे। वे भारत-सरकार के आश्वासन पर, भारत-सरकार की प्रजा बन कर अपनी जन्मभूमि में रहने के लिए लौट कर आये हैं। कल दुर्रानी गली में अपने मकान पर वापस पहुँचे तो उन्होंने अपने मकान पर लाहौर से आये हिन्दुओं का कब्जा पाया। इस सज्जन की अनुपस्थिति में उनके मकान का ताला तोड़ कर उस पर कब्जा कर लिया गया है। इन सज्जन ने फ़ैज बाजार के थाने में न्याय और सहायता के लिए फरियाद की। मुसलमान सज्जन पुलिस साथ लेकर मकान पर गये थे, परन्तु हिन्दुओं की भीड़ ने पुलिस को उचित कार्रवाई नहीं करने दी। किसी भी सरकार के लिए यह बहुत शरम की बात है कि नागरिकों को उनका न्यायोचित अधिकार न मिले, नागरिकों के जान-माल की रक्षा न की जा सके। मैं सरकार से जोरदार अपील करता हूँ कि न्याय की रक्षा में जो भी विरोध और अड़चनें आयें, उनका सामना किया जाये। गैर-जिम्मेवार भीड़ के प्रदर्शन से डर जाना सरकार के लिए शरम की बात है। सरकार का फर्ज है कि दुर्रानी गली का मकान उसके मालिक को जरूर मिले। कानून, व्यवस्था और न्याय की रक्षा के लिए यदि सरकार को कड़े से कड़ा कदम उठाना पड़ता है तो भी झिझकना उचित नहीं है।"

पंडित जी को सैयद के फरेब पर बहुत क्रोध आया। उन्हें क्रोध इस बात पर भी आया कि गांधी जी ने दोनों पक्षों की बात सुने बिना ऐसा वक्तव्य क्यों दे दिया। पंडित जी ने गांधी जी से मिलने का असफल प्रयत्न किया। जब उन्होंने देखा कि मिल पाना संभव नहीं है तो उन्होंने गांधी जी को पूरा वृतान्त प्रमाण सहित लिख कर भेज दिया।

सैयद के पक्ष में गांधी जी के वक्तव्य और उसके कारण अपने द्वार पर हो गये भयंकर कांड से कनक क्षुब्ध और मूढ़-सी हो गई थी। मन ही मन संकोच अनुभव कर रही थी कि असीर के सामने क्या कहेगी। एक ही उपाय था, वह राजनीति और सिद्धान्त के विषय में मौन रह कर जीविका के लिए ही कुछ करे। लखनऊ में अवसर था, परन्तु पिता जी मान नहीं रहे थे। आशंका थी, जीजा जी भी पिता जी का ही अनुमोदन करेंगे। दिल्ली में सिन्हा द्वारा सूचना विभाग से कुछ काम मिल सकने की ही आशा थी।

कनक फिर असीर से मिलने गई। असीर ने कनक को इतने दिन अदृश्य रहने के लिए उपालंभ दिया तो कनक को बताना ही पड़ा कि दुर्रानी गली वाला कांड उसी के मकान पर हुआ था।

"देख ली तुमने नेशनलिस्ट मुसलमानों की हकीकत ?" असीर ने पूछा।

कनक इस ताने के लिए पहले से तैयार थी, उत्तर दिया—"ऐसे लोग किस सम्प्रदाय, बिरादरी या श्रेणी में नहीं होते ? हमने मकान खरीदा है, लेकिन हमारी गली के सब मकानों पर तो जबरदस्ती ही कब्जा किया गया है ?"

"गाँधी पंजाब से हिन्दुओं का निकाला जाना नहीं रोक सका तो उसे यहाँ हिन्दुओं के गले पर छुरी फेरने का क्या हक है ? क्या एक नेशनलिस्ट मुसलमान का

महत्व, बहावलपुर में भूख से तड़पते, पचास हजार हिन्दुओं से भी अधिक है ? यह देख लो।" असीर ने उस दिन का ट्रिब्यून कनक के सामने रख दिया।

समाचार था—बहावलपुर में पचास हजार हिन्दुओं को जबरदस्ती निकाल कर कैम्पों में भर दिया गया। उन्हें प्रति दूसरे दिन केवल दो रोटियाँ दी जा रही हैं, जल भी पर्याप्त नहीं दिया जा रहा है। एक सौ से अधिक व्यक्ति भूख से मर चुके हैं।

कनक चुप रह गयी। थोड़ी देर मौन रह कर उसने याद दिलाया कि आपने सिन्हा जी के घर चलने को कहा था। असीर कनक को सिन्हा जी के यहाँ ले गये। सिन्हा साहब ने कनक की पूरी सहायता करना अपना कर्तव्य बताया।

वे लोग कनक को एक रेस्तराँ में ले गये। वहाँ असीर के अभद्र व्यवहार के कारण कनक को बहुत क्रोध आया। वह वहाँ से उठकर चली आयी।

नैयर दो दिन बाद आ गया। पंडित जी ने उसे सैयद से मकान के परिवर्तन और क्रय-विक्रय के कागज दिखाये। उसने गली के दो लोगों से गवाही लिखा कर ८ सितम्बर १९४७ की तारीख डाल दी।

कनक ने जीजा से 'सरदार' के मालिक असीर से सैद्धान्तिक मतभेद का जिक्र किया और बताया कि उसे दिल्ली के पत्र-जगत से कोई आशा नहीं है। वह लखनऊ में मिलते अवसर से लाभ उठा सकने के लिए वहाँ जाना चाहती है।

नैयर कनक से सहमत नहीं हुआ। उसने कहा—"तुम्हारे विचार जो हों, व्यवसाय अपनाना है तो व्यवसाय के प्रति कर्तव्य निबाहो। वह भी तो एक कर्तव्य है। हम केवल वही मुकद्दमा तो नहीं लेते जिन से हमें सहानुभूति होती है। मुकद्दमा ले लेते हैं, जैसा भी हो उसे ईमानदारी से निबाहते हैं।"

कनक ने अस्वीकार किया—"जी हाँ, आप तो स्वयं ही कहते हैं, आप ईमानदारी से बेईमानी करते हैं। मैं जीविका के लिए अन्याय का समर्थन नहीं कर सकती। इस का तो मतलब है आवश्यकता पढ़ने पर चोरी भी कर लूँ ? ऐसे भी तो लोग हैं जो न्याय के लिए जीविका को ठोकर मार सकते हैं।" उसका इशारा पुरी की ओर था।

"ऐसा करना चाहती हो तो तुम पहले गांधी बन जाओ कि लोग तुम्हारे विचारों को तुम्हारे व्यक्तित्व के कारण मान लें। जानती हो, जीविका को ठोकर मारने वालों को जीविका की ठोकर लगने के भी उदाहरण मिल सकते हैं।" नैयर ने कनक की कड़ी बात का कड़ा उत्तर दे कर तुरन्त बात बदली, "खैर, जो हुआ, मैं तो समझता हूँ कि असीर तुम्हें सहायता दे रहा है तो तुम्हें लाभ उठाना चाहिए।"

"अब वहाँ कुछ नहीं हो सकेगा। बहुत घृणित आदमी है, मैं उस के यहाँ नहीं जाऊँगी।" कनक ने सिर झुकाये कहा और नैयर को गत संध्या की घटना सुना दी।

नैयर ने घटना के लिए कनक को ही दोष दिया—"तुम ने 'ड्रिंक' लिया

क्यों ? मुझे तुमसे ऐसी आशा नहीं थी। तुमने खुद छिछोरापन किया।"

"क्या छिछोरापन किया ? आप 'ड्रिंक' नहीं ले लेते ? आपने मुझे स्वयं कई बार कहा, थोड़ा ले ले, कोई हर्ज नहीं है। बहिन जी को नहीं कई बार दिया ?"

"हर बात के लिए अवसर और स्थिति होती है। आदमी और संगति देखी जाती है।"

"अच्छा, मेरी उतनी गलती सही, लेकिन मैंने अनुचित व्यवहार तो नहीं किया। अब मैं असीर के पास कभी नहीं जा सकती।"

"अगर लखनऊ में भी कोई घटना हो गयी तो ?"

"क्यों हो जायेगी ? हो भी जायेगी तो जैसे यहाँ मैंने सँभाल लिया, वहाँ नहीं सँभाल सकती ? आप पिता जी से कह दीजिये, मुझे बक्स में बन्द करके रख दें।" कनक रो पड़ी।

नैयर को उसी की बात मान लेनी पड़ी।

३

पश्चिम पंजाब के हिन्दू अपने वतन से निकाल दिये गये थे। वे त्रस्त लोग बसों में अथवा पैदल, भरतीय सशस्त्र सैनिकों की रक्षा में शरण के लिए पूर्वी पंजाब की ओर आ रहे थे। ऐसा एक काफिला अमृतसर के शरणार्थी कैम्प के सामने पहुँचा। रात हो चुकी थी। लोग जो सामान साथ ला सके थे, उसे बसों से उतारने में व्यस्त हो गये। काफिले में सब से आगे, सशस्त्र सैनिकों की गाड़ी के ठीक पीछे एक स्टेशन-वैगन गाड़ी थी। इस में शेखूपुरा से उद्धार की गई स्त्रियाँ थीं। इन स्त्रियों को कुछ भी सामान सँभालने की चिन्ता न थी। उनके पास शरीर के कपड़ों के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। कौशल्या देवी इन स्त्रियों को ले कर कैम्प की चारदीवारी के फाटक में सबसे पहले चली गयीं।

फाटक के भीतर उज्ज्वल प्रकाश था। वातावरण में मानव-कंठ की गूँज भरी हुई थी। चारदीवारी के भीतर इमारत के सामने, दायें-बायें कई छोलदारियाँ लगी थीं। बोल-चाल और आवाजें सुनायी दे रही थीं। लोग व्यस्तता और फुर्ती से आ-जा रहे थे। शेखूपुरा से आई स्त्रियाँ कौशल्या देवी के पास सामने बरामदे की ओर बढ़ रही थीं।

काफिले की बसों में आये लोग अपने बच्चों और भिन्न-भिन्न प्रकार के असबाब को कन्धों पर सँभाले, बगल में लिए या हाथों में लटकाये फाटक से आने लगे थे। सभी मर्द या स्त्रियाँ अपने शरीरों पर बच्चों को या कुछ न कुछ सामान लिये थे। यात्रियों के शरीरों पर कपड़े कीमती परन्तु बहुत मैले और मसले हुए थे। थकी हुई स्थूल-शरीर प्रौढ़ायें, कोमल-शरीर दुबली लड़कियाँ, नवयुवतियाँ सोते या रोते

हुए बच्चों के साथ, भारी पिटारियाँ या गठरियाँ भी लिये थीं। थकान के कारण वे बच्चों या सामान को धरती पर टिका देतीं तो भी हाथ से पकड़े ही रहतीं। कष्ट-प्रद होने पर भी बच्चे और सामान प्यारे थे।

सबसे कहा गया कि वे लोग पहले छोलदारी में जाकर नाम लिखवा लें तभी उन्हें रहने की जगह मिलेगी। जब शेखूपुरा से आई हुई स्त्रियों से उनके पीहर और ससुराल वालों के नाम पूछे गये तो वे सब चुप हो गईं। बड़ी मुश्किल से उनके पतियों के नाम आदि पता लगाये गये। तारा ने किसी का भी नाम नहीं बताया। उसने कह दिया कि मुझे किसी को खबर नहीं देनी है। नाम आदि लिख लिये जाने पर उन सब को एक कमरे में पहुँचा दिया गया। सब स्त्रियाँ तो सो गईं, परन्तु तारा को नींद नहीं आ रही थी। उसके लिए अब सोचने का अवसर आ गया था।

तारा ने सोचा था कि अमृतसर में लड़कियों के बहुत से स्कूल होंगे। पता लगाया तो पता चला कि आजकल सब स्कूल बन्द हैं। वहीं तारा को देव नाम का एक युवक मिल गया। वह बहुत ही शरीफ था। स्कूल बन्द हो जाने के कारण कैंपों में आकर वह समाज-सेवा किया करता था।

तारा और बंती जब बंती के वर वालों का पता लगाने चलीं तो देव उनके साथ गया। संध्या समय उन्हें अपने घर भी ले गया। उसकी माँ ने सहानुभूति के कारण तारा और बंती को एक-एक जोड़ा पुराने कपड़े और चलते समय पाँच-पाँच रुपये दिये।

बन्ती को मालूम था कि उसके पति और जेठ अमृतसर में आढ़तियों से माल लेने आते हैं। एक बार वह भी अपने पति के साथ आयी थी। परन्तु अब उसे उन आढ़तियों का मकान याद न था। बड़ी मुश्किल से ढूँढ़ कर एक आढ़तिये का पता मिला। उसने बताया कि अब मनोहर दास (बंती का पति) और गोपालदास (जेठ) अम्बाले में रहते हैं।

तारा को देव के परिवार के सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार से बहुत सान्त्वना मिली थी। यदि वे लोग कह देते तो तारा कोई दूसरा सहारा मिल सकने तक उन लोगों के यहाँ रसोई बना देने, बर्तन माँज देने और कपड़े धो देने के लिए ही रह जाती, परन्तु वे इतनी पढ़ी-लिखी लड़की से ऐसा काम नहीं करवा सकते थे। पंजाबी मध्य-वर्ग के परिवारों में नौकर-महराजिन या महरी अनिवार्य भी नहीं होते। भद्र महिलायें कलाइयों पर छः या आठ तोले सोने पहने रहने पर भी घर का सब तरह का काम अपने हाथों करती हैं और बढ़िया पोशाक पहन कर सम्मानित रूप में घूम-फिर भी सकती हैं। मँहगी के जमाने में देव के परिवार के लिये ऐसा बोझ समेट लेना दूरदर्शिता न होती।

बंती ने तारा को बाँहों में लेकर बार-बार आग्रह किया—"मेरी बहिन, तू मेरे साथ चल। मुझे तेरा ही सहारा है। मैं अनपढ़ गँवार तो किसी से दो बात करने लायक भी नहीं। तू मेरी छोटी बहिन है। महाराज जी ने हमें दुख में बहनें बनाया है तो शेष आयु भी साथ ही रहेंगी। मेरा परिवार मिल जाये तो दोनों को सहारा हो जायेगा। एक टुकड़ा भी पायेंगी तो आधा-आधा खायेंगी। तू जानती है, हमने कैसी अवस्था में एक-दूसरे का सहारा पाया है...।"

बंती और तारा को पूर्व की ओर जाने वाली गाड़ी पर बैठाने के लिए देव के साथ बाबू सन्तराम भी स्टेशन पर आये थे। अमृतसर के स्टेशन पर जहाँ तक भी दृष्टि जाती, असंख्य मनुष्य भरे थे। स्टेशन मधुछत्र की भाँति भनभना रहा था। मनुष्य मनुष्यों को पाँव तले रौंद रहे थे। वातावरण पुकारों, चीख-चिल्लाहट, क्रन्दन और दुर्गन्ध से बोझिल था। प्लेटफार्म मुसाफिरों और उनके सामान से अटे हुए थे। गाड़ियाँ बहुत कम दिखायी देती थीं।। पूर्व से पश्चिम की ओर जाने वाली गाड़ियाँ मुसलमानों से भरी स्पेशल ट्रेनें होती थीं। इन गाड़ियों को उत्तेजित भीड़ के आक्रमण से बचाने के लिए, प्लेटफार्मों से दूर लाइनों पर बहुत तेज चाल से लाहौर की ओर निकाल दिया जाता था।

पश्चिम से भारतीय सेना की रक्षा में हिन्दुओं से भरी हुई स्पेशल ट्रेनें आती थीं। इन गाड़ियों के इंजन के आगे और अन्त में भी शहतीर ढोने वाली सपाट गाड़ियों पर रेत के बोरे रख कर मोर्चे बने रहते थे। इन स्पेशल ट्रेनों को भी अमृतसर में रोके बिना पूर्व की ओर रास्ता दे दिया जाता था। अमृतसर सड़क से आने वाले शरणार्थियों से ही इतना भर गया था कि रेल से आने वालों को उतरने देना उचित नहीं था।

पंजाब के व्यापार का केन्द्र अमृतसर अब भारत का सीमांत बन गया था। अमृतसर से भारत में पूर्व और दक्षिण की ओर जाना चाहने वाले यात्रियों की संख्या सैकड़ों गुना अधिक हो गयी थी। विस्थापित पंजाबी पाँव रख सकने के स्थान के लिए कहीं भी चले जाने के लिए आतुर थे। उनके सामने करने या मरने का प्रश्न था।

अमृतसर से पूर्व की ओर जाने वाली गाड़ियों की संख्या पूर्वापेक्षा दशमांश भी नहीं रही थी। विभाजन से पूर्व उत्तर भारत में रेल के इंजन के ड्राइवर और फायरमैन का कठिन काम अधिकतर मुसलमान करते थे। वे सभी पाकिस्तान चले गये थे और पंजाब में आते आतंक अनुभव करते थे।

गाड़ी अमृतसर से चल कर कुछ स्टेशनों पर बिना रुके आगे निकल गयी। फिर छोटे-छोटे स्टेशन छोड़कर रुकने लगी। प्रायः सभी स्टेशनों पर लोग बाल्टियाँ लिये जल या लस्सी पिलाने के लिए गाड़ी को घेर लेते थे।

कुछ स्टेशनों पर स्थानीय लोग नमकीन रोटियाँ अथवा दाल-रोटी बाँट कर सत्कार कर रहे थे। एक स्टेशन पर पूरी-तरकारी भी बाँटी गयी। एक स्टेशन पर हलवा भी बाँटा गया।

स्टेशनों पर आतिथ्य करने वाले लोग पीड़ित शरणार्थियों के सत्कार का पूरा संतोष पाये बिना गाड़ी को चलने से रोके रहते थे। शरणार्थी यात्रियों को भी उतावली नहीं थी। बहुत कम लोगों को अनुमान था कि वे कहाँ जा रहे थे। उन्हें निश्चित समय पर कहीं पहुँचने की चिन्ता नहीं थी। वे भाग्य को अँगूठा दिखाकर हँस रहे थे, भाग्य उन्हें कुचल नहीं सका। वे चिन्ता करके थक गये थे। अब उन्हें किसी बात की चिन्ता न थी।

परन्तु भीड़ में दबी बंती को जल्दी थी। उसे अम्बाला पहुँचने की चिन्ता

और उतावली थी पर क्या कर सकती थी, क्या कह सकती थी। वह गाड़ी की मंथर और शिथिल गति से क्षुब्ध हो रही थी। जो रेलगाड़ी तेजी की कल्पना की उपमा थी, अब बोझ से रेंग रही थी। गाड़ी अमृतसर से चल कर आठ पहर में 'फिल्लौर' स्टेशन तक ही पहुँची थी। बंती को कुछ अनुमान नहीं था कि अम्बाला कहाँ, कितनी दूर होगा ? इस विषय में चतुर तारा भी कुछ नहीं कह सकती थी। बंती के अनुरोध पर उसने स्टेशन के प्लेटफार्म पर खड़े रेल से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों से पूछ कर जानना चाहा—"अम्बाला कितनी दूर है, वहाँ गाड़ी कब पहुँचेगी ?"

उत्तर मिला—"यहाँ से पचहत्तर मील है। गाड़ी चले तो दो-ढाई घण्टे में पहुँच सकती है, पर यह क्या गाड़ी है ? साँझ तक पहुँच जाये या कल सवेरे पहुँच जाये या और देर हो जाये। कुछ निश्चित नहीं है।"

धीमे-धीमे, रेंग-रेंग कर चलती गाड़ी में बंती और तारा का दूसरा दिन भी बीत गया। दूसरी रात भी आधी बीत गयी। स्त्रियाँ एक-दूसरे से टिकी, दबी और दबाती हुई खुर्राटे लेती चली जा रही थीं। किसी का भी दबाव पड़ने पर क्रोध और विरोध व्यर्थ था।

स्त्रियों को गाड़ी में दब कर बैठे-बैठे तीसरा दिन आरम्भ हो गया। प्रखर, उज्ज्वल सूर्य क्षितिज से उठने लगा। तीखी किरणों से दो घण्टों तक थकी-मुर्झायी हुई स्त्रियों को कोंच और चौंधिया कर सूर्य गाड़ी की खिड़कियों से ऊँचा उठ गया। धीमी चाल से चलती गाड़ी एक लम्बे प्लेटफार्म पर अटक रही थी। तारा ने खिड़की से सिगनल की दुमंजिली कोठरी पर लिखा पढ़ा—'अम्बाला शहर'। बंती को बताया। दोनों गाड़ी से निकलने का उपक्रम करने लगीं। दोनों निश्चय कर चुकी थीं कि नयी अपरिचित जगह में, जब तक दूसरा आश्रय नहीं मिलता, शरणार्थी कैम्प में ही शरण लेनी होगी।

अम्बाला स्टेशन पर उतरते ही बंती एक छोटे से लड़के को देखते ही तारा का हाथ पकड़ कर जल्दी से उसके पास गई। वह बंती के मुहल्ले में रहने वाले बूढ़ामल का लड़का था। उसकी बहन को भी बंती के साथ ही मुसलमान उठा-कर ले गये थे। वह लड़का बंती को अपने बाप के पास ले गया। वहाँ पहुँच कर बंती को पता चला कि उसके ससुराल वाले दिल्ली में हैं।

दूसरे दिन बूढ़ामल ने बंती और तारा को दिल्ली जाने वाली बस पर बैठा दिया। वे दोनों सूर्यास्त से कुछ पहले ही दिल्ली पहुँच गयीं। शहर भर में शरणा-र्थियों की भीड़ इधर-उधर फैली हुई थी। बंती और तारा 'काश्मीरी गेट' के कैम्प में गईं। वहाँ उनका नाम आदि लिखकर राशन-कार्ड दे दिया गया और वे लोग स्त्रियों की झोपड़ी में चली गयीं। कैम्प में पहुँचते-पहुँचते सन्ध्या का अँधेरा घना हो गया था, शहर में बिजलियाँ जल गयी थीं।

बंती और तारा झोपड़ी में गईं तो वहाँ और भी कई स्त्रियाँ थीं। सब स्त्रियाँ इन दोनों के पास आकर बातें करने लगीं। इसी तरह बातें करते रात हो गई। फिर सब अपनी-अपनी चटाइयाँ या बिस्तर बिछा कर लेट गईं।

सुबह तारा की आँख खुली तो बंती नहा-धोकर पाठ कर रही थी।

तारा को अँगड़ाई लेते देख बंती बोली—"महाराज जी ने कृपा कर यहाँ तक पहुँचा दिया है। आज मेरे जग्गी और टब्बर (परिवार) से भी मिला दे। उस भैड़े (बिगड़ैल) की नींद बहुत कम है। उसकी दादी तड़के उठती थी तो वह भी उठ कर बैठ जाता था। मैं तो उसके उठने से पहले दही मथ कर पाव डेढ़ पाव मक्खन निकाल लेती थी। उँगली से उसके मुँह में मक्खन भर देती तो वह फिर सो जाता, तब मैं भैंसों को सानी डाल कर दुहने लगती थी।"

तारा ने बंती के स्वर में उत्साह और आशा की झंकार अनुभव की। अपना घर बंती को सदा ही याद आता रहता था। पहले बंती घर की चर्चा दुख से करती थी, आज उसकी ध्वनि में घर लौटने का उत्साह था। तारा के मन में घर लौट सकने के लिए उत्साह का कोई कारण नहीं था।

तारा ने छोलदारी में जाकर पहाड़गंज—जहाँ बंती के ससुराल वाले रहते थे—का मार्ग अच्छी तरह पूछ लिया।

पुत्र और पति को खोजने जाने से पूर्व आटा-दाल का राशन लेकर उसे पका-बना और खा लेने का धैर्य बंती में न था। एक पूरी वाला अपने खोमचे पर खजूर के पत्ते की चँवर डुलाता हुआ ठण्डी पूरियों के ताजा और गरम होने की पुकार लगा रहा था। बंती ने तारा का हाथ पकड़ कर कहा—"—अमृतसर की तरह खोजने-पता लेने और घूमते-फिरते न जाने कितना समय लगे। अपरिचित जगह का क्या भरोसा ? साँझ ही हो जाये। पैसे हैं, तुम दो पूरियाँ खाकर पानी पी लो। महाराज जी की दया से मेरा जग्गी और उसका पिता मिल जाये तो फिर कोई चिन्ता नहीं।"

बंती स्वयं कुछ नहीं खाना चाहती थी। उसका विचार था—उपासे रह, कष्ट उठा कर ढूँढ़ेगी तो उसका भोग शीघ्र पूरा हो कर भगवान पसीजेंगे। चाहती थी, भगवान की कृपा से अब अपने जग्गी को गोद में ले कर ही मुँह जूठा करे।

तारा नहीं मानी। उसने आठ पूरियाँ लेकर चार जबरदस्ती बंती के हाथों में दे दीं। दोनों ने खाकर पानी पिया और अपनी पोटलियाँ बाँह के नीचे दबा कर चलने के लिए तैयार खड़ी हो गयीं।

एक स्त्री ने पूछ लिया—"कहाँ जा रही हो, कब लौटोगी ?"

बंती को चलते समय टोके जाने का असगुन बुरा लगा। स्त्री की टोक अन-सुनी करने के लिए कह दिया—"महाराज जी दया करें तो लौटेंगी क्यों ?"

बंती और तारा पहाड़गंज के अड्डे पर टाँगे से उतर कर मुहल्ले की ओर बढ़ीं। तारा ने एक प्रौढ़ सिक्ख को देख कर पहाड़गंज का रास्ता पूछ लिया।

बंती और तारा उजड़े हुए से बाजार के दाहिने एक गली में चली गयीं। कई मकान एक साथ जले हुए थे। जले हुए मकानों का मलबा गिरने से गलियों में नालियाँ मूँद गयी थीं। गन्दा पानी और गन्दगी गलियों में फैली हुई थी। बंती और तारा बच-बच कर, नाक पर कपड़ा रखे चल रही थीं। शरण के लिये लोग जले हुए मकानों में भी दिखाई दे रहे थे।

गली में या किसी भी द्वार पर किसी स्त्री को देख कर बंती पूछ लेती--"शेखूपुरा जिले के चिम्मोकी गाँव के दो भाई और उनकी माँ तो यहाँ नहीं रहते ? बजाजी की फेरी करते हैं। साथ में बुढ़िया है और गोद का लड़का है।" तारा मर्दों से भी पूछ लेती। वह भाइयों के नाम बता देती, "गोपालदास मनोहरदास, चिम्मोकी के खत्री हैं ?"

अधिकांश लोग अपनी चिन्ता या व्यस्तता में केवल इन्कार से सिर हिला देते।

कोई रुक कर पूछ लेते--"क्या करते हैं ?"

"बजाजी की फेरी कर रहे हैं।"

"नहीं बहना, मालूम नहीं। हम तो नये आये हैं। पड़ोसियों को भी नहीं जानते। यहाँ कौन पुश्तों और बरसों से बसा है जो दूसरों को जानेगा ?"

एक गली से असफल होकर वे दूसरी गली में जा कर प्रश्न करने लगतीं।

बंती ने विस्मय प्रकट किया—"शहरों के लोग भी क्या हैं ? गाँव में हम आस-पास के गाँवों के लोगों को भी जानते थे। यहाँ लोग अपने पड़ोस में रहने वालों को ही नहीं जानते।"

तारा ने बताया—"लाहौर में हमारी भोलापांधे की गली में, किसी बच्चे से भी किसी का पता पूछ सकते थे। यहाँ सब लोग नये आ कर बसे हैं।"

बंती और तारा को गली-गली घूमते दोपहर हो गयी। बहुत थक गयीं। प्यास से गले सूख रहे थे। उन्होंने दो गलियों के मोड़ पर लगे नल से अँजुलियाँ भर-भर कर पानी पी लिया। विश्राम के लिए कुछ देर बैठना भी आवश्यक था। समीप का बहुत बड़ा मकान बहुत जला और गिरा हुआ था। बंती और तारा मकान के चौड़े चबूतरे पर बैठ गयीं।

दिन के तीसरे पहर बंती और तारा ने बाजार के बायें भाग में खोज आरम्भ की। इस भाग में गलियाँ अधिक तंग और मकान प्रायः छोटे और कच्चे थे। गन्दगी और दुर्गन्ध भी अधिक थी। बंती और तारा गली में किसी को भी देख पातीं या कोई दरवाजा खुला मिलता तो पूछ-ताछ कर लेतीं।

बंती और तारा गलियों में चली जा रही थीं। दिन का प्रकाश कम होता जा रहा था। दोनों के शरीर थकावट से गिरे जा रहे थे, थकान से उनके घुटने काँपने लगे। आशा और धैर्य घटते जा रहे थे, बैठने का कोई भी स्थान न होने पर दोनों अपने कपड़े समेट कर कुछ मिनटों के लिए पाँवों पर बोझ दे कर गली में ही बैठ गयीं। दिन भर चलने से उनके पाँव सूज गये थे।

तारा ने कहा—"अब लौट चलें, कल फिर आ जायेंगे।" गला सूख जाने के कारण वह बोल नहीं पा रही थी। बंती का स्वर भी धीमा हो गया था। परन्तु वह नई गली देख कर आगे चल पड़ती।

गलियों के मकानों से धुंआ उठ कर अँधेरा घना हो रहा था। तारा का अन्तःकरण काँप-काँप उठता था, अँधेरा घना हो जाने पर इस भूलभुलैया से कैसे

निकल पायेंगे, जाने कौन संकट सिर पर आ जाये। वे अँधेरे में हिन्दू-मुसलमान हिंसक पशुओं के हाथ पड़ने की मूर्खता क्यों कर रही हैं ?

तारा बराबर बंती से लौटने के लिए गिड़गिड़ा रही थी, परन्तु बंती नयी गली देख कर वहाँ भी पूछ लेना चाहती थी। गली के अन्त में या गली से लौटते समय दायें-बायें और भी गली दिखायी दे जाती थी।

"मेरा काका !" बंती चीख कर एक छोटे से मकान की ओर लपक गयी। उसने दहलीज में बैठी प्रौढ़ा की गोद से दुबले-पतले बच्चे को झपट लिया और उसे सीने से चिपका कर ऊँचे स्वर में रो पड़ी।

बच्चा सहसा झपट और दबोच लिये जाने से बहुत तीखे स्वर में चीख उठा था।

गली के ऊपर बिजली के तारों से लटका लट्टू चमक उठा।

गली में सहसा प्रकाश फैल गया।

जैसे दुख का अन्धकार मिट गया हो। बच्चे ने माँ को पहचाना। वह रोना भूल कर माँ से चिपट गया।

तारा अकस्मात इतना आनन्द फूट पढ़ने से काँप कर पसीना-पसीना हो गयी थी। वह खड़ी न रह सकने के कारण गली में बैठ गयी। कुछ क्षण में सँभल पाई तो सांत्वना की साँस ली। जान पड़ा उसकी सब थकावट पसीने में बह गयी है।

"बंती बच्चे का मुख अपनी आँखों के सामने कर, उसके सिर-पीठ पर हाथ फेर रही थी--हाय कितना कमजोर हो गया है।...तुझे क्या हुआ मेरे लाल...।" वह फिर रो पड़ी।

बंती और बच्चे के ऊँचे स्वर में रोने से पास-पड़ोस की तीन-चार स्त्रियाँ आ कर पूछने लगीं—"क्या है ? क्या हुआ ? कौन है ?"

पड़ोसिनों ने अनुमान कर लिया, पीछे छूट गयी बच्चे की माँ आ गयी है। वे विस्मय से ठोड़ी पर उँगली रखे, कौतुहल से आँखें और होंठ फैला कर पूछने लगीं —"हाय, कहाँ रह गयी थी, कैसे रह गयी थी ?"

"इतने छोटे बच्चे को कैसे छोड़ आई थी ?"

"हाय बड़ा कलेजा है इस माँ का।"

एक स्त्री ने ऊँचे स्वर में याद दिलाया—"यह लोग तो कहते थे कि बच्चे की माँ रास्ते में बीमारी से मर गयी थी।"

बंती बच्चे को चूम-चूम कर उस के शरीर को सब ओर से सहलाने और देखने में मगन थी। तारा को ही बोलना पड़ा। उसने बताया—"मुसलमानों ने कई दूसरी लड़कियों और स्त्रियों को शेखूपुरा मण्डी में एक हवेली में बन्द कर लिया था। अपनी सरकार ने छुड़ाया तो कैम्पों में ढूंढ़ती-ढूंढ़ती यहाँ पहुँची।

"अरे हाँ-हाँ, वैसे ही आयी है जैसे पड़ोसियों की मंसो आयी थी।"

बंती की सास चुपचाप आगे बढ़ आई। उस ने बच्चे को बंती की गोद से ले लिया और अपनी दहलीज के भीतर हो गई।

बंती सास के साथ भीतर जाने लगी। सास ने उसे फटकार दिया—"हट जा, दूर रह ! बाहर निकल !"

"क्यों ? मेरा घर है, मैं कहाँ जाऊँ ?" बंती गिड़गिड़ा कर सास के पाँव पर सिर रख देने के लिए झुकी।

"दूर रह, तुझसे कह दिया न ! तू अब हम लोगों के किस काम की !" सास ने बंती का सिर पाँव से परे ढकेल लिया।

बंती अवाक् रह गयी। वह दहलीज को पकड़ कर गली के फर्श पर बैठ गयी। उसने अपना सिर दोनों हाथों में थाम लिया।

तारा के पाँव लड़खड़ा गये। गिर पड़ने से बचने के लिए वह भी बंती के समीप सिमट कर पाँवों के बल बैठ गयी।

पड़ोस से कुछ और स्त्रियाँ और पुरुष बन्ती और तारा के चारों ओर घिर आये। लोग बहू को घर में न घुसने देने के पक्ष-विपक्ष में बोलने लगे।

सबसे पहले बोलने वाली ने ऊँचे स्वर में विरोध किया—"कैसे घर में रख लेगी। 'चुकरी वालों' की बहू भी तो ऐसे ही आयी थी ? मुसलमानों ने इन्हें छोड़ा होगा। उन्होंने घरों के दरवाजे तोड़ कर औरतों को खराब किया, इन्हें छोड़ दिया होगा। सुनो तो भला···।"

क्रोध और निराशा से तारा का दम घुट रहा था। किसी तरह बोली—"माँ जी, इसका क्या कसूर है ? खुद तो रह नहीं गयी थी। तुम्हीं लोग डर के मारे इसे छोड़ आये थे ! यह तो जान पर खेल कर छूटते ही भागी-भागी आयी है। नौ दिन से तुम्हें खोज रही है !"

एक नौजवान ने तारा का समर्थन किया—"ठीक है, कसूर है तो तुम्हारा है। शर्म नहीं आती, बुजदिल गीदड़ की तरह घर की औरत को छोड़ आये। तुम्हारे जैसा पापी कौन है, बेशर्मो ? घर बुढ़िया का क्या, घर तो बहू का···।"

दूसरे ने विरोध किया—"सौ-सौ मुसलमान···! धर्म क्या रह गया···?"

बन्ती का बच्चा माँ की ओर बाँहें फैलाये चीख रहा था।

"बच्चा माँ के पास जाना चाहता है। बच्चा तो उसी का है। उसका बच्चा क्यों छीनती है।" दुहायी सुनाई दी।

"बच्चा उसका कैसे हुआ ? बच्चा बाप का···।"

"मैं कुछ नहीं जानती। मुझे कुछ मालूम नहीं !" बुढ़िया रोते हुए बच्चे को कमर पर दबा कर बोली, "लड़के आयेंगे तो जो चाहे करें।" उसने किवाड़ बन्द कर लिये।

थोड़ी देर में बन्ती का पति और जेठ दोनों आ गए। मनोहरदास ने मुहल्ले वालों की सारी बात सुनी। उसने बन्ती को स्वीकार करने से इंकार कर दिया। मुहल्ले के कुछ लोगों ने उसका विरोध किया तो वह बोला, "तुम लोग कहाँ के पंच हो ? तुम्हें क्या मतलब ?" और यह कह कर उसने दरवाजा जोर की आवाज़ से बन्द कर दिया।

तारा को कुछ नहीं सूझ रहा था, सिर चकरा रहा था। सिर दरद से फटा जा रहा था। सामने क्या देख रही थी ? वह क्या करे ?

"मैं यहाँ मर जाऊँगी !" बन्ती जोर से चिल्ला उठी।

'फट्ट' आवाज हुयी। बन्ती ने अपना माथा दहलीज पर पटक दिया।

तारा स्तब्ध रह गयी। समीप खड़े लोग भी स्तब्ध थे। बन्ती 'फट्ट-फट्ट' अपना माथा दहलीज पर पटकती जा रही थी और चिल्लाती जा रही थी—"मैं यहाँ ही मरूँगी।"

पाँच, दस, बीस बार बन्ती दहलीज पर माथा पटकती गयी। उसका गला रुँध गया था, परन्तु वह दहलीज पर अपना सिर मारती ही जा रही थी।

समीप खड़ी स्त्री भय से चीख उठी।

दूसरी स्त्री चीख कर भाग गई।

कोई मर्द अन्याय करने वालों को गाली दे रहा था।

तारा को गली की बिजली के प्रकाश में बन्ती का खून से लाल-काला, दहलीज पर गिरता-उठता चेहरा दिखायी दिया। उसकी चेतना जागी। बन्ती मर जाने के लिए अपना सिर फोड़ रही थी।

तारा ने पूरी शक्ति से बन्ती का सिर अपने घुटनों में दबा लिया।

क्रोध के उन्माद में पागल बन्ती ने तारा को जोर से धकेल दिया। तारा पीछे गिर पड़ी।

तारा के गिर पड़ने पर एक मर्द ने आगे बढ़ कर बन्ती को कन्धों से पकड़ने का यत्न किया, परन्तु उसने फिर दो बार अपना माथा दहलीज पर पटका।

तारा ने उठ कर बन्ती का सिर पकड़ लेना चाहा। बन्ती स्वयं ही लुढ़क गयी। उसके होंठ खुले रह गये। पूरा चेहरा खून से भर गया था।

तारा ने बन्ती का सिर अपनी गोद में रख कर अपने दुपट्टे से ढँक लिया। आँखें मूँद लीं। उसका शरीर काँप रहा था। हाथ-पाँव शिथिल हो रहे थे। गली के लोग क्रोध से अत्याचार और अन्याय के प्रति विरोध प्रकट कर रहे थे।

गली के स्त्री-पुरुषों ने बन्ती और तारा को घेर लिया। तारा को मूर्छा-सी आ रही थी। उसने चेतना बनाये रखने के लिए दाँतों से होंठ काटे, सिर को हिलाया और अपने दुपट्टे से बन्ती का चेहरा पोंछने लगी। उसका सिर बन्ती के सिर पर झुक गया।

तारा ने कन्धों पर दबाव और सिर में दरद अनुभव किया। आँखें खोलीं तो तीन स्त्रियाँ, चार पुरुष समीप खड़े थे।

सुनायी दिया—यह तो बच गयी।—उसके घुटनों के समीप बन्ती का शरीर पड़ा था। चेहरा खून से लथपथ, मक्खियाँ बैठ रही थीं। समीप अन-तहाया कोरा लाल कपड़ा गली की फर्श पर पड़ा था।

तारा का सिर दरद से फट रहा था। कई बार पलकें झपका कर उसने समझा, बन्ती मर गयी थी।

"देखो तो बेशर्मों को ! लाल कफन दे रहे हैं। अब वह सुहागिन बन गई।" एक स्त्री क्रोध और घृणा से कह रही थी।

"सती हो गयी।" किसी ने कहा।

"खसम के जीते जी सती हो गयी।" दूसरी ने कहा।

तारा स्तब्ध निश्चल बैठी रही। उसमें रोने की भी शक्ति नहीं थी।

मनोहरदास और गोपालदास और दो-चार आदमियों के साथ बन्ती की अर्थी पालकी की तरह कन्धों पर रख कर ले गये।

मुहल्ले की एक स्त्री ने तारा से अपने घर चल कर मुँह-हाथ धो लेने को कहा। तारा ने उनसे कहा कि मैं कैम्प जाऊँगी।

●

तारा अर्धमूर्छित अवस्था में टाँगे में बैठ कर कैम्प की ओर चल दी। वह कैम्प में पहुँची तो लोग विस्मय और कौतूहल से उसकी ओर देखने लगे। तारा ने अपनी झोपड़ी में कदम रखा ही था कि झोपड़ी की स्त्रियों ने कोहराम मचा दिया। उन्होंने कहा कि हम ऐसी आवारा लड़की को अपनी झोपड़ी में नहीं रहने देंगी। न जाने रात भर कहाँ रही ? दो गई थीं, एक को पता नहीं कहाँ छोड़ आयी ? तारा चुपचाप जाकर अपनी चटाई पर लेट गई।

तारा ने व्यंजना और संकेत समझा। दुर्भाग्य के अतल कूप में पड़ी हुई को एक और ठोकर लगी। वह गहरे से गहरे डूबती जा रही थी, परन्तु अपने आप को बचाने के लिए प्रतिवाद कर सकने का सामर्थ्य न था। असहाय पड़ी अनुभव कर रही थी कि उसे घेर कर खड़ी स्त्रियाँ उस पर लांछन लगा कर उससे ऐसे घृणा कर रही हैं जैसे वह उनके बीच में दुर्गन्धित लाश की तरह आ पड़ी हो। तारा को अपनी मुक्ति की सम्भावना इसी में जान पड़ रही थी कि उसकी लाश को उठा कर आग में या बहती गहरी नदी में फेंक दिया जाये।

तारा क्रोध और घृणा से बक-झक करती स्त्रियों के बीच पड़ी, दुपट्टे में सिर-मुँह लपेटे अनुमान कर रही थी कि उसे अभी उठा कर फेंक दिया जायेगा।... चुटिया से घसीटते हुए फेंकने के लिए ले जायेंगे। उसे घसीटते समय उस के सब कपड़े भी फाड़ देंगे। उसके प्रति क्रोध और घृणा है। उस पर इसलिए क्रोध है कि उस ने अपमान किया जाने का, सोमराज और नब्बू द्वारा अत्याचार किये जाने का विरोध किया है।

तारा को घेरे स्त्रियाँ क्रोध और घृणा से एक साथ बोल रही थीं। वह उन के शब्द नहीं समझ पा रही थी पर जानती थी कि उसे दण्ड दिया जाने के लिये भगवान को पुकारा जा रहा था। तारा का सिर चकरा रहा था—भगवान न इन की सुनता है, न मेरी सुनता है।

तारा अर्ध-मूर्छित कल्पना में डूब गई। उसे भगवान के सामने घसीटा जा रहा है। भगवान का चेहरा बार-बार बदल जाता है, जैसे सिनेमा के पूरे पर्दे पर खूब बड़े-बड़े

चेहरे आते-जाते हैं।...खूब बड़ी झाबर, घुँघराली काली दाढ़ी, कतरी हुई मूँछें, लाल तुर्की टोपी, बहुत तेजोमय और क्रोध से तमतमाता लाल-लाल चेहरा भगवान हाथ में टोंटीदार लोटा लिये नमाज पढ़ने के लिए बिछे आसन के समीप खड़े हैं। कभी भगवान का चेहरा बिना दाढ़ी-मूँछ के बालक जैसा लगता।...कटाक्ष भरे नेत्र, मुस्कान से थिरकते होंठों पर बाँसुरी! परन्तु भगवान का कोई भी चेहरा उसकी ओर न देखता था। सब उपेक्षा से मुँह फेर लेते थे।

इतने में कैम्प का चपरासी भजनलाल तारा को बुलाने आया। तारा बड़ी मुश्किल से उठ पायी। भजनलाल उसे छोलदारी में लिवा ले गया। उस कैम्प में विमल जी, डाक्टर श्यामा और एक-दो व्यक्ति और थे।

●

विमल जी और डाक्टर श्यामा आदि सब काँग्रेसी समाज-सेवी थे। तारा को डाक्टर श्यामा छोलदारी के भीतरी भाग में ले गयीं। वहाँ जाकर उन्होंने तारा से बड़ी नरमी से पूछताछ की। तारा ने रोते-रोते सारी बात डाक्टर श्यामा को बतायी। डाक्टर श्यामा को तारा से बहुत सहानुभूति थी। तारा का सिर अब भी दर्द से चकरा रहा था। उन्होंने उसे दवाई खिलाई और बाद में खाने को और भी दे दी। तारा झोपड़ी में वापस आ गई तो डाक्टर श्यामा द्वारा भेजी दो पुरानी धोतियाँ, ब्लाउज और पेटीकोट भजनलाल लेकर आया। झोपड़ी की स्त्रियों को तारा के साथ दुर्व्यवहार करने के लिए फटकारा गया।

प्रातः तारा नहा-धोकर छोलदारी की ओर गई। वहाँ विमल जी और कई नवयुवक बैठे थे। तारा ने विमल जी से कोई काम करने को माँगा तो उन्होंने कहा कि डिप्टी कमिश्नर ने कैम्प की लिस्ट माँगी है। लगभग एक सौ तेरह पृष्ठ हैं। आप चाहें तो उसमें सहायता कर सकती हैं। तारा ने सहायता देना स्वीकार कर लिया। वह कागज, पेन आदि लेकर छोलदारी के भीतरी भाग में जाकर लिखने लगी।

तारा दूसरे दिन भी लिस्टों का काम करने गयी। उसने तीन सौ परिवारों के नाम-धाम चढ़ा दिए और झोपड़ी में वापस जाने लगी। छोलदारी के बाहरी भाग में विमल जी बैठे थे। तारा ने उनसे लड़कियों के कुछ स्कूलों के नाम-पते माँगे। विमल जी ने तारा को स्कूलों के नाम-पते एक कागज पर लिख कर दे दिये।

दो ही दिन में झोपड़ी की स्त्रियों की धारणा हो गई थी कि तारा कैम्प के दफतर की छोलदारी में मर्दों के बराबर कुर्सी पर बैठती है। वह पढ़ी-लिखी है। अच्छे बड़े घर की है। एक स्त्री—निहालदेई—ने तारा का राशन कार्ड लेकर उसका खाना बना देने का प्रस्ताव रखा। वैसे प्रसन्नो ब्रह्मणी की भी इच्छा थी, परन्तु निहालदेई से बैर न ठानने के लिए ही तारा ने अपना कार्ड उसे दे दिया।

तारा कैम्प से मुफ्त राशन पाने की ग्लानि से बचने के लिए यथासम्भव, कैम्प का काम करती रहती थी। वह सुबह ही चली जाती। उसने पूरी लिस्टें तैयार कर दी थीं।

एक दिन कैम्प में एक खद्दरधारी सज्जन आए, जिनका नाम प्रसाद जी था। विमल जी ने उनसे तारा का परिचय कराया। प्रसाद जी तारा को स्कूलों में मिलाने के लिए अपने साथ ले गये। तारा नौकरी पर जाने की उतावली में उनके साथ जाने को तैयार हो गई। वे उसे सीधे स्कूलों में न ले जाकर पहले एक रेस्तोराँ में काफी पिलाने ले गए, फिर उन्होंने उसके मना करते रहने पर भी उसे एक धोती दिलाई। इसके बाद अपने दफ्तर में ले गये। तारा को उनके व्यवहार से यह निश्चय हो गया कि उनका चरित्र अच्छा नहीं है। वह उनके दफ्तर से ही टैक्सी लेकर वापस कैम्प चली आई।

झोपड़ी में तारा की प्रसाद जी द्वारा दिलाई साड़ी पर फिर कोहराम मचा। निहालदेई सबसे ज्यादा चिल्लाई। तारा ने गुस्से में आकर कह दिया कि मैं दफ्तर में दिन भर लिस्टों का काम करती हूँ तभी तो कैम्प वाले मुझे कपड़े देते हैं। स्त्रियों की आपस में भी बहस हो गई। निहालदेई ने तारा का राशन कार्ड उसे वापस दे दिया और कहा कि हम तुम्हारे नौकर थोड़ी ही हैं। उसका कार्ड प्रसन्नो ब्राह्मणी ने ले लिया और साथ ही उसकी रोटी बनाने का जिम्मा भी।

छोलदारी के समीप हैट-सूट पहने एक आदमी दो पुलिस अफसरों के साथ दिखायी दिया। झोपड़ियों की लाइनों में कई सिपाही घूमते-झाँकते दिखायी दिये। स्त्रियाँ घबरा गयीं।

सहसा कुछ मेहतर-मेहतरानियाँ आ गये। सब तरफ झाड़ू दिया जाने लगा। विमल जी और प्रसाद जी तीन-चार दूसरे लोगों के साथ बहुत व्यस्तता में उधर ही आ रहे थे। उन्होंने बिजली के तारों पर सूखने के लिए लटकाये हुए कपड़े तुरन्त उठा लेने के लिए कहा। दो सिपाहियों ने आ कर झोपड़ी के भीतर झाँक कर पूछा—"यहाँ कितने लोग हैं?" केवल स्त्रियाँ हैं, यह सुन कर वे पीछे हट गये।

सब तरफ पूछ-ताछ, चौकसी, व्यस्तता दिखायी दे रही थी। तारा छोलदारी की ओर न जाकर झोपड़ी में ही रुकी रही।

डाक्टर श्यामा एक दूसरी महिला के साथ झोपड़ी में आ गयीं। दोनों महिलायें धूप के चश्मे लगाये थीं। दोनों के कपड़ों और शरीरों से भिन्न-भिन्न प्रकार की प्यारी सुगन्धें आ रही थीं। मैले-कुचैले, फटे-पुराने कपड़े पहने झोपड़ी की स्त्रियों से वे भिन्न स्तर की और अलग सी लग रही थीं।

श्यामा ने तारा को देखते ही अँग्रेजी में सम्बोधन किया—"कहो, क्या हाल है, अब कोई परेशानी तो नहीं है? मैं बुधवार को आई थी। विमल जी ने बताया था, प्रसाद जी तुम्हें शायद इन्द्रप्रस्थ ले गये थे। वहाँ काम बन गया?"

"जी, कुछ नहीं हुआ।" तारा ने कातरता से अँग्रेजी में उत्तर दिया, "आप मुझे चाहे जैसा, जो काम दिला दीजिये। मैं नर्स का काम भी कर लूँगी...।"

श्यामा ने अपने साथ आयी महिला से तारा के विषय में कहा—"ग्रेजुएट हैं, बहुत अच्छे घर की हैं। मिसेज अगरवाला इसके लिए जरूर कुछ...।"

श्यामा के साथ आई महिला दोहरे बदन, कुछ साँवले रंग की थी। धूप के

कारण पसीने से, मांसल गर्दन की सलवटों की पावडर की रेखायें बन गयी थीं। उन्होंने चश्मा उतार कर, गले में लटका कुंदन का भारी लाकेट ठीक करते हुए तारा को ध्यान से देखा—"हम सोचेंगे, अँग्रेजी अच्छी तरह···।"

"तारा ग्रेजुएट है।" श्यामा ने मिसेज अगरवाला को टोक दिया और फिर अँग्रेजी में बोली, "बेचारी ने बहुत यातना सही है, बहुत दम वाली, जिम्मेदार लड़की है···।" तारा से नज़र मिला कर मिसेज अगरवाला ने सिर हिलाया, "अच्छा, फिर बात करेंगे।"

श्यामा ने तारा से कहा—"सुनो, प्राइम मिनिस्टर कैंप देखने के लिए आ रहे हैं। आप लोग अपनी सब चीजें सफाई से ठीक करके रख लीजिये। जिनके पास हो, कपड़े बदल लें। आप लोगों में से किसी को कुछ कहना हो तो, आप हमें या इन्हें—मिसेज अगरवाला को बता दीजिये। हम आप लोगों की तरफ से अच्छी तरह से कह देंगी या आप लोग तारा से कह दीजिये, यह हमें बता देंगी।" श्यामा मिसेज अगरवाला के साथ दूसरी झोपड़ियों की ओर चली गयी।

झोपड़ी में केवल तारा ही समझ सकी कि कैम्प में व्यस्तता का कारण क्या है। उसने दूसरी स्त्रियों को बताया—"पंडित जवाहरलाल नेहरू, प्रधानमंत्री, मुल्क के सबसे बड़े वजीर, कैम्प में आ रहे हैं।" स्वयं उसके पूरे शरीर में सिहरन होने लगी। पंडित नेहरू को देखने का अवसर उसे कभी नहीं मिला था। अब प्रत्यक्ष बिल्कुल समीप से देख पायेगी। देश के सब से बड़े आदमी, महात्मा गांधी और पंडित नेहरू! दूसरी स्त्रियाँ भी बाहर सब को बहुत व्यस्त देख विस्मित थीं। वे कौतूहल से झोपड़ी के दरवाजे में एक साथ खड़ी हो कर बाहर होता दौड़-धूप देख रही थीं।

प्रसाद जी, विमल जी, और हैट-सूट पहने आदमी ने झोपड़ी के सामने आकर ऊँचे स्वर में पूछा—"आप लोगों को कोई तकलीफ तो नहीं है?"

"एक ही नल है, इतने लोग हैं।" कोई बोल पड़ा।

"नल? अच्छा एक नल और लग जायेगा।"

"डिप्टी कमिश्नर साहब कह रहे हैं, कल एक और नल लगवा देंगे।" विमल जी ने आश्वासन दिया। प्रसाद जी ने समझाया, "हम लोग तो आपके अपने हैं। जहाँ तक बन पड़ेगा, आप की सेवा करेंगे। आपको जो कुछ भी शिकायत हो, विमल जी से या हमसे कह सकते हैं। हम तो नित्य ही आप से मिलते-जुलते हैं। नेहरू जी ने केवल दस मिनिट का समय दिया है। उनकी तरफ से हम लोग तो हैं ही। पंडित जी सब लाइनों में से गुजरेंगे। आप लोग अपनी-अपनी झोपड़ियों के सामने खड़े हो कर दर्शन करें। कोई भीड़ लगाकर रास्ता न रोके। उसके बाद पाँच मिनट के लिए पंडित जी का व्याख्यान होगा, तब आप छोलदारी के सामने आ जाइयेगा। पंडित जी डिसिप्लिन के बहुत कायल हैं। भीड़-भम्भड़ पसन्द नहीं करते। आप सबको डिसिप्लिन रखना चाहिए। पंडित जी का दर्शन कर सकने के लिए बच्चों को सब से आगे खड़ा कर दीजिये। बच्चों को पंडित जी बहुत प्यार करते हैं।"

प्रसाद जी ने स्त्रियों की झोपड़ी में भी आ कर वही बातें दोहरायीं। पूछा,

"यहाँ कितने बच्चे हैं ?" प्रसन्नो के चार बरस के बच्चे और धम्मो की तीन बरस की लड़की को उनके सामने किया गया।

प्रसाद जी ने प्रसन्नता प्रकट की—"वाह-वाह ! कितने प्यारे बच्चे हैं। आप लोग बच्चों को इतना गंदा क्यों रखती हैं ? इनके मुँह-हाथ धोइये, साफ कपड़े पहनाइये। जल्दी कीजिये, जल्दी !"

धम्मो की सास ने घबरा कर लड़की के कपड़े बदल देने के लिये उसे पीछे खींच लिया। प्रसन्नो के पास लड़के के लिए कोई दूसरा कपड़ा नहीं था। केवल एक कुर्ता था। जाँघिया भी नहीं था। उसने तारा के कान में कहा। तारा ने विमल जी को सूचना दी। भाग-दौड़ हुई। कुछ मिनट बाद प्रसन्नो के बच्चे के लिए एक सफेद कुर्ता और जाँघिया आ गया। कपड़े कुछ ढीले थे। प्रसन्नो ने प्रसन्नता से बच्चे का मुँह धोकर नये कपड़े पहना दिये।

सबको झोपड़ियों के सामने, लाइनों में चुपचाप खड़े हो जाने के लिए समझाया गया—इससे आगे कोई न बढ़े ! छोटे-छोटे बच्चों को अच्छे वस्त्र पहना कर आगे किया जा रहा था। प्रसाद जी बच्चों को समझा रहे थे—"बेटा, हम आयें तो कहना, "नेहरू जी जिन्दाबाद ! चाचा नेहरू जिन्दाबाद !"

"शी शी !...चुप ! चुप...आ रहे हैं ! तुम !"

झोपड़ियों के सामने पंक्तियों में खड़े लोग चौकन्ने हो गये। जरा आगे बढ़ कर देख लेने की उत्सुकता में पंक्तियाँ टेढ़ी हो गयीं। लोगों ने अपने बच्चों को सामने कर लिया। स्तब्धता छा गयी। तारा का दिल सम्मान के बोझ से धड़क रहा था। वह झोपड़ी के दरवाजे के साथ चिपकी छोलदारी की ओर देख रही थी। प्रसन्नो के लड़के दयाल और धम्मो की मुन्नी को हाथ जुड़वा कर झोपड़ी के सामने खड़ा कर दिया गया।

छोलदारी की ओर से एक छोटी सी भीड़ बढ़ी। भीड़ के आगे प्रसाद जी के साथ खद्दर की गांधी टोपी, अचकन, चूड़ीदार पायजामा पहने, चुस्त छरहरा जवाननुमा अधेड़ व्यक्ति चला आ रहा था। अचकन के दूसरे बटन में अधखिला गुलाब लगा हुआ था। प्रसाद जी मुँह उठाये, पंजों पर उचकते हुए, उनसे बात करते आ रहे थे। उनके पीछे डिप्टी कमिश्नर, पुलिस अफसर, डाक्टर श्यामा, मिसेज अगरवाला चली आ रही थीं।

स्त्रियों की झोपड़ी के सामने आ कर प्रसाद जी ने बताया—"इस झोपड़ी में अपने परिवार से बिछड़ी अभागी स्त्रियाँ हैं।"

प्रधानमंत्री जरा ठिठके। झुककर दयाल और धम्मो की मुन्नी के सिर पर हाथ फेरा और पीछे चलते लोगों से पूछ लिया—"बच्चों को दूध मिलता है ?"

पीछे चलते लोगों की आँखें आपस में मिलीं। प्रसाद जी और डिप्टी कमिश्नर ने तुरन्त एक साथ उत्तर दिया—"यस सर ! जी हाँ !"

प्रधानमंत्री लाइन की अन्तिम झोपड़ी से झोपड़ियों की दूसरी गली में आ गये थे। एक बुड्ढे ने हाथ जोड़ कर पुकार लिया—"महराज जी, तुम्हारा राज

बरकरार रहे। हमें जबरदस्ती हमारे पक्के मकानों से उठा लाये हो। यहाँ कोई कच्ची कोठरी ही दे दो। नहीं दे सकते तो इस झोपड़ी से क्यों निकाल रहे हो?"

प्रधानमंत्री ठिठक कर अपनी अचकन का बटन खींचने लगे।

प्रसाद जी ने और डिप्टी-कमिश्नर ने धीमे शब्दों में प्रधानमंत्री को कुछ समझाया।

प्रधानमंत्री ने झुँझलाहट दबा कर उत्तर दिया--"यह कैम्प का कानून है। नियम है। सब जगह कोई न कोई कानून होता है। हम जिन्दगी भर के लिये ठेका नहीं ले सकते।" वे आगे बढ़ गये।

बूढ़ा फिर पुकार कर कुछ कहना चाहता था। पीछे चलते लोगों ने उसे संकेतों और धीमे स्वरों में आश्वासन दे कर चुप करा दिया।

छोलदारी के समीप सौ-सवा सौ शरणार्थी एकत्रहो गये थे। लाउडस्पीकर पर प्रसाद जी का स्वर सुनायी दिया—"परम आदरणीय प्रधानमंत्री जी, भाइयो और बहनो। यह हमारा सौभाग्य है कि आज हमारे दिलों के बादशाह, हमारे देश के रत्न, हमारे नेता और हमारे प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल जी नेहरू ने अपने अमूल्य समय में से कुछ समय निकाल कर यहाँ आना स्वीकार किया। नेहरू जी भारत के ही नहीं, संसार के रत्नों में से हैं। हमारे देश को उनका और गाँधी जी का ही भरोसा है...।"

"यह क्या फिजूल..." प्रधानमंत्री की आवाज ने टोक दिया।

प्रधानमंत्री ने प्रसाद जी को लाउडस्पीकर के सामने से एक तरफ धकेल दिया। प्रसाद जी ने प्रसन्नता से दाँत दिखा दिये और बोले—"आदरणीय प्रधानमंत्री कुछ शब्द कहेंगे।"

प्रधानमंत्री अपनी अचकन का बटन खींचते हुए ,बोले—"इस कैम्प में रहने वाले भाइयो और बहनो।"

तारा ने शरीर में सिहरन की झनझनाहट अनुभव की—देश के कर्ण-धार का स्वर!

"सब लोग जानते हैं, मैं भी जानता हूँ कि आप लोग बहुत तकलीफ में हैं, इसीलिए मैं आप लोगों से मिलने और आपकी हालत देखने के लिए यहाँ हाजिर हुआ हूँ। कुछ···अ····यें···ऐसी राजनीतिक तबदीलियाँ हमारे मुल्क में वाकया हुयी हैं जिनके···ऐं···जिन के अच्छे नतीजों के साथ-साथ बुरे नतीजे भी सामने आये हैं। यह तो आप सब लोग जानते हैं कि हम अगर अच्छे नतीजों को कबूल करते हैं तो बुरे नतीजों से भी नहीं बच सकते। वे नतीजे आप के सामने हैं। आप उन्हें देख रहे हैं, लेकिन उन की जिम्मेदारी काँग्रेस पर या हमारी सरकार पर नहीं है। हालाँकि एक हद तक है और···और हम कबूल करते हैं। हम···हम जिम्मेदारी से डरते नहीं हैं।···हम···हम आप की मुसीबत में पूरी मदद करना अपना फर्ज समझते हैं और··· उस के लिए हम हर मुमकिन कोशिश कर रहे हैं। आप अपनी शिकायतें और तकलीफें हमारे सामने रखें। दूसरे किस आदमी से आप अपनी तकलीफें कहेंगे? सर-

कार और सरकारी अफसर आप की तकलीफों को सुनेंगे और उन्हें दूर करने की हर मुमकिन कोशिश करेंगे। लेकिन आप को याद रखना चाहिए कि जैसा आप का यह छोटा सा कैम्प है, इस से बहुत बड़े-बड़े कैम्प हम दिल्ली में बनाये हैं। मुल्क में ऐसे सैकड़ों कैम्प हैं। हमारे कन्धों पर बहुत बड़ा बोझ है और जिम्मेवारी भी है। आपको सिर्फ अपनी जाती तकलीफों और मसलों को ही नहीं सोचना चाहिए। आज का जमाना बहुत अहम जमाना है। इस समय हमारा मुल्क और दुनिया एक बहुत अहम दौर से गुजर रहे हैं। हम पर, मुल्क के हर आदमी पर बहुत बड़े-बड़े फर्ज आयद होते हैं। हमें उन की तरफ भी नज़र रखनी चाहिए। तंग निगाह से सिर्फ अपने जाती मसलों को ही नहीं देखना चाहिए। ताहम...जय हिन्द।"

"जय हिन्द !" प्रसाद जी ने नारा लगाया।

"जय हिन्द !" सम्मिलित स्वर ने अनुमोदन किया। समर्थन, स्वीकृति

"पंडित नेहरू, जिन्दाबाद !"

सम्मिलित स्वर ने फिर अनुमोदन किया।

तारा ने समझ लिया, प्रधानमंत्री का भाषण समाप्त हो गया। अभी उस का मन न भरा था। आशा थी कि देश के कर्णधार, देश के दिलों के बादशाह से कोई ऐसी बात सुनेगी, जो उस के मन-मस्तिष्क को व्याप्त कर देगी।

कुछ ही पल के भीतर भीड़ छँट गयी।

झोपड़ी की स्त्रियाँ तारा को घेर कर पूछने लगीं—"बड़े वजीर ने क्या कहा ?"

तारा समझ नहीं पायी क्या बताये। वह प्रधानमंत्री के शब्दों को दोहराने लगी।

"तारा, सुनो !"

तारा ने घूम कर देखा, डाक्टर श्यामा और मिसेज अगरवाला झोपड़ी के दरवाजे पर खड़ी थीं। तारा आँचल सँभाल कर उन की ओर चली गयी।

"मिसेज अगरवाला पूछती हैं, तुम छोटे बच्चों को पढ़ा लोगी, उन्हें सँभाल लोगी ?" श्यामा ने पूछा।

"जी जरूर, बहुत अच्छी तरह से कर सकूँगी। ऐसा काम मैंने किया है। लाहौर में रायबहादुर गोपालशाह की हवेली में बच्चों को पढ़ाती थी।"

"अच्छा, तुम्हारा जो कुछ सामान है ले लो। मिसेज अगरवाला के साथ चली जाओ। इन के यहाँ ही रहना।

तारा तुरन्त अपना बिस्तर उठा लेने के लिए झोपड़ी में चली गयी।

४

दो-मंजिली भव्य कोठी। ड्योढ़ी में बहुत बड़ी कार खड़ी थी। घनी फुलवाड़ी और खूब सिंचे हुए लान के बीच वृत्ताकार रास्ते पर लाल कालीन जैसी सुर्खी बिछी हुयी थी। नौकर सफेद कुर्ता-धोती या पायजामा पहने थे। तारा को कोठी के पिछले भाग में कमरा दिया गया। उस पर वातावरण का जो प्रभाव पड़ा था, उसे मिसेज अगरवाला की बात ने और जमा दिया।

"देखो, यहाँ सब तरह के बड़े लोग, सरकारी अफसर, लीडर वगैरह आते-जाते हैं। पहनने-ओढ़ने में जरा सफाई वगैरह का खयाल रखना। तुम्हारे पास कुछ कपड़े हैं?"

तारा ने बताया—"उसके पास तीन धोतियाँ थीं। उन्हें धो कर सफाई से रहेगी।"

तारा निर्देश पाने की प्रतीक्षा में कमरे में बैठी थी। एक नौकरानी धुले, स्त्री किये कपड़े ले कर आयी। नौकरानी, पान-तम्बाकू के काले दाँत दिखा कर मुस्कराई, सलाम कर पूछ लिया—"मिस्साब आप लाली और पुत्तू की गवर्नस बनेंगी?

तारा ने नौकरानी से आत्मीयता स्थापित करने के प्रयत्न का स्वागत किया। स्थिति का आभास मिला। मुस्करा दी—"हूँ!"

नौकरानी शिवनी ने थोड़ी देर बाद तारा को कुछ धोतियाँ लाकर दीं और बताया कि मालकिन ने अपने कपड़ों में से दी हैं। तारा ने धोती बदली, केश ठीक किये और कुर्सी पर बैठ कर सोचने लगी कि बहुत यत्न और ध्यान से काम करेगी। आध घण्टे बाद शिवनी ने आकर तारा को बताया कि बड़े साब और मालकिन आपको हाल कमरे में बुला रहे हैं।

तारा ड्राइंग-रूम में गई। वहाँ अगरवाला साहब और मिसेज अगरवाला दोनों बैठे थे। तारा से अगरवाला साहब ने पूछा कि पहले वह कहाँ गवर्नेस थी? कितने बच्चों को पढ़ाती थी? तारा ने उनके प्रश्नों का नम्रतापूर्वक उत्तर दिया। प्रश्नोत्तर के बाद मिसेज अगरवाला ने बच्चों—लड़की लाल्ली और लड़के पुत्तन को बुलाया और उनसे तारा का परिचय करा दिया। तारा ने कुछ लाड़-प्यार दिखा कर बच्चों को अपना बना लिया। बच्चे तारा से खुश हो गए और उसे पोयम आदि भी सुनाने लगे। यह देखकर मालिकों पर भी तारा की योग्यता का अच्छा प्रभाव पड़ा। नौ बरस का लड़का भूषन (भूषी) तारा के सामने नहीं आया था, वह दरवाजे के बाहर खड़ा झाँकता रहा था।

मिसेज अगरवाला ने तारा को समझा दिया और कुछ वह स्वयं समझ गयी। वह कोठी के अनुकूल बन जाने के लिए सतर्क थी। मालकिन की बड़ी साध थी कि कन्वेंट में पढ़ने वाले उनके बच्चे—चार बरस की लाल्ली, छः और नौ बरस के पुत्तन और भूषी सदा अँग्रेजी बोलें और अंग्रेजी न बोल सकना उन्हें खल जाता था। देखती थीं, स्वराज तो हुआ परन्तु हिन्दी वही बोलते थे जो अँग्रेजी जानते नहीं थे। वे

चाहती थीं, लाल्ली अतिथियों के जाने पर अँग्रेजी कविता, भाव-भंगिमा से सुना सके। नौ बरस का भूषी दूसरे स्टैंडर्ड में पढ़ता था और बड़ी लड़की डौली छठे स्टैन्डर्ड में थी। डौली के लिए अलग एक और ट्यूटर था। भूषी और डौली अपने आप को बच्चे नहीं समझते थे, परन्तु उनके खाने-पहनने का ध्यान रखने का भी उत्तरदायित्व तारा पर था।

दूसरे ही दिन तारा ने मालकिन के निर्देशानुसार काम आरम्भ कर दिया। उसने शाम को साढ़े सात बजे खाने के लिए सब बच्चों को बुलाया तो डौली ने इंकार कर दिया और कहा कि हम इतनी जल्दी खाना नहीं खाते। परन्तु नई गवर्नेस को देखने के कौतूहलवश वह डाइनिंग-रूम के बाहर टहलती हुई तारा के बाहर निकलने की प्रतीक्षा करती रही। तारा बाहर निकली, डौली ने उससे बातचीत की और उसे भी तारा पसन्द आई। उसने तारा से अँग्रेजी पिक्चर दिखलाने का अनुरोध भी किया, तारा ने उसे आश्वासन दिया कि वह मौका देख कर बताएगी।

इतने सदस्यों के अतिरिक्त परिवार में अगरवाला साहब की माँ और उनकी पहली पत्नी का लड़का नरोत्तम भी थे। नरोत्तम और डौली सगे भाई-बहन थे। मालकिन की सास जरा धार्मिक और वहमी विचार की थीं। परन्तु तारा ने उन्हें भी प्रसन्न कर लिया।

तारा की नियुक्ति 'ए-ए' कोठी में बच्चों को शिक्षा और व्यवहार की दीक्षा देने के लिए हुई थी, परन्तु सप्ताह बीतते-बीतते मालकिन ने उससे कई छोटे-मोटे काम करवाने आम्रभ कर दिये।

बच्चे कुछ ज्यादा ही जिद्दी थे। उनका अनुभव था, कि चीख-चीख कर रोने और पाँव पटकने से सब कुछ हो सकता था। मालकिन पहले हर बात में 'न' करतीं, फिर मिठाई का लोभ देकर मनाने का यत्न करतीं, उसके बाद चूहे की कोठरी में बंद करने का डर दिखाती थीं। अन्त में झल्ला कर और गाली देकर उनकी जिद पूरी कर देती थीं।

तारा के लिए बच्चों को सँभालने का काम और भी अधिक कठिन था। वह मालिक और बच्चों के प्रति ईमानदारी के विचार से बच्चों को लोभ या झूठा भय दिखाना उचित नहीं समझती थी। उसके विचार में यह फूहड़पन था। बच्चों को झूठ बोलने की आदत से बचाने के लिए झूठी बात से बहलाना उचित नहीं समझती थी।

वह मन ही मन खीझती कि बरसों से बिगड़े बच्चों को एक दिन में कैसे ठीक कर दे। मालकिन के सामने असफल प्रमाणित न होने के लिए उसे हार मान कर 'अनुचित' उपाय भी करने पड़ जाते।

सुबह साढ़े सात बजे सब बच्चे अपने-अपने स्कूल चले गए थे। मालिकों के नाश्ते का समय नहीं हुआ था। तारा बरामदे में कुर्सी पर बैठकर अखबार देखने लगी। इतने में वहाँ नरोत्तम आ गया। तारा ने अखबार उसकी ओर बढ़ा दिए। उसने तारा से कहा कि आप पढ़ लीजिये, मैं फिर पढ़ लूंगा और वह घास के आँगन

की तरफ चला गया।

तारा और नरोत्तम की आज पहली बार बात चीत हुई थी, पहले केवल नमस्ते ही हो जाती थी। परन्तु मालकिन से तारा उसके बारे में बहुत कुछ सुन चुकी थी।

मिसेज अगरवाला ने तारा को अपने दो पुराने ब्लाउज दिये थे। तारा ने मशीन का प्रयोग करने की आज्ञा लेकर उन्हें ठीक कर लिया था। मालकिन ने देखा तो उन्हें लगा कि तारा का हाथ सिलाई में बहुत सुथरा है। वह भी अपने कुछ ब्लाउज ठीक करवाने को ले आयीं। तारा ने काम आरम्भ किया तो उन्होंने बातें आरंभ कर दीं।

नरोत्तम की भी चर्चा कर गयीं, "हमारे दिल में कोई भी फरक हो तो हमें पेट के बच्चों की कसम है, पर इन्होंने हमें कभी माँ नहीं समझा।...पचास हजार रुपया खर्च करके विलायत में इंजीनियरी पढ़ी है।। अब सरकारी नौकरी करेंगे। हमारे यहाँ इंजीनियर हजार रुपया ले रहे हैं, यह पाँच-छः सौ रुपल्ली की नौकरी करेंगे, बाप-दादा की हँसी करायेंगे और क्या! बात बनाते हैं, घर से ले लेने में क्या लियाकत है, कदर तो वह है जो लोग करें। असल बात क्या हम नहीं समझतीं, अपने को अलग समझते हैं...।"

नरोत्तम का ऐसा परिचय पा कर तारा को वह कुछ विचित्र सनकी या मन में द्वेष रखने वाला आदमी जँचा, पर उसे मालिक के परिवार के लोगों की आपसी समस्याओं से क्या प्रयोजन था?

दादी को पता लगा कि तारा शाकाहारी है तो उन्हें उसके भली लड़की होने का विश्वास हो गया। उन्होंने पहली बहू को याद कर, उसकी प्रशंसा के व्याज से नई बहू की शिकायत कर दी—"उस बेचारी ने कभी कोठी के बाहर कदम नहीं रखा था। मर्द चाहे जो खाये-पीये, उसने अपने चौके में प्याज-लहसुन नहीं आने दिया। बावर्ची की रसोई बिलकुल अलग थी। यह भागवान तो सब के साथ बैठकर खाये है, न किसी से पर्दा न लिहाज! घर में तो कदम टिकते ही नहीं।...नरोत्तम के बाबा ने यह कोठी बनायी थी तो इसका नाम 'अगरवाल आसरम' लिखा था। इन लोगों ने कोठी का नाम भी किरस्तानी, 'ऐं ऐं' रखा दिया। 'ऐं ऐं' भी भला कोई नाम होते हैं? हमें क्या हमारी तो कट गयी, इन लोगों की ये जानें...।"

नरोत्तम अखबार लेने स्वयं चला आया था। तारा ने अखबार पढ़ना छोड़ कर नरोत्तम से अखबार ले लेने का अनुरोध किया। उसने अखबार तारा के हाथों में रहने दिया और लौट कर शेव करते-करते सोचने लगा—उसने तारा को पहले रिफ्यूजी मास्टरनी के रूप में देखा तो ख्याल कर लिया था कि मम्मी ने सस्ती मास्टरनी ढूँढ़ ली है, देखें क्या कर पाती हैं। अब उसे लगा वह तो बहुत सुसंस्कृत, सभ्य युवती है।

उस दिन से नरोत्तम और तारा में, सामना होने पर कुछ न कुछ बात होने लगी। तारा को नरोत्तम, मालकिन की राय के अनुसार रूखा व द्वेषी स्वभाव का नहीं लगा बल्कि बहुत भले विद्यार्थियों जैसा ही लगा।

नवम्बर का दूसरा सप्ताह था। कोठी में सहसा बहुत व्यस्तता छा गयी। दिल्ली में 'आल-इण्डिया कांग्रेस कमेटी' का अधिवेशन होने वाला था। प्रसाद जी ने अगरवाला साहब का नाम अधिवेशन की स्वागत समिति के पाँच उप-प्रधानों में रखने का विश्वास दिलाया और उनसे एक हजार का चेक ले गये। अगरवाला साहब और दिल्ली के दूसरे बड़े-बड़े व्यापारी भी शासन की बागडोर काँग्रेस के हाथ में आ जाने के बाद, काँग्रेस के आयोजनों में बहुत रुचि लेने लगे थे। गांधी जी मूल्यों पर कन्ट्रोल के विरुद्ध थे। काँग्रेस कमेटी के अधिवेशन में सब प्रान्तों के मंत्री आ रहे थे। कन्ट्रोल की नीति के विषय में महत्वपूर्ण निर्णय किये जाने की सम्भावना थी।

प्रसाद जी ने अगरवाला साहब से कोठी पर दो नेताओं को आतिथ्य देने के लिए अनुरोध किया था और एक संध्या 'ए-ए' में सौ-सवा-सौ लोगों को चाय के लिए निमन्त्रण देना था।

कोठी पर व्यस्तता के भँवर में मिसेज अगरवाला ने तारा को भी खींच लिया था। बच्चों को पढ़ाना या बहलाना स्थगित था। गनीमत थी कि इस हालत में नरोत्तम भी घर की इज्जत का खयाल कर सहयोग दे रहा था।

मिसेज अगरवाला ने तारा को रुपये और सामान की लिस्ट दे दी और नरोत्तम से उसके साथ जाकर सामान खरिदवाने को कह दिया। मालकिन ने तारा को अपने लिए धोती आदि लेने को कुछ रुपये अलग से दे दिए थे। बढ़िया वायल लेने से तारा के पास रुपये कम पड़ते, अतः उसने कुछ घटिया लेनी चाही, परन्तु नरोत्तम ने दूकानदार से बढ़िया वायल ही बाँधने को कहा। इस तरह कुछ पैसे नरोत्तम को ही देने पड़े। तारा ने इस विषय में उससे बात की तो उसने कह दिया कोई बात नहीं, उसे जरूरत होगी तो वह भी उससे माँग लेगा।

●

१३ जनवरी, सन् १९४८। रेडियो और पत्रों ने सूचना दी—गांधी जी ने आमरण अनशन की प्रतिज्ञा कर ली है। पूरा देश सिहर कर स्तब्ध हो गया। दिल्ली उस चिन्ता और सनसनी का केन्द्र थी।

गांधी जी के निरन्तर उपदेशों से भी हिन्दू-मुस्लिम विरोध के कारण रक्त-पात समाप्त नहीं हो सका था। उत्तर प्रदेश और दिल्ली से मुसलमानों के प्रतिनिधि आ कर दारुण अत्याचार की कहानियाँ गांधी जी को सुना रहे थे। पश्चिमी पंजाब में समुद्री, जेहलम, लायलपुर, बहावलपुर से समाचार आ रहे थे कि लाखों हिन्दू विकट यातना में पड़े हैं। हजारों भूख से मर गए हैं—काश्मीर की भूमि पर भारतीय और पाकिस्तानी सेनाओं में युद्ध छिड़ गया है।

देश के बँटवारे के समय भारतीय सरकार को ब्रिटेन से संयुक्त देश के लिए जो पावना (अस्सेट) मिला था, उस के पचपन करोड़ रूपया पाकिस्तान का भाग था। पाकिस्तान ने भारत के अंग काश्मीर पर अधिकार करने के लिए आक्रमण कर दिया था। युद्ध की घोषणा नहीं की थी, परन्तु दोनों ओर की सेनाओं में युद्ध

चल रहा था। भारत सरकार ने निश्चय कर लिया था कि जब तक पाकिस्तान काश्मीर से अपनी सेनाएँ नहीं हटा लेगा, संयुक्त पावने में से पाकिस्तान के भाग की रकम उसे नहीं दी जायेगी।

गाँधी जी का सुझाव था कि भारत सरकार अपना सद्भाव प्रकट करने के लिए पाकिस्तान को बिना किसी शर्त के उस का भाग पचपन करोड़ रूपया दे दे। भारत सरकार पाकिस्तान को आक्रमण में, अपने ही विरुद्ध सहायता देने के लिए तैयार नहीं थी। मंत्रि-मण्डल को गांधी जी का परामर्श व्यवहारिक नहीं लगा, उन्होंने उस परामर्श को स्वीकार नहीं किया।

गांधी जी ने सद्भावना और सहिष्णुता के लिए अपने उपदेशों और प्रयत्नों को विफल होते देख कर अपने उद्देश्य के लिए प्राणों की आहुति देने का निश्चय कर लिया।

१२ जनवरी, सोमवार था। सोमवार को गांधी जी नियमानुसार मौन व्रत रखते थे। मौन व्रत के दिन, प्रार्थना के समय उन के सन्देशों को उनके निजी सचिव प्यारेलाल अथवा प्यारेलाल की बहिन पढ़ कर सुना देती थीं। उस संध्या गांधी जी की ओर से घोषणा कर दी गयी—'गाँधी जी १३ जनवरी के मध्यान्ह से अनशन व्रत आरम्भ कर रहे हैं। गांधी जी के अनशन का अन्त भारत में, विशेष कर दिल्ली में साम्प्रदायिक उन्माद का अंत होने पर ही होगा अथवा उनका शरीरान्त ही होगा।'

गांधी जी ने अपने अनशन का कारण अथवा अनशन समाप्त कर सकने के लिए कोई शर्त ब्योरे से अथवा स्पष्ट नहीं बतायी थी। उन्होंने संक्षिप्त शब्दों में कह दिया था—जब तक साम्प्रदायिक द्वेष का उन्माद समाप्त होकर हिन्दू-मुसलमानों में सौहार्द्र स्थापित नहीं होगा, वे अनशन से रहेंगे।

उस समय पत्रों में और राजनीतिक चर्चा में पाकिस्तान को पचपन करोड़ रुपया दिया जाने अथवा न दिया जाने का ही प्रश्न प्रमुख था। गांधी जी सद्-भावना की अपीलें कर रहे थे। वे निरन्तर माँग कर रहे थे कि सरकार दिल्ली में मुसलमानों की रक्षा का पूरा प्रबन्ध करे। दिल्ली से जो मुसलमान भय के कारण भाग गये हैं, वे लौट कर निर्भय दिल्ली में रह सकें। हिन्दू शरणार्थियों ने मुसलमानों के जिन मकानों और मसजिदों पर कब्जा कर लिया है, वे मुसलमानों को लौटा दिये जायें। गाँधी जी के अनशन के इन उद्देश्यों के कारण अधिकांश हिन्दुओं ने, विशेष कर पश्चिम और पूर्वी पाकिस्तान से निकाल दिये गये हिन्दुओं ने इस अनशन को मुसल-मानों के प्रति अनुचित पक्षपात समझा। उन का कहना था कि पाकिस्तान और मुसलमान उन पर आक्रमण कर रहे थे। और इस आक्रमण में गाँधी जी पाकिस्तान और मुसलमानों के पक्ष में थे। अधिकांश हिन्दू गाँधी जी के व्यवहार से क्रोध से उबल पड़े।

१३ जनवरी को प्रातः ही अगरवाला साहब के यहाँ टेलीफोन आने लगे थे। दिन के पहले पहर ही बहुत से लोग आये। ड्राइंग-रूम में उत्तेजना से बहसें होती रहीं। अभ्यागतों के लिए बार-बार चाय बनी। आल इंडिया कांग्रेस कमेटी के अधि-

वेशन के समय 'ए-ए' में अतिथियों के लिए बहुत सा प्रबन्ध करना पड़ा था। मिसेज अगरवाला का अनुभव था कि वे ऐसे अवसर पर तारा को निर्देश दे कर निश्चिन्त हो जा सकती थीं।

नवम्बर में कांग्रेस अतिथियों के स्वागत और चाय-पार्टी के प्रबन्ध के प्रसंग में अगरवाला साहब से तारा का कई बार सामना हो जाता था, बातचीत भी हो जाती थी। तब से वे उसे देखते तो हाल-चाल पूछने लगते थे। आश्वासन दे देते थे—परेशानी में मत रहना। कोई जरूरत हो तो मिसेज अगरवाला या हम से कह देना। कभी बच्चों के विषय में बात करने लगते। तारा ने भाँप लिया था, ऐसे समय मालकिन तुरन्त बीच में आ जाती थीं। बोल पड़तीं—"हम इस का इतना खयाल रखती हैं, कोई नौकरों का ऐसे खयाल रख सकता है? इसे जरूरत होगी, खुद हम से कह देगी। इस का कोट ही देख लो, हमारे कोट से क्या कम है!"

यह कोट। तारा ने कितना चाहा था कि वह यह कोट न ले, परन्तु अगरवाला साहब ने उसे एक दिन बड़ी सर्दी के मौके पर केवल शाल लपेटे बाहर जाते देख कर कोट बनवा देने की बात कही थी। न चाहते हुए भी तारा को नरोत्तम के साथ जाकर यह बढ़िया कोट लेना ही पड़ा। परन्तु उस रोज से मिसेज अगरवाला को उससे शिकायत का एक कारण मिल गया। जब मौका पड़ता चोट करने से न चूकतीं।

नरोत्तम के व्यवहार से यूँ तो कोई शिकायत नहीं थी, परन्तु वह बातचीत करने का मौका हाथ से न जाने देता। तारा ने उससे कहा भी कि आपका मन पवित्र है पर लोग उँगलियाँ उठाते हैं। उसने कह दिया कि लोगों की कुछ परवाह मत करिये, अपना मन साफ होना चाहिए। तारा मन ही मन घुटने लगी। तीन ही मास बीते हैं। यहाँ भी आपत्ति आती दिखाई देती है।...मेरे लिए कहीं शरण नहीं, औरत जो हूँ? बंती ठीक कहती थी कि औरत होना ही अपराध है।

ड्राइंग-रूम में गांधी जी के उपवास की स्थिति पर विचार हो रहा था। अतिथि जनवरी की कोहरा भरी वायु से सिकुड़ते हुए आते, परन्तु उनके चेहरों और स्वरों में उत्तेजना की गरमी थी। अगरवाला साहब से हिन्दुओं की रक्षा के लिए आवाज उठाने को कहा जा रहा था। साहब दफ्तर नहीं गये थे। बार-बार चाय की माँग हो रही थी। मालकिन इतनी उत्तेजनापूर्ण और महत्वपूर्ण बातचीत से उठकर कैसे आ सकती थीं। वे ड्राइंग-रूम से झाँककर कह देतीं—"तारा, जरा दो चाय भिजवा देना...। तारा जरा...।"

तारा ने ड्राइंग-रूम के साथ के कमरे में बिजली की केटली लगा ली थी। वहीं से चाय और दूसरी चीजें कभी जुगुल के हाथ, कभी ड्राइवर नन्दलाल के हाथ भिजवाती जा रही थी। बीच-बीच में उत्तेजनापूर्ण शब्द सुनाई दे जाते थे :

"हिन्दुओं को मरवा डालने के लिए...।"

"मुल्ले जा-जा कर कान भरते हैं...।"

"सरदार पटेल कैसे मान सकते हैं। कभी नहीं मान सकते।"

तारा ने मालकिन की आवाज पहचानी—"नन्दलाल, तारा से कहो चाय और भिजवाये।"

"हाँ जी, ये तो बड़ा जुल्म है !"

"गांधी जी मर जायें, हमें क्या है ? इंसाफ के खिलाफ करेगा तो···।"

"केबिनेट फैसला कर चुकी है। इन की जिद से कैबिनेट फैसला बदल देगी ? गवर्नमेन्ट की प्रेस्टीज···।"

"कल ही की तो खबर है कि पाकिस्तानियों ने···स्टेशन पर दो हजार आदमियों की पूरी गाड़ी काट डाली है। यह उन्हें पचपचन करोड़ दिलायेगा।"

"मुकर्जी क्या कभी मानेंगे, आप मुकर्जी बाबू के पास चलिये।"

"गांधी हमारे गिराये हुए मन्दिर बनवा देगा···?"

"रिफ्यूजियों का डिमान्स्ट्रेशन जरूर होना चाहिए। हम पूरी दिल्ली को हिला देंगे। चार कांग्रेसिये क्या कर लेंगे ?"

"राय साहब, आप ज़रूर चलिये।"

दिन भर यही होता रहा। बहुत उत्तेजना थी। तारा को भी लग रहा था, गांधी जी ने मुसलमानों की सहायता के लिए अपने उपवास से हिन्दुओं पर आक्रमण कर दिया है। हिन्दू पराजय स्वीकार करके आत्महत्या कर ले···लोगों को नेहरू और मौलाना आजाद पर भरोसा नहीं है, परन्तु सरदार पटेल, श्यामाप्रसाद मुकर्जी और सर्दार बल्देव सिंह यह नहीं होने देंगे। गांधी जी यह क्या कर रहे हैं ? क्या होगा ?

नरोत्तम भी ड्राइंग-रूम में मौजूद था। दोपहर बाद सामना होने पर तारा ने जिज्ञासा से उसकी ओर देखा।

"बड़ी कठिन स्थिति है। गांधी जी का अनशन कैबिनेट के निर्णय के विरुद्ध है। जनता तो कैबिनेट के साथ है। गांधी जी का अनशन निश्चय ही भारत के विरुद्ध, पाकिस्तान के पक्ष में है।" नरोत्तम के स्वर में चिन्ता थी।

तारा ने भी कहा—"गांधी जी को अनशन करना था तो पार्टीशन रोकने के लिए करना चाहिए था। असली घटना तो हो चुकी। यह तो केवल उस घटना की छाया है।"

१४ जनवरी को लगभग साढ़े ग्यारह बजे जुगुल ने तारा को सन्देश दिया—"आप को हाल कमरे में बुला रहे हैं। प्रसाद जी आये हैं।"

"बहिन जी कहाँ हैं ?" तारा ने पूछा।

"वहीं कमरे में हैं।"

तारा साड़ी का आँचल सँभालती, सहमती सी ड्राइंग-रूम में गयी। साहब थे, मिसेज अगरवाला थीं, नरोत्तम भी था।

प्रसाद जी का चेहरा बहुत गम्भीर था। वे तारा की ओर देख कर अपनी बात कहते रहे—"सब मिनिस्टर बिड़ला भवन गये हुए हैं। वहाँ लान में गांधी जी के पलँग के पास कैबिनेट की मीटिंग हो रही है। आप लोगों को, नगर के प्रतिनिधियों को गांधी जी के पास जा कर विश्वास दिलाना चाहिए कि आप नगर में पूर्ण शांति

स्थापित करने का उत्तरदायित्व ले रहे हैं···।"

"कल तो जुलूस निकला था कि गांधी जी को मर जाने दो। पाकिस्तान को रुपया नहीं देंगे, और जाने क्या क्या ?" मिसेज अगरवाला ने चिन्ता से कहा।

"उन सब दंगैयों का इन्तजाम सरदार ने कर दिया है। दफा १४४ लग गयी है। सरकार यह सब बर्दाश्त नहीं कर सकती। सब जगह मिलिटरी का पहरा हो गया है। पंडित जी और सर्दार ने कहा कि नागरिकों के प्रतिनिधियों को चाहिए कि गांधी जी को पूर्ण सद्भाव और शांति का आश्वासन दें। राय साहब, इस समय आपको आगे बढ़ना चाहिए। यह सब आपको ही करना है। हिन्दुओं की ओर से आपका नाम जरूर होना चाहिए।"

मिस्टर अगरवाला उँगलियाँ तोड़ते हुए चुपचाप सोच रहे थे।

प्रसाद जी मिसेज अगरवाला की ओर घूम गये—"पंडित जी और पटेल साहब ने भी कहा है···!"

"लेकिन कैबिनेट का तो फैसला था···?" अगरवाला साहब ने चिन्ता से पूछा।

"हम जो कह रहे हैं, पंडित जी और सरदार ने कहा है।" प्रसाद जी ने टोक दिया, "कैबिनेट का फैसला होता रहेगा।"

"दफा १४४ और मिलिटरी का पहरा, क्या गांधी जी उचित समझेंगे ? यह तो गांधी जी के उपवास की भावना के विरुद्ध बातें हैं। दैट्ज फोर्स ! शस्त्रों की शक्ति से शांति स्थापित करनी है तो अनशन का क्या मतलब ?" नरोत्तम ने टोक दिया।

"यू डोंट अन्डरस्टैण्ड ! इट इज इन्टरनेशनल क्राइसिस। गांधी जी इज इन्डियाज सोल।" (तुम नहीं समझते, यह अन्तर्राष्ट्रीय संकट है। गांधी जी भारत की आत्मा हैं) प्रसाद जी कुछ उग्रता से बोले, "एडमिनिस्ट्रेशन (शासन) एक बात है, गांधी जी की बात दूसरी है। सब गांधी थोड़े ही बन जा सकते हैं। परपज (उद्देश्य) तो एक ही है।"

प्रसाद जी मिसेज अगरवाला की ओर घूम गये—"हाँ बहिन जी, दयावंती जी, बेगम काजमी, मिसेज चौसिया और आपको पाँच बजे बिड़ला भवन में स्त्रियों का प्रतिनिधि-मण्डल लेकर जाना होगा। तारा बहिन, आप भी जरूर जायेंगी।"

"यह क्या करेंगी ? यहाँ घर पर भी तो किसी को···।"

"क्या कह रही हैं बहिन जी ?" प्रसाद जी ने मिसेज अगरवाला को टोक दिया, "गांधी जी के प्राणों का प्रश्न है। इन्डिया की प्रेस्टीज (सम्मान) का प्रश्न है। इसका जाना बहुत इम्प्रेसिव (प्रभावोत्पादक) होगा। इनका तो विशेष महत्व है। रिफ़्यूजी ही तो गांधी जी का विरोध कर रहे हैं। रिफ़्यूजी स्त्रियाँ जितनी अधिक हों, अच्छा होगा।"

"ठीक है, ठीक है। ले जाओ। तुम चली जाना !" अगरवाला साहब ने उँगलियाँ तोड़ते हुए तारा की ओर देखा।

"इसके पास खद्दर की साड़ी···!"

"दैट इजंट मैटर ! सिर्फ काँग्रेसी ही नहीं, सभी तरह के लोग गांधी जी के

पास जायेंगे।"

मिसेज अगरवाला बड़ी गाड़ी में तारा और मिसेज जीवन सिंह को लेकर बिड़ला भवन के करीब पहुँच रही थीं कि उसी ओर जाता हुआ एक छोटा जुलूस मिल गया। लोग बाँसों पर बड़े-बड़े इश्तहार उठाये थे। इश्तहारों पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था—"खून का बदला खून से लेंगे ! गांधी को मर जाने दो ! गांधी गद्दार है ! हिन्दुस्तान हमारा है ! काश्मीर हमारा है !"

"हाय यह क्या ?" मिसेज अगरवाला घबरा गयीं।

"पंडित जी, पंडित जी ! नेहरू जी !" दयावंती बोल पड़ी।

सामने से सामानान्तर आती हुई दो मोटर-साइकिलों पर दो पुलिस-अफसर मोटर के दोनों ओर हो गये।

पुलिस के इशारे पर मिसेज अगरवाला की मोटर सड़क के बायीं ओर रुक गयी।

जुलूस के लोग बहुत जोर से चिल्ला उठे—'गांधी मुर्दाबाद ! गांधी को मर जाने दो ! गांधी गद्दार है !'

मोटर रुकवा कर पंडित नेहरू उतर पड़े। पंडित जी नारे लगाती भीड़ की ओर निधड़क बढ़ गये। कई पुलिस अफसर रक्षा के लिए उनके पीछे, दायें-बायें हो गये।

पंडित जी ने भीड़ को धमकाकर पूछा—"कौन कहता है गांधी को मर जाने दो ?"

भीड़ ने फिर नारा लगाया—"गांधी गद्दार है ! गांधी को मर जाने दो।"

पंडित जी पुलिस से घिरे हुए भीड़ की ओर दो कदम बढ़ गये—"जो गांधी जी को मारना चाहता है, पहले मुझे मारे ! जिसमें हिम्मत है आगे आओ !"

भीड़ चुप हो गयी।

पंडित जी ने फिर ललकारा—"जिसमें हिम्मत हो आगे आये !"

भीड़ स्तब्ध रह गयी।

पंडित जी ने भीड़ को फटकारा—"आप लोगों को शर्म आनी चाहिए। जो शख्स आपके लिए कुर्बान हो रहा है, उसके लिए आप लोग इसी तरह बकते हैं। गांधी इस देश की आत्मा है, इस मुल्क की रूह है। गांधी के मरने के साथ हम-आप, पूरा मुल्क मर जायेगा। दुनिया हमें क्या कहेगी ?"

भीड़ शांत रही।

पंडित जी ने अफसरों की ओर देख कर कहा—"भीड़ क्यों है ? रास्ता क्यों रुका है ?"

पंडित जी गाड़ी में बैठ गये।

"प्लीज डिसपर्स ! आप लोग रास्ता नहीं रोकिये !" हुक्म सुनाई दिया।

मोटर-साइकिलें गर्ज उठीं। मोटर साइकिलों से घिरी हुई पंडित जी की गाड़ी चल पड़ी।

तारा, मिसेज अगरवाला और मिसेज जीवनसिंह रोमांचित, साँस रोके स्तब्ध देखती रह गयीं। एक मिनिट में सब कुछ हो गया।

तारा ने आश्वासन की साँस ली।

गाड़ी को रास्ता मिल गया।

"कैसे बेशर्म हैं लोग ?" मिसेज अगरवाला ने दुख से कहा।

●

बिड़ला भवन के बाहर बहुत सी गाड़ियाँ खड़ी थीं। पुलिस के सिपाही गाड़ियों को सड़क के किनारे कायदे से खड़ा करा रहे थे। वे सतर्क थे, भीड़ से रास्ता न रुक जाये। आस-पास पुलिस ही पुलिस थी। भीड़ को देख-समझ कर भीतर जाने दिया जा रहा था।

बिड़ला भवन के बराम्दे में कुछ महिलायें एक ओर खड़ी प्रतीक्षा कर रही थीं। प्रसाद जी भी थे। चारों ओर आतंकपूर्ण स्तब्धता छायी हुई थी। लोग बिना आहट किये चल रहे थे। स्वर दबा कर बात कर रहे थे।

"आप ने बहुत देर कर दी। जल्दी आइये।" प्रसाद जी ने कहा।

सड़क पर पुलिस का और बँगले के भीतर स्वयं-सेवकों का पहरा था। प्रसाद जी ने स्वयं-सेवकों को संकेत किया। स्त्रियों के लिये मार्ग कर दिया गया।

गांधी जी पलँग पर बड़े तकिये के सहारे, पश्मीना ओढ़े अध-लेटे बैठे थे। लम्बी दाढ़ी वाले दो मौलवी गांधी जी के समीप बैठे रूमाल से अपनी आँखें पोंछ रहे थे।

गांधी जी के नेत्र मुँदे थे। चेहरा बहुत गम्भीर था। महिलायें प्रणाम करके बैठ गयीं। हृदय-द्रावक स्तब्धता में तारा को अपने हृदय की धड़कन सुनाई दे रही थी।

गांधी जी ने नेत्र खोले। महिलाओं को देख कर, दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और मौलानाओं को सम्बोधन कर बोले :

"आज आप लोग खुद मंजूर कर रहे हैं कि आपने मुझे हालात को मुबालगे (अतिरंजित रूप) से बताया था। मेरे मन में यह खयाल उस वक्त भी था, जब आप लोग मुबालगे से बातें कर रहे थे। उस समय मैंने कुछ कहना ठीक नहीं समझा, क्योंकि आप लोग बहुत मुसीबत में थे। मुझे आशा है, आप अब सबक लेंगे कि मुबालगे से कैसे-कैसे नतीजे हो सकते हैं। मुझे तो सिर्फ खुदा का ही भरोसा है। वही मुझे सही राह दिखायेगा।"

गांधी जी ने महिलाओं की ओर दृष्टि की। गांधी जी के समीप बैठी दयावंती ने सब स्त्रियों की ओर से उन्हें विश्वास दिलाया कि दिल्ली की महिलायें साम्प्रदयिक द्वेष दूर करने और शांति-स्थापना करने के लिए तन-मन अर्पण कर देंगी। गांधी जी उनकी प्रार्थना स्वीकार करके अपना अनशन समाप्त कर दें। वे देश को इस संकटमय स्थिति में अनाथ न करें।

गांधी जी ने महिलाओं पर विश्वास प्रकट करके उत्तर दिया—"मेरा अनशन

देश के लोगों की सहृदयता और कर्त्तव्य की चेतना को पुकारने के लिए ही है। मुझे इस बात के लिए खेद और लज्जा है कि दोनों भागों में सब से अधिक अत्याचार बहिनों पर ही हुआ है। मेरा यह अनशन स्त्रियों पर हुए अत्याचार के विरोध में, उस अत्याचार के प्रायश्चित के लिए है। जिस समय मुझे विश्वास हो जायेगा कि लोगों के मन से द्वेष का उन्माद दूर हो गया है, मैं आप लोगों की बात नहीं टालूंगा। आप भगवान पर विश्वास रखिये। आप भगवान से प्रार्थना कीजिये, वह देश के भाइयों को सद्बुद्धि दे।"

सड़क की ओर से कोलाहल और नारे सुनायी दिये।

"खून का बदला खून से लेंगे।"

"गांधी को मर जाने दो।"

"गांधी मुल्क का दुश्मन है।"

"मुसलमानों को बाहर निकालो।"

"कश्मीर हमारा है।"

"पाकिस्तान को रुपया नहीं देंगे।"

"गांधी गद्दार है।"

स्त्रियों ने समझा, उत्पात करने पर उतारू लोगों की भीड़ बाहर आ पहुँची है। वे भय से सिहर उठीं।

"यह कौन लोग हैं ?" गांधी जी ने धीमे स्वर में पूछा।

"बापू, ऐसे ही बाहर सड़क पर लोग शोर कर रहे हैं।" गाँधी जी के समीप खड़ी लड़की ने उत्तर दिया, "बापू आप परवाह न कीजिये।"

"यह लोग क्या कह रहे हैं ?" गांधी जी ने पूछा।

"बापू, कह रहे हैं — गांधी को मर जाने दो।" लड़की ने बता दिया।

गांधी जी ने पल भर नेत्र मूँद कर प्रश्न किया — "कितने लोग हैं ?"

"बापू, ज्यादा नहीं हैं। यही थोड़े से लोग हैं। शोर मचा रहे हैं। अपने आप चले जायेंगे।"

"राम ! राम ! राम !" गांधी जी ने नेत्र मूँद लिये।

समीप बैठी दो स्त्रियाँ मंद स्वर में रामधुन अलापने लगीं।

महिलाओं की आँखों से आँसू टपक पड़े। तारा सबसे पीछे बैठी थी। कुछ ही पल में उस के मस्तिष्क में लाहौर की घटनाएँ, स्वयं उस पर बीती यातनायें, अपनी आँखों देखा अत्याचार कौंध गया।...यह अकेला पुण्यात्मा देश की उस सम्पूर्ण पशुता के विरोध में प्राण दे रहा है, उसके लिए प्रायश्चित कर रहा है। वास्तव में ही यह देश की आत्मा है। स्वयं तारा ने, उसके भाई ने और लाहौर के कितने लोगों ने इस ध्वसं को रोकने का यत्न किया था। तब ध्वंस के इस उग्र रूप की कल्पना भी नहीं थी। वह स्वयं उसमें आहुति बनी, परन्तु अब इस पुण्यात्मा की सफलता के लिए, उस के प्राणों की रक्षा के लिए वह सब आप बीती को भुला देने के लिए तैयार थी।

तारा और नरोत्तम सुबह अखबार आते ही सब समाचारों को देख जाते थे।

पत्रों में गांधी जी की अवस्था और शांति के लिए प्रयत्नों के समाचारों को प्रमुख स्थान दिया जा रहा था। पाकिस्तान की विधान सभा में सर नून, दौलताना, नवाब ममदौत, इफ्तखारअली खाँ ने गांधी जी के उद्देश्य के प्रति बहुत आदर प्रकट करके, उन्हें धर्म-प्रवर्त्तकों के पश्चात संसार का सबसे महान पुरुष स्वीकार किया था।

१६ जनवरी प्रातः पत्रों में समाचार था—भारत सरकार ने अपना पहला निश्चय बदल कर पाकिस्तान को पचपन करोड़ रूपये का पावना तुरन्त दे देने की घोषणा कर दी थी। सरकारी वक्तव्य विस्तृत था। मंत्रिमण्डल के पहले निश्चय का औचित्य प्रमाणित करके निर्णय-परिवर्तन का कारण गांधी जी के अहिंसात्मक प्रयत्न में सहयोग देने की सद्भावना बताया गया था।

गांधी जी का वक्तव्य भी पत्रों में था। गांधी जी ने चेतावनी दी थी कि मंत्रि-मण्डल के निर्णय-परिवर्तन को अस्थिरता अथवा भीरुता न समझा जाये बल्कि इस उदार-आशयता और सद्भावपूर्ण दूरदर्शिता की गहराई को समझा जाये। गांधी जी ने आशा प्रकट की थी कि भारतीय मंत्रिमण्डल का यह निर्णय कश्मीर की समस्या को सद्भाव से सुलझा सकने में सहायक होगा और आश्वासन दिया था कि यदि नगर के हिन्दू, सिख और मुस्लिम प्रतिनिधि मिलकर साम्प्रदायिक द्वेष दूर करने की प्रतिज्ञा पर हास्ताक्षर कर दें तो वे अनशन समाप्त कर देंगे।

महाराज पटियाला दिल्ली पहुँच गये थे।। उन्होंने सिखों से गांधी जी की प्राण-रक्षा के लिए तुरन्त पूर्ण शान्ति स्थापित कर देने की अपील की। मालेरकोटला के नवाब ने दिल्ली आकर प्रमुख मौलानाओं और मुफ्तियों से और पाकिस्तान के हाई कमिश्नर ने भी भारत के मुसलमानों से भय छोड़ कर शांति-रक्षा के लिए प्रयन्त करने की अपीलें कीं। पंडित नेहरू के अनेक सार्वजनिक व्याख्यान हुए।

दिल्ली में शांति के प्रयत्नों का तूफान आ गया। नगर के प्रत्येक भाग से शरणार्थियों और दूसरे लोगों के जुलूस शांति-रक्षा के लिए नारे और ललकारें लगाते हुए निकलने लगे।

नगर में हजारों लोगों ने गांधी जी के तप में सहयोग देने के लिए, उनकी सफलता की कामना में अनशन आरम्भ कर दिया था। बँटवारे से पूर्व सब्जी मण्डी में मुसलमानों की संख्या अधिक थी, अब वहाँ से सब मुसलमान भाग गये थे। सब ओर हिन्दू शरणार्थी आ बसे थे। सब्जी मण्डी के हिन्दू शरणार्थियों ने नगर के दूसरे भागों से डेढ़ सौ मुसलमानों को सब्जी मण्डी में ले जाकर उन्हें प्रेम से भोजन कराया।

एक सौ बुरकापोश मुसलमान स्त्रियों का प्रतिनिधि-मण्डल बिड़ला भवन पहुँचा। उन्होंने गांधी जी को अपने निर्भय हो जाने का आश्वासन देकर अन्न ग्रहण कर लेने के लिए प्रार्थना की। महिलाओं ने गांधी जी को बताया कि वे सब तीन दिन से उनके साथ अनशन कर रही थीं।

गांधी जी ने बुर्कापोश स्त्रियों को सम्बोधन किया—"इस्लाम के नियम के अनुसार पिता, पुत्र, भाई और सम्बन्धियों से तो पर्दा नहीं किया जाता। यदि आप मझे अपना पिता और भाई समझती हैं तो मुझसे यह पर्दा क्यों है ?"

एक सौ स्त्रियों के बुर्के सहसा उठ गये ।

गांधी जी ने महिलाओं को आश्वासन दिया कि ज्यों ही विश्वास हो जायेगा कि नगर में माँ-बहनों के लिए कोई आशंका नहीं है, साम्प्रदायिक द्वेष का पाप समाप्त हो गया है, वे अनशन समाप्त कर देंगे । वे अल्लाह के रहम पर एतबार करके उस से उन की कामयाबी के लिए दुआ माँगेंगे ।

अगरवाला साहब स्थिति की गम्भीरता समझ कर दोपहर भर अपनी गाड़ी में घूम-घूम कर सम्भ्रान्त नागरिकों से शांति-रक्षा की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कराते रहे थे । संध्या समय खाद्य-मंत्री और कांस्टीच्युएंट असेम्बली के प्रधान डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद और दिल्ली के चीफ कमिश्नर और डिप्टी कमिश्नर द्वारा एक सभा संयोजित की गई थी । नगर के सभी सम्प्रदायों के एक सौ तीस प्रमुख प्रतिनिधियों की इस सभा में अगरवाला साहब भी उपस्थित थे । सभी एक मत थे कि गांधी जी जो भी शर्तें लिख देंगे, उन पर सब लोग हस्ताक्षर कर देंगे । दोपहर बाद कई डाक्टरों ने गांधी जी के शरीर की परीक्षा करके एक सम्मलित विज्ञप्ति प्रकाशित की थी । इस विज्ञप्ति में गांधी जी की अवस्था बहुत चिंताजनक बतायी गयी थी । सब लोगों के हृदय धड़क रहे थे । संध्या तक दिल्ली के दो लाख से अधिक नागरिकों ने शांति-रक्षा की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कर दिये थे ।

अठारह जनवरी को अगरवाला साहब सुबह ही बिड़ला भवन चले गए थे । वह दोपहर में लौटे तो उन्होंने बताया कि गांधी जी का अनशन टूट गया है ।

उसी दिन 'ए-ए' कोठी में कुछ मेहमान आने वाले थे । उनका खाने और पीने दोनों का प्रोग्राम था । आठ बजे के करीब मिस्टर रावत, मिस्टर डे, मिस्टर और मिसेज सूर्या एवं डाक्टर श्यामा आ गए । तारा उनके साथ बैठना नहीं चाहती थी परन्तु सब के और स्वयं मालिक के आग्रह को वह कैसे टाल सकती थी । सबसे तारा का परिचय कराया गया । इसके बाद पीने का कार्य-क्रम आरम्भ हुआ । तारा ने कुछ भी लेने से इन्कार कर दिया । उसने 'सर्व' करने का काम अपने जिम्मे ले लिया । सभी स्त्रियों ने केवल थोड़ी-थोड़ी शेरी ही ली ।

तारा को मीठी-कसैली विचित्र-सी गंधें अनुभव हो रही थीं । कोई भूल न होने देने की सतर्कता में कुछ सोचने का अवसर न था । उस ने डे, सूर्या रावत और अगरवाला साहब से पूछ कर उन के लिए हेग और ब्लेक-एण्ट-व्हाइट गिलासों में दे दी । साहब स्वयं सब को सोडा देते जा रहे थे ।

डाक्टर सूर्या ने गिलास उठा लिया, मुस्कराकर पूछा, "सर, क्या टोस्ट कहियेगा ? गांधी जी के अनशन की समाप्ति पर भगवान को धन्यवाद ?"

"ओ यस-यस ।" अगरवाला साहब ने समर्थन किया, "बहुत भारी संकट था ।"

"मैं तो अपनी सरकार और देश के प्रति कर्त्तव्य-भावना से इस अनशन के परिणाम को बहुत हानिकर समझता हूँ ।" रावत का चेहरा और स्वर बहुत गम्भीर हो गया । सब लोग गम्भीर हो गये, "लेकिन यह हमारे बस की बात नहीं है ।

गाँधी जी की मृत्यु हो जाती तो भी निश्चय ही बहुत बुरा होता, लेकिन इस प्रकार सरकार का निर्णय बदला जाना राष्ट्रीय हानि है। यह राष्ट्र को एक व्यक्ति की तुलना में नीचे गिरा देना है। इसके परिणाम बहुत बुरे होंगे।"

रावत ने गम्भीरता तोड़ने के लिए मुस्कराने का यत्न किया—"वह टोस्ट (जाम) अपनी नयी मित्र, इस संध्या की अतिथि मिस तारा के स्वागत में ही क्यों न लें ?"

"ओह फाइन ! वेरी गुड !" समर्थन गूँज उठा।

तारा झेंप से लाल हो गयी। क्रोध नहीं आया। लगा, फिर कालेज के वातावरण में पहुँच गयी है। हेल-मेल के विद्यार्थी जहाँगीर के मकबरे में या शालीमार-बाग़ में उपवन-विहार (पिकनिक पार्टी) कर रहे हैं। सन्देह या आशंका का कारण नहीं लगा।

"और तारा के भविष्य के लिए।" श्यामा ने विशेष रूपसे रावत को सम्बोधित किया।

"हाँ, निश्चय, मुझसे जो कुछ हो सकेगा।"

"सर, आप सब कुछ कर सकते हैं।" सूर्या ने कहा।

"पर मुझसे अधिक अगरवाला का कर्तव्य है।" रावत ने साहब की ओर देखा।

"आफकोर्स सर !" साहब ने स्वीकार किया, "मुझे मिस तारा के लिए बहुत रिगार्ड (आदर और चिन्ता) है।"

डाक्टर श्यामा पंजाबी शरणार्थियों की प्रशंसा करने लगीं—"इन लोगों ने अपने संकटों और क्रोध को भुलाकर शांति-स्थापना के लिए दूसरे लोगों से भी अधिक प्रयत्न किया है। गांधी जी के तप ने लोगों के हृदय बदल दिये।" श्यामा ने कई उदाहरण बताये। मिसेज अगरवाला ने भी योग दिया।

साहब ने देखा, रावत का गिलास समाप्त हो गया था। साहब केबिनेट की ओर जा रहे थे। तारा उठ खड़ी हुई—"आप बैठिये।"

"याद है न, रावत साहब को हेग।" अगरवाला ने याद दिलाया।

"जी हाँ।"

साहब एक नक्काशीदार डिब्बा उठा कर सब को सिगार और सिगरेट पेश करने लगे।

मिसेज अगरवाला ने तारा से कहा—"साहब को काजू भी दिखाओ।"

तारा ने काजू की प्लेट सब के सामने बारी-बारी से कर दी।

रावत ने जेब से पाइप और तम्बाकू का बटुआ निकाल कर पाइप भरते हुए श्यामा को उत्तर दिया—"बेशक, कुछ समय के लिए बहुत से लोगों के हृदय बदल गये हैं परन्तु मस्तिष्क नहीं बदल गये हैं। याद है, साम्प्रदायिक एकता के लिए गांधी का यह तीसरा अनशन है। भावुकता कुछ समय के लिए तर्क को दबा लेती है, लेकिन कारण नहीं मिट गये। गृह-विभाग के सेक्रेटरी की स्थिति से मैं जानता हूँ कि लोगों

के मन और मस्तिष्क नहीं बदल गये हैं। कुछ लोग दबाव अनुभव कर अधिक कटु हो जायेंगे। ऐसे लोग भी थे जो जुलूस निकाल कर चिल्लाते थे—'गाँधी को मर जाने दो, गाँधी गद्दार है।''

''हाँ हाँ, हमने तो खुद देखा,'' मिसेज अगरवाला बोलीं, ''बिड़ला-हाउस के सामने लोग चिल्ला रहे थे। आवाज भीतर भी जा रही थी। गांधी जी ने सुना तो बहुत दुखी हुए। हमें तो बहुत बुरा लगा।''

''गाँधी जी ने भी सुना ?'' डे ने बहुत उत्सुकता से पूछ लिया, ''गाँधी जी ने क्या कहा ?''

उन्होंने पूछा—''क्या कह रहे हैं ? कितने आदमी हैं ?''

''आदमी तो थोड़े ही थे।'' मिसेज अगरवाला से पूछा।

''बहुत अधिक लोग होते तो गांधी जी क्या करते ?'' डे ने फिर पूछा।

''चाहे जितने होते'' श्यामा बोल उठी, ''गांधी जी क्या डर जाते ? वे तो केवल अपनी आत्मा की पुकार सुनते हैं।''

''मानता हूँ, गाँधी जी अपना प्रण नहीं छोड़ सकते थे।'' रावत ने बात अपने हाथ में ली, पर जो लोग विरोध में जुलूस निकाल रहे थे क्या उनके दिल बदल गये हैं ? कतई नहीं, सरकार ने उन्हें दबा दिया है।''

''जी हाँ, पंडित जी ने जुलूस वालों को बहुत फटकारा। हमने अपनी आँखों देखा।'' मिसेज अगरवाला ने रावत के समर्थन में कहा।

''मैं कहता हूँ, खुद पटेल नहीं बदल गये हैं ! उन्हें मात स्वीकार कर लेनी पड़ी है इसीलिए १५ तारीख को, पचपन करोड़ के बारे में सरकारी विज्ञप्ति प्रकाशित होते ही वे १६ की सुबह ही कठियावाड़ चले गये। आशंका है, वे त्यागपत्र न दे दें।''

''अफवाह तो थी कि सर्दार काश्मीर से पाकिस्तानी सेना हटाये जाने तक पावना रोके रहने के पक्ष में थे।'' सूर्या ने पूछा।

''अफवाह सच ही थी।'' डे सिगार का सिरा दाँत से खोंटते हुए बोला।

''बिलकुल, बिलकुल !'' रावत ने पाइप सुलगाना स्थगित कर कुछ उत्तेजना से कहा, ''पटेल क्या, पूरी कैबिनेट इसके विरुद्ध थी। कैबिनेट इस विषय में निर्णय करके घोषणा कर चुकी थी, परन्तु नेहरू और राजेन्द्र बाबू, गाँधी जी के अनशन से दहल गये। दूसरे लोगों के पाँव भी उखड़ गये। पटेल अकेले रह गये।''

रावत ने नये पेग से घूंट भर कर कहा—''मैं शासन के काम में चौबीस वर्ष के अनुभव के आधार पर बात कर रहा हूँ। गाँधी जी के अनशन के कारण मंत्रि-मण्डल का निश्चय बदल देने से सरकार ने अपनी साख पाकिस्तान के सम्बन्ध में और शासन-व्यवस्था के सम्बन्ध में भी गिरा दी है।''

''यस सर, यह गम्भीर भूल हुई है।'' डे ने समर्थन किया, ''गवर्नमेन्ट की विज्ञप्ति में स्पष्ट है कि पाकिस्तान के हिन्दुस्तान की भूमि पर आक्रमण करने की अवस्था में पावना रोक लेना कानूनी और नैतिक था। गाँधी जी ने इसे भारत का कानूनी और नैतिक अधिकार स्वीकार किया है और इस निर्णय का विरोध भी

किया है, यह अजीब बात है। मुझे विस्मय है, गाँधी जी ने काश्मीर की रक्षा के लिए भारतीय सेनायें भेजने का विरोध नहीं किया। उसी उद्देश्य से पाकिस्तान के अतिक्रमण को सहायता न देने के लिए पावना रोका गया तो उन्होंने विरोध क्यों किया ? फर्ज कीजिये, गाँधी जी काश्मीर से भारतीय सेनाओं को लौटा लेने के लिए ही अनशन कर बैठें तो ?"

"इसका रहस्य मैं बता सकता हूँ।" रावत बोले, "गाँधी जी ने इस विषय में लार्ड माउण्टबेटन से राय ली थी। माउण्टबेटन का जवाब था—अगर भारत पाकिस्तान का पावना रोकता है तो भारत का यह पहला काम होगा जिसकी सराहना नहीं की जा सकेगी (दिस विल बी द फर्स्ट डिस आनरेबल एक्ट आन दी पार्ट आफ इंडिया)। गाँधी जी ने निर्णय कर लिया कि पावना नहीं रोकना चाहिए।"

"हिन्दुओं को और इंडिया को तो इससे नुकसान ही हुआ।" साहब ने चिंता प्रकट की।

"हिन्दुओं का तो इसमें बेहद नुकसान है।" मिसेज अगरवाला ने पति का साथ दिया, "बेचारे हिन्दू मस्जिदों में सिर छिपाये हैं। वे इस जाड़े में निकाल दिये जायेंगे। तारा, गाँधी जी ने अपनी शर्त में कितनी मसजिदें लिखी हैं ?"

"जी, एक सौ सत्रह।"

"परन्तु सब मिला कर तो इसका प्रभाव और परिणाम अच्छा ही हुआ है।" श्यामा बोली, "इस समय तो द्वेष और हिंसा से मुक्ति मिली।"

"गाँधी जी ने कानूनी अधिकार और कानूनी नैतिकता की अपेक्षा विशाल-हृदयता को अधिक महत्व दिया है।" सूर्या ने समर्थन किया, "यदि सम्बन्धों में सद्-भावना हो तो कानून के हवालों की जरूरत ही क्यों हो ? क्या मानवीय दृष्टिकोण सबसे ऊँचा नहीं है ?"

रावत उत्तर देने के लिए जरा आगे झुक गये—"सद्भावना उत्पन्न हो जाती तो हमें कोई आपत्ति न रहती। तब हम इसे भारत की विजय समझ लेते।"

"निश्चय, यह निश्चय भारत की विजय है।" श्यामा ने दो उँगलियों में सिगरेट थामे हाथ आगे बढ़ा कर कहा, "पूरा पाकिस्तान प्रभावित हुआ है।"

"प्रभाव का क्या प्रमाण ?" रावत ने पूछा।

"वाह, पाकिस्तान की असेम्बली में कितने स्टेटमेन्ट दिये गये। मुझे नाम याद नहीं आ रहे......।"

"जी हाँ, सर फीरोज खाँ नून, मुमताज खाँ दौलताना, राजा गजनफ्फर अली खाँ के वक्तव्य थे।" तारा ने नाम याद दिलाये और कहा, "चीफ मिनिस्टर खान आफ ममदोत ने कहा था—"हम गाँधी जी के जीवन की रक्षा के लिए कोई प्रयत्न उठा नहीं रखेंगे।"

"पाकिस्तान का हाई कमिश्नर जाहिद हुसेन भी बिड़ला-हाउस में आया हुआ था।" अगरवाला साहब बोले, "अखबारों की खबरों के बारे में आप को जो पूछना हो, मिस तारा से पूछ लीजिये। ये नित्य दो अखबार पूरे-पूरे पढ़ती हैं !"

"पढ़ेगी क्यों नहीं, समय है, आराम है। हम तो कहते हैं, खूब पढ़े-लिखे !" मालकिन ने कह दिया।

"आप की दृष्टि में यह वक्तव्य अनशन के प्रभाव का पर्याप्त प्रमाण है ?" रावत ने जवाब माँगा।

"हाँ, क्यों नहीं ! हम अकारण सन्देह क्यों करें !" श्यामा ने उत्तर में प्रश्न किया।

"खैर, मैंने भी सब वक्तव्य ध्यान से पढ़े हैं। मुझे पाकिस्तानी नेताओं के उन वक्तव्यों में गाँधी जी से अपना समर्थन पाने के सन्तोष की ही ध्वनि मिली है। आप स्वीकार करेंगे कि पचपन करोड़ रुपया केवल वक्तव्य मात्र नहीं है, एक काफी बड़ी ठोस वस्तु है। मैं पूछता हूँ, सद्भावना उत्पन्न करने के लिए पाकिस्तान सरकार ने क्या ठोस कदम उठाये हैं ? कश्मीर से अपनी सेना को वापस बुला लेने की घोषणा की है या यह स्वीकार कर लिया है कि वे कश्मीर में दखल नहीं देंगे ! एक और बात बता ही दूँ। गाँधी जी ने १२ बज कर ४५ मिनट पर अनशन समाप्त किया था। उस समय जाहिद हुसेन वहाँ था न ?" रावत ने अगरवाला साहब से प्रश्न किया।

"जरूर था, उसने भी गाँधी जी के सामने हाथ जोड़ कर अनशन समाप्त करने के लिए अनुरोध किया। उसने शांति-रक्षा के लिए पूरा प्रयत्न करने का आश्वासन दिया।" साहब ने बिड़ला-हाउस में उपस्थित रहने के गर्व से कहा।

"ठीक है, एक धक्का तो गाँधी जी को लग चुका है।" रावत ने पाइप से दो कश खींच कर कहा, "तीन बजे गाँधी जी ने प्यारेलाल को जाहिद हुसेन के यहाँ बात-चीत करने के लिए भेजा था कि अब तो पाकिस्तान सरकार गाँधी जी के पाकिस्तान जाने पर आपत्ति नहीं करेगी, उनका स्वागत कर सकेगी। जानते हैं क्या उत्तर मिला ?"

"क्या, क्या ? बताइये, बताइये ?" सबने आग्रह किया।

"पाकिस्तान के हाई कमिश्नर ने उत्तर दिया—नहीं, इतनी जल्दी नहीं। जरा लाहौर से बातचीत कर लूं। विश्वास रखिये, निमन्त्रण क्या, इजाजत भी नहीं मिलेगी।" रावत ने गिलास उठा कर अन्तिम घूंट ले लिया और पाइप से कश खींचने लगा, मानो उसने कुछ कहने के लिए नहीं छोड़ा।

साहब का संकेत पाकर तारा फिर सबको ह्विस्की दे रही थी। वह श्यामा का छोटा गिलास लाल बोतल से भरने के लिए झुकी तो श्यामा ने टोक दिया—"भई यह मीठा-मीठा नहीं अच्छा लगा।" उसने रावत और साहब की ओर देखा, "अगर मर्द लोग चुनौती न समझें तो तुम हमें छोटा ह्विस्की दे दो।"

"ब्रावो, ब्रावो ! जरूर, जरूर !" रावत और सूर्या ने समर्थन किया।

श्यामा रावत की ओर देख कर बोली—"लेकिन गाँधी जी ने मानवता के सामने कितना बड़ा आदर्श रखा है। आप इसका अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव देखिये।"

"यस इट्ज ए ग्रेट हिस्टोरिकल इवेंट।" रावत सोफे पर सीधे हो कर बोले, "सरकार की ऐतिहासिक कमजोरी है। आप इस घटना को व्यवहारिक दृष्टिकोण

से देखिये। गाँधी जी महापुरुष हैं, यह मैं मानता हूँ। महापुरुष का अनुकरण करना सभी उचित मानते हैं। सरकार के किसी भी निर्णय से लोगों को असन्तोष होगा तो लोग अनशन करके बैठ जाया करेंगे। बहुत से लोग अनशन में प्राण दे देंगे।"

"वाह, अनशन कोई मजाक है। इतने तप के लिए मनुष्य में आध्यात्मिक बल होना चाहिए।" श्यामा ने विरोध किया।

रावत ने इन्कार का संकेत किया—"मैं अनशन को आध्यात्मिक शक्ति या बल नहीं मानता। यह केवल दृढ़ निश्चय और सहनशक्ति की बात है। कई लोगों ने गाँधी जी से अधिक लम्बे-लम्बे अनशन किये हैं। क्या नाम था उस आयरिश का, हाँ मेक्सविनी...।"

"सर !...ओ, आई एम सारी, एक्सक्यूज मी !" डे ने अपने सीनियर की बात टोक देने के लिए क्षमा माँगी।

"नहीं, नहीं कहो। तुम कहो !" रावत ने कहा।

"सर, आप को याद है, मैं यू० पी० के जेल डिपार्टमेन्ट में अन्डर सेक्रेटरी था। मुझे नाम याद नहीं आ रहा है, उस समय 'काकोरी कान्सपिरेसी केस' के टेरररिस्ट कहिये या रवोल्यूशनरी जवान जेल में थे। गवर्नमेण्ट उन्हें पालिटिकल कैदियों के अधिकार और 'बी' क्लास नहीं देना चाहती थी। उन लोगों ने पचास दिन, साठ दिन और एक ने तो सौ से अधिक दिन तक अनशन किया।"

"क्या कह रहे हैं आप ?" श्यामा ने विस्मय प्रकट किया, "पचास, साठ, सौ दिन अनशन ? आदमी जिन्दा रह सकता है ?"

"निश्चय ! और यह रिपोर्ट उनके प्रशंसकों की नहीं, उनके विरोधियों की है। भई गजब के लोग थे। उनका मामला मेरे ही हाथ में था। मेरे पास जेल में गुप्त सूचनाएँ आती रहती थीं। तीन-चार सप्ताह तो वे लोग बिलकुल भोजन के बिना, केवल जल पर रह जाते थे। पानी में नमक, सोडा, नीबू कुछ नहीं। उन लोगों के चारों ओर प्रशंसक, साहस बढ़ाने वाले और सहानुभूति रखने वाले लोग सेवा-सहायता के लिए नहीं रहते थे, उनका अनशन तुड़वाने के लिए उन्हें मानसिक और शारीरिक यातनायें दी जाती थीं। बाकायदा उनका वजन लिया जाता था। उनका तीस, चालीस, पचास पौंड तक वजन घट जाता था। कुछ तो अपना वजन घटाकर सरकार को परेशान करने के लिये जल पीना भी छोड़ देते थे। गवर्नमेन्ट उन्हें मरने भी नहीं दे सकती थी। उस हालत में उन्हें फोर्सीब्ली फीड (जबरदस्ती भोजन देना) किया जाता था। यह काम बहुत यंत्रणाजनक और खतरनाक भी होता था। यह काम जेल के अधिकारी सरकार से मंजूरी लेकर ही करते थे। उनके हाथ-पाँव बाँध कर नाक के रास्ते भोजन दिया जाता था...।"

मिसेज अगरवाला सिहर उठीं।

डे कहता गया—"खयाल कीजिये, बीस-तीस दिन अनशन कर चुकने के बाद आदमी की क्या हालत होगी ! रबड़ की नली उनके मुँह से भीतर डाली जाती थी तो नली को दाँत से काट देते थे। जान चली जाने की कोई फिक्र नहीं थी। इसी-

लिये नली उनके नाक के रास्ते डाली जाती थी। उस नली से दूध, विटामिन वगैरह पेट में पहुँचा दिये जाते थे। एकाध के तो फेफड़ों में दूध चला गया और मर गया। एक बार दूध दे दिया, फिर सप्ताह भर भूख की ज्वाला में छोड़ दिया कि भूख की यातना से स्वयं दूध पीने लगें, पर साहब, नहीं मानते थे वे लोग! दो-तीन ने तो जल पीना ही छोड़ दिया था। उन्हें जल भी रबड़ की नली से नाक के रास्ते ही दिया जाता था। गजब के लोग थे। अपनी शर्तें पूरी करवा के माने।

डे के उस दारुण वर्णन से कमरे में स्तब्धता छा गयी थी। श्यामा ने अपना सुलगा हुआ सिगरेट राखदानी पर रख दिया था। वह उस वर्णन से आतंकित हो गयी, सिगरेट फिर न उठा सकी। उसने डे को उत्तर दिया—"उन रिवोल्यूशनरियों में भी आध्यात्मिक शक्ति थी। भगत सिंह को तो हम सब लोग बहुत मानते हैं। हम कब कहते हैं, उनमें यह शक्ति नहीं थी, पर सर्व-साधारण तो ऐसा नहीं कर सकते?"

"सुनिये!" रावत ने हाथ उठा दिया, "गाँधी जी तो क्रान्तिकारियों को हिंसक कहते थे। गाँधी जी के अनुसार हिंसकों में आध्यात्मिक बल कैसा? और यदि उनमें भी आध्यात्मिक बल था तो गाँधी जी के अनशन में कोई विशेषता नहीं रह जाती। इस समय तो सरकार गाँधी जी की बात रखना चाहती थी, परन्तु यदि शरणार्थियों को चुप करा कर उन्हें भड़का दिया जाता और एक हजार शरणार्थी, भारत की रक्षा के लिए गाँधी जी के विरुद्ध बिड़ला-हाउस को घेर कर अनशन करके बैठ जाते तो? या सुनिये, गाँधी जी अहिंसा की मान्यता के लिए काश्मीर से भारतीय सेनाओं को वापस लौटा लेने के लिए अनशन कर लें तो...।"

"प्लीज, ऐसी बात न कहिये।" श्यामा ने हाथ जोड़ दिये।

तारा तर्क और विवाद की उत्तेजना अनुभव कर रही थी। रावत की ओर देख कर कुछ संकोच से बोल पड़ी—"क्षमा कीजिये, मैं एक बात पूछ सकती हूँ?"

"अवश्य।"

"आपका विचार है कि सरकारी निर्णय के विरोध में, गांधी जी के अनशन की सफलता का उदाहरण लोगों को उसी ढंग से शासन का विरोध करने के लिए उत्साहित कर सकता है। इससे शासन के सामने कठिनाइयाँ आयेंगी?"

"जरूर, मेरा ऐसा ख्याल है।" रावत ने स्वीकार किया, "मजदूर, किसान, विद्यार्थी, क्लर्क, किसी भी माँग के लिए अनशन करके बैठ जा सकते हैं।"

"जी, ऐसा सम्भव है।" तारा ने भी स्वीकार किया, परन्तु क्या सरकार का विरोध बम, बन्दूक, तलवार या दंगे से किया जाने की अपेक्षा शांति पूर्वक अनशन से किया जाना स्वयं सरकार के लिए भी अच्छा नहीं है? कम से कम यह हिंसा और उत्पात का मार्ग नहीं होगा। इसमें तर्क के लिए, विचार के लिए अवसर रहेगा।"

"हाँ जरूर, सही बात है।" श्यामा ने बहुत उत्साह से समर्थन किया।

रावत ने पल भर तारा की ओर देख कर कहा—"मिस तारा, तुम्हें बच्चों

की देख-रेख में उलझाये रखना तुम्हारे सामर्थ्य का अपव्यय है। तुम गांधी जी की प्राइवेट सेक्रेटरी बन जाओ या किसी पत्र के संपादकीय विभाग में चली जाओ।"

"सर, मैं तो कुछ भी नहीं जानती। किसी योग्य नहीं हूँ।" तारा ने लजा कर अपनी घृष्टता के लिए क्षमा माँग ली।

"पर मिस तारा, मैं उत्तर अवश्य दूँगा" रावत बोले, "आप यह बताइये, अनशन को आप तर्क कह सकती हैं? खैर गांधी जी तो वास्तव में महात्मा हैं, लेकिन महात्माओं के अनुकरण का पाखण्ड भी बहुत किया जाता है। एक महात्मा के पीछे हजार पाखण्डी होते हैं। भगतसिंह या रवोल्यूशनरियों का अनुकरण पाखण्ड से नहीं किया जा सकता। वहाँ तो जान की बाजी ही सब कुछ होती है।"

"सर, यू आर परफैक्टली राइट।" डे ने जोर से समर्थन किया।

अगरवाला साहब रावत को और पेग देने के लिए केबिनेट की ओर बढ़े। रावत ने इन्कार से गिलास को हाथ से ढँक लिया।

"तो फिर डिनर?" साहब ने पूछा।

"मैं अभी एक मिनट में लगवा देती हूँ।" मिसेज अगरवाला उठ खड़ी हुयीं, "तारा जरा आओ न!"

मिसेज अगरवाला बड़े डाइनिंग-रूम में जुगुल, शिवनी और तारा की सहायता से खाना लगवाने लगीं। वे स्वयं मांस नहीं छूती थीं। तारा से कह दिया कि प्लेटों में रख दे। तारा को भी उन चीजों की गन्ध अरुचिकर लग रही थी। वह भी हाथ न लगाकर काँटे-चम्मच से रखती जा रही थी।

भोजन के समय मिस्टर डे ने और साहब ने नरोत्तम को याद किया।

जुगुल ने बताया, छोटे साहब नौ बजे खाकर सिनेमा चले गये हैं। रावत और श्यामा के आग्रह से तारा को भी खाने में साथ बैठना पड़ा। डे और रावत ने साहब से नरोत्तम के विषय में बातें कीं।

अगरवाला साहब ने बताया—"नरोत्तम अपने काम में रुचि लेने की अपेक्षा सर्विस ही करना चाहता है।"

डे ने सुझाया—"सर्विस करना चाहता है तो तनखाह उसे टाटा या दूसरी फर्मों में ज्यादा मिल सकती है, पर उसे तनखाह की अपेक्षा शायद कुछ कर सकने में ही ज़्यादा रुचि है। लड़का आइडियलिस्ट (आदर्शवादी) है।"

अगरवाला साहब ने स्वीकार कर लिया—"हाँ यही बात है।"

तारा को विस्मय हो रहा था, जिन वस्तुओं की गन्ध उसे अरुचिकर लग रही थी, श्यामा, मिसेज सूर्या और दूसरे लोग उन्हीं चीजों को सराहना और चाव से खा रहे थे। केवल वह और मिसेज अगरवाला ही मांस नहीं खा रही थीं।

भोजन के बाद साहब और मिसेज अगरवाला अतिथियों को ड्योढ़ी में खड़ी गाड़ियों तक पहुँचाने जा रहे थे। श्यामा तारा को कोहनी से पकड़े बात करती चल रही थी—"अब तो मिला करोगी न! मिसेज अगरवाला कह रही हैं, तुम्हें काफी समय रहता है। सोशल काम में इन्टरेस्ट लो। तुम नहीं करोगी तो कौन करेगा···।"

"मिस तारा !"

तारा ने घूम कर देखा। रावत साहब की गाड़ी का दरवाजा खुला हुआ था। रावत साहब बिदाई के लिए उसकी ओर हाथ बढ़ाये थे। तारा से हाथ मिला कर रावत ने कहा—"गुडनाइट, मिसेज और मिस्टर अगरवाला के साथ आप भी जरूर आइयेगा !"

तारा ने हाथ मिला लेने के बाद भी, अभ्यास के कारण हाथ जोड़ कर नमस्कार कर दिया।

तारा अपने कमरे में आकर बड़ी देर सोचती रही कि ये किस ढंग के लोग हैं। शराब पीकर बहकते नहीं, वरन् राजनीति और सामाजिक समस्याओं पर भी डटकर चिन्तन करते हैं।

उस दिन के बाद से तारा के लिए वहाँ का वातावरण दूभर होने लगा। मिसेज अगरवाला प्रायः ही झूठी आशंकाओं और झूठे कारणों से तारा पर खीझ उठतीं। उसे भला-बुरा कहतीं। यहाँ तक कि एक दिन नरोत्तम ने स्वयं ही तारा से कह दिया कि यहाँ का वातावरण आपके लिए अनुकूल नहीं है। आप रावत साहब से बात करके कहीं और काम ढूँढ़ लीजिए। वह बहुत दमदार आदमी हैं। वैसे हो सका तो मैं ही बात कर लूंगा।

एक दिन नरोत्तम ने तारा को बताया कि वह रावत साहब के पास जा रहा है। आज अच्छा मौका है, अगर अवसर मिला तो वह तारा के लिए उनसे अवश्य बात करेगा।

तारा सात बजे बच्चों को लेकर लौटी तो मिसेज अगरवाला फोन पर किसी से बात कर रही थीं। फोन रखते-रखते मिसेज अगरवाला बोल उठीं—"सत्यानास होये इन पंजाबियों का, जालिम जाने क्या करके रहेंगे ? महात्मा जी पर बम फेंक दिया है।"

तारा उनकी ओर देखती रह गयी ! मालकिन ने बहुत क्षोभ से बता दिया—"महात्मा जी की प्रार्थना में किसी पंजाबी ने बम फेंक दिया है। एक पूरी दीवार गिर गयी है। महात्मा जी का तो बाल बाँका नहीं हुआ। उन्हें भगवान बचाने वाला है। उनका कोई क्या बिगाड़ सकता है !"

नरोत्तम साढ़े आठ बजे आया। उसने डाइनिंग-रूम में पूरी बात साहब को सुनायी। तारा दरवाजे की आड़ में खड़ी सुन रही थी। नरोत्तम रावत साहब के बँगले पर पहुँचा तो पता लगा कि साहब उसी समय फिर चले गये थे। वह क्लब चला गया था। वहाँ पता चला, प्रार्थना के समय विस्फोट हुआ था। बम गांधी जी के आसन से काफी दूर, लगभग पचहत्तर फुट दूर गिरा था। सिर्फ एक दीवार की जाली उड़ गयी है। खयाल है, तीन आदमी थे। दो भाग गये, एक पकड़ा गया है। फ्रंटियर का पंजाबी है, मदनलाल पाहवा। गांधी जी बिलकुल शांत रहे। लोगों की घबराहट पर हँस दिये।

दूसरे दिन पत्रों में चित्रों सहित पूरा विवरण था। मदनलाल के बारे में

समाचार था कि वह दिल्ली की किसी मसजिद में शरण लिये था। उसे मसजिद से निकाल दिया गया था। पुलिस को घटना के पीछे षड़यंत्रकारियों का काफी बड़ा संगठन होने का सन्देह था। पुलिस फिलहाल तथ्यों को प्रकट कर देना उचित नहीं समझती थी।

उस संध्या कोठी पर बातचीत की ध्वनि बदली हुयी थी।...शरणार्थियों के साथ जुल्म तो हो ही रहा है।

शान्ति के प्रयत्नों का तूफान धीरे-धीरे शान्त हो गया। शान्ति के प्रयत्नों का उद्देश्य, गांधी जी का अनशन समाप्त करा देना पूरा हो गया था। लोग अपनी व्यस्तताओं में डूब गये थे।

कोठी पर दिन में बहुत से फेरीवाले आते रहते थे। गठरियों में बजाजी लिये, खेस, दरियाँ या कम्बल बेचने वाले, कभी बटन-सुई फीता-लेस बेचने वाले लड़के। पत्रिकायें-पुस्तकें, फाउन्टेन पेन की स्याही, चेहरे का क्रीम-पाउडर, चप्पल, सेंडल बेचने वाले लोग। फेरीवाले प्रायः पंजाबी-शरणार्थी होते थे।

मिसेज अगरवाला कौतूहल में फेरीवालों को बुला कर चीजों पर नजर डाल लेतीं और फिर कह देतीं—"अरे सब नकली माल हैं। हम ने दो बार लेकर धोखा खाया है। बड़े जालिये हैं।"

शरणार्थी फेरीवालों को देख कर तारा को अपने परिवार की याद आ जाती। चाहे जो हो, भोजन-वस्त्र से तारा इतनी समृद्ध पहले कभी नहीं रही थी।

तारा सोचती—शायद माता-पिता, भाई-बहनें अभी तक किसी कैम्प में पड़े होंगे। माँ कितनी विवश परन्तु ममता भरी थी। पिता जी भी हृदय के कितने अच्छे, परन्तु गरीबी से कितने दबे हुए थे। इस हालत में उन पर जाने कैसी बीत रही होगी। विवशता में ही उन्हें अपना बोझ उतारने के लिए मुझे हाथ-पाँव बाँध कर सौंप देना पड़ा कि वे समाज की दृष्टि में न गिर जायें। तारा अपने प्रति अन्याय के लिए माता-पिता को क्षमा कर देने के लिए तैयार थी, परन्तु भाई को नहीं।...भाई तो उदार और प्रगतिवादी होने का दम भरते थे। अपना विवाह जात-पाँत तोड़ कर करना चाहते थे।...मुझे आश्वासन देकर धोखा दिया।

तारा सोचती—यदि वह रेडियो के माध्यम से या और उपायों से पता लेना चाहे तो क्या परिवार का पता नहीं लगा सकती? पहले गोपाल शाह के परिवार का पता कर ले। साहब उन्हें नाम से जानते हैं तो जरूर उनका पता कर सकते हैं। परिवार के साथ रहने के लिए वह नहीं जायेगी। उसके पास सौ रुपया पड़ा है, उन की सहायता के लिए रुपया भेज सकेगी।...ससुराल वाले जाने कहाँ होंगे। घर में आग लग गयी थी पर वे लोग तो बच ही गये होंगे। यदि माता-पिता ने मेरा फिर ससुराल जाना ही धर्म समझ लिया तो? ऐसी बातें सोचने से तारा के मन पर भारी बोझ पड़ा। उसने गहरी साँस लेकर निश्चय कर लिया, इन चिंताओं से क्या लाभ?

३० जनवरी संध्या पाँच बजे। पड़ोसी दुग्गल साहब की छोटी लड़की शुचि के जन्म-दिन की पार्टी थी और पुत्तन को मालकिन के साथ वहाँ जाना था। ३१

जनवरी शनिवार को रावत साहब ने साहब, मिसेज अगरवाला और नरोत्तम को चेम्सफोर्ड क्लब में डिनर के लिए बुलाया था और तारा को लाने के लिए भी विशेष रूप से अनुरोध कर दिया था।

तारा ने नरोत्तम से बात की—"मैं तो कभी किसी क्लब में नहीं गयी। झिझक मालूम होती है। मेरी चप्पल भी टूट गयी है। बच्चे दुग्गल साहब के यहाँ जायेंगे। एक जोड़ा सैंडल ले लूँ। चलो कनाट प्लेस से ले आवें।"

सवा पाँच बजे कनाट प्लेस में पहुँच कर नरोत्तम ने कहा—"पहले हमें 'ब्लुनाइल' में काफी पिलवा दो। तुम्हारा सैंडल बाद में देखा जायगा।"

नरोत्तम और तारा अभी काफी खत्म नहीं कर पाये थे, कि उन्होंने रेस्तरां में कुछ सनसनी सी अनुभव की। लोग सहसा उठने लगे थे।"

"बात क्या है ?" नरोत्तम ने विस्मय प्रकट किया।

रेस्तरां का प्रबन्धक उनकी ओर बढ़ आया—"क्षमा कीजिये, रेस्तरां बन्द करना पड़ रहा है। बिड़ला भवन में महात्मा जी की हत्या हो गयी है।"

तारा और नरोत्तम धक्क् से रह गये। हाथ में लिये प्याले नीचे रख दिये। मौन रेस्तरां से बाहर आ गये। दुकानें जल्दी-जल्दी बन्द हो रही थीं। लोग जगह-जगह खड़े बातें कर रहे थे। सशस्त्र पुलिस से भरी लारियाँ घूम रही थीं। नरोत्तम और तारा रेडियो पर समाचार सुनने के लिए तुरन्त कोठी पर लौट आए।

नरोत्तम में अपना रेडियो लगाने के लिए ऊपर जाने तक का धैर्य न था। उसने ड्राइंग-रूम में रेडियो पर दिल्ली शार्ट वेव लगा लिया। रेडियो में गीता का पाठ सुनाई दिया। स्वर में गम्भीर अवसाद था। दो मिनट बाद सुना :

"आज संध्या सवा पाँच से कुछ पूर्व, जिस समय राष्ट्र-पिता महात्मा गांधी बिड़ला भवन में प्रार्थना-स्थल की ओर जा रहे थे, एक हिन्दू युवक ने पिस्तौल से तीन गोलियाँ चलाकर गांधी जी की हत्या कर दी है। महात्मा गांधी जी का देहान्त गोलियाँ लगते ही हो गया। अंतिम समय उन्होंने 'राम-राम' उच्चारण किया। गांधी जी के गोली लगने के समय, लेडी हार्डिंग मेडिकल कालेज की एक ग्रेजुएट युवती प्रार्थना में उपस्थित थी। युवती ने तुरन्त गांधी जी को सँभाला। कुछ ही मिनट में डाक्टर भार्गव और डाक्टर जीवराम मेहता ने पहुँच कर उनकी परीक्षा की। गांधी जी का शरीर निर्जीव हो चुका था। इस समय भारत के गवर्नर जनरल लार्ड माउन्टबेटन, प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू, गृहमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल, डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना अब्दुलकलाम आजाद बिड़ला-भवन में पहुँच चुके हैं।

"....सरकार की ओर से जनता से प्रार्थना है कि वे बिड़ला भवन की ओर आने का कष्ट न करें। बहुत भीड़ के कारण प्रबन्ध में कठिनाई बढ़ने की सम्भावना है। इस विषय में अन्य समाचार कुछ समय पश्चात सुनाये जायेंगे।"

मिसेज अगरवाला ने दुग्गल साहब के यहाँ ही समाचार सुन लिया था। बच्चों को वहीं छोड़ कर आ गयी थीं। उन्हों ने खद्दर की साड़ी पहन ली थी। बिड़ला भवन जाने के लिए तैयार थीं, परन्तु साहब की ओर से कोई समाचार नहीं मिला था। कुछ

ही मिनट बाद अखबार वाले साइकिलों पर विशेषांक बेचते हुए आने लगे।

तारा ने बच्चों को खाना दे दिया। स्वयं उस ने नहीं खाया।

अगरवाला साहब पौने आठ बजे आये। मिसेज अगरवाला रो पड़ीं। साहब उन्हें लेकर तुरन्त बिड़ला-भवन चले गये।

प्रात: आठ बजे रेडियो पर सूचना दी गयी। गांधी जी की मृत्यु की घटना को सुन कर उन की अन्तिम यात्रा और संस्कार का कार्यक्रम बताया गया।

सरकारी आदेश के अनुसार राष्ट्र-पिता की मृत्यु के शोक और उन के सम्मान में सब सरकारी इमारतों पर झण्डे झुका दिये गये हैं। सरकारी आदेश से तीन दिन तक सब सरकारी दफतर और देश भर के बाजार बन्द रहेंगे। ११ बज कर १२ मिनट पर गांधी जी के अन्तिम दर्शनों के लिए उनका शरीर बिड़ला-भवन की बाल्कनी पर दस मिनट तक रखा जायगा। ११ बज कर ३० मिनट पर बिड़ला-भवन से राष्ट्र-पिता के शरीर की अन्तिम यात्रा आरम्भ होगी। संस्कार यमुना के तट पर राजघाट पर किया जायेगा।

राष्ट्रपिता के शरीर के प्रति पूर्ण राजकीय और राष्ट्रीय सम्मान अर्पित किया जायेगा। इस यात्रा का प्रबन्ध दिल्ली क्षेत्र के प्रमुख सेनापति, सैनिक व्यवस्था द्वारा करेंगे। राष्ट्रपिता का विमान तोपों की बड़ी गाड़ी पर ऊँचा मंच बना कर रखा जायेगा। विमान के आगे और पीछे घुड़सवार सैनिकों के रिसाले, चार हजार सैनिक, एक सौ नौसैनिक, एक सौ वायु सैनिक रहेंगे।

गांधी जी की अर्थी की यात्रा का राजघाट पहुँचने के लिए निश्चित किया गया मार्ग बता दिया गया और निवेदन किया गया कि जनता बिड़ला-भवन की ओर आने का कष्ट न करे। जनता यात्रा के मार्ग पर सैनिकों और विमान की गाड़ी के लिए स्थान छोड़ कर खड़ी रहे और सड़क के किनारे से राष्ट्रपिता के अन्तिम दर्शन करे। सरकार सब लोगों को अन्तिम दर्शन का अवसर दे सकने का प्रबन्ध कर रही है।

मिसेज अगरवाला ने ध्यान से सूचना सुनी। तारा को बताया कि वे साहब के साथ ६ बजे ही बिड़ला-भवन चली जायेंगी। वहाँ से राजघाट चली जायेंगी। बहुत बड़ा जुलूस निकलेगा। जलूस इंडिया गेट से होकर जायेगा। बच्चों को बोहरा साहब की कोठी की छत से जलूस दिखा देना। हम उन के यहाँ फोन किये देती हैं। उन्होंने नन्दलाल को प्रात: ही हार ले आने के लिए भेज दिया था। फिर उन्होंने शिवनी को बुला कर कहा—"माँ जी को कह कर हमारे और साहब के नाश्ते के लिए परोठे बनवा दो। हम दोपहर में खाने के लिये नहीं आयेंगे।"

रेडियो पर लगातार शोक की धुन बज रही थी। कुछ-कुछ समय बाद गीता, कुरानशरीफ, बाइबिल, ग्रन्थ साहब और 'जिन्द-अवस्ता' से पाठ हो रहा था। गांधी जी की अन्तिम यात्रा के संबंध में सूचनायें दी जा रही थीं।

रेडियो की सूचना के अनुसार गांधी जी के विमान के इंडिया गेट पर पहुँचने का समय १२ बज कर ३० मिनट था, परन्तु नरोत्तम दादी, तारा और बच्चों को लेकर सवा बारह से पहले ही इंडिया गेट के समीप, अकबर रोड के चौराहे, बोहरा जी की

कोठी पर पहुँच गया था। शिवनी लाल्ली को गौद में लेकर साथ हो गई थी।

वोहरा जी की दोमंजिली कोठी की छत पर पास-पड़ोस से लगभग सौ-सवा-सौ स्त्री-पुरुष जमा हो गये थे। इन्डिया गेट की ओर दायें-बायें जहाँ तक दृष्टि जाती, भूमि पर नरमुंड छाये हुये थे। दोमंजिली छत की ऊँचाई से सड़क, धरती पर बहती नरमुंडों की काली नहर सी लग रही थी। लोग सड़क किनारे के मकानों की छतों पर भरे हुए थे। सड़क किनारे के वृक्षों की टहनियों पर, बिजली और टेलीफोन के खम्भों पर, जहाँ कहीं भी बंदरों अथवा पक्षियों के लिए स्थान हो सकता था, अपना शरीर तौले बैठे थे।

घुड़सवारों की पंक्तियाँ आने लगीं। उन के नेजों पर शोक-सूचक सफेद झंडियाँ थीं। वे शोक में नेजों को झुकाये हुए थे। उन के पीछे राइफलों की नालियाँ झुकाये, कदम मिला कर बहुत धीमी चाल से चलते कई हजार सैनिकों की पंक्तियाँ थीं। उन के पीछे दो सौ सैनिक, पचास-पचास की चार पक्तियों में, रस्सियों से एक बहुत बड़ी तोप गाड़ी को खींचते हुए ला रहे थे। गाड़ी के ऊपर विमान के रूप में बहुत ऊँचा मंच बना हुआ था। मच पर गांधी जी का शव रखा हुआ था। शरीर फूलों से ढँका था। केवल चेहरा दिखायी दे रहा था।

मिस वोहरा बाइनाक्युलर लेकर बैठी थीं। वे खुद स्पष्ट देख कर बताती जा रही थीं—"गाँधी जी के शरीर के साथ उन के पुत्र और चरणों के समीप सरदार पटेल बैठे हैं। नेहरू जी, मौलाना आजाद, बलदेव सिंह, राजेन्द्र बाबू मंच के साथ गाड़ी पर खड़े हैं।"

विमान के पीछे भी राइफलें झुकाये हजारों सैनिकों की पंक्तियाँ थीं। उस के पश्चात् चार-चार मोटरों की अटूट पंक्तियाँ। मिस वोहरा ने वाइनाक्यूलर नरोत्तम को दे दिया। नरोत्तम ने आधे मिनट के लिये तारा को भी देख लेने दिया। दिखायी यों भी दे रहा था पर बाइनाक्युलर से तारा, नेताओं की आँखों और चेहरों पर छाए शोक को भी स्पष्ट देख सकती थी।

"राजसी शक्ति और प्रतिष्ठा का यह प्रदर्शन गाँधी जी की भावना और आदर्शों के अनुकूल नहीं है।" समीप ही में सुनाई दिया।

तारा और नरोत्तम ने घूम कर पीठ पीछे देखा। खद्दर का कुर्त्ता-धोती पहने एक युवक बोल रहा था। युवक का चेहरा क्षुब्ध था। युवक अपनी ओर लगी विस्मित आँखों की परवाह न कर कहता गया—

"दरिद्रनारायण के सेवक, भंगी कालोनी में रहना चाहने वाले, केवल एक वस्त्र पहनने वाले, शस्त्रों और सैनिक शक्ति का विरोध करने वाले गांधी जी प्रदर्शन की अनुमति नहीं दे सकते थे। गांधी जी को तो कैदी बना कर भी आगाखाँ के महल में रखा जाना पसन्द नहीं था। उन्हें तो, उन के ऊपर पहरा रखने के लिए किया जाने वाला खर्च भी देश की जनता पर अत्याचार जान पड़ता था। गांधी जी मंत्रियों को महल छोड़कर कुटिया में रहने का उपदेश देते थे। उनकी वाणी बन्द होते ही इन लोगों ने उन्हें महलों में पहुँचा दिया।"

नरोत्तम ने तारा के मन की बात कही—"यह तो हमारी भावना है। हम अपना आदर प्रकट कर रहे हैं। सरकार राष्ट्र की ओर से उन का आदर कर रही है।"

युवक ने कहा—"गाँधी जी के विचारों के अनुसार यह उनका आदर नहीं है। यह उन के सिद्धान्तों का अपमान है। गाँधी जी अपनी अनुयायी सरकार से शान और शक्ति के प्रदर्शन की नहीं, विनय और सेवा की आशा रखते थे। सरकार ने गरीबों के गांधी को गरीबों से छीन लिया है।"

युवक की बात से खिन्न होकर कुछ लोगों ने मुँह फेर लिये। तारा और नरोत्तम चुपचाप सुनते रहे। युवक उन्हें सुनाता गया—

"सदा ही ऐसा हुआ है। संत अपने जीवन में गरीबों के होते हैं। मृत्यु के बाद अमीर उन्हें छीन लेते हैं। भगवान बुद्ध भिक्षा-वृत्ति से जीवन बिताते थे। उन के निर्वाण के बाद राजा उन के प्रचारक और प्रतिनिधि बन गये। ईसा के साथ भी यही हुआ। वही इस संत के साथ हो रहा है। कल यह लोग ताजमहल की लागत का एक गांधी स्मारक बना देंगे और गांधी जी के सिद्धान्त को उस महल की नींव में दबा देंगे। जैसे बुद्ध के दाँत को रख कर स्तूप बना दिये गये थे और बुद्ध के अपरिग्रह के नाम-लेवा सेनायें लेकर साम्राज्य-विस्तार के लिए चढ़ाइयाँ करने लगे थे। गाँधी-बुद्ध और ईसा की तरह अनुकरण के लिए नहीं, केवल पूजा के लिए अवतार बन कर रह जायेगा।"

अगरवाला साहब और मिसेज अगरवाला संध्या सवा छः बजे के बाद कोठी पर लौटे। साहब शोक से मौन थे। मालकिन लगातार आँसू बहा रही थीं। आस-पास की कोठियों से कुछ स्त्री-पुरुष राजघाट पर अंतिम संस्कार का वर्णन सुनने के लिए ड्राइंग-रूम में प्रतीक्षा कर रहे थे। तारा भी एक कोने में खड़ी थी।

मिसेज अगरवाला कहने लगीं—

"मनों चन्दन था, घी के कण्डाल भरे थे, नारियलों के ढेर लगे थे। लार्ड माउण्टबेटन साहब, उन की लेडी और उनकी लड़कियाँ पंडित जी और पटेल साहब के साथ धरती पर बैठे थे। हम भी उन्हीं के साथ बैठे थे...।"

मिसेज अगरवाला गले में आँसू भर जाने के कारण कुछ क्षण रुक कर बोलीं—"महात्मा जी के हृदय में भगवान था। उन्हें तो पहले ही अपने अंतिम दिन का पता लग गया था। बिड़ला-भवन में सब कह रहे थे। उन्होंने सात दिन पहले कह दिया था कि हमारा सच्चा तप है तो हम खाट पर नहीं मरेंगे। हम बम से या बन्दूक की गोली से मरेंगे।"

"कल सुबह एक जर्नलिस्ट ने उन से पूछा था—आप फरवरी को सेवाग्राम जा रहें!"

"बोले, कौन कहता है?"

"जर्नलिस्ट ने कहा, अखबारों में तो छप गया है। तो बोले—हाँ अखबार में छपा है कि गाँधी एक फरवरी को सेवाग्राम जा रहा है। देखो कौन गाँधी जाता है।

उन्होंने सेवाग्राम में तार देने को भी मना कर दिया था कि क्यों फिजूल पैसा खर्च करोगे ।

"वे तो प्रार्थना के लिए जा रहे थे तब भी सब कुछ जानते थे और हँस रहे थे । उन से लोगों ने कहा—काठियावाड़ से दो आदमी मिलने आये हैं । बोले, बस अब हो गया । प्रार्थना से लौटेंगे तो मिलेंगे । जानते थे कि लौटना नहीं है । लीला समाप्त हो गयी है ।"

मिसेज अगरवाला फिर फफक-फफक कर रोने लगीं ।

अगरवाला साहब ने रुमाल से आँसू पोंछ लिये । कई दूसरे लोग भी आँसू पोंछने लगे ।

"अरे भई, वे तो अवतार थे ।" किसी का बोल सुनाई दिया ।

अनुमोदन में अनेक दीर्घ-गहरे श्वास सुनाई दिये ।

५

जब मनुष्य अभाव के गढ़े में होता है, उसे असमर्थता की दीवारें बंदी बनाये रहती हैं । उसे सफलता का कोई मार्ग नहीं दिखाई दे सकता । साधनों की सीढ़ी पा जाने पर मनुष्य की दृष्टि अभाव के गढ़े से ऊपर उठ जाती है । उसे सफलता के राज-मार्ग दिखाई देने लगते हैं, महत्वाकांक्षा के शिखरों पर चढ़ सकने की राहें भी दिखायी देने लगती हैं ।

नौ-दस माह पूर्व जयदेव पुरी चार सौ रुपया मासिक वेतन पा सकने अथवा किसी पत्र का मुख्य सम्पादक होने की इच्छा, केवल गुप्त कल्पना में या स्वप्न में ही कर सकता था । ऐसी बात मुँह से कह देने से अपना परिहास कराने का भय था । पुरी अपनी योग्यता के भरोसे मन में ऐसी महत्वाकांक्षा जरूर छिपाये था परन्तु जानता था, उस स्थिति को पाने के लिए धैर्य से कई वर्षों का व्यवधान पार करना जरूरी होगा । उस समय केवल कनक ही ऐसी बात उससे कह सकी थी । कनक पुरी को क्या नहीं समझती थी ? कनक ने जैसे विश्वास और उमंग से वह बात कही थी, उसकी स्मृति पुरी को अब भी किसी बहुत ऊँची कल्पना पर उड़ा देती थी ।

पुरी ने देश के विभाजन से पूर्व महत्वाकांक्षा के दुरूह पर्वत पर चढ़ने का प्रयत्न आरम्भ किया था पर उसका पाँव फिसल गया था। वह 'पैरोकार' के सहायक सम्पादक की नौकरी से बरखास्त होकर बेकारी के दैन्य के दलदल में गिर पड़ा था । पुरी उस दलदल में डूब न जाने के लिए सामर्थ्य भर हाथ-पाँव चला रहा था । उस समय देश के विभाजन का राजनीतिक भूकम्प आ गया । देश की धरती दो भागों में बँट जाने से काँप उठी । आलीशान अट्टालिकाएँ घरघरा कर गिरने लगीं । अट्टालिकाओं के स्थान पर खाइयाँ, ताल और दलदल बनने लगे । पुरी जिस दलदल में

फँसा हुआ था, उस पर भी एक सर्वग्रासी बाढ़ का रेला आ गया। बाढ़ ने पुरी को दलदल से बहा दिया, मृत्यु के मुँह की ओर। हताश बहते-बहते उसने अनुभव किया कि उसके पाँव धरती को छू रहे थे। पुरी बाढ़ में डूबी हुई चट्टान पर पाँव लगने से खड़ा हो गया। वह चट्टान बाढ़ के जल से ऊपर उठने लगी। पुरी ने देखा, वह अच्छे खासे पक्के मकान की छत पर सुरक्षित हो गया था। उस मकान पर पुरी के अधिकार को चुनौती देने वाला कोई नहीं था। कोई शंका नहीं कर रहा था कि वह मकान उसका नहीं है।

पुरी चार-मास से, तन-मन लगाकर कमल प्रेस को चला रहा था। सूद जी के प्रभाव से सरकारी और बाजार का काम मिलता जा रहा था। परिणाम-स्वरूप लगभग तीन हजार रुपये की पूँजी का बल उसे अपने रक्त में अनुभव हो रहा था। वह सोचे बिना न रह सका कि सूद जी की अनुमति से वह पूँजी का उपयोग सूद जी का समर्थक साप्ताहिक पत्र चला लेने में कर सकता था। इस प्रकार का एक अस्पष्ट सा संकेत भी उसे मिल चुका था।

अवसरों के द्वार खुलते देखकर पुरी के मस्तिष्क में एक और भी कल्पना जाग उठी थी। विभाजन से पूर्व पंजाब पुलिस में मुसलमानों की बहुतायत थी। पंजाब के सभी मुसलमान अफसर पाकिस्तान चले गये। पश्चिम से आने वाले हिन्दू अफसरों की संख्या आवश्यकतानुसार पर्याप्त नहीं थी और प्रबन्ध का काम बहुत बढ़ गया था। व्यवस्था को उचित रूप से चला सकने के लिए पंजाब सरकार नये अफसर नियुक्त कर रही थी। सुपरिन्टेन्डेन्ट-पुलिस और डिप्टी-सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस के समकक्ष डिस्ट्रिक्ट-कमांडर, डिप्टी-कमांडर आदि के नये ओहदों के साथ पद और शासन-शक्ति के अधिकार के अतिरिक्त चार सौ और दो सौ रुपये मासिक वेतन भी था। सूद जी की सहायता से वह पद और वेतन पा लेना पुरी के लिए बहुत कठिन नहीं था।

पुरी ने संकोच से सूद जी के सामने चर्चा की, यदि उसकी तनख्वाह प्रेस के लिए अधिक बोझ हो तो वह सूद जी की अनुमति से डिस्ट्रिक्ट-कमांडर के पद के लिए प्रार्थना-पत्र दे दे।

सूद जी को पुरी की बात अच्छी नहीं लगी। बोले—"सुपरिन्टेंडेंट पुलिस का काम सरकार के निर्देश पूरे करना है। महत्व तो निर्देशों का है, उचित नीति का है। नौकरी का राजनीतिक महत्व क्या है? प्रेस तो एक प्रकार की राजनीतिक शक्ति है। उसे खामुखा दूसरे आदमी के हाथ में दे दें, इसमें क्या बुद्धिमता है? प्रेस पर तुम्हारी तनखाह का क्या बोझ है? ईसाक जाने कितना कमाता होगा। वह अपना प्रेस लेने आ भी जायगा तो दाम ही तो माँग सकता है। सेकेंडहेंड, घिसी हुई मशीनों का दाम, आधे-तिहाई से ज्यादा क्या होगा?"

पुरी का स्वप्न था, किसी दिन पत्र का सम्पादन कर सके। सूद जी की बात से उस स्वप्न को सम्भावना का अवलम्ब मिल गया।

पत्र को नियमित रूप से छाप सकने का साधन पुरी के हाथ में था। पत्र के मालिक यदि सूद जी ही हों तो उसका मुख्य सम्पादक तो वही होगा। इस आशा से

चिन्ता और आत्म-ग्लानि में डुबकियाँ लेते पुरी ने निश्चय किया—भावुकता में बहने से काम नहीं चलेगा।...कनक ने मुझे ढूँढ़ लेने का कौन सा प्रयत्न किया है? मैं तो परिवार से बिछुड़ा, निराश्रय, भूखा, माँग कर पेट भरने के लिए मजबूर हो गया था। उसके पास तो सुविधा और साधनों की कमी नहीं थी? वह सब कुछ कर सकती थी। मैं उससे कहूँगा—तुम मुझे भूल गयी थीं। तुम ने मुझे खोजने के लिए क्या किया?

पुरी उर्मिला की समस्या से थोड़ी देर छुट्टी पाकर 'नाजिर' का काम करने ही बैठा था कि उसके लिए एक और समस्या उठ खड़ी हुई। अचानक ही उसके ताया जी बाबू राम ज्वाया प्रेस में आ पहुँचे। उनकी हालत बहुत दयनीय हो रही थी। पुरी उनकी खातिर करना चाहता था। परन्तु उर्मिला ऊपर बैठी थी, उन्हें ऊपर ले भी कैसे जाता? उसने उनसे झूठ बोला कि अभी मुझे मकान नहीं मिला है। बड़ी मुश्किल से पुरी ताया जी से बच पाया। उन्हें गाड़ी पर चढ़ा आया तो कुछ चैन हुआ, परन्तु साथ ही उनका उचित आतिथ्य न कर सकने का दुःख भी उसे सताने लगा।

पुरी ने निश्चय कर लिया कि अब उर्मिला को सम्मानित पत्नी बनाना ही होगा। शहर में उसका परिचय बहुत हो गया था, परन्तु वह किसी को अपने घर बुला नहीं सकता था।

एक दिन बड़े सवेरे ही पुरी की आँख खुल गई। उसने सिगरेट निकाली और जलाकर पीने लगा। वह उठकर दरवाजा खोलकर बाहर गया और थोड़ी देर चहल-कदमी करता रहा, फिर वापस आ गया। उसने दरवाजा उढ़का दिया और आकर फिर आँखें मूँद कर लेट गया। इतने में उर्मिला भी जाग गई। उस ने नींद भरे लहजे में पूछा, "आप इतने सवेरे-सवेरे उठ कर किस सोच में डूब गए? मुझे बताइये न, आपको क्या चिन्ता है, कल शाम भी गुम-सुम थे।"

पुरी ने धीरे से प्रश्न कर लिया, "उर्मि! हम आर्य समाज में जाकर या कोर्ट में जाकर सिविल मैरेज कर लें?"

उर्मिला ने प्यार से पूछा, "अभी कैसा व्याह होना बाकी है?"

पुरी ने सिगरेट की राख झाड़ते हुए कहा, "यह सूद जी बहुत परेशान किये हैं। और वैसे भी हम खुले-आम कहीं घूम नहीं पाते। सिविल मैरेज करने से तुम्हें कई अधिकार भी मिल जायेंगे।"

उर्मिला ने लाड़ से कहा, "मुझे आप पर पूरा भरोसा है, मुझे अधिकारों का क्या करना है?"

इतने में जीने के किवाड़ों पर खट खट हुयी। लगा कोई पुकार रहा है।

"यह कौन मरा इस समय आया है?" उर्मिला ने क्षोभ प्रकट किया।

उढ़के हुए ढीले किवाड़ों के खुलने की चर्राहट हुयी। एक स्त्री कमरे में आयी। उसने भीतर के कमरे में झाँका।

उर्मिला झट लिहाफ में छिप गयी। पुरी को तुरन्त पलँग से उठ जाना

पड़ा।

पुरी ने देखा, पहचाना और विस्मय से साँस रोके रह गया।

६

सन् ४७, नवम्बर का दूसरा सप्ताह। कनक लखनऊ स्टेशन पर गाड़ी से उतरी। नये अपरिचित स्थान में सतर्क और कुछ सहमी हुयी। पहली ही झलक में चेहरों और बोली में दिल्ली से अन्तर जान पड़ा। स्टेशन के बाहर कदम रखते ही परिचित दृश्य दिखायी दिया। स्टेशन के सामने विस्तृत फुलवाड़ियों के बीच के मैदान स्थानहीन शरणार्थी परिवारों से भरे हुए थे। दिल्ली से तीन सौ मील दूर आकर भी स्थान-हीनों का प्रवाह सब ओर दिखायी दे रहा था। उन्हीं लोगों की तरह वह भी शरण और स्थान खोजने आयी थी। उसे कौंसिलर्स रेजीडेंस में मिसेज पन्त का पता मालूम था। स्टेशन से टाँगा लेकर उन के यहाँ पहुँच गयी।

मिसेज पन्त ने आत्मीयता से कनक का स्वागत किया। बोलीं—"रात भर के सफर से थकी हो तो आराम करो, नहीं तो साढ़े दस बजे तक नहा-खा कर तैयार हो जाओ। हमारे साथ कौंसिल चली चलो। वहीं अवस्थी जी से मुलाकात हो जायेगी। तुम्हें सेशन भी दिखा देंगे।"

कनक विधान सभा भवन में दर्शकों की गैलरी में बैठी थी। बहुत भव्य गोलाकार सभा भवन। प्रत्येक मेम्बर के लिए अच्छी विस्तृत सोफा-कुर्सीनुमा जगह और सामने मेज जैसी डेस्क। भवन के केन्द्र में मंत्रि-मंडल और मंच पर सभा के प्रधान थे। अधिकांश मेम्बर खद्दर के श्वेत झक कपड़े और गांधी टोपियाँ पहने थे। कनक पन्द्रह-बीस मिनट उस अति सम्भ्रान्त, गम्भीर और बहुत प्रभावशाली वातावरण में स्तब्ध सी रही।

कनक सभा की कार्यवाही को ध्यान से सुनने का यत्न कर रही थी। सभा में प्रस्तुत विषय उसके लिए नितांत अपरिचित था। वहीं बैठे कुछ मेम्बरों की प्रतिक्रियायें देखकर कनक के मन से गंभीरता का आतंक कम होने लगा।

अभी सभा की कार्यवाही समाप्त भी नहीं हुई थी कि मिसेज पंत कनक को लेकर अवस्थी जी के पास चली गईं। अवस्थी जी ने कनक का स्वागत बड़े उल्लास से किया। उन्होंने कनक से दिल्ली की अवस्था आदि के विषय में पूछा, इधर-उधर की बातें कीं परन्तु काम की कोई बात नहीं की। कनक ने मन ही मन सोचा कि क्या वह यहाँ व्यर्थ हो आयी! पर अब आ चुकी थी तो फौरन लौट जाना भी मूर्खता थी। पिता जी क्या सोचते? उनके न चाहने पर भी उस ने स्वयें जिद्द की थी।

अवस्थी जी के दफतर में हुयी बातें सुनकर, कनक पर विधान और शासन के केन्द्र की गंभीरता और गुरुता का जो प्रभाव पड़ा था वह समाप्त हो गया। वह सोचने

लगी कि पुरी जी यहाँ आकर इन लोगों के व्यवहार से खिन्न हो कर चले गए थे। मैं किस भरोसे पर यहाँ आ गई। । उसने सोचा कि बिना अवस्थी जी की मदद के भी तो वह कोई काम कर सकती है। वह अस्पताल में नर्स बन जाने को भी मन ही मन तैयार हो गई।

दूसरे दिन मिसेज पंत कौंसिल हाल चली गईं, 'कनक उनके घर पर ही रह गई। मिसेज पंत कह गयी थीं कि अवस्थी जी से मिलना हो तो एक बजे तक असेम्बली हाल पहुँच जाना। परन्तु तारा की अवस्थी के पास जाने की बिल्कुल भी इच्छा नहीं थी।

कनक संध्या को भोजन के बाद कमरे में खाट पर लेटी सोच रही थी। वह अपने पाँव पर खड़े होने का दृढ़ निश्चय किये थी। उसने पुरी को खोजने के लिए प्रयत्न करने का निश्चय कर लिया था। परन्तु पाँच दिन में पुरी को अपना समाचार दे सकने और उस का समाचार पाने का कोई उपाय न कर सकी थी। उपाय केवल रेडियो द्वारा सूचना देना ही सूझा था। दिल्ली में पिता जी और दूसरे लोग भी अपने बिछुड़े हुए मित्रों और सम्बन्धियों को अपना पता देने का यही उपाय कर रहे थे। रेडियो पर समाचार देने से पिता जी भी सुन सकेंगे, इस संकोच को कब तक निबाहती रहे पर लखनऊ में रहने का निश्चय हुये बिना पता क्या दे? नैनीताल के अस्टोरिया होटल में पुरी के साथ बिताये कुछ घण्टों की स्मृति ने शरीर को ऊष्ण और कंटकित कर दिया। कनक तड़प उठी, आँसू बह चले। कनक को रोना अच्छा नहीं लगता था, परन्तु एकांत पाकर सिर को चादर में छिपा कर खूब रोई।

सप्ताह भर नौकरी द्वारा स्वावलम्बी बन सकने का कोई सहारा न पा सकने से कनक को घबराहट अनुभव होने लगी थी, परन्तु पिता को पत्र में यही लिखा था कि वह उत्तर प्रदेश विधान सभा की सदस्य श्रीमती पंत के साथ बहुत आराम से थी और पालियामेंट्री सेक्रेटरी श्री अवस्थी जी की सहायता से उसे शीघ्र नौकरी पाने की आशा थी। उसने जालंधर को भी पत्र लिखा था, परन्तु बहिन और जीजा को लिखे पत्र में उतना विश्वास प्रकट न कर सकी। उन्हें लिखा था—अभी तो कुछ नहीं बन सका। परन्तु मैं धैर्य से हूँ। कुछ समय लगना तो स्वाभाविक भी है। जीजा को पत्र ऐसे लिखा था मानो अपने-आप को समझा रही हो।

कनक सारा दिन मिसेज पंत के कमरे में बैठी-बैठी ऊब जाती। एक दिन वह कनक को घुमाने ले गयीं। रास्ते में कौंसिलर्स रेजीडेंस में रहने वाले एक और सदस्य ठाकुर मुरलीधर सिंह मिल गए। उन्होंने भी कनक को अध्यापिका की नौकरी दिला सकने का पक्का आश्वासन दिया।

सन्ध्या समय अवस्थी जी आये। मिसेज पंत भी कमरे में थीं। परन्तु कोई आवश्यक काम बताकर वहाँ से चली गयीं। अवस्थी जी ने कनक को कुछ रूपये देने चाहे परन्तु उसने लेने से इंकार कर दिया। अवस्थी जी गंभीर हो गए। जाते-जाते उन्होंने कनक से कहा कि कल तुम सूचना विभाग के डाइरेक्टर के नाम जर्नलिस्ट की जगह के लिए अप्लीकेशन लिख कर दे देना। उस दिन वह ज्यादा नहीं बैठे।

कनक कौंसिलर्स रेजीडेन्स के भोजनालय में खाना खाने गई तो वहाँ उसे एक महिला मिलीं। उन्हें सब गिरजा भाभी कहते थे। उन्होंने कनक से वहाँ आने का कारण पूछा। कनक ने बताया कि अवस्थी जी ने किसी नौकरी के लिए बुलवाया है। मुझसे एक दरखास्त देने को कहा था। मैंने दे दी है। गिरजा भाभी ने कहा कि इन्हें नौकरी दिलानी थी तो तुम्हें यहाँ बुलाने की क्या जरूरत थी। दरखास्त मँगवा लेते।

कनक को शंका का धक्का सा लगा।

गिरजा भाभी कहती गयीं, "बेटी, तुम किन लोगों के चक्कर में पड़ गयी हो। होशियारी से रहना, समझीं! तुम आजाद ख्याल खानदान में पली लगती हो। यह सब लोग निहायत कमीने हैं। अपनी बीवियों, लड़कियों को पर्दे में रखेंगे और दूसरों की बहू-बेटियों को खिलौना बना लेने को ललक पड़ते हैं। खबदार, अपनी आबरू अपने हाथ होती है। तुम यहाँ कुछ अन्देशा देखो तो एकदम लौट जाओ या हम से कहना। हम किसी शरीफ घर में तुम्हारे लिए इन्तजाम कर देंगी। सुनो, तुम अवस्थी से हमारा नाम लेना और कहना कि बतायें कहाँ जगह है, कहाँ दरखास्त दी है, मामला किस के हाथ में है।"

कनक को सूचना विभाग के डाइरेक्टर के यहाँ से इन्टरव्यू का बुलावा आया। कनक वहाँ पहुँची तो दो युवक पहले से ही बैठे थे। उनमें से एक शिव प्रसाद तिवारी 'आलोक' थे, और दूसरे श्री प्रीतम सिंह गिल। आलोक ने कनक से कुछ देर बात की फिर किसी काम से चला गया। गिल से बातचीत करने पर पता चला कि लाहौर में 'सितारा' पत्र में काम करता था और कनक एवं उसके पिता जी को जानता था। वह भी उर्दू पोस्ट के लिये इन्टरव्यू देने आया था। जब उसे पता चला कि कनक भी इसी पोस्ट के लिए आयी है तो उसने इन्टरव्यू देने से इंकार कर दिया। कनक के पूछने पर उसने बताया कि काम चलाने के लिए वह किसी अंग्रेजी डेली में प्रूफ-रीडर का काम कर ही रहा है।

बातों ही बातों में जयदेव पुरी की चर्चा भी चल पड़ी। गिल उसे भी जानता था। इन्टरव्यू समाप्त हो गया तो तीनों साथ ही चल पड़े। आलोक ने कनक को पहुँचाने की इच्छा प्रकट की परन्तु कनक ने अनिच्छा दिखाई। वह चला गया। गिल को भी कौंसिलर्स रेजीडेंस के रास्ते से उदयगंज जाना था। कनक और गिल साथ-साथ पैदल ही चल दिए। कनक ने गिल से पुरी के विषय में पूछा कि आजकल वह कहाँ है? परन्तु गिल को कुछ भी मालूम न था। कनक को पुरी के सम्बन्ध में बात करने का अवसर मिल गया।

कनक ने गिल से पूछा, "क्या आप कम्युनिस्ट पार्टी के मेम्बर हैं?"

गिल ने बताया कि वह पहले मेम्बर था परन्तु पार्टी वालों ने उसे बहिष्कृत कर दिया था। कनक ने कारण पूछा तो कुछ देर टालने के बाद उसने बताया कि सरस्वती नाम की लड़की से उसे प्रेम हो गया था। वह उसकी आर्थिक स्थिति से परिचित थी। अतएव अपने पाँव पर खड़ी हो सकने के लिए वह लाहौर में ट्रेनिंग कर रही थी। उसे केश, दाढ़ी, मूँछ से बहुत चिढ़ थी। सरस्वती के कहने पर उसने

केश और दाढ़ी, मूँछ से मुक्ति पा ली तो उसके चाचा ने उसे त्याग दिया और पार्टी ने भी बहिष्कृत कर दिया ।

कनक ने पार्टी वालों को इस बात के लिए कोसा । उसने गिल से सरस्वती के बारे में पूछा तो उसने बताया कि मई में दंगा हो जाने के कारण लाहौर में ट्रेनिंग कालेज बन्द हो गए । सरस्वती पिंडी चली गई । अगस्त में दंगे की खबर सुन वह पिंडी गया, परन्तु उसके पहुँचने से पहले ही सरस्वती का सारा परिवार समाप्त हो चुका था । वहाँ जाकर वह खुद फँस गया । बड़ी मुश्किल से लखनऊ पहुँचा और प्रूफ रीडरी का काम करने लगा ।

गिल कनक को पहुँचा कर वापस जाने लगा तो कनक ने फिर मिलने को कहा । उसने मिलने और आने की बात मान ली और अपना फोन नम्बर कनक को बता दिया, जिस पर फोन करके वह उससे दफतर में ही बात कर सकती थी ।

अब दोनों अक्सर मिलते और बातचीत करते-करते दूर-दूर तक घूम आते । एक दिन मिसेज पंत ने कनक को आकर खबर दी कि उसे नौकरी मिल गई है। कनक का मन उत्साह से भर गया ।

कनक पहले दिन दफतर में काम करके आई तो काफी समय कुर्सी पर बैठे रहने के कारण उसे थकान महसूस हो रही थी । वह बिना बिजली जलाये बैठी रही । इतने में अवस्थी जी आ गए । मिसेज पंत कमरे में नहीं थीं । कनक को अवस्थी जी के व्यवहार से आभास मिला कि वे किस तरह के आदमी हैं । वह कनक से खिलवाड़ करना चाहते थे । कनक क्रुद्ध हो गई। उसने यहाँ तक कह दिया कि अगर नौकरी दिलाने से आपका यह मतलब था तो मैं खुशी से दिल्ली वापस जाने को तैयार हूँ । इतने में मिसेज पंत भी आ गईं । वह स्थिति समझ गई थीं। उन्होंने कनक को ही फटकारा । उन्होंने कनक से अपने कमरे से चले जाने को भी कह दिया ।

कनक कुछ देर तो दीवार से लगी खड़ी रही फिर वह गिरजा भाभी के कमरे की ओर चली गई । गिरजा भाभी घबरा गईं । कनक की रुलाई रुक नहीं पा रही थी । बड़ी मुश्किल से उसने सारी बात बतायी। इस पर गिरजा भाभी को बड़ा क्रोध आया । उन्होंने कनक को समझाया कि वह अवस्थी तेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता ।

उस रात कनक गिरजा भाभी के कमरे में ही रही । उन्होंने कनक को आश्वासन दिया कि वह उसका सब इंतजाम करवा देंगी ।

उस संध्या कनक को भोजन का ख्याल ही नहीं आया । अपमान की उत्तेजना से उसे कम्बल में भी गरमी मालूम होती रही, सिर उड़ा सा जा रहा था । ऊँघती-जागती वह रात भर सोचती रही—अपमान की आशंका से स्त्री कितनी असहाय हो जाती है । पुरुष स्त्री का केवल निरादर करना चाहते हैं । पुरी को याद कर आँसू बहाती रही ।...हाय 'तुम' कहाँ हो ? क्या मुझे भूल गये ! ....वह रेडियो से समाचार क्यों नहीं सुन पाये ? मैं कर क्या सकती हूँ ? पिता जी पर बोझ बन कर तो नहीं रहूँगी ?...यदि उस समय मिसेज पंत के बजाय गिल आ जाता ? कनक ने

कल्पना में देखा, गिल के जबरदस्त हाथ पटाक-पटाक अवस्थी की कनपटियों पर जा पड़े। गिल कितना अच्छा है ! पर क्या मेरे सम्मान की रक्षा के लिए कोई दूसरा ही चाहिए ? क्या मैं स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकती ? ...भाभी ठीक कहती हैं...मेरा क्या बिगाड़ लिया उस ने। उसी का अपमान हुआ।...जाने वह कहाँ हैं ?...घबराने से लाभ क्या ? गिल को ही देखो, वह क्या नहीं सह रहा ? कल शायद मुलाकात हो...!

गिरजा भाभी ने कनक के लिए कौंसिलर्स रेजीडेंस के पास ही एक कायस्थ परिवार में प्रबन्ध करवा दिया। मुंशी शंकरशरण रिटायर्ड हेड मास्टर थे। कनक उनके घर एक कमरे में पचहत्तर रूपये में पेइंग गेस्ट की तरह रहने लगी थी।

कनक को सहसा स्थान बदल लेना पड़ा था, गिल को सूचना न दे सकी थी इसलिए उससे सम्पर्क टूट गया था। कनक को गिरजा भाभी का सहारा था, परन्तु लाहौर से पुराना, निस्संकोच और बराबरी का सम्बन्ध तो गिल से ही था। खुल कर बात करने का संतोष उसी से मिल सकता था। कनक ने दफतर से छुट्टी होने पर ८१३ नं० पर फोन करके गिल को अपना नया पता बता दिया।

कनक ने दफतर से लौट कर साड़ी बदल, कमीज-सलवार पहन ली। सड़क पर बिजली का प्रकाश हो गया था। वह खिड़की से सड़क पर टकटकी लगाये थी। गिल को अपने मकान की ओर आते देख कर वह तुरन्त नीचे उतर गयी। एक दूसरे को देख दोनों की आँखें चमक उठीं।

"आप तो इस तरह भूल गये ?" कनक ने उपालम्भ और मान से गिल की आँखों में देखा।

"वाह, मैं तो तब भी दिन में इस सड़क से गुजरा, कौंसिलर्स रेजीडेंस में १७ नम्बर के कमरे के सामने देख कर गया। मुझे क्या पता था कि आप ने जगह बदल ली है ? कल तो मिसेज पंत को देख कर पूछ भी लिया था। उस ने यू० पी० वालों की तरह रूखा सा जवाब दे दिया था—हमें क्या मालूम ? यहाँ से तो चली गयी है। फोन न आया होता तो मैं चिन्ता में पड़ जाता।"

कनक की आँखें फिर गिल की आँखों से मिल गयीं। मन संतोष से छलक आया, कोई उस की चिन्ता करने वाला तो है, वह निराश्रय नहीं है।

"यह क्या, कुछ भी गरम कपड़ा नहीं पहना आपने !" कनक ने चिंता से शिकायत की। स्वयं एक शाल लिये थी। वह नवम्बर के शुरू में लखनऊ आयी थी। गरम कोट दिल्ली में ही छोड़ कर केवल एक स्वेटर और शाल लेती आयी थी।

"ऐसी सर्दी ही कहाँ है ?" गिल ने टाल दिया।

"इस समय तो सर्दी है। आप के लिए एक स्वेटर बुन दूँगी। जीजा जी के लिए हर साल बुनती थी। आपको पता भी है ! यहाँ क्या-क्या झगड़े हो गये ?"

गिल के पूछने पर कनक ने सड़क पर चलते-चलते अवस्थी जी, मिसेज पंत और गिरजा भाभी से हुई बातें ब्यारेवार सुना दीं। पुरी के नौकरी के लिए लखनऊ आने और उस के अनुभव भी बता दिये। बात-बात में कुछ ऐसा प्रसंग आ गया कि

कनक ने गिल को पुरी से अपने प्रेम और पिता जी के विरोध की बात भी बता दी और कह गयी—"उनका पता मिल जाये तो मुझे ऐसी नौकरी से क्या लेना है। हम दोनों का विचार तो एक साथ किसी साहित्यिक पत्र में काम करने का था।"

"पुरी का पता तो जरूर मिल जाना चाहिए।" गिल ने भारी स्वर में कहा, "पर तुम चली जाओगी तो मेरे लिए फिर संसार सूना हो जायगा। हमारा परिचय आठ-दिन का ही सही पर कनक तुम से मिल कर ऐसा लगा है कि संसार उजड़ नहीं गया है। चली तो जाओगी, भुला भी दोगी?"

गिल ने निस्संकोच कनक का नाम लेकर और तुम कह कर आत्मीयता से बात कह दी थी। कनक को रोमांच हो आया।

"ऐसा क्यों कहते हैं?" कनक ने गिल की आँखों में देखा, "ऐसा कभी हो सकता है? मैंने इतनी जल्दी इतना भरोसा कभी किसी का नहीं किया। आप से कोई भी बात नहीं छिपायी। न जाने क्यों? सच कहती हूँ।"

कनक ने गिल की आँखों में फिर देखा और आँखें झुकाये ही बोली—"जीजा जी को मैं बहुत मानती हूँ, भाई से भी अधिक पर अपनी इतनी बातें तो मैंने उन से भी नहीं कहीं····। जाने कैसे इतनी जल्दी हम दोनों के स्वभाव मिल गये। हम सब लोग एक ही जगह रह सकते हैं। हमारा सम्पर्क क्यों टूटेगा? और अभी क्या पता है, जाने भाग्य में क्या है?" कनक की गर्दन लटक गयी।

गिल ने कनक को सांत्वना दी—"ऐसी अधीर मत हो। मैं भी कोशिश करूँगा। पुरी का पता अवश्य मिल जायेगा।"

कनक को दफतर का काम रुचिकर न लगता था परन्तु मुंशी जी के परिवार की नीरस संगति से दफतर का ही काम अच्छा था। जब समय मिलता वह और गिल घूमने निकल जाते।

शुक्रवार, २५ दिसम्बर को क्रिसमस की छुट्टी थी। कनक ने शनिवार की छुट्टी ले ली। वह माता-पिता से मिलना भी चाहती थी और उसे कुछ सामान भी लेना था। उसने जालंधर जीजा जी को चिट्ठी लिख दी कि वह बहन और नानो को लेकर दिल्ली आ जायें, वहीं सब मिल लेंगे।

कनक दिल्ली आयी। सब से मिलकर बहुत प्रसन्न हुई। पंडित जी ने उसके सामने ही उसकी शादी की बात की तो कनक ने कह दिया कि उसे तो संतोष है। ऐसी जरूरत ही क्या है।

कनक को रविवार की रात लौट जाना था। उस दिन पंडित जी ने सुबह ही पुरी को याद कर कहा—"भई जयदेव पुरी की कोई खबर नहीं मिली। तुम लोगों को कुछ कोशिश करनी चाहिए थी। बहुत टेलेंटेड और केपेबल नौजवान है। ही हैज ए पर्सनेल्टी! अन्दाज है, जरूर किसी अखबार में या साहित्यिक पत्र में काम कर रहा होगा। ऐसा आदमी छिप नहीं सकता। लेकिन कुछ कोशिश तो करनी चाहिए। वह तो अपना फर्ज है। पता लग जाये तो खतो-किताबत का सिलसिला तो रखना ही चाहिए। आई आलवेज लव्ड हिम! स्टोरी तो वण्डरफुल लिखता है।

मुझे ख्याल आया, उसकी कहानी की अगर फिल्म बन जाये !"

कनक को बहुत अच्छा लगा। यह पिता की ओर से कनक की इच्छा के लिए स्वीकृति दे देने का संकेत था। इससे पहले पंडित जी ने कभी पुरी की चर्चा नहीं की थी। कनक ने उड़ता-उड़ता अनुमान प्रकट किया—"हो सकता है, फिल्म लाइन में ही कोशिश कर रहे हों। उन्हें उसका ख्याल तो था।"

"तब तो एकदम चमक उठेगा। धीरे-धीरे सब लोगों का पता मिलता जा रहा है। लोग कहीं न कहीं पाँव जमाते जा रहे हैं। मुझे तो ख्याल आया था कि रेडियो में उसके लिए सन्देश दे दूँ, पर भई वह ऐसा छिपा रहने वाला शख्स तो नहीं है। ही इज ए ब्रिलियेंट यंग मैन। आज नहीं तो दस दिन में उसका नाम सामने आयेगा ही। कहीं न कहीं उसकी लिखी कहानी या मजमून नजर के सामने आ ही जायेगा।"

कनक सोमवार को लखनऊ लौट आई।

फिर एकाएक ही कनक को अपने खोखलेपन का आभास हुआ। जब वह और गिल आपस में बातचीत करते तो पुरी की चर्चा आ ही जाती। गिल को यह शिकायत थी कि जब वह स्वयं सरस्वती का नाम जबान पर नहीं लाता तो कनक पुरी को क्यों नहीं भुला पाती। पहले तो कनक ने उसे विश्वास दिलाया कि पुरी को न भुलाने के बावजूद वह उसे अपना सब कुछ समझती थी, परन्तु फिर एकाएक कनक के विचारों ने पलटा खाया और उसने गिल के सामने यह बात स्वीकार कर ली कि पुरी से उसके पति-पत्नी वाले सम्बन्ध थे, और वह उसे अपने मन से नहीं निकाल सकती थी। अपने प्रति गिल के मन में जो भावना फलती-फूलती रही थी उसके लिए भी उसने अपने-आपको दोषी ठहरा कर क्षमा चाही। इसके पश्चात् कनक दफ्तर में भी बड़ी उदास और खोयी-खोयी सी रहने लगी, और गिल से भी उसकी कभी-कभार एक आध बात हो जाती।

फरवरी के दूसरे सप्ताह शनिवार कनक दफतर से लौटी तो उसे डाक से आया एक भारी सा लिफाफा मिला। उसमें नैयर की चिट्ठी और 'नाजिर' के प्रकाशन का इश्तहार था। इश्तहार में ही पुरी का पता भी लिखा था। कनक को 'जयपुरी प्रधान सम्पादक' शब्दों की कल्पना से बहुत संतोष हो रहा था। रात उसने पुरी से मिल पाने की बेचैनी में काटी। वह सुबह ही गिल के मकान पर पुरी की खबर मिल जाने की सूचना देने पहुँची। गिल ने राय दी कि वह कल मेल से चली जाये। उसने उसे आश्वासन दिया कि वह उसे स्टेशन पहुँचा आयेगा और सोमवार को उसकी छुट्टी की अरजी भी दफतर में दे आयेगा। वैसे उसने कनक से कह दिया कि वह वहाँ अनावश्यक देर न करे।

•

कनक पौ फटते-फटते जालंधर स्टेशन पर पहुँच गई। उसे पुरी का पता मालूम था। उसने कमल प्रेस का बोर्ड देखकर रिक्शा रुकवा लिया और दरवाजा खट-

खटाया। रुल्दू ने नीचे का प्रेस का दरवाजा खोला।

रुल्दू सूटकेस और कम्बल उठा कर कनक के आगे-आगे जीने पर चढ़ गया था परन्तु ऊपर जाकर उसने एक ओर होकर कनक को मार्ग दिखा दिया। किवाड़ मुंदे देख कर कनक ने पुकारा—"किवाड़ खोलिये।" उत्तेजना के कारण स्वर बहुत ऊँचा न हो जाये इसलिए स्वर को जरा दबाये थी। मन उमग रहा था कि उसके शब्द पुरी के कानों में पड़ रहे हैं।

कनक जीना एक साँस में चढ़ गयी थी। हाँफ जाने के कारण हाथ सहारे के लिए किवाड़ पर रख दिये।

"कौन है ?" भीतर से पुरी का स्वर सुनाई दिया और कनक के हाथ के दबाव से किवाड़ भीतर की ओर खुल गये।

कनक कमरे में चली गयी। दिखाई दे सकने लायक प्रकाश हो गया था। बाँयें हाथ दूसरे कमरे का दरवाजा खुला हुआ था। पुरी पलँग से उठता दिखाई दिया।

कनक के मन में उल्लास और उत्साह की बिजली दौड़ रही थी। पुरी के पीछे पलँग पर लिहाफ में से एक और चेहरा झाँकता दिखाई दे गया—लड़की का झक गोरा, चकित सा चेहरा, अस्त-व्यस्त लटें, माथे पर फैली हुई बिंदी।

चेहरा तुरंत संकोच से लिहाफ में छिप गया।

पुरी उमग नहीं उठा था, स्तब्ध रह गया।

रुल्दू सूटकेस और उस पर तहाया हुआ कम्बल दरवाजे के समीप ही रख कर लौट गया था।

कनक के मन में भरी हुई बिजली समाप्त गयी। उसका शरीर निःशक्त हो गया। घुटने काँप गये।

"तुम ?" पुरी ने उसकी ओर बढ़ कर पूछा। शब्द जैसे उसके होठों से स्वयं निकल गये थे। आँखें फैली और पथराई हुई रह गईं।

कनक का सिर घूम गया, गर्दन झुक गयी। दोनों हाथों में मुख छिपा लिया।

पुरी सँभला। उसने कनक को बाँहों से पकड़ कर पलँग के सामने दरवाजे में से एक ओर हटा कर पूछा—"अभी आ रही हो, दिल्ली से आ रही हो ?"

कनक खड़ी न रह सकी। गिरती-गिरती सँभल कर पाँव पर बैठ गयी। पुरी को पा लेने की अपनी एक मात्र अभिलाषा की पूर्ति और उसके लिए संघर्ष में सफलता के इस परिणाम से वह बोल नहीं पा रही थी। उसका सिर उड़ा जा रहा था और साँस रुक रही थी।

पुरी ने कमरे का दरवाजा उढ़का दिया। कनक को पकड़ कर दूसरे दरवाजे की ओर ले गया। पुरी ने दीवार के साथ खड़ी चटाई बिछा कर उसे बैठा दिया। फिर उसके कान के समीप मुँह कर पुकारा—"कन्नी।"

कनक रो पड़ी।

पुरी स्वर दवाये कनक के कान में बरावर कह रहा था—"कन्नी ! कन्नी सुनो ! सुनो तो !"

कनक चेहरे को दोनों हाथों में घुटनों पर दवाये फफक-फफक कर रोती जा रही थी। रुलाई के वेग के कारण वह न सुन पा रही थी, न बोल पा रही थी। आँसुओं से भरी और हाथों से दबी आँखों में उसे लिहाफ से झाँकती लड़की का चकित गोरा चेहरा, अस्त-व्यस्त लटें, फैली हुई विन्दी दिखाई दे जाती थी और उस के रुलाई का एक और वेग आ जाता था।

पुरी कनक की बाँहों पकड़े अनुनय से अपनी कसमें दे देकर अपनी बात सुनने का आग्रह कर रहा था। कनक आधे घण्टे से पहले उस की बात सुन सकने के लिए सँभल नहीं सकी।

कनक ने अपने मुख पर से हाथ हटाये। उसकी आँखें रो-रो कर फूल गयी थीं। लाल आँखों में अब भी आँसू भरे थे—"यह क्या है ? क्या तमाशा है ?" उसने पुरी से पूछा।

"सब बताऊँगा।" तुम से कभी कुछ नहीं छिपाया। तुम धैर्य से सुनो। तुम ने मिलने के पहले क्षण में, मेरी बात सुने विना ही रोना आरम्भ कर दिया।" पुरी का स्वर भींगा हुआ था, ठोढ़ी काँप रही थी। उसने अपने आँसू छिपाने के लिए होंठ दाँत से काट लिये और मुख फेर लिया।

कनक ने पुरी का हाथ अपने हाथों में ले लिया—"बताओ, यह क्या है ?"

पुरी ने अपनी विह्वलता छिपाये रखने की कठिनाई प्रकट करने के लिए होठों को और अधिक काट कर पूछा—"विना जाने ही तुम्हें इस प्रकार रो देना चाहिये था ?"

"मैं क्या देख रही हूँ ?"

"मेरी बात तो सुननी चाहिए ?" पुरी ने रुँधे गले से कहा, "मेरी यातना भी तो जाननी चाहिए।"

"बताइये !" कनक का स्वर स्थिर और कुछ कोमल हो गया।

पुरी कुछ क्षण के लिये सिर झुकाये मौन रह गया और फिर रुँधे हुये गले को साफ कर वहुत धीमे स्वर में बोला—" तुम ने एक पलक में यह देखा है पर तुमने उसके पीछे प्राणों पर संकट, विवशता और यातना की जो दारुण परिस्थितियाँ रही हैं, वे नहीं देखी हैं, उनकी कल्पना भी नहीं कर सकतीं। तुम नहीं जानतीं, मैं मौत के मुँह से कैसे वच गया, मैं कितना विवश था और हूँ...।"

कनक घुटने पर ठोड़ी टिकाये पुरी के मुख पर टकटकी लगाये थी। पुरी उन वेधती आँखों से नजर बचाये, मस्तिष्क की सम्पूर्ण एकाग्रता से वहुत धीमे-धीमे वताने लगा।

"···तुमने मुझे इस अवस्था में देखा है परन्तु तुम नहीं जानतीं, यह अवस्था किन परिस्थितियों का परिणाम है। जव आदमी चोट से बेसुध हो गया हो, वह सहारे के लिए क्या करता है, किस जगह किस वस्तु पर हाथ डाल देता है, यह वह

स्वयं भी नहीं जानता। सुध आने पर वह हैरान रह जाता है और अधिक बेबस हो जाता है। अब तुम्हीं मुझे बचा सकती हो।"

पुरी साँस लेने के लिए रुका। कनक ने उसके चेहरे पर आँखें गड़ाये पूछ लिया—"यह कौन है? मामला क्या है?"

"कन्नी तुम से छिपाया ही क्या है? तुम्हें सभी कुछ बताया था।"

"क्या? कब बताया?"

"तुम्हें 'मरी' की घटना बतायी थी, जिस लड़की की ट्यूशन के लिए मैं मरी गया था।"

कनक को याद आया, दो वर्ष पूर्व जब पुरी और कनक परस्पर विश्वास प्रकट करने के लिए अपने रहस्यों की बातें एक-दूसरे को बताने लगे थे, पुरी ने मरी में उर्मिला के साथ हुआ अनुभव सुना कर बताया था कि वह जिस-तिस लड़की के प्रति आकर्षित नहीं हो सकता, केवल शारीरिक सौंदर्य उसे कभी आकर्षित नहीं कर सकता।

"वह यहाँ कैसे आ गयी?" कनक ने पूछा।

"उसका भाग्य!" पुरी ने गहरे साँस से उत्तर दिया, "मुझे ही यहाँ कौन ले आया? मस्तिष्क पर ऐसी चोट लगी है कि अब भी सन्देह हो जाता है, क्या पूरी तरह सुध में हूँ? इस प्रलय में क्या नहीं हो गया? नैनीताल से आ रहा था तो लुधियाना से पहले गाड़ी पर हमला हो गया। सहारनपुर, अम्बाला से गाड़ी में मुसलमान ही मुसलमान भर गये थे। खून और कत्ल के लिए पागल लोग किसी को भी नहीं छोड़ना चाहते थे। मुझ पर भी कितने बर्छे मारे गये…" पुरी ने कनक के शरीर की सिहरन देखी और कहता गया, "परन्तु डिब्बे के अन्त में होने के कारण पीछे हटते लोगों के नीचे दब गया था। आक्रमणकारियों के बर्छे-भाले मुझ पर गिरे हुए शरीरों को ही बेंध कर रह गये। लाशों के बोझ के नीचे से निकल पाना भी आसान नहीं था। सुध आने पर यही विश्वास नहीं हो पा रहा था कि जीवित हूँ। विश्वास था कि पागल नहीं हो गया हूँ।"

कनक ने सिहर कर पुरी की बाँह अपने हाथों में ले ली। पुरी बताता गया—"अँधेरे मार्ग में उसके गले पर छुरी रख कर उसकी जेब खाली कर ली गयी। भूख से व्याकुल होकर वह अपने कपड़े बेचने के लिए भटकता रहा। दो रोटी पा लेने के लिए उसने तंदूर पर जूठे बर्तन माँजे….।"

कनक की आँखों में फिर आँसू छलक आये। पुरी आर्द्र स्वर में, स्वप्न में खोया हुआ सा बोलता जा रहा था।

"पुरी भाई जी!" जीने से पुकार सुनाई दी।

पुरी तुरन्त उठ कर उस ओर गया।

रिखीराम कुछ सीढ़ियाँ नीचे ही खड़ा था। घर में उर्मिला के होने के कारण और रुल्दू से एक नई स्त्री के आने की खबर पाकर रिखीराम ने कुछ दूर से ही खाँस कर आवाज दे दी थी।

पुरी प्रेस के टाइम से कुछ मिनट पहले ही तैयार होकर प्रेस में पहुँच जाता था। लोगों के समय पर आने और तुरन्त काम आरम्भ कर देने पर नजर रखता था। उसे अभी तक रात के ही कपड़े पहने हुए देख कर रिखीराम ने पूछ लिया—"भाई जी, तबीयत तो ठीक है !"

"कुछ नहीं, जरा सिर में दरद है। ट्रेडल पर चरनसिंह की रसीद लगवा दो। सिलेंडर पर कोर्ट का फार्म है ही, मैं अभी आता हूँ।"

पुरी ने कनक के समीप लौट कर धीमे बात कर सकने के लिए झुक कर कहा—"तुम इतने लम्बे सफर से इतनी सर्दी में आयी हो। चाय····।"

कनक ने पुरी को बाँह से पकड़ कर चटाई पर बैठा लिया—"हो जायेगा, यह यहाँ कैसे पहुँच गयी।"

"पहले यह ही नहीं बता सका कि मैं इस मकान तक कैसे पहुँच गया।"

"तब भी, पहले बताओ यह कहाँ मिली ?"

"लम्बी और दर्द भरी कहानी है।" पुरी ने पीड़ा के स्वर में कहा, "इसका परिवार बेघरबार होकर यहाँ आ गया था। यह बेचारी लाहौर में विधवा हो गयी थी। इसके पिता का सब कुछ लुट गया है। हालत बहुत खराब थी। पिता को दिल के दौरे आ रहे थे। वैसी ही हालत माँ की थी। साथ छोटा लड़का था। मैंने कैंप में लौट कर देखा, वे लोग इसे छोड़ कर चले गये। इसने अपने दुपट्टे से गला घोंट कर प्राण दे देने चाहे पर बेसुध हो जाने के कारण हाथ शिथिल हो गये। हम दोनों भाग्य के मारे पागलों जैसी स्थिति में थे। यह बार-बार आत्म-हत्या का प्रयत्न कर रही थी। इसे सम्भालने के प्रयत्न में अपनी अवस्था भूल सका, नहीं तो शायद मैं स्वयं कुछ कर बैठता। उस समय इसके प्रति पुरानी घृणा और खिन्नता कैसे याद रखता। इसे विश्वास दिलाना आवश्यक था कि यह वंचिता, निराश्रय और अकेली नहीं है। उचित कहो या अनुचित उसका दिमाग बदलने के लिए अपने प्रेम का विश्वास दिलाया। एक जान को बचा सकने का प्रश्न था। मुझे इससे अधिक कुछ दिखाई नहीं दे रहा था पर इसे कभी तुम्हारा स्थान देने या पत्नी बनाने की बात नहीं सोची। तुम इसे चाहे जो कहो, परन्तु इसके होश सम्भालते इस चिन्ता में था कि अब इसे अपने पाँव पर खड़ी कर जल्दी मुक्ति पाऊँ। इसी दुविधा में नैयर से मिलते ही तुम्हें पत्र नहीं लिख सका।"

कनक सिर झुकाये सुन रही थी।

"एक मिनट ठहरो, मुझे चक्कर सा आ रहा है। तुम्हारे लिए चाय का प्रबंध करूँ···।" पुरी साथ के दरवाजे की साँकल बिना खटके हटाकर बाहर निकला।

उर्मिला दरवाजे के एक किवाड़ के साथ कान चिपकाये खड़ी थी। उसका चेहरा पुराने कागज की तरह पीला हो गया था। पुरी समझ गया उर्मिला कनक और उसकी बातें सुन रही थी।

पुरी चकरा गया। फिर भी उसने उर्मिला को बाँह से पकड़ कर दरवाजे से कुछ परे आड़ में, दीवार के साथ ले जाकर बहुत धीमे स्वर में कहा—"तुम्हें मैं सब बता दूँगा। तुम घबराओ मत !"

उर्मिला बाँह पकड़ने से खिच आयी थी परन्तु उसने पुरी की ओर आँख नहीं उठायी।

"चाय बनायी है ?" पुरी ने पूछा।

उर्मिला सुन्न खड़ी रही।

पुरी ने बगल की रसोई में भाँका। चौका ठंडा-सूना पड़ा था। पुरी को याद आया, सुबह से दूध भी वैसे ही पड़ा था। पुरी ने उर्मिला के कंधे पर हाथ रख कर दूसरे हाथ से उसकी ठोड़ी उठा कर बहुत कातर स्वर में आश्वासन दिया—"तुम घबराओ मत, मेरा विश्वास रखो। घबरा कर बात न बिगाड़ो। तुम अपने घर में हो। तुम उससे मेहमान की तरह ठीक से व्यवहार करो।"

उर्मिला ने पुरी से आँख नहीं मिलायी, सिर भुकाये ही रसोई में चली गयी।

पुरी ने जीने के निचले दरवाजे में जाकर रुल्दू को पुकारा। उसे एक रुपया देकर डबल रोटी, मक्खन की टिकिया और हलवाई के यहाँ से कुछ मीठा-नमकीन ले आने का आदेश दे दिया।

पुरी ने फिर कनक के समीप चटाई पर बैठ कर बात शुरू की—"कन्नी, इस समय, ऐसी परिस्थिति में आकर तुम्हें बहुत दुख हुआ परन्तु मेरी सहायता के लिए आ गयी हो। तुम मेरी स्थिति सम्भालने-सुलझाने में मदद दोगी। उसका दुर्भाग्य और असहाय परिस्थिति तुम्हारे सामने है। मैं पहले ही सूद जी से कोई प्रबन्ध कर देने के लिए अनुरोध कर चुका हूँ कि यह किसी भले घर में रह कर पढ़-लिख सके। वह हो जायगा, लेकिन इस समय उसे ऐसे सम्भालना होगा कि फिर पागल न बन जाये।"

कनक सिर भुकाये मौन थी। पुरी ने ढाबे की नौकरी में सूद जी से सामना हो जाने और प्रेस सम्भालने के लिए उनके सुझाव की बात बतायी। बीच में उसने अनुरोध कर दिया—"वह चाय बना कर ला रही है। तुम उसे बुला लेना।" और फिर बोला, "सुविधा से साँस लेने का अवसर पाते ही मैंने तुम्हें नैनीताल के पते पर पत्र लिखा था। उत्तर न आने पर दूसरा पत्र लिखा। उसका भी उत्तर नहीं आया तो रजिस्ट्री करा कर पत्र भेजा...।"

पुरी ने चटाई से उठ कर समीप की आलमारी से एक रजिस्टर्ड लिफाफा निकाल कर कनक के सामने प्रत्यक्ष प्रमाण रख दिया—"यह लौट आया तो मैं बहुत निराश हो गया। फिर अचानक कचहरी में नैयर दिखायी दे गया। उसने बताया, पिता जी दिल्ली गेट के पास हैं, पर पता ठीक से नहीं बताया। उसके पुराने रुख के ख्याल से अधिक पूछना अच्छा नहीं लगा।"

"जीजा जी से क्या बातचीत हुयी थी ?" कनक पूछ रही थी कि पीछे

आहट सुनकर पुरी ने उधर देखा। एक थाली में चाय का सामान दिखायी दिया। उर्मिला स्वयं आड़ में रह कर थाली बढ़ाये खड़ी थी।

"आओ आओ, तुम भी आओ।" पुरी ने थाली लेते हुए पुकारा।

कनक के मुख से शब्द न निकल सका। गर्दन झुकाये खड़ी रही।

पुरी थाली चटाई पर रख कर उर्मिला को समझाकर भीतर खींच लाया। दोनों एक दूसरी से मुँह मोड़े, गर्दन झुकाये बैठी थीं। पुरी ने बाजार से आया नाश्ता बीच में रख कर दोनों से खाने का अनुरोध किया। एक और प्याला लाकर तीन प्यालों में चाय बना दी।

कनक और उर्मिला दोनों गर्दन झुकाये सुन्न बैठी थीं। सम्भवतः कनक की कल्पना में घर में आते ही देखा दृश्य और उर्मिला के कान में किवाड़ की ओट से सुने शब्द गूँज रहे थे। पुरी ने भी गर्दन झुकाये किसी का नाम न लेकर, किसी की ओर आँख न उठा कर कई बार अनुरोध किया—"खाओ न, कुछ खाओ, चाय पिओ!···ठंडी हो जायेगी!"

पुरी ने बर्फी का एक टुकड़ा मुँह में डाल लिया था। परिस्थिति की परेशानी में उसे लग रहा था, मिट्टी का ढेला मुँह में डाल लिया हो और चाय पीने लगा। कनक कुछ न खाकर चाय के घूँट ले रही थी। उर्मिला निश्चल बैठी रही।

पुरी सोच नहीं पा रहा था कि क्या करे, क्या कहे! वह दोनों के सामने अपराधी था। प्याला समाप्त करने तक उसका विचार बदला—दोनों एक-दूसरी को सह नहीं सकतीं। उन्हें व्यवहार तो ढंग से करना चाहिए, क्या तमाशा कर रही हैं। जो कुछ कहना है, मुझसे कहें!

इतने में ही सूद जी आ गये। उन्होंने तीनों को बैठे देख लिया। वह नीचे उतर गये। उन्होंने पुरी को नीचे बुलाया। उसे डाँटा कि वह क्या तमाशा कर रहा है? पुरी ने अपनी सफाई पेश करनी चाही, परन्तु सूद जी आज फैसला कर देना चाहते थे। वे उस को साथ लेकर फिर ऊपर गए।

उन्होंने कनक से बात करके फैसला सुना दिया कि वे पंडित जी को पत्र लिखेंगे। तब तक कनक अपनी बहन के घर ही रहे, चाहे तो पुरी वहाँ जाकर मिल सकता है।

कनक का फैसला करके उन्होंने उर्मिला की बात भी निबटा दी। उन्होंने जड़वत निश्चल बैठी उर्मिला के पास जाकर अपना फैसला सुना दिया—"तुम्हारा यहाँ रहने का क्या मतलब? तुम नर्स का काम सीखो। तुम्हें अस्पताल की सिस्टर आकर ले जायेंगी।"

पुरी सूद जी के साथ प्रेस के दरवाजे तक गया। सूद जी कुछ न बोले। गली में प्रेस के सामने टाँगा खड़ा था। सूद जी टाँगे पर बैठ कर चले गये। पुरी को ऊपर घर में कनक और उर्मिला के सामने जाने का साहस न हुआ। प्रेस के दफतर में बैठ कर सोचने लगा, क्या करे? वह ऐसा घिर गया था कि कोई राह नहीं रही थी। उर्मिला कहाँ जायगी? उस बेचारी का क्या दोष है? उस बेचारी को धोखा क्यों दूँ?···

कनक को भी धोखा नहीं दे सकता। मैं दोनों के सामने अपराधी हूँ।'

पुरी डेढ़ बजे तक प्रेस में ही बैठा रहा। वह नाना चिन्ताओं और कल्पनाओं में डूबा जा रहा था। ऊपर जाने का साहस नहीं कर पा रहा था। एकाएक अस्पताल से दायी उर्मिला को बुलाने आ गयी तो पुरी को ऊपर जाना ही पड़ा।

उर्मिला अब भी वैसे ही सिर झुकाये जड़वत निर्वाक बैठी थी। पुरी ने उससे अस्पताल जाने की बात कही। उसने पुरी से प्रार्थना की कि वह उसे घर से न निकाले। परन्तु पुरी ने केवल इतना कहा कि अभी जल्दी से नीचे आ जाओ, मैं अस्पताल में आकर बात करूँगा, और नीचे चला गया।

उर्मिला पूरी शक्ति लगा कर उठी। उसने एक जोड़ा धुले हुए कपड़े लिए। सिर झुकाए दाई के पीछे जीना उतर कर बाहर जाने लगी, पुरी ने उससे कुछ कहना चाहा, परन्तु वह उसकी बात सुने बिना ही बाहर चली गई। पुरी ने उसे जाते देखा। अब उसके लिए भी अपने आँसू रोक लेना मुश्किल हो गया था।

थोड़ी देर बाद पुरी ऊपर गया। कनक को यह जानकर सान्त्वना मिली कि उर्मिला चली गई है। दोनों ने एक-दूसरे को अपनी आप-बीती सुनाई।

कनक ने रात को बहन के घर रहना ही उचित समझा। पुरी को उसे पहुँचाने जाना पड़ा। बहन और जीजा ने कनक से उन्हें खबर न देने की शिकायत की। दोनों कनक के वहाँ आने का प्रयोजन जानते थे। परन्तु उन्होंने उससे इस बारे में कुछ नहीं कहा।

सूद जी ने पुरी और कनक का मामला हाथ में लिया तो अपने स्वभाव और अभ्यास के अनुसार उसे शीघ्र ही निबटा देना चाहा। पुरी से नैयर का पता पाकर मिलने के लिए बुलवाया। कांता और नैयर ने पंडित जी को जो पत्र दिल्ली लिखा, उसमें वांछनीय-अवांछनीय कोई चर्चा न की। कनक को शीघ्र से शीघ्र सफल संतुष्ट गृहस्थ का आशीर्वाद देने के लिए प्रबन्ध का सुझाव दिया।

पुरी ने अपनी भूलों को, विक्षिप्त जीवन के कारण अव्यवस्थित मानसिक अवस्था का परिणाम समझ लिया। जीवन को भविष्य में नियमित और संयमित रूप में निबाह सकने के लिए अपनी भूलों का उत्तरदायित्व निबाहना भी उसने नैतिक कर्तव्य माना। कनक को दिल्ली जाने के लिए गाड़ी पर चढ़ा कर वह प्रेस लौटने के पहले अस्पताल गया।

उर्मिला सन्देश पाकर बराम्दे में आयी। पुरी को देख कर उसने गर्दन झुका ली।

पुरी ने उसे न घबराने और पूरी सहायता का आश्वासन देकर उसकी आवश्यकता की बात पूछी।

उर्मिला ने गर्दन नहीं उठायी। कुछ बोली नहीं, लौट गयी।

पुरी तीन दिन बाद फिर अस्पताल गया तो मालूम हुआ कि उर्मिला को नर्सिंग की ट्रेनिंग के लिए लुधियाना भेज दिया गया था।

७

गांधी जी के निधन के पश्चात कई अप्रत्याशित समस्यायें उठ खड़ी हुयी थीं। होम सेक्रेटरी मिस्टर रावत बहुत ही व्यस्त रहे। उन्होंने तारा के विषय में कुछ सोचने का आश्वासन दिया था पर उन्हें अपनी ही सुध नहीं रही थी। एक संध्या बहुत थक कर और ऊब कर क्लब चले गये थे। क्लब में अगरवाला साहब से भेंट हो गयी थी। रावत को याद आया, अगरवाला को दिया निमन्त्रण भी स्थगित रह गया था।

होम सेक्रेटरी के निमन्त्रण पर तारा को क्लब में साथ ले जाना मिसेज अगरवाला को कतई पसन्द नहीं था। उनकी आशंका ठीक ही निकली। रावत, डे साहब और नरोत्तम सभी को तारा ही दिखायी दे रही थी। रावत ने उसे बाँह से पकड़ कर अपने साथ की कुर्सी पर बैठा लिया था। ऐसे बात कर रहा था कि बरसों का परिचय हो।...इतना भी नहीं सोचा, उसकी बेटी की उमर की है। श्यामा तो उसे यों ही मुँह लगाये है।

क्लब में मिसेज अगरवाला को अपनी नौकर तारा के मुकाबिले अपनी उपेक्षा बहुत खली। मन के क्रोध के कारण मालकिन तारा से अधिक नहीं बोलना चाहती थीं पर बोलना आवश्यक हो जाता था। कभी-कभी खिन्नता में ताने दे बैठतीं। तारा ने उनके घर में जो आश्वासन और सन्तोष अनुभव किया था, वह धीरे-धीरे उठ गया।

नौकरी के लिए तारा का प्रार्थना-पत्र जा चुका था। इस काम में उसकी सहायता नरोत्तम ने ही की थी। नरोत्तम ने तारा को रावत साहब के बारे में सब कुछ बता दिया। उसने बताया कि रावत साहब अपनी लड़की नीलम का विवाह उससे करना चाहते हैं, पिताजी भी तैयार हैं, परन्तु उसे स्वयं नीलम जैसी छिछोरी लड़की पसन्द नहीं है। रावत साहब ही तारा की नौकरी लगवा सकते थे।

तारा को नौकरी मिलने से पहले ही नरोत्तम शादनगर आर्डनेंस फैक्टरी में 'वर्क्स मैनेजर, अन्डर ट्रेनिंग' बन गया। अब तारा के लिए नरोत्तम की उपस्थिति का सहारा भी जाता रहा, वह सुबह ही चला जाता और शाम को साढ़े छः बजे तक आता था। मिसेज अगरवाला की चिड़चिड़ाहट बढ़ती ही जा रही थी।

एक संध्या मालकिन कहीं गई हुई थीं। साहब ने तारा से क्लब चलने को कहा। तारा ने इन्कार किया परन्तु साहब के बहुत कहने पर उसे जाना ही पड़ा। क्लब में रावत साहब मिले और उन्होंने बताया कि परसों ग्यारह बजे दिन में तारा को रिहैबिलीटेशन के डाइरेक्टर से मिलने जाना है।

तारा और साहब सवा दस बजे के लगभग क्लब से लौटे। मालकिन का मुँह फूला हुआ था। साहब के अपने कमरे में जाते ही उन्होंने तारा को उल्टी-सीधी बातें सुनाईं और उससे कहा कि उसकी यहाँ जरूरत नहीं, वह कल कैम्प वापस चली जाए।

रात अगरवाला साहब और मिसेज अगरवाला में भी उसी विषय पर काफी झड़प हुई।

सुबह तारा ने जाना कि स्थिति आशंकाजनक नहीं है तो वह बच्चों को नाश्ता कराने के लिए डाइनिंग-रूम में चली गई। वहीं उसे नरोत्तम मिल गया। नरोत्तम को भी कुछ हलका सा आभास था। उसने तारा से पूछताछ की तो तारा ने सारी बात बताई और कहा कि वह आज जा रही है। वह अपमान नहीं सह सकती। नरोत्तम ने कहा कि ऐसा कैसे हो सकता है ? देखें मम्मी कैसे आपको निकालती हैं ? उसने फैक्टरी में फोन कर उस दिन के लिए छुट्टी ले ली।

अगरवाला साहब ने तारा को बुलाया और उसे समझा दिया कि चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है। जब अगरवाला साहब को पता चला कि नरोत्तम फैक्टरी नहीं गया है तो उन्होंने उसे बुलाकर कह दिया कि कल से मिस तारा को नौकरी पर जाना है, उसे किसी चीज की जरूरत हो तो बाजार जाकर दिलवा दो। बिल मुझे दे देना।

मालकिन अपने कमरे से नीचे नहीं उतरीं। बाकी सब काम साधारण रूप से चल रहा था।

दूसरे दिन से तारा दफतर जाने लगी। उसे कोई जगह नहीं मिल रही थी। अतः उसे 'ए-ए' कोठी में ही रहना पड़ा। मालकिन मौका मिलने पर उसे एक-आध ताना सुना ही देतीं। परन्तु वह यह भी नहीं चाहती थीं कि तारा चली जाए। वह रहती थी तो सुबह-शाम बच्चों को देख लेती थी। अब उसे तनख्वाह देने का भी सवाल नहीं था। काम भी हो जाता था। परन्तु तारा के लिए वहाँ रहना दूभर हो रहा था। नरोत्तम जगह ढूँढ़ने में तारा के साथ हर इतवार को जाता परन्तु अकेली लड़की को कहीं भी कैसे रखा जा सकता था।

तारा के लिए उचित जगह की चिन्ता में नरोत्तम को नर्स मिस लीला मर्सी सोरल की याद आ गयी। आठ मास पूर्व पुत्तन बहुत बीमार हो गया था, उस समय दो नर्सें बारह-बारह घण्टे की ड्युटी पर रहती थीं। मर्सी सोरल नरोत्तम को समझदार और भली लगी थी। मर्सी दरियागंज में फ्लैट लेकर एक दूसरी नर्स के साथ रहती थी। उसके यहाँ फोन भी था। मर्सी से नरोत्तम के परिचय का एक और सूत्र भी था। मर्सी कामरेड मास्टर निरंजन चड्ढा की प्रेमिका थी। जब नरोत्तम दिल्ली के यूरोपियन स्कूल में पढ़ता था, निरंजन उस स्कूल में मास्टर था। मार्च के दूसरे सप्ताह में कई जगह कम्युनिस्टों की गिरफतारी का समाचार पढ़कर ही नरोत्तम को मर्सी का ध्यान आया था। नरोत्तम ने मर्सी से बात की।

मिस लीला मर्सी सोरल दरियागंज की नयी बस्ती में दूसरी मंजिल पर छोटे फ़्लैट में रहती थी। फ्लैट में जीने के साथ छोटा बैठकनुमा कमरा, दो और कमरे, रसोई, गुसलखाना और बराम्दा था। मर्सी के साथ साझे में रहने वाली, नर्स सिल्वा भी प्राइवेट नर्स थी। सिल्वा विवाह करके मैसूर चली गयी थी। मर्सी ढाई बरस से उसी फ्लैट में थी। पुराना किराया चालीस रूपये महीना ही दे रही थी। मर्सी को शिकमी

किरायेदारों की कमी न थी। रात भर कहीं ड्यूटी करके आये और दिन में नींद भी नसीब न हो सके, किसी अकेले मर्द को भी कमरा नहीं दे सकती थी।

मर्सी ने नरोत्तम की सिफारिश पर तारा को कमरा देना तो स्वीकार कर लिया परन्तु स्पष्ट शब्दों में अपनी शर्तें भी बता दीं। तारा अपने किसी सम्बन्धी या सहेली को साथ नहीं रख सकेगी। बराम्दे या कमरे में अँगीठी रख कर अलग भोजन नहीं पका सकेगी। यदि रसोई में साझा कर लेगी तो सौ रूपये में दोनों समय खाना, चाय, नाश्ता, कमरा, नौकरानी सब कुछ हो जायेगा। यदि भोजन पृथक या बाहर करेगी तो कमरे का किराया मय बिजली के पैंतीस रूपये देना होगा। फोन का व्यवहार करेगी तो खर्चा देना होगा। खर्चा प्रति मास सात तारीख तक पेशगी दे देना होगा। तारा को इस से अधिक अनुकूल स्थान और कहाँ मिलता ? पुराने अभ्यास के अनुसार यह खर्च उसे अधिक लगा पर रूपया बचाने का प्रयोजन क्या था ? उस ने सब स्वीकार कर लिया।

पहले तो चार-पाँच दिन तक दोनों एक-दूसरे को समझने का प्रयत्न करती रहीं, व्यवहार में भी दोनों 'फार्मल' रहीं, परन्तु फिर दोनों में सहेलीपना जम गया।

तारा को अपना इतिहास गढ़ना पड़ा। वह आप बीती सुनाकर अपमानित नहीं होना चाहती थी। उसने बताया कि वह बचपन से बहन और जीजा के साथ रहती थी। उसने एम० ए० पास करके ट्यूटर या गवर्नेस का काम करना आरम्भ कर दिया था। अब उसके बहन और जीजा लाहौर से बम्बई चले गए हैं। और उसको दिल्ली में नौकरी मिल गई है।

मर्सी के बारे में तारा को एक बात नहीं मालूम थी। उसका रहस्य भी कुछ दिन बाद खुल गया। हुआ यह कि शाम के समय मर्सी घर में नहीं थी। एक जवान उससे मिलने आया। तारा पहचान गई, वह लाहौर के स्टडी-सर्किल में आने वाले भाई हीरासिंह थे, वैसे अब वह हीरालाल बन गए थे। उनसे तारा को पार्टी के कुछ अन्य लोगों के विषय में पता चल गया। जुबेदा इण्डियन सिटीजन बन गई थी। उसने प्रद्युम्न से विवाह कर लिया था।

इतने में मर्सी आ गई। लाल तारा को समझा रहा था—"...बूर्जुआ डैमोक्रेटिक रवोल्यूशन का हमारे देश में प्रश्न ही नहीं है। यहाँ पोलिटिकल पावर फ्युडल या जमीन्दार क्लास के हाथ में नहीं है, कैपिटलिस्टों के हाथ में है। हमारा टास्क लैंडलेस पेजेन्टरी और वर्किंग क्लास (बेजमीन के किसानों व मजदूरों) को लेकर पोलिटिकल पावर पर कब्जा करना है।"

"पोलिटिकल पावर लेने का तरीका क्या है ?" तारा ने पूछा, "सर्वसाधारण लोग न आप का सिद्धान्त समझते हैं, न आप के प्रोग्राम को। हमारी गली में सिर्फ दो आदमी जानते थे कि कम्यूनिज्म क्या है, भाई और डाक्टर प्रभुदयाल। वे दोनों आप के प्रोग्राम के विरुद्ध थे। यहाँ हमारे दफतर में असिस्टेंट दरबारीलाल कहता है—कम्युनिज्म में सिर्फ उन्हीं लोगों को रोटी मिलती है जिनके हाथों में छाले पड़े हों। यहाँ क्लब में दो बार बातें सुनी हैं। वे लोग कम्यूनिज्म का मतलब समझते हैं, सब

कुछ लूट लेना और ध्वंस कर देना। वे आप से क्या सहानुभूति रखेंगे ?"

"इस इग्नोरेंस (अज्ञान) के खिलाफ हमें फाइट करना है।" लाल ने कहा।

"आपने तो अज्ञान दूर करने से पहले ही क्रान्ति शुरू कर दी है। शासन की शक्ति से लोगों को कम्युनिज्म समझाइयेगा ? लेकिन लोग आप को शासन-शक्ति लेने ही नहीं देगें। जिस जनता की भलाई के लिए कम्युनिज्म लाना चाहते हैं, वही आप का विरोध करेगी। वे आप का नहीं, गांधी जी के वारिसों का साथ देंगे। अंग्रेजों के खिलाफ लोगों को विद्रोह की बात जँचती थी, अपनी सरकार के खिलाफ बगावत उन्हें नहीं जँचेगी। आप को वैधानिक रास्ते पर चलना चाहिए था। कांग्रेस को लोगों ने कितने बरस में पहचाना ? आप एक ही झटके में सब कुछ कर लेना चाहते हैं। बंगाल और मद्रास में आप की पार्टी इल्लीगल हो गयी है, क्या कर लिया आपने ?"

"तो फिर बिड़ला-टाटा का राज हो जाने दें ?" मर्सी बोल पड़ी।

"तुम्हारा ख्याल है, हम लोग समय की प्रतीक्षा करते रहें और कैपिटलिस्ट लोग अपना कब्जा मजबूत कर लें।" लाल ने भी कहा।

तारा ने उत्तर दिया—"सर्वसाधारण का हित कैपिटलिस्टों के पक्ष में है या आप के पक्ष में ? जनवरी तक आप लोग नारे लगा रहे थे—गांधी जी राष्ट्रपिता हैं, नेहरू के हाथ मजबूत करो। आज नेहरू कैपिटलिस्टों के एजेंट हो गये। लोग चकरायेंगे या नहीं ?"

"नेहरू बिलकुल कैपिटलिस्टों के हाथ में हैं।" मर्सी ने कहा।

"अच्छा मैं तुम्हें पूरा पार्टी प्रोग्राम पढ़ने के लिए दूँगा। फिर बात करेंगे।"

मर्सी ने तारा से पार्टी की सहायता के लिए प्रति माह बीस रूपया देने को कहा। तारा ने कह दिया कि वह वादा नहीं कर सकती।

हीरालाल से बातें करने के बाद तारा की कल्पना बार-बार असद की ओर चली जाती। वह सोचती कि अगर वह असद की बात मान कर उससे विवाह कर लेती तो आज कहीं दूर पश्चिम में होती। परन्तु उसने इन बातों को अपने ध्यान से हटाया। व्यर्थ कल्पनाओं में दिमाग़ परेशान करने से लाभ नहीं था।

मर्सी को तारा पर विश्वास हो गया था। धीरे-धीरे मर्सी ने बहुत सी रहस्य और चिन्ता की बातें बता दीं—सन १९४४ में निरंजन लाल चड्ढा के कंधे की हड्डी टूट गयी थी। वह दो मास तक अस्पताल में था। अस्पताल में मर्सी का परिचय चड्ढा से हुआ। परिचय गहरा होता गया। उन में प्रणय हो गया। मर्सी ने बताया—चड्ढा बुद्धिमान और निःस्वार्थ है। पहले यूरोपियन स्कूल में पढ़ाता था। १९३२ में क्रांतिकारी षड़यंत्र में पकड़ा गया था। तीन बरस जेल में रहा। जेल से छूट कर ट्यूशनें करके निर्वाह कर रहा था। कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य और महत्वपूर्ण नेता था। मर्सी और चड्ढा का विचार था, अप्रैल में सिविल मैरेज कर लेंगे पर चड्ढा को मार्च से ही फरार हो जाना पड़ा था। उसने पत्र में लिखा था कि मिलने की कोशिश करेगा।

हीरालाल के आने के तीसरे दिन संध्या समय तारा दफतर से लौटी तो जुबेदा आई बैठी थी। मर्सी घर में नहीं थी। शायद उसे चड्ढा का सन्देश मिल गया

था और वह उससे मिलने गई थी। क्योंकि इसी आशा में वह उस दिन ड्यूटी पर भी नहीं गयी थी। जुबेदा तारा का विगत इतिहास जानती थी। उसने तारा से पूछताछ की। तारा ने उसे अपनी विवाह से आगे की सारी बातें बता दीं। उसने जुबेदा से कहा कि यहाँ लोग उसे कुआँरी ही समझते हैं, उसने किसी को कुछ बताया भी नहीं है। जुबेदा ने भी इसे उचित समझा। जुबेदा ने बताया कि उसने अपना नाम जमुना रख लिया है। पहले तो सब ठीक था, परन्तु प्रद्युम्न के फरार हो जाने से बड़ी मुश्किल हो गई है। वह अब नौकरी की तलाश कर रही है।

मर्सी और तारा अब परस्पर काफी खुल गई थीं। दोनों अपने-अपने काम के अनुभव सुनाया करतीं। कभी घर में मिलकर तरह-तरह की खाने की चीजें बनातीं, कभी गप्प हाँका करतीं। नरोत्तम भी प्रायः शनिवार की सन्ध्या या रविवार की सुबह आया करता था।

नौकरी आरम्भ करने के तीन-चार दिन बाद दफतर में तारा को पूरण देई की लड़की सीता दिखाई दी। पता चला कि वह वहाँ क्लर्क थी। तारा ने उसे सुनाने को एक कहानी गढ़ ली। उसने बताया कि उसके ससुराल में आग लग गयी थी। किसी ने उसकी खबर नहीं ली। वह छत से कूद कर गली में गई। वहाँ से एक हिन्दू परिवार में पहुँच गयी। उन्हीं के साथ वह दिल्ली भी पहुँची। यहाँ आकर उसे नौकरी मिल गई। तब से यहीं रह रही है।

तारा और सीता की भेंट का दफतर में अधिक अवसर नहीं था। दोनों में तीन ग्रेड का अन्तर था। तारा दफतर का काम समझने लगी तो वहाँ देर तक ठहरने लगी। पहले तो सुपरिन्टेन्डेन्ट मिश्रा तारा को अनुभवहीन समझ कर यूँ ही काम करने को दे देते थे। परन्तु तारा का काम देखकर उन्हें अपनी राय बदलनी पड़ी। और अब तारा को काम भी अधिक सौंपा जाने लगा।

जून के आरम्भ में सुपरिन्टेन्डेन्ट मिश्रा जी ने तारा पुरी को उसकी एपाइंटमेंट फाइल पूरी करने के लिए बुलाया। तारा को लाहौर में एम० ए० की विद्यार्थी होने और दिल्ली में समाज सेवा का काम करते रहने के कारण सरकारी विज्ञप्ति के अनुसार सरकारी नौकरी के लिए एम० ए० पास मान लिया गया था। मिश्रा जी ने उससे औपचारिक रूप से प्रश्न किया—"आप किसी राजनीतिक दल की सदस्या तो नहीं है? राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ या कम्युनिस्ट पार्टी से सम्बन्ध या सहानुभूति तो नहीं है? ऐसे लोगों को सर्विस में नहीं लिया जा सकता।"

"जी नहीं।" तारा ने उत्तर दे दिया। कानपुर, कलकत्ता और बम्बई की हड़तालों के समाचारों के पश्चात ऐसा उत्तर देने में उसे कोई संकोच नहीं था। व्यर्थ उत्पात खड़ा करने वाले लोगों से वह सहानुभूति और सम्बन्ध स्वीकार करना नहीं चाहती थी।

१९४८ जून से शरणार्थियों की सहायता का काम नये मंत्री को सौंप दिया गया था। नये मंत्री सक्सेना साहब की नीति दूसरी थी। अब शरणार्थियों को बसाने का यत्न किया जा रहा था। शरणार्थियों को व्यवसाय आरम्भ करने के लिए छोटे-

छोटे कर्जे दिये जा रहे थे। अब शरणार्थियों की सहायता का अर्थ उनकी भोजन-वस्त्र और औषधि की आवश्यकतायें पूरी कर देना नहीं बल्कि उनके लिए निरन्तर सहायता की आवश्यकता को समाप्त कर देने के लिए उन्हें कारोबार से लगा कर बसा देने का यत्न करना था। नये मंत्री ने नोटिस दे दिया था कि छः मास में कैम्प समाप्त कर दिये जायेंगे, किसी को मुफ़्त आश्रय और राशन नहीं दिया जायगा। सरकार के सामने देश से अन्न-संकट और बेकारी दूर करने की बहुत बड़ी समस्या है, ऐसी अवस्था में मंत्री शरणार्थियों की सहायता के लिए दस लाख रुपया प्रतिदिन का व्यय जारी रखने के लिए तैयार न थे।

शरणार्थियों के विरुद्ध कई प्रकार की शिकायतें आ रही थीं। शरणार्थियों ने रोजगार आरम्भ कर दिये हैं, अच्छा भला कमाने लगे हैं। फिर भी मुफ्त राशन ले रहे हैं, मुफ्त खाने की आदत पड़ गयी है, काम करना ही नहीं चाहते। अच्छा भला पहनते हैं, अच्छा भला खाते हैं, पर मुफ्त राशन और जगह नहीं छोड़ते। पार्टीशन क्या हो गया, यह तो जमाई बन बैठे। इन्हें 'ओखले' और 'नीलोखेड़ी' में रहने की जगह और काम दिया जा रहा है, लेकिन दिल्ली छोड़ कर नहीं जाना चाहते। दूसरे लोग अपने पेट पर पट्टी बाँध कर इनके लिए दस लाख रोजाना कहाँ तक देते रहें? तारा को बहुत बुरा लगता था, वह भी शरणार्थी थी। पौने तीन सौ वेतन पा रही थी। इतने वेतन की उसने कभी कल्पना नहीं की थी। वह यह वेतन छोड़ कर सवा सौ, डेढ़ सौ पर भी काम करने के लिए तैयार थी। तारा का व्यय इससे अधिक नहीं था।

दफतर में कई काम बढ़ गये थे—शरणार्थियों को मकान बना सकने के लिए जमीन की व्यवस्था, गृह-उद्योगों के लिए साधन और सुविधा देना। नये मंत्री महोदय का आदेश था—खर्च न बढ़ाने के लिए दफ्तर में और अधिक आदमी न लिये जायें। फिर से काम का बँटवारा हुआ। सुपरिन्टेन्डेन्ट के सुझाव पर असिस्टेंट डाइरेक्टर साहब ने स्त्रियों को कर्ज और गृह-उद्योगों की सहायता के प्रार्थना-पत्रों पर कार्रवाई का काम तारा को सौंप दिया। उसे अलग कमरा दे दिया गया। उसके लिए एक चपरासी भी नियत हो गया।

सीता के लिए खराब रिपोर्ट दे दी गई थी। सेक्शन असिस्टेंट का कहना था कि वह काम ठीक नहीं कर पाती है। उसके विरुद्ध उच्छृङ्खलता आदि की भी शिकायतें थीं। उसे बरखास्त कर दिये जाने की आशंका थी।

मिश्रा जी ने तारा से सीता को समझाने को कहा। सीता को तारा के कमरे में भेज दिया गया। बात करने पर तारा को लगा कि सीता उच्छृङ्खल और मुँहजोर हो गई है। उसने सीता के ढँग जानकर उसे समझाना चाहा तो सीता ने उसे ही दो-चार इधर-उधर की सुना दीं। तारा को ग्लानि अनुभव हुई कि उसने व्यर्थ ही अपनापन जताकर अपमान कराया। उसे प्रतीत हुआ कि सीता को सम्भालने में वह स्वयं झगड़े में पड़ सकती थी। उसने सोचा, जो करती है वह करे, मुझे क्या लेना।

सन् '४९ का फरवरी था। वसन्त की हवायें नये पल्लवों को जगह देने के लिए वृक्षों से पुराने पत्ते झाड़ रही थीं। देहली की चौड़ी सुथरी सड़कों पर सूखे पत्तों के वगोले उड़ने लगे थे। जाड़े के पाँव उखड़ रहे थे। जाड़ा जाते-जाते अन्तिम चुटकियाँ ले रहा था। युवतियों ने 'अब जाड़ा कहाँ है !' कह सकने का अवसर पाते ही, उनकी सुघड़ता को छिपाये रखने वाले ढीले-भारी गरम कोटों को अगले जाड़े तक के लिए खूँटियों पर 'फाँसी' दे दी थी। उन्हें हवा से रोंगटे खड़े हो जाने की भी चिन्ता न थी।

सरकार के सहायता और पुनर्वास विभाग में अस्थायी नौकरी पाये लोगों के रोंगटे दूसरे कारण से भी खड़े हो रहे थे। विभाग के मंत्री ने आदेश दे दिया था कि ३१ मार्च की संध्या से दिल्ली में मुफ़्त राशन पाने वाले चालीस हजार शरणार्थियों से भरे किंग्सवे कैम्प, और दस लाख शरणार्थियों से भरे देश भर के सभी कैम्पों को समाप्त कर दिया जायगा। मंत्री ने सरकार की ओर से यह भी आश्वासन दिया था कि सरकार रोजी चाहने वाले लोगों के लिए किसी न किसी प्रकार के धन्धे, बसने के लिए मकान या भूमि, व्यवसाय आरम्भ कर सकने के लिए कुछ कर्ज का भी प्रबन्ध करेगी परन्तु ३१ मार्च की संध्या के बाद मुफ़्त राशन किसी को नहीं दिया जायेगा। सितम्बर '४८ में शरणार्थियों को छः मास की अवधि में मार्च ३१ से पूर्व अन्यत्र प्रबन्ध कर लेने के लिए कह दिया गया था।

अनेक शरणार्थियों को सहायता और पुनर्वास विभाग में नौकरी मिल गयी थी। उन लोगों को आशंका थी कि कैम्पों की समाप्ति, विभाग की समाप्ति का भी आरम्भ है। वे क्या करेंगे, कहाँ जायेंगे ? कैम्पों के दस लाख शरणार्थियों के अतिरिक्त दूसरे शरणार्थी भी मंत्री की इस आज्ञा का विरोध कर रहे थे। राज्य सरकारों को आशंका थी कि केन्द्र द्वारा यह उत्तरदायित्व छोड़ देने पर, उन के राज्यों के कैम्पों में बैठे शरणार्थियों का बोझ स्वयं उन पर ही पड़ जायेगा। बेरोजगार, बेघरबार और दुस्साहसी हो चुके भूख से व्याकुल लोग जाने क्या उत्पात खड़ा कर दें। राज्य सरकारें भी यह आज्ञा स्थगित कर दिये जाने के पक्ष में थीं।

सहायता और पुनर्वास विभाग के मंत्री की आज्ञा के विरुद्ध आन्दोलन चल रहा था। इस विरोध में अनेक प्रतिनिधि-मण्डल प्रधान-मंत्री के पास पहुँच रहे थे। सहायता और पुनर्वास विभाग के दफ्तर में इस परिस्थिति के सम्बन्ध में अनुमान और बहस चलती रहती थी।

तीन सौ मासिक की नौकरी हाथ से चली जाने की आशंका के बावजूद तारा विभाग के मंत्री की आज्ञा पूर्ण करने के प्रयत्न में साथ देना चाहती थी। दफ्तर में अस्थायी नौकरी पाये बहुत से लोग उस से असन्तुष्ट थे। छः मास पूर्व ही ३१ मार्च को कैम्प समाप्त कर दिये जाने का नोटिस दे दिया गया था, पर बहुत कम लोगों ने कैम्प छोड़े थे। सर्व साधारण को विश्वास था कि कैम्पों की समाप्ति की तिथि स्थगित कर दी जायेगी। मार्च के पहले सप्ताह में शरणार्थियों ने कैम्प तोड़े जाने की तिथि स्थगित करने के लिए बहुत बड़ा प्रदर्शन भी किया था, पर सहायता और पुन-

र्वास विभाग के मंत्री अपने निर्णय में परिवर्तन करने के लिए तैयार नहीं थे।

शरणार्थियों पर सरकार के अत्याचार के विरोध में, कैम्प की एक पुरानी काँग्रेसी समाज-सेविका महिला ने अनशन आरम्भ कर दिया था। महिला की माँग थी कि कैम्पों को भंग करने की तिथि स्थगित की जाये और कैम्पों को भंग करने से पूर्व कैम्पों में काम करने वाले सैकड़ों कर्मचारियों और इस विभाग में नौकरी पाये लोगों को अन्यत्र नौकरियाँ दी जायें। महिला के अनशन से मन्त्री की आज्ञा के विरोध के आन्दोलन को उत्तेजना मिली। कैम्प और नगर में भी सरकारी आज्ञा के विरोध में अनेक प्रदर्शन होने लगे। मंत्री को बर्खास्त कर दिये जाने के लिए नारे भी लगाये जाने लगे।

आन्दोलन के कारण 'सहायता और पुनर्वास' विभाग के दफ्तर में भी बहुत उत्तेजना थी। अफवाह थी कि प्रधानमंत्री विभाग के मंत्री के हठ से असन्तुष्ट थे। उन्होंने मंत्री से अपने निर्णय पर मानवीय दृष्टिकोण से पुन: विचार करने का अनुरोध किया था। मंत्री ने विभाग के डायरेक्टर को आदेश दे दिया था कि कैम्प कमाण्डर को बुला कर नोटिस दे दिया जाये कि यदि कैम्प में अनशन और प्रदर्शन सात दिन में समाप्त नहीं हो जायेंगे तो कैम्प के सभी कर्मचारियों को बर्खास्त करके कैम्प को सैनिक नियंत्रण में दे दिया जायेगा। भविष्य की नीति के संबंध में उस के बाद ही विचार किया जायेगा।

दफ्तर के कुछ लोगों का प्रस्ताव था कि मंत्री महोदय की सेवा में दफ्तर के सब अस्थायी और शरणार्थी कर्मचारियों के हस्ताक्षरों से एक आवेदन-पत्र अनशन-कारी महिला की माँगों के समर्थन में भेजा जाये। कुछ क्लर्कों ने तारा से भी आवे-दन-पत्र पर हस्ताक्षर करने का अनुरोध किया। तारा ने इन्कार कर दिया। वे उससे तर्क करने लगे।

तारा ने उत्तर दिया—"इस विभाग और कैम्प के बनाये जाने का प्रयोजन शरणार्थियों की समस्या को हल कर देना था। यह विभाग और कैम्प स्थायी तो होने नहीं चाहिए थे। यदि कैम्प और यह विभाग समस्या को हल नहीं कर सके तो यह सर्वथा उचित है कि सरकार दूसरा उपाय करे। मुझे यह बिलकुल स्वीकार नहीं है कि मैं अपनी नौकरी बनाये रखने के लिए विभाग के कायम रखे जाने की माँग करूँ या कोई मेरी नौकरी बनाये रखने के लिए अनशन करे....।"

तारा के इस तर्क से आवेदन-पत्र पर हस्ताक्षर करने से डरने वाले कई दूसरे लोगों को भी बल मिल गया। बहुत से लोग दफ्तर के कर्मचारियों में फूट डाल देने के कारण तारा से असन्तुष्ट भी हो गये। हवेलीराम तारा को डायरेक्टर और अफ-सरों का खुशामदी कह कर उसके विरुद्ध नारे लगाने के लिए तैयार हो गया। नरेन्द्र चावला ने बड़ी कठिनाई से ऐसे लोगों को संयम रखने के लिए समझा कर रोका। उसे विश्वास था कि तारा तर्क से मान जायेगी।

तीसरे दिन नरेन्द्र ने 'नाजिर' का अंक लाकर तारा को पढ़ने के लिए दिया। 'नाजिर' में कैम्पों के तोड़ दिये जाने के विरोध में अनेक तर्कों सहित बहुत दर्द भरी

अपील थी। तारा को उर्दू लिपि पढ़ने का कम अभ्यास था, केवल छपा हुआ ही पढ़ सकती थी। उस ने स्कूल में उर्दू नहीं पढ़ी थी। शौक में पिता जी से पढ़ ली थी। तारा को लेख की शैली बहुत अच्छी और परिचित लगी। लेख के तर्क से सहमत न होने पर भी पूरा पढ़ लिया। अन्त में लेखक का नाम हस्ताक्षरों के रूप में देखकर शरीर सिहर उठा—जय पुरी।

तारा कुछ पल सन्नाटे में रह गयी। याद आ या—हीरा सिंह ने कहा था, पुरी जालन्धर से अखबार निकाल रहा है। पत्र के प्रकाशन का स्थान देखने के लिए पलट कर अन्तिम पृष्ठ के नीचे देखा—संचालक सम्पादक—'जयपुरी', सम्पादक—'कनक पुरी'। माईहीरां गेट, जालंधर।

तारा का सिर घूम गया और याद आ गया—भाई के साथ ग्वालमण्डी गयी थी। भाई ने कनक को सन्देश देने के लिए उसके घर भेजा था।...वह रेस्तोरां से असद के साथ बाहर निकली तो भाई को कितना क्रोध आ गया था।...टाँगे में भाई से तकरार और दूसरे दिन भाई से अपमान पाकर सिर फोड़ लेने की घटनायें बिजली की कौंध से सामने पड़े अखबार के पृष्ठ पर नाच गयीं। याद आया—उसके विवाह के बाद भाई के नैनीताल जाने की तैयारी थी।

तारा ने कल्पना की—भाई मेरे बन्नी हाते में जल कर मर जाने के समाचार से मुक्ति अनुभव कर नैनीताल गये होंगे। वहाँ कनक से विवाह कर लिया। उस में परिवार को कोई विरोध नहीं हुआ? याद आया—...वह तो लड़की के ब्राह्मण होने की बात से घबरा गयी थी पर भाई तो प्रगतिशील थे, ऐसे विरोध की क्या परवाह करते? तारा ने अखबार को लपेट कर एक ओर रख दिया।

तारा का मन विक्षिप्त हो गया था। काम में ध्यान लगना सम्भव नहीं रहा। चार बज रहे थे। वह मेज पर कोहनियाँ टिकाये एक कागज पर नीली पेंसिल से गोल-गोल वृत्त बनाती और उन्हें काटती जा रही थी। आहट सुन कर सिर उठा कर देखा, नरेन्द्र चावला एक फाइल लिये कमरे में आया।

तारा ने 'नाजिर' उठा कर उसकी ओर बढ़ा दिया।

नरेन्द्र के चेहरे पर एक विचित्र सी मुस्कान थी—"बहिन जी, अच्छा ही हुआ हम लोगों ने आवेदन-पत्र नहीं भेजा। कैम्प कमाण्डर ने अनशन बिना किसी शर्त के समाप्त करवा दिया है।"

८

पंडित गिरधारीलालने स्वीकार कर लिया था कि कनक और पुरी 'सिविल मैरिज' कर सकते हैं। पुरी ने विवाह के लिए दिल्ली जाने से पहले ही सोनवाँ से पिता-माता और भाई-बहिनों को जालन्धर बुलवा लिया था। प्रेस के ऊपर दो कमरे, रसोई-

गुसलखाना और आँगन था। जगह अधिक नहीं थी पर उस ने निश्चय कर लिया था कि अपने आराम के लिए परिवार की उपेक्षा नहीं करेगा। उसने कनक से निःसंकोच कह दिया, लाहौर में तो हम लोग एक ही कोठरी में निर्वाह कर रहे थे।

पुरी सूद जी के सहयोग से काँग्रेस के अधिक सम्पर्क में आता जा रहा था। उसने कमीज-पतलून छोड़, खादी की पोशाक, खद्दर का कुर्त्ता-पाजामा अपना लिया था। कनक आग्रह से नित्य उसके कपड़े बदलवा देती थी। पुरी का कुर्त्ता-पाजामा वह नित्य स्वयं धोकर प्रेस भी कर देती थी।

कमल प्रेस के बोर्ड के ऊपर 'नाजिर' का भी एक बोर्ड लग गया था। प्रेस के दफ़तर के कोने में एक दूसरी मेज रख ली गयी थी। सम्पादकीय, टिप्पणियाँ और दो कालम का विशेष रोचक लेख 'हाट बाज़ार में' पुरी स्वयं लिखता था। विदेशी शासन के समय की धाँधली मँहगाई और कुनबा-परस्ती समाप्त नहीं हो गयी थी बल्कि सात-आठ मास के काँग्रेसी शासन में जनता को और भी बढ़ गयी जान पड़ती थी। विदेशी शासन में जनता भय से चुपचाप सब कुछ सहे जा रही थी। अब लोग उस तरह सहने के लिए तैयार नहीं थे। जनता की जबानें खुल गयी थीं। लोग आक्रोश में कहने लगते—...इस से तो अँग्रेज का राज अच्छा था। अब तो धाँधली और घूसखोरी के लिए किसी का डर ही नहीं रहा। गांधी जी नये शासन के 'पॅम्प एंड शो एंड एक्स्ट्रावैगेंस' (वैभव प्रदर्शन और व्यर्थ व्यय) की आलोचना कर आदर्शों की चेतावनी देते रहते थे। अब उनकी आलोचना का भी भय नहीं रहा था। पुरी ऐसे प्रसंगों पर तीखे विद्रूप लिखता था।

अब पुरी को प्रेस के काम की ओर ध्यान देने के लिए बहुत कम समय रहता था। मास्टर जी को खाली बैठकर समय काटना कठिन था। पुरी ने उन्हें प्रेस का हिसाब-किताब रखने का काम सौंप दिया। 'नाजिर' का मसविदा पुरी और कनक जी-तोड़ मेहनत करके तैयार कर लेते। कनक की कोई तनखाह तो बँधी नहीं थी, परन्तु उसे 'नाजिर' का तैयार अंक देखकर संतोष होता और पुरी को अपना वेतन मिल जाता।

भागवंती बेटे की तरह पढ़ी-लिखी बहू का आदर करती थी। परन्तु बेटे को व्याह के समय सेहरा बाँधे घोड़ी पर सवार देखने की साध न पूरी होने का कारण वह बहू को ही समझती थी।

पंडित गिरधारी लाल जी की अवस्था और परिस्थितियों के कारण पिता के घर से कनक की विदाई बहुत संक्षिप्त हुई थी। वैसा ही संक्षिप्त स्वागत ससुराल में भी हुआ था।

पुरी ने ऊषा को कालेज में दाखिल करवा दिया। भागवंती को बेटी पर बहू का प्रभाव अच्छा नहीं लगता था, परन्तु ऊषा ने कनक को आदर्श मान लिया था। भागवंती बहू को तो कुछ न कहती पर अकेले में ऊषा पर बिगड़ उठती थी।

कनक ने बहुत साध और संघर्ष से मनोवांछित फल पाया था। तुष्टि के उन्माद से वह प्यार और काम में डूब गयी। कनक प्रेस के काम में रुचि का आकर्षण न होने पर भी कर्तव्य के उत्साह से आधी-आधी रात तक निवाह रही थी।

तीन मास में 'नाजिर' की जनप्रियता बढ़कर उसकी साख जमने लगी थी। पुरी के पास प्रेस का काम देखने के लिए समय न था। उसने रिखीराम की पच्चीस रूपये तनखाह बढ़ा दी और प्रेस का सारा बोझ उस पर डाल दिया।

मास्टर जी हिसाब में मीन-मेख बहुत निकाला करते थे। एक बार रिखीराम से उनकी झड़प हो गई। उनको यह गर्व था कि उनका बेटा बेईमानी और रिश्वत के विरोध में 'नाजिर' में लेख लिखा करता था। उन्होंने पुरी से रिखीराम की शिकायत की तो उसने कह दिया कि सब चलता है, अगर आपको बुरा लगे तो आप घर बैठ कर आराम करिए।

उसे अपने व्यवहार से स्वयं खिन्नता हुई। उसने सन्ध्या को खाना खाते समय पिता जी से बात की। उसने कहा कि बरसों से चली आती बेईमानी को वह अकेला कैसे दूर कर सकता है।

मास्टर जी रिश्वत और बेईमानी जरा भी नहीं सह सकते थे। उन्हें घर बैठना ही अधिक रुचा। उन्होंने गरीबी में भी अपना ईमान और इज्जत निबाही थी। उन्हें प्रेस के काम में अपमान अनुभव हुआ, अतः उन्होंने अपना हाथ खींच लिया था। परन्तु खाली बैठना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। वह स्वयं अपनी ही कमाई पर निर्वाह करना चाहते थे। पुरी ने सूद जी से कहकर उन्हें एक कोल-डिपो अलाट करवा दिया। मास्टर जी के लिए दो-तीन सौ रूपये माहवार ही पृथक आमदनी का सहारा हो गया था।

कोल डिपो, प्रेस से दो मील दूर निगारखां में था। मास्टर जी ने वहीं मकान ले लिया और पत्नी, हरि एवं ऊषा को लेकर चले गये। उनके जाते ही कनक के लिए रसोई की समस्या सामने आ गई। पुरी का कहना था कि नौकर मिलने तक वे लोग ढाबे से मँगाकर खायेंगे।

सास-ससुर और परिवार के चले जाने से घर में सूनापन भर गया। कनक और पुरी को प्रेम के उन्माद में आत्मविस्मृत हो जाने का अवसर मिल गया। कनक घर का सभी काम सम्भालती पर उसे कुछ भी भारी न जान पड़ता। परन्तु कभी-कभी पुरी का अकारण चिड़चिड़ा उठना उसे खल जाता था। कनक को अपमान अनुभव होता, वह संयम का निश्चय कर लेती। कुछ समय बाद पुरी का आवेग छलक जाता। परन्तु थोड़े समय बाद कनक को लगा कि पुरी के स्नेह के आवेग का उच्छ्वास क्षीण होने लगा था। प्रेम के व्यवहार में से उमंग मिटती जा रही थी।

'नाजिर' की नीति गांधीवादी और काँग्रेसी-समाजवादी विचारधारा के समर्थन की थी। पुरी और कनक के अतिरिक्त 'नाजिर' के दफ्तर और कमल प्रेस में कोई भी 'नाजिर' की नीति का समर्थक नहीं था। 'नाजिर' का मैनेजर मनमोहन सिद्धू, अधिकांश पंजाबियों की तरह, विभाजन के परिणाम देखकर काँग्रेस-विरोधी हो गया था। काँग्रेस ने विभाजन को स्वीकार कर लिया था इसलिए सिद्धू के विचार में काँग्रेस ही विभाजन के परिणामों और हिन्दुओं के हनन के लिए उत्तरदायी थी। वह 'राष्ट्रीय-सेवक संघ' को गैर कानूनी करार दे दिये जाने से भी असन्तुष्ट था। रिखीराम और सिलेंडर का मशीनमैन भी काँग्रेस-विरोधी थे। उनके काँग्रेस-विरोध

का कारण यह था कि काँग्रेस मुस्लिम-विरोधी नहीं थी परन्तु वे सब 'नाजिर' के या पुरी के नौकर थे। उन्हें जो कुछ लिख कर दे दिया जाता, वे छाप देते थे। पुरी कभी-कभी उलझन भी अनुभव करता था। वह चाहता था कि ठीक समझ रखने वाले सहायक हों तो काम अधिक सरलता से हो। दफ्तर में वातावरण भी ठीक रहे।

पुरी ने मनमोहन सिद्धू को 'नाजिर' में मैनेजर रख लिया था। उसने पत्र की बिक्री बढ़ाकर और विज्ञापन बटोरकर अपनी उपयोगिता शीघ्र ही प्रमाणित कर दी। परन्तु सम्पादक का कार्य अकेले कनक को ही करना पड़ता था। नवम्बर से उसकी तबियत खराब रहने लगी। परन्तु मई से तो उसकी अवस्था प्रेस में बैठने योग्य न रही। उस अवस्था में भी उससे जो हो पाता कर देती।

पुरी और कनक ने अपने विवाह की सूचना प्रीतम सिंह गिल को भी दी थी। उसे 'नाजिर' नियमित रूप से भेज देते थे। उसके दो-चार लेख भी उसमें छप चुके थे। पुरी गिल को सहायक रूप में बुलाना चाहता था। परन्तु उसे आशंका थी कि वह उसका प्रस्ताव स्वीकार करेगा या नहीं। न जाने वह पुरी के नीचे रह कर और बिना पत्र में अपना नाम दिए काम करना चाहे या न चाहे। पुरी पत्र में से संचालक और सम्पादक के स्थान से अपना और कनक का नाम नहीं हटाना चाहता था। उसने कनक से गिल को पत्र लिखवाया। उसमें उसने अपनेपन से स्पष्ट बातें लिखवा दीं। उसने लिखवाया कि अगर तुम अपनी योग्यता का वेतन चाहो तो हम कहाँ दे सकेंगे?

गिल जालंधर आ गया। पुरी और कनक विक्रमपुरा मुहल्ले में एक मकान अलाट करा कर रहने लगे। गिल प्रेस के ऊपर के कमरे में रहने लगा।

रिखीराम प्रेस का लगभग पूरा काम सम्भाले हुए था। प्रेस के लिए काम की कमी नहीं थी। गिल ने 'नाजिर' का काम सम्भाल लिया। अब कनक दफ्तर नहीं आती थी। पुरी का काम सुविधा से चल रहा था, तभी एक दिन भारी विपत्ति आ पड़ी।

रिखीराम तीन दिन से बिना कोई खबर दिए ही प्रेस नहीं आ रहा था। पुरी प्रेस ही में था। एकाएक अदालत के आदमी आए। अदालत से मस्कूरियान कमल प्रेस से तेरह हजार एक सौ तीस रुपया वसूल करने आए थे। पुरी घबरा गया। उसने जल्दी से सूद जी को भी फोन कर दिया। वह परेशान इसलिए और भी अधिक हो रहा था क्योंकि उसने प्रेस के लिए कभी रुपया उधार लिया ही न था।

हुआ यह था कि रिखीराम प्रेस से चिट्ठी लिखने वाले कागजों पर 'फार कमल प्रेस—मैनेजर' की मोहर लगा कर ले गया था और स्वयं उसने मैनेजर बनकर अच्छरूराम से रुपया उधार ले लिया था। अच्छरूराम से उसका षडयंत्र था। रिखीराम के कहने पर ही अच्छरूराम ने अदालत में शिकायत की, रिखीराम ने उसका दावा अदालत में मंजूर कर लिया था।

अब छुटकारा तभी हो सकता था अगर अदालत में यह सिद्ध कर दिया जाये कि रिखीराम कमल प्रेस का मैनेजर है ही नहीं। वास्तव में भी वह मैनेजर न था।

नैयर पुरी की ओर से पैरवी कर रहा था। बड़ी मुश्किल से पुरी को इस मुसीबत से छुटकारा मिला। पुरी, कनक और गिल कानून के दाँवपेंच से परेशान हो गए थे।

मुकद्दमे का निर्णय दिसम्बर १९४९ में हुआ। कमल प्रेस रिखीराम के कर्ज के उत्तरदायित्व से छूट गया, परन्तु पुरी के लिए अदालत का झगड़ा तब भी समाप्त न हुआ। रिखीराम पर चोरी से कमल प्रेस की मोहर और कागज के प्रयोग का फौजदारी मामला चल रहा था।

नैयर ने पुरी को परामर्श दिया, तुम इस मामले में मत पड़ो। पुलिस जो चाहे करे, रिखीराम को दण्ड दिलाने के प्रयत्न में तुम्हें परेशानी होगी। पन्द्रह-बीस पेशियाँ भुगतनी पड़ जायेंगी, अपना समय नष्ट करोगे। जिरह में अपनी मिट्टी पलीत करवाओगे।

रिखीराम को सजा हो जाने से पुलिस को क्या लाभ होगा? अलबत्ता पुलिस उसे बचाने में सहायता देकर कुछ पा सकती है।

रिखीराम के विरुद्ध पर्याप्त गवाही न होने के कारण उसे सजा नहीं हुई। वह बरी हो गया। मुकद्दमे के परिणाम में पुरी का भी नुकसान नहीं रहा। मुकद्दमा समाप्त हो जाने पर सूद जी ने भविष्य में झगड़े की सम्भावना मिटा देने के लिए कमल प्रेस को पुरी के नाम अलाट करवा दिया।

९

भारत सरकार के सहायता और पुनर्वास विभाग के दफ़्तर के लोगों की आशंकायें व्यर्थ ही रहीं। ३१ मार्च की संध्या, कैम्प समाप्त कर दिये गये थे पर विभाग का दफतर वैसे ही चालू रहा। कैम्पों में मुफ्त राशन नहीं दिया जा रहा था परन्तु किंग्सवे कैम्प उजड़ नहीं गया। लोग जहाँ स्थान पाये हुए थे, वहाँ ही बने रहे। अधिकांश लोग कोई न कोई रोजगार कर ही रहे थे। अब शेष भी कुछ न कुछ जोड़-तोड़ कर निर्वाह करने लगे। दिल्ली में ऐसे नये-नये रोजगार दिखायी देने लगे थे जो पहले कभी नहीं सुने गये थे। जहाँ कहीं दस आदमियों के आने-जाने की सम्भावना थी, एक दुकान बन गयी थी। गलियों में छोटे-छोटे ठेले लेकर कपड़े पर इस्त्री कर देने वाले घूमने लगे थे। लोगों को बिजली, टेलीफोन और पानी के बिल चुकाने के लिए जाने की जरूरत नहीं रही। शरणार्थी द्वार पर आकर बिल ले जाते थे और रसीद पहुँचा देते थे। इस तवालत से बचने की फीस थी दो आने। बाजार में जो चीज खरीदिये, कागज की थैली में मिलने लगी थी। दिल्ली में आ बसे पंजाबी 'शरणार्थी' पुकारे जाने पर आपत्ति करते थे, उन्होंने अपने लिए 'पुरुषार्थी' नाम रख लिया था।

पुनर्वास विभाग के दफ़्तर में काम घटने के बजाय बढ़ गया था। विभाग के

मंत्री महोदय ने और आदमी भरती किये जाने की अनुमति नहीं दी थी। उनका विचार था, दफ़्तर में दो आदमी कम होने से काम चल सकता है परन्तु एक आदमी अधिक हो जाने से गड़बड़ हो जायेगी। दफ़्तर में छोटे कर्ज देने और क्लेम्स (शरणार्थियों की पश्चिम में छूट गयी जायदाद के दावों) का बहुत बड़ा काम आरम्भ हो गया था। तारा अब क्लेम्स की पड़ताल और उन पर रिपोर्ट का काम कर रही थी।

तारा क्रम से लगे हुए दावों को देख रही थी। एक दावे पर शीलो के पति का नाम देखकर वह ठिठक गई। उसकी आँखों के सामने शीलो की तस्वीर घूम गई। उसने दावे पर लिखे वर्तमान पते को देखा तो पता चला कि वे लोग शक्तिनगर में, दिल्ली में ही रह रहे हैं। उसका मन शीलो से मिलने को बेचैन हो गया।

इतवार के दिन तारा शीलो से मिलने की इच्छा नहीं रोक पा रही थी। चार बजे के लगभग लू में ही वह टैक्सी लेकर चल दी।

तारा शीलो के घर पहुँची तो वह मुँह लपेटे लेटी हुई थी। तारा को वह बहुत बदली हुई लगी। तारा ने उसे आवाज लगाई तो वह उठी और अवाक् निश्चल बैठी थोड़ी देर तक तारा को देखती रही। फिर दोनों बहनें गले मिलकर थोड़ी देर रोती रहीं।

शीलो सम्भली तो उसने तारा से पूछा कि वह कैसे बची? सबने तो उसे मरा समझ लिया था। तारा अपनी बीती का प्रसंग बचाने के लिए शीलो से ही प्रश्न करती रही। परन्तु शीलो की उत्सुकता के कारण उसने संक्षेप में अपनी आप-बीती सुना दी। परन्तु नब्बू द्वारा उठाये जाने और हाफिज जी के घर रहने की बात उसने नहीं बतायी।

शीलो बहुत देर तक घुटने पर ठोढ़ी टेके चुप बैठी रही फिर तारा के बहुत से प्रश्नों के उत्तर में उसने जोड़-तोड़ कर, आँसू पोंछ-पोंछ कर सब संक्षेप में बताया।

"हम डी० ए० वी० कालेज के कैम्प में चले गये थे। वहाँ कुछ मिलता ही नहीं था। छोटी सी कोठरी में दो परिवार। बेहद गरमी। घुल्लू बीमार हो गया था। आटा रूपये का सेर, दूध रूपये का सेर। 'ये' दूध लेते ही नहीं थे। तुझे तो सब मालूम है। 'वह' मुझ से बोलता ही नहीं था। (शीलो रतन का नाम न लेकर 'वह' कहती थी) लेकिन तब ढूँढ़ता हुआ आया। तुम्हारी गली के लोग 'देव समाज' के कैम्प में ठहरे हुए थे। इसकी (घुल्लू की) हालत देख कर पूछा—क्यों, क्या हुआ?

"मैं रो पड़ी—दूध कहाँ से पिलाऊँ। पेट में कुछ जाये या पास हो तो खरीद कर दूँ। पैसा कहाँ है—पचास रुपये जबरदस्ती मेरे हाथ में दे गया। मैंने रूपये 'इनके' हाथ में दिये कि जो हो, इसके लिए दूध लाओ। लाहौर से फिरोजपुर गये तो भी 'वह' मुझे ढूँढ़ता कैम्प में आ गया। घुल्लू के पेट में मरोड़ उठते थे। मैंने 'इन' से कई बार कहा, डाक्टर को दिखाओ। न 'ये' सुनते थे, न सास-ससुर सुनते थे। 'वह' आया तो मैं रो पड़ी। कहा, मेरे बच्चे को किसी तरह बचा दे। वह बड़े डाक्टर को

बुला लाया। डाक्टर को अपने-आप रूपये दे दिये। मेरी तो मुसीबत हो गयी। सास और 'ये' चिल्लाने लगे कि वह तेरा कौन है।

"सास कहने लगी—यह तो उसी का है। चार महीने हम लोग कुरुक्षेत्र के कैम्प में रहे। हफ़्ते-पन्द्रह दिन में इसे देखने आ जाता था। मेरी मुसीबत आ जाती थी। मैं 'उसे' यहाँ मिली। यहाँ आयी तो भी वह महीने में एक बार आ ही जाता है। यहाँ कहीं करोलबाग है, वहाँ ही रहता है।" वह घुटनों में मुँह दबा कर रोने लगी।

तारा ने अपने सिर की कसम दी—"बता न, क्या बात है ?"

माँ को रोते देख घुल्लू भी रो पड़ा था। तारा बच्चे को सीने से लगा कर बहलाने लगी।

शीलो ने आँसू पोंछ कर खिड़की से पुकार लिया—"बल्ली (प्यारी) सुमन, जरा सुनो तो !"

आठ-नौ बरस की लड़की दौड़ आयी। शीलो ने उसे प्यार से कहा—"सुमन, जरा घुल्लू को ले जा। यह ले एक आना। पपीता (गुलाब पापड़ी) लेकर तुम दोनों खा लेना।"

सुमन घुल्लू को पुचकार कर उसे उठा ले गयी।

शीलो फूट-फूट कर रोई और फिर बोली—"पिछले महीने ननद सास के साथ यहाँ आयी थी। तब एक दिन दोनों बाजार गयी थीं, तो 'वह' आ गया था। बच्चे के लिए दूध के दो डिब्बे, संतरे, अनार, कपड़े के चार टुकड़े छोड़ गया था। उससे पहले 'वह' कुछ दे जाता था तो 'ये' कुछ नहीं कहते थे, इसलिए मैंने चीजें रख ली थीं। ननद ने बहुत शोर मचाया। कहने लगी—वह घुल्लू की फिक्र क्यों करता है ? तब से इसके मन में बात बैठ गयी है। रोज कहता रहता है, तेरी उससे पुरानी दोस्ती है, सच बता लड़का किसका है ? मैंने कह दिया—शक है तो मुझे कत्ल कर दो। कभी कहता है, तू सती है तो आग हाथ पर रख कर दिखा। तू बता, मैं क्या करूँ ? सुबह गुस्से में चला गया है। अभी तक नहीं लौटा।"

दोनों बहनें कुछ देर चुप बैठी रहीं। कुछ देर बाद शीलो बोली—"दिल करता है, बच्चे को गोद में लेकर जल मरूँ, अब नहीं सहा जाता। शीलो फिर रोने लगी।

"बक मत।" तारा ने शीलो के होंठों पर हाथ रखकर डाँटा, "इतना परेशान करता है तो तुझे मैं ले जाऊँगी। हम दोनों अलग कोठरी लेकर रह जायेंगी।" तारा ने उसे अपनी स्थिति समझा दी।

शीलो ने आँसू बहाते हुए कहा—"क्या करूँ ? जी तो यही चाहता है कि मैं और लड़का दोनों मर जायें पर उसका (रतन का) खयाल आ जाता है। सुनेगा तो जाने क्या कर डालेगा।"

"उसी के यहाँ क्यों नहीं चली जाती ?"

"तू भी क्या पागल है। कैसे चली जाऊँ ? शीलो ने बहुत दुख में अपने माथे

पर हाथ मारा, "मैं क्या कर बैठी ? फेरे तो इसी मरे के साथ लिये हैं। कभी नहीं कहा था, आज कहती हूँ, मुझे 'इसके' साथ रहना तो कभी अच्छा नहीं लगा पर 'इसके' साथ ब्याही गयी थी तो धर्म समझ कर, मन मार कर सह जाती थी। ये जब से ऐसी बातें करने लगा है, तो बदन में आग लग जाती है। अकेला लड़ता है, झगड़ता है, गालियों देकर रुलाता है पर मरा रह भी नहीं सकता। मैं कहाँ जाऊँ ? शीलो फिर रोने लगी।

"मैं तो कहती हूँ, तू बस इस झगड़े को खतम कर।" तारा ने गहरे श्वास से कहा।

"यह तो मेरी मौत से ही खतम होगा।"

तारा ने समझाया—"देख, तू कुछ ऊँटपटाँग न कर बैठना।"

तारा ने शीलो को अपना पता और मर्सी का फोन नम्बर लिख दिया। अपने दफ़्तर का भी फोन नम्बर लिख दिया। करोलबाग में रतन का पता पूछ लिया। जरूरत के लिए कुछ रूपये रख लेने के लिए भी कहा पर शीलो ने नहीं लिए—"मेरे पास देखेगा तो समझेगा 'वही' दे गया है। मेरी मुसीबत हो जायेगी।"

तारा ने आश्वासन दिया—"अच्छा, इतवार को फिर आऊँगी, अब चलूँ।" घुल्लू को तो बुला ले, प्यार कर लूँ।"

दूसरे दिन दफ़्तर से आते ही तारा को नरोत्तम का पत्र मिला। उसने लिखा था कि उसकी बदली दिल्ली में हो गई है। तारा को यह पढ़कर कुछ अशांति सी महसूस हुई। नरोत्तम के कलकत्ते चले जाने से तारा के लिए सूनापन बढ़ गया था, उसका अधिक परिचय तो था नहीं। नरोत्तम ने लिखा था कि वह शुक्रवार को दिल्ली पहुँचेगा।

वह शुक्र की संध्या और शनिवार की सन्ध्या को तारा के पास आया। मर्सी भी रहती थी, कोई खास बात नहीं होती थी। तारा और नरोत्तम कम ही बोलते, वैसे पत्र में एक-दूसरे को लिखा करते थे कि मिलने पर बात करेंगे। शनिवार को नरोत्तम ने इतवार सुबह आने को कहा। उसे मालूम था कि मर्सी को क्लीनिक जाना होगा। तारा ने उसे लंच अपने साथ ही लेने को कहा।

रविवार को सुबह नरोत्तम आया, वह पिछले दो दिनों की तरह ही गम्भीर था। उसने तारा से बात करनी आरम्भ की पर गम्भीर ही बना रहा। उसने बताया कि रावत साहब पिता जी से सगाई कर लेने को कह रहे हैं। वह नीलम से शादी नहीं करना चाहता। परन्तु रावत साहब से वह सीधे क्या कहता, नीलम में कोई दोष नहीं बता सकता था। वह चाहता था कि यदि तारा अनुमति दे तो वह रावत साहब से कह दे कि वह पहले ही तारा से वचन-बद्ध हो चुका है।

नरोत्तम की बात सुनकर तारा एकदम से सकपका गई। फिर उसने नरोत्तम को समझाया कि यह उचित नहीं है। उसने कहा कि वैसे वह उसे बहुत प्यार करती है, पर पुरुष नहीं लड़का—भाई समझ कर। उसे पुरुषों से घृणा है। उसने

नरोत्तम को याद दिलाया कि उसने उसे अपनी और डौली की बड़ी बहन माना था।

नरोत्तम ने सदा के लिए अपनी बात वापिस ले ली। उसने तारा से माफी माँगी और पहली बार उसे 'तारा दीदी' कहा। परन्तु वह उस समय वहाँ ठहर नहीं सका। तारा भी उसके जाने के बाद गम्भीर ही बनी रही।

मर्सी आयी तो नरोत्तम जा चुका था, तारा गम्भीर सी, चुपचुप सी थी। उसने तारा से कहा कि मैं सब समझ गई। तुम दोनों अकेले में लड़ पड़े होगे। दोनों दो दिन से भरे बैठे थे। नरोत्तम ने प्रपोज किया होगा और तूने नखरे दिखाये होंगे। उसने तारा को समझाया कि वह नरोत्तम की बात मान ले। हर काम के लिए एक आयु होती है। आयु बीत जाने पर बेकार पछताना पड़ेगा। तारा ने मर्सी से कहा कि ऐसी कोई बात नहीं है। नरोत्तम तो मेरा छोटा भाई है। मैं तो अपनी बहन के लिए परेशान हूँ। उसका पति उसे बहुत तंग करता है।

सन्ध्या समय तारा शीलो के पास जाना चाहती थी परन्तु शरीर ने साथ न दिया। फिर भी वह शीलो के बारे में ही सोचती रही। कभी सोचती कि स्वयं रतन से बात करूँ, पर फिर खयाल आता कि पहले शीलो से पूछ लेना ही उचित होगा।

बृहस्पतिवार को तारा दफतर जाने को तैयार थी कि फोन आ गया। कोई लड़का बोल रहा था कि घुल्लू की माँ तारा को फौरन ही बुला रही है। तारा टैक्सी लेकर वहाँ पहुँची। शीलो ने तारा से कहा कि वह लड़के को ले जाये। और कुछ करने को नहीं है। तारा ने धमकाया कि जब तक तू कुछ बतायेगी नहीं मैं लड़के को नहीं ले जाऊँगी। शीलो को बताना पड़ा। उसने कहा कि उसने अपने पति को सब कुछ साफ-साफ बता दिया है। और अब वह शीलो से अपने बाप के घर जाने को कहकर दफतर चला गया है।

तारा वहीं से टैक्सी पर रतन के पास पहुँची। उसने सारी बात रतन को बतायी। रतन शीलो को अपने घर रखने को तैयार था। तारा और रतन शक्तिनगर गए। तारा अन्दर जाकर शीलो और घुल्लू को ले आई। उसने कमरे में ताला बन्द करके चाबी पड़ोसियों को दे दी और कह दिया कि मोहनलाल से कह देना, शीलो अपनी माँ के घर गई है।

शनिवार को नरोत्तम ने तारा को फोन किया। उसका स्वर बिल्कुल स्वाभाविक था। उसने रविवार को तारा और मर्सी के साथ अंग्रेजी पिक्चर देखने और कहीं होटल में लंच लेने का प्रस्ताव रखा। नरोत्तम के उन्मुक्त ढंग से तारा के मन से बोझ हल्का हो गया। उसने नरोत्तम की बात मान ली।

पिक्चर जाने से पहले रतन आ गया। वह तारा को अपने घर ले जाने को आया था। पर स्थिति समझ कर कुछ न बोला। उसने तारा को बता दिया कि उसने पँचकुइयाँ रोड पर एक गली में जगह लेकर शीलो को रखा है।

तारा पिक्चर देखने और खाना खाने के बाद शीलो के घर गई। तारा ने भाँप

लिया कि रतन और शीलो बहुत सन्तुष्ट थे।

एक दिन जाड़े के कारण तारा बिस्तर में घुसकर चाय पीने जा रही थी कि सीता आ गई। उसने बताया कि उसकी नौकरी छूट गई है और वह बहुत परेशान है। उसने तारा से डेढ़ सौ रूपया उधार माँगा और नौकरी दिलवाने की प्रार्थना की।

इतने में मर्सी आ गई। वह सीता को पहचान गई। उसने सीता से ही कहा कि पहली बार डाक्टर अय्यर ने गरीब जानकर कुछ नहीं कहा। अब की सौ रूपया भरना पड़ेगा। तारा मर्सी की बातें सुनकर सब समझ गई। उसने सीता को फटकारा और वहाँ से चले जाने को कहा। सीता ने रो-रोकर उससे प्रार्थना की। तारा ने उसे दूसरे दिन आने को कह दिया।

मर्सी और तारा चाय पीते-पीते बातें कर ही रही थीं कि माथुर आ गया।

माथुर निरंजन चड्ढा का पुराना सहयोगी का। दोनों ने एक साथ जोखिमें झेली थीं। सन् १९५२ में चड्ढा और माथुर में राजनीतिक मतभेद हो गया था। पर माथुर, चड्ढा की ईमानदारी का आदर करता था। वह मर्सी का भी आदर करता था, क्योंकि मर्सी धन और जोखिम की परवाह न कर चड्ढा से प्यार करती थी। उससे विवाह करना चाहती थी। माथुर बहुत गंभीरता से अपने सिद्धांत की घोषणा करता रहता था—करेक्टर आफ मैन इज़ ग्रेटर दैन पालिटिक्स। माथुर महीने में दो-चार बार मर्सी के यहाँ मिलने, हाल-चाल पूछने आ जाता था। मर्सी आत्म-निर्भर थी, परन्तु माथुर उस की चिंता रखना अपना कर्त्तव्य समझता था।

माथुर राष्ट्रीय सरकार को सफल बनाने में योग देना चाहता था। उसने इस विषय में पी० एम० से भी बात की थी। तारा ने इसी विषय में उससे पूछा।

माथुर ने कहा—"मैंने प्राइम मिनिस्टर के सामने अकाट्य प्रमाण रख लिये कि आई० ए० एस० में खूब कुनबा-परवरी चल रही है। थर्ड डिवीजन के लोग लिये जा रहे हैं और फर्स्ट क्लास को टाल दिया जाता है।"

"पी०एम० ने क्या कहा ?" तारा ने उत्सुकता से पूछा।

"क्या कह सकते थे, कहने लगे—फर्स्ट क्लास-फर्स्ट तो अक्सर कम्युनिस्ट होते हैं। सर्विस में कम्युनिस्टों को कैसे ले लिया जाये ?"

मर्सी प्रसन्न हो गई—"कम्युनिस्ट कब इनके टुकड़ों के लिए बैठे हैं ! वह तो पी० एम० को मानना ही पड़ेगा ही कम्युनिस्ट लायक होते हैं।"

"लेकिन आप तो कम्युनिस्ट नहीं हैं ?" तारा ने माथुर से प्रश्न किया।

"नहीं !" मैंने पी० एम० से कहा—"न मैं कम्युनिस्ट हूँ, न कम्युनिस्ट पार्टी का मेम्बर हूँ। बोले—मैं कुछ कह नहीं सकता, शायद तुम्हारी रिपोर्ट में कोई बात होगी।

"मैंने साफ कहा—सी० आई० डी० और नौकरशाही की रिपोर्ट की क्या कसौटी है ! मिलिटरी के जो मर्सीनरी लोग (भाड़े के टट्टू) अंग्रेजों के पिट्ठू बने रहे, उन्होंने आई० एन० ए० वालों को अयोग्य बता दिया। उसी तरह अँग्रेजों की

खैरख्वाही की विरासत सँभाले पुलिस और नौकरशाही अपनी रिपोर्टों के आधार पर, पुराने क्रान्तिकारियों को सरकारी नौकरी के अयोग्य बता रही है। पी० एम० चुप ही रहे। क्या जवाब देते ?"

माथुर उत्तेजित होकर बोला—"आचार्य कृपलानी ने बिलकुल ठीक कहा है, रवोल्यूशन क्या हुआ, कहाँ हुआ ? गाँधी जी के आदर्श कहाँ हैं ? दो ही साल में 'गांधी की जय' खोखली पड़ गयी है। सब शासन पुराने आई० सी० एस० लोग चला रहे हैं। लोगों ने सेवा करनी नहीं, शासन करना सीखा है। उन्हें डेमोक्रेसी नहीं ब्यूरोक्रेसी की आदत है। वही कानून है, वही पुलिस का राज। अब भी बिना मुकद्दमा चलाये कैद,....बल्कि 'डिफेंस आफ इन्डिया एक्ट' से पुलिस के हाथ पूर्वापेक्षा लम्बे हो गये हैं। पुलिस बिलकुल निरंकुश हो गयी है। हाईकोर्ट लोगों को बरी कर देता है, पुलिस उन्हें दूसरी दफा लगाकर पकड़ लेती है। हमें तो शरम आती है। अंग्रेज सरकार ने अदालत में दिये भगतसिंह के बयान को जब्त नहीं किया था पर इस सरकार ने गोड्से का अदालती बयान जब्त कर लिया है। क्या इनके पास गोड्से के लिए जवाब नहीं है ? मुँह बन्द कर देना डेमोक्रेसी है ? कृपलानी ठीक कहते हैं, रवोल्यूशन में यह कभी नहीं होता कि पुराने ही शासक बने रहें। रवोल्यूशन इज़ चेंज आफ रूलर्स (क्रान्ति से शासक बदल जाते हैं) रवोल्यूशन हुआ कहाँ, आप ही बताइये !"

तारा ने उत्तर दिया—"खैर, उतना तो नहीं बदला लेकिन शासन की मशीन या शासन चलाने वाले लोग तो उसी नीति के अनुसार चलेंगे जो उन्हें बतायी जायेगी। नीति निर्धारित करने वाले तो जरूर बदल गये हैं। विदेशी शासन की जगह स्वदेशी शासन हो जाना भी काफी परिवर्तन है।"

मर्सी बहुत देर तक क्षोभ प्रकट करती रही—"क्या चेंज है ? और भी बुरा हाल है। पूँजीपतियों के हौसले बढ़ गये हैं। अब तो उनके चन्दों से पलने वालों का राज है। बेचारे मजदूरों से हड़ताल का भी हक छीन लिया। कंट्रोल हटा दिये हैं कि पूँजीपति मन भर कमायें और काँग्रेस को चन्दा दें। लोगों को क्या मिला ? गल्ला-कपड़ा लड़ाई के जमाने में उतना मँहगा नहीं था जितना अब है। गल्ला-कपड़ा कम है तो तुम सब को हिस्से से दो। पूँजीपतियों को दाम क्यों बढ़ाने देते हो ?"

तारा रात सोने से पहले सीता के बारे में सोचती रही। उसे सीता के बच्चे के पिता के प्रति क्रोध आया परन्तु सीता के प्रति दया आयी।

उसने दूसरे दिन सुबह ही मर्सी से बात की। शाम को सीता आई तो तारा ने उससे कहा कि अगर वह आगे से भलमनसाहत से सम्भल कर चलने का वायदा करे तो उसे सहायता मिल सकती है। उसने सीता से कहा कि तेरा काम सिस्टर करा देंगी। जो देना होगा मैं दे दूँगी। तू मन लगाकर दो-चार महीने कोई काम सीख। मैं तेरी माँ की हर माह सहायता कर दिया करूँगी। परन्तु आइन्दा कोई बेजा हरकत हुई तो मेरे पास न आना।

माथुर को तारा से सहानुभूति हो गई थी। वह अभिभावकों के न होने के

कारण तारा का उम्र भर कुआँरी रहना भयंकर निर्दयता समझता था। माथुर का परिचय और सम्बन्ध काफी विस्तृत थे। वह तारा और मर्सी को कई लोगों से मिलाता रहता था।

माथुर का पुराना विद्यार्थी नित्यानन्द तिवारी, दिल्ली यूनीवर्सिटी से इतिहास में पी० एच० डी० करके यूनीवर्सिटी में लेक्चरर हो गया था। तारा और मर्सी से परिचय हो जाने के बाद वह माथुर के साथ या कभी अकेले भी मर्सी के यहाँ मिलने आ जाता था। तारा को पढ़ने का शौक था। वह तारा के लिए कोई न कोई पुस्तक ले आता। तारा को तिवारी की बातचीत और उसका ढंग अच्छा लगता था। माथुर भी तिवारी की बहुत प्रशंसा करता रहता। तिवारी ने सब सफलता अपने साहस और श्रम से ही पायी थी। कुछ मास में तिवारी को अलीगढ़ यूनीवर्सिटी में अधिक अच्छी नौकरी मिल गयी। तिवारी तारा से मिलने के लिए रविवार के दिन भी अलीगढ़ से चला आता तो तारा को संकोच अनुभव हुए बिना न रहता।

स्वयं जवान लड़की से उसके विवाह की बातचीत करने में माथुर को संकोच होता था परन्तु तारा के सामने वह अपने सुझाव और प्रयत्न से हुए विवाहों की विस्तृत चर्चा करता रहता था कि अमुक दम्पति खूब सुख से रह रहे हैं। माथुर ने स्त्री-पुरुषों की प्रकृति ठीक-ठीक पहचान सकने के अपने कई अनुभव बता कर तारा को अपनी गहरी सूझ के प्रमाण दिये। उसने पच्चीस से लेकर पैंतीस-चालीस तक की उम्र के, तीन-चार सौ माहवार से दो हजार आमदनी वाले विवाह-योग्य तीन जवानों के वंश और स्वभाव का पूरा परिचय तारा को दे दिया। माथुर मर्सी से अकेले में पूछ लेता—"तुमने तारा से कुछ बात की थी ?""क्या विचार है उसका ?"

तारा को माथुर की सज्जनता और निःस्वार्थ परोपकारी प्रवृत्ति पर विश्वास था, परन्तु बार-बार विवाह की चर्चा से ऊब कर मर्सी से कह देती—"दीदी, माथुर को मना क्यों नहीं कर देतीं। वह मुझे ठिकाने लगा देने के लिए क्यों परेशान है ? यह लोग क्यों समझते हैं कि बिनब्याही औरत अवारा ही होती है, उसे किसी न किसी खूंटे से बाँध ही देना चाहिए, किसी न किसी को उसका मालिक बन ही जाना चाहिए...।"

१०

१९४८ में जालंधर के पुरुषार्थी एसोसिएशन के चुनाव के समय जयदेव पुरी की सोमराज साहनी से पुनः भेंट हो गयी थी। सोमराज, पुरी के प्रतिद्वंद्वी प्रेमनाथ गुलाटी के समर्थन में घूम रहा था। पुरी को पता लगा कि सोमराज का परिवार भी जालंधर में ही था। उस के पिता लाला सुखलाल का जनवरी में स्वर्गवास हो चुका था।

लाला सुखलाल साहनी का परिवार चौदह अगस्त से पहले ही जालंधर आ गया था। यहाँ के मुसलमान भाग रहे थे। उन लोगों ने बस्ती-निगारखां में मुसलमानों के अच्छे बड़े मकान पर कब्जा कर लिया था।

पुरी के मन में सोमराज के प्रति मैत्री-भाव कभी भी नहीं था। बहन भी नहीं थी जो वह जीजा को विनय दिखाता। उसने साहनी से मिलने पर एक-आध औपचारिक प्रश्न कर लिए। पुरी के न चाहने पर भी मास्टर जी, भागवंती, उसको और कनक को लेकर साहनी के घर लाला जी की मृत्यु का शोक प्रकट करने गए।

पुरी अब 'नाजिर' का सम्पादक था। रिफ्यूजी एसोसिएशन का मंत्री और काँग्रेस के अधिक प्रभावशाली दल के नेता सूद जी का दाहिना हाथ था। सोमराज ने पुरी के प्रति आदर और आत्मीयता प्रकट की। बन्नी हाते पर आक्रमण और आग की घटना की ब्योरेवार लम्बी चर्चा हुई। सोमराज की आँखें तारा की स्मृति से बार-बार छलक आती थीं। उस ने विश्वास दिलाया कि तारा को आग से बचाने के लिए कोई भी सम्भव उपाय उसने नहीं छोड़ा था। सोमराज ने अपनी पिंडलियों और बाँहों पर मांस झुलसने के दाग दिखाकर कहा—"भगवान की इच्छा के विरुद्ध क्या हो सकता था? वही नहीं रही तो फिर कम्बख्त मकान-वकान का क्या था, छोड़कर चले आए।"

सोमराज मास्टर जी के कोल-डिपो में आकर उनकी सहायता कर देता था। दोनों परिवारों का घर थोड़ी ही दूरी पर था। स्त्रियों ने आना-जाना आरम्भ कर दिया। लाला सुखलाल जीवित थे तो उन्होंने अपने भाई के परिवार को मुसीबत में देखकर अपने घर ही रख लिया था। अब केवल लाला जी का एक भतीजा और उसकी बहू रहते थे। लड़का कर्तारांम बहुत मोटा था, गिरने से उसके पैर की हड्डी भी टूट गई थी। परन्तु उसकी बहू शांति पति के बिलकुल उलट थी।

स्त्रियाँ मिलतीं तो सोमराज की माँ या बहन प्रायः ही सोमराज और शांति के संबंध का रोना सुनाया करतीं। भागवंती को यह बहुत बुरा लगता। अब भी वह सोमराज को अपना दामाद समझती थी। उसने पुरी से सोमराज को समझाने को कहा तो उसने कहा कि जब हमारी लड़की नहीं रही तो हम उनके झगड़ों में क्यों पड़ें। भिड़ों के छत्ते को छेड़ने से क्या लाभ? शहद की उम्मीद हो तो कोई परेशानी भी झेल ले।

सोमराज प्रायः पुरी के पास आने लगा। सूद जी मंत्रि-मण्डल में ले लिए गए थे। पंजाब सरकार का केन्द्र शिमला था अतः सूद जी अधिकतर वहीं रहते थे। जालंधर में पुरी उनका प्रतिनिधि था। सोमराज कनक से सलहज के नाते निःसंकोच आत्मीयता से बात करता था, परन्तु कनक को वह जरा भी नहीं सुहाता था। कनक के लकड़ी होने पर साहनी ने चाँदी की कटोरी और चम्मच दी थी। कनक ने उसे अलग रख दिया था। कभी उसका प्रयोग नहीं करती थी।

१९४९ दिसम्बर में एक दिन करोल बाग, दिल्ली से गोविन्दराम का पत्र आया था। उन्होंने पुरी के काम पर लग जाने की प्रसन्नता प्रकट की थी और

लिखा था कि कुछ बातें ऐसी हैं जो मिलने पर ही बताना चाहते हैं। सारी बातों के बाद रोमांचक बातें लिखी हुई थीं। उन्होंने लिखा था कि तारा जीवित है। आग लगे मकान से कूद कर वह एक मुसलमान के घर पहुँची थी। मुसलमान भले थे, उन्होंने उसे हिन्दू परिवार में पहुँचा दिया। उन्हीं के साथ वह दिल्ली आयी और अब रिलीफ रिहेबीलिटेशन के महकमे में साढ़े तीन सौ माहवार पर बाइज्जत काम कर रही है। उन्होंने तारा की बहुत प्रशंसा की थी।

पुरी के प्रेस में न होने के कारण कनक ने ही पत्र खोलकर पढ़ लिया था। उसे बहुत प्रसन्नता हुई। उसने माँ से कुछ नहीं बताया, पुरी के आने पर उसे पत्र दिखाया। वह पत्र पढ़कर निश्चल रह गया और सोच में डूब गया। कनक ने उससे कहा कि वह तारा को पत्र लिखकर फौरन बुला ले। परन्तु पुरी ने कहा कि उसके यहाँ आने से माँ, सोमराज और उसकी माँ-बहन हुड़दंग मचा देंगे। पहले ही सोमराज और शान्ति का किस्सा बिगड़ा हुआ है। पहले तारा को पत्र लिखकर स्थिति समझनी होगी। कनक ने मौन विरोध में मुँह फेर लिया। पुरी ने उससे मना कर दिया कि वह अभी माँ-बाप को कुछ न बताये। कनक का मन खिन्न हो गया। दूसरे दिन भी उसकी पुरी से बोलने की इच्छा नहीं हुई। उसने फिर तारा के सम्बन्ध में किसी से भी बात नहीं की। उसके मन पर एक विचित्र बोझ सा छा गया था।

कनक को लगता कि तारा के रूप में उसी का अपमान किया जा रहा है। उसी पर अन्याय किया जा रहा है। नैयर की बात सच थी। वह सोचती सब फरेब है। 'इनका' स्वभाव और व्यक्तित्व कैसा विचित्र है? एक उदासी सी उसके मन पर छा जाती।

तीन सप्ताह तक यही सिलसिला चलता रहा। पुरी अपने काम में व्यस्त रहता और कनक बेटी जया के साथ व्यस्त हो जाती। तीन सप्ताह बाद पुरी ने कनक से बातें कीं। उसे घर में यह तनाव असह्य हो गया था। उसने कनक से कहा कि तुमने समझा था कि मैं तारा की उपेक्षा कर रहा हूँ परन्तु उसने मेरे पत्र का उत्तर भी नहीं दिया। कनक ने स्वयं पत्र डालने की बात कही। बात बढ़ी और दो-तीन दिन घर में गुमसुम बनी रही। दफ्तर में दोनों की दो-चार बातें हो जातीं परन्तु उनमें मिठास न होती।

पंजाब में पश्चिम से बहुत लोगों के आ बसने के कारण, आगामी चुनावों के लिए नये सिरे से निर्वाचन-क्षेत्र बनाये जाने का काम चल रहा था। अकाली दल और सिक्खों का यत्न था कि निर्वाचन-क्षेत्र इस प्रकार बाँटे जायें कि पूरी आबादी में सिक्खों की संख्या का प्रतिशत कम होने पर भी उनके अधिक उम्मीदवार सफल हो सकें। शासन की बागडोर सम्भाल सकने की होड़ में कांग्रेस के दोनों दल, सिक्ख मेम्बरों और सिक्खों के साम्प्रदायिक संगठनों को सन्तुष्ट करके, उनका सहयोग पाने के प्रयत्न में थे। सिक्खों के साम्प्रदायिक संगठनों की माँगें बढ़ती जा रही थीं। पुरी के मस्तिष्क पर राजनैतिक दलबाजी के दाँव-पेंचों का बहुत बोझ बना रहता था। घर में कनक बहुत अधिक खिंच गयी थी। विचित्र स्थिति थी। सार्वजनिक जीवन में पुरी संघर्ष

में फँसा हुआ था। घर में भी उसके लिए अपने-आप को भूल जाने व सन्तोष का अवसर न था।

पुरी ने कनक को समझाया। उसका गला स्नेह के आवेग से रुँध रहा था और आँखें उपेक्षा के अत्याचार से छलक आयी थीं—"इतनी साध और संघर्ष से पाये हमारे जीवन को क्या हो गया है?...तुम्हीं मेरी उपेक्षा करो तो मुझे परिवार, पत्र और राजनीति से क्या लेना है!...तुम मुझे गलत क्यों समझने लगी हो?...तारा जो भी हो, मेरी बहन है। अल्हड़पन के आवेग की बातों को जाने दो। उसे बहुत सहना पड़ा है।...वह यहाँ आना चाहती तो तुरन्त मेरे पत्र का उत्तर देती। पिता जी और माँ को पता लग गया तो उनकी तो जिद्द होगी कि वह ससुराल जाकर रहे। उसे यहाँ बुलाकर फिर सोमराज जैसे निरंकुश, नृशंस के हाथों में धकेल दूँ....? समाज और कानून तो सोमराज के ही पक्ष में होंगे। बेचारी छिप कर निर्वाह कर रही है। उसे जिन्दगी काट लेने दो। तुम क्या स्वयं यह नहीं सोच सकती थीं? उसे पत्र लिखने के लिए तुम्हें मुझ से पूछने की जरूरत ही क्या थी? बल्कि मैं चाहता हूँ, तुम दिल्ली जाओ तो उससे मिलकर बातें करो। ठीक-ठीक सब बातें तो तभी जान सकोगी....तुम्हारी उसके प्रति ममता देख कर मैं तो तुम्हारे सामने और भी अधिक झुक गया हूँ। वास्तव में तुम्हारा हृदय विशाल है...।" पुरी का दिल भर आया।

बँटवारे से पूर्व जालंधर उपेक्षित नगर था। मगर अब यहाँ की आबादी बहुत बढ़ गई थी। मकानों की समस्या विकट हो गई थी। सरकार शहर से मील भर के अन्तर पर बंगलानुमा मकानों की नई बस्ती 'माडल टाउन' बना रही थी। एक दिन सुबह-सुबह सोमराज साहनी पुरी के घर आ गया। उसने कनक से कहा कि वह पुरी को समझाये कि वह 'माडल टाउन' में एक मकान ले ले। एक मकान के लिए दो हजार रुपया सालाना देना था। कनक का मन तो था खुले मकान में रहने का पर रुपया कहाँ से आता।

पुरी कर्जा लेने को तैयार नहीं था। लाहौर में सूरज प्रकाश एक प्रकाशक था। वह जालंधर में आकर यहीं काम कर रहा था। उसके पास पाठ्य पुस्तकों के प्रकाशन का काम था। सूद जी ने पुरी को हाई स्कूल बोर्ड की परीक्षा के लिए पाठ्य पुस्तकों की अनुमोदक कमेटी का मेम्बर बनवा दिया था। इसी कारण सूरज प्रकाश प्रायः उस के पास आने लगा था।

सूरज प्रकाश ने पुरी से कहा कि वह जमीन ले रहा है, दूसरा मकान नहीं ले सकता। यदि तुम तीन हज़ार रूपया दे दो तो साहनी मकान खरीद ले। तीन हजार भी वह देने को तैयार था। उसमें उधार कैसा था। रकम का सूद मकान का किराया चुका देगा। उसे मुनाफा रहेगा।

पुरी की स्वयं प्रबल इच्छा थी कि वह अपनी स्थिति और प्रभाव के अनुकूल रहे परन्तु उसे माडल टाउन का मकान लेने में झिझक थी। आखिर उसकी झिझक टिक न पाई। सन् ५१ के मार्च में पुरी का परिवार माडल टाउन में आ गया। ऊषाको

करके भाई के घर आ गई।

नए मकान में आने से खर्चा बढ़ गया था। पुरी 'नाजिर' के दफ़्तर में अपनी ढाई सौ तनखाह के अतिरिक्त सवा सौ कनक की तनखाह भी लेने लगा। परन्तु साल के अन्त में मकान का ढाई हजार रूपया देना था। वह कहाँ से आयेगा। इसी उलझन में वह कभी-कभी कनक पर चिड़चिड़ा उठता। कनक को बहुत दुःख होता। वह सोचती, इससे अच्छा विक्रमपुरा के तंग मकान में ही रह लेते। दोनों साहित्य में कुछ नहीं कर पा रहे थे। कनक अपनी रचना पुरी को सुनाना भी चाहती तो पुरी को समय ही नहीं मिलता था।

एक दिन सूरज प्रकाश ने पुरी के सामने अपनी परेशानी प्रकट की। वह पाठ्य पुस्तकें और उनकी कुंजियाँ छपवाता था। 'विद्या सदन' का हेमराज उसका विरोधी था। जहाँ वह अपनी पुस्तकें छपने को देता, हेमराज भी वहीं अपनी पुस्तकें देकर उसकी पुस्तकें रुकवा देता था। वह चाहता था कि पुरी कमल प्रेस में एक लेटर प्रेस सिलेण्डर लगवा ले जिससे उसका काम निकल जाएगा। वह उधार लेकर मशीन खरीद कर देने को तैयार था। उसका कहना था कि वह छपाई में मशीन के दाम काट लेगा। पुरी काफी समय से इस फेर में था। उर्दू का स्थान गुरुमुखी और हिन्दी लेती जा रही थी। लिथो-प्रेस के लिए काम कम आता था। अब पुरी की रक्षा कदम आगे बढ़ाने में ही थी। उसने सूरज प्रकाश का प्रस्ताव मान लिया।

पंजाब धारा सभा की भीतरी दलबन्दी और मंत्रिमण्डल के आपसी मत भेदों के कारण १९५१ के आरम्भ में मुख्यमंत्री के लिए शासन निबाहना कठिन हो गया। नया चुनाव होने में नौ-दस मास ही शेष थे। केन्द्रीय सरकार के आदेश से पंजाब के गवर्नर ने नया मंत्रिमण्डल बनाने का यत्न न कर शासन का उत्तरदायित्व अपने हाथ में ले लिया था। पंजाब ही क्या, सभी राज्यों की जनता, नये शासन में निधड़क कुनबापरवरी, नोच-खसोट और धाँधली से निराश और खिन्न हो रही थी।

अंग्रेजी सरकार के पुराने राय बहादुर और खैरख्वाह अमन-सभाई और सरकारी अमलदारी से लाभ उठाने वाले लोग, काँग्रेस के मेम्बर बन कर सफेद नोकीली टोपी पहनने लगे थे। अब काँग्रेस का चन्दा चार-चार आने और रूपये-रुपये की रसीदों से इकट्ठा नहीं किया जाता था। चुनाव फंड में चंदा मिलों और कम्पनियों से बीस-चालीस हजार और लाख दो लाख रूपये के चैकों से आता था। काँग्रेस से सम्बन्ध रखने वाले जो लोग चार साल पहले सौ-सवा सौ की नौकरियों से निर्वाह कर रहे थे अब अपने सम्बन्धी के मंत्री बन जाने या किसी महत्वपूर्ण कमेटी का मेम्बर बन जाने पर जहाँ-तहाँ हजार-बारह सौ पाने लगे थे।

मुनाफे को ही धर्म समझने वाले बडे-बडे पूँजीपति काँग्रेसी लोगों के प्रति श्रद्धा और उदारता, घाटा उठा कर नहीं दिखा रहे थे। ऐसे मामलों की अफवाहें और संवाद सब लोगों की जबानों पर थे। लोग धारा सभा के सदस्यों, (मेम्बर आफ लेजिस्लेटव असेम्बली) को एम० एल० ए० न कह कर घृणा से 'मैले' लोग कहने लगे थे। काँग्रेस के मुकाबले में कोई दूसरा सशक्त राजनीतिक संगठन नहीं था। नये उठते

संगठनों में से राष्ट्रीय स्वयं सेवक-संघ और कम्युनिस्ट पार्टी ने विद्रोह करके काँग्रेस सरकार को उन्हें कुचल डालने का कानूनी अवसर दे दिया था। लोग जानते थे कि चुनाव में काँग्रेस ही विजयी होगी। निराशा की उपेक्षा में लोग कह देते थे—इन्हें ही राज कर लेने दो। यह पाँच बरस से खा रहे हैं, इनका पेट कुछ भरा होगा, इनका पेट थोड़े में पूरा हो जायगा। दूसरा कोई आयेगा तो जितना यह खा चुके हैं, उतना खाकर फिर और खायेगा।

काँग्रेस सत्ता से ऐसी निराशा और अविश्वास में, ऐसे भी काँग्रेसी नेता और मंत्री थे जो इन अफवाहों के अपवाद थे। सूद जी के लिए न जमीन-जायदाद बटोर लेने की निन्दा थी, न मकान खड़ा कर लेने और बैंक बैलेन्स जमा करने की अफवाह थी। सूद जी से उन के विरोधी भी उन्हें जर-जन-जमीन के मोह से मुक्त मानते थे। उन के हजारों समर्थकों ने लाभ उठाया था। हजारों लाभ उठाने की आशा में थे। वे सब लोग तन-मन से सूद जी के समर्थक थे। उनकी सहायता के लिए तत्पर थे। पंजाब पार्लियामेंटरी बोर्ड में सूद जी का हाथ मजबूत था। उन्हें इस समय शासन का काम न होने से नये चुनाव का व्यूह बाँधने का पूरा अवसर था। उनके सामने स्वयं चुन लिये जाने का ही प्रश्न नहीं बल्कि धारा सभा में अपने अधिक से अधिक समर्थक ला सकने का लक्ष्य था।

सूद जी का विचार था कि नए चुनाव में पुरी को भी काँग्रेस उम्मीदवार की टिकट ले दें। परन्तु कनक और गिल को इस विषय में उत्साह नहीं था। अभी तक 'नाजिर' काँग्रेसी शासन और धारा सभा के मेम्बरों के स्वार्थी-व्यवहार की आलोचना करता आया था। अत: कनक और गिल को पुरी का पलटकर धारा सभा की मेम्बरी के लिए उम्मीदवार बन जाना क्या अच्छा लगता।

पुरी का कहना था कि धारा सभा में जाकर सूद जी की सहायता करना आवश्यक है। उसका विचार था कि जनता के प्रतिनिधित्व का अवसर स्वार्थी आदमियों के हाथ जाने देना राष्ट्रीय आत्म-हत्या है। मास्टर जी, नैयर, सोमराज और लाला गिरधारी लाल आदि सब उस के पक्ष में थे।

पुरी चुनाव की तैयारी में, अपने और सूद जी के समर्थन के लिए 'नाजिर' का पूरा उपयोग करना चाहता था। उसने संचालक की जगह कनक का नाम दे दिया और सम्पादक की जगह गिल का और अपना नाम हटा लिया।

गिल मित्रता निबाहने का निश्चय कर चुका था। उसने शासन की नीति और विधान से उपेक्षा को आत्मरति और कर्तव्य विमुख प्रवृत्ति बताकर जनता को चुनाव में सतर्क रहने का आह्वान आरम्भ कर दिया। उसके साथ ही चेतावनी थी कि जनता भावुकता में अपना वोट असमर्थ राजनीतिक संगठनों को न देकर, काँग्रेस के प्रगतिवादी पक्ष को दें। पुरी गिल के सम्पादन और लेखों से गद्गद् हो जाता था।

जून का महीना था। एक रोज सुबह कनक दफ्तर में पहुँची तो देखा कि गिल किसी अजनबी से बड़ी आत्मीयता से बातें कर रहा है। बाद में कनक पर यह बात खुली कि वह तो सचमुच बड़ा ही अद्भुत व्यक्ति था। नाम था कामरेड दौलतराम

'आजाद'। अपने विचारों में कट्टर मार्क्सवादी। दो ही महीने पहले जेल से छूट कर आया था। गिल आजाद के साथ मिलकर अँग्रेजी राज्य के विरुद्ध काफी संघर्ष कर चुका था। अब आजाद जेल से छूटा तो देखा कि बाहर का संसार ही बदल चुका था। अब तो उसे और सब बातें छोड़कर दो वक्त की रोटी की चिन्ता हो रही थी। उसका एक फेफड़ा भी कमजोर हो चुका था। पुरी से गिल की बात हुई तो उसने कहा कि यदि आजाद को प्रेस में नौकरी दे दें तो चालीस-पचास रूपये तनखाह में उसका बनेगा क्या। गिल की सिफारिश पर पुरी ने आजाद को टिन का कोटा दिलाने की सोची। सूद जी के पास उसका नाम भी लिखवा दिया। लेकिन सूद जी ने मौका आने पर स्वयं ही आजाद का कोटा कटवा दिया और कोटा शंकरलाला मठानी नाम के किसी सज्जन को दिला दिया। इस पर कनक बहुत बिगड़ी कि क्या सूद जी इतना सा न्याय भी नहीं कर सकते थे। इस पर पुरी ने कनक को डाँटा कि जिस बात की समझ न हो उसमें खामुखाह टाँग नहीं अड़ाया करते। इस तरह आजाद जैसे देश पर प्राण निछावर करने वाले, गरीबों के लिए मुसीबत उठाने वाले व्यक्ति को अपनी ही दो समय की रोटी के लाले पड़ गये थे।

कनक जानती थी, दिल्ली में पिता जी की अवस्था अच्छी नहीं थी। बाजार में उनकी पाठ्य पुस्तकें न मिल सकने के कारण पाठ्य पुस्तक कमेटी ने उनकी पुस्तकों को पाठ्य-पुस्तकों की सूची से हटा दी थीं।

पाठ्य-पुस्तकों के निर्णय का समय आ गया था। कनक के मन में बार-बार चिन्ता उठती थी कि पुरी पिता जी की पुस्तकों के बारे में भूल न जाये। परन्तु आजाद के कोटे के विषय में हुआ झगड़ा अभी ताजा ही था।

घर में खिचाव होता तो कनक कांता के घर जाती ही नहीं थी, जिससे बहन और जीजा के सामने उनका झगड़ा खुल न जाए। आजाद के विषय में झगड़ा हुए अभी पाँच ही दिन हुए थे कि कांता और नैयर आ गए। दूसरे दिन करवा चौथ का व्रत था, सो कांता 'बायना' देने आयी थी। कनक ने बहुत प्रयत्न किया परन्तु नैयर कनक और पुरी के बीच खिचाव भाँप ही गया। उनके जाने के बाद कनक बड़ी देर तक उदास रही। उसने सोचा कि उन दोनों को ठीक से रहना चाहिए। दोनों बहन और जीजा की तरह ही पति-पत्नी हैं।

कनक ने महसूस किया कि आजाद वाली बात कह कर उसने अपने पति से बिगाड़ कर लिया था। फिर उसने जल्दी ही इस बात का निश्चय कर लिया कि पत्नी के नाते से अहंकार उसे शोभा नहीं देता, इसलिए वह अवश्य ही अपने हृदय के देवता को मना लेगी। लगभग एक सप्ताह उसी खिंचाव में गुजर गया था। करवा चौथ के दिन उसने व्रत भी रखा और दफतर भी गई। पुरी काम से कहीं और गया हुआ था, इसलिए दोनों की मुलाकात नहीं हो सकी। घर लौट कर कनक पुरी की प्रतीक्षा करने लगी। इस बीच में चाँद निकला और दूसरी सुहागिनों की भाँति कनक ने भी चलनी में से चाँद को देखा। मन ही मन पति के लिए दीर्घ आयु और कल्याण की कामना की।

आखिर पुरी खाना खाने के लिए आया। कनक ने धुला-धुलाया तौलिया और हाथ धोने के लिए पानी उसके आगे रखा। फिर एक ही थाली में अपना और पति का खाना परोस कर ले गई, दोनों ने एक साथ ही खाया। बातों-बातों में कनक ने अपने पिता जी की पुस्तकों के बारे में पुरी को याद दिलायी।

जब बातों-बातों में कनक ने करवा के व्रत के बारे में बताया, तो पुरी ने प्यार से उसका हाथ पकड़ कर कहा, "यह किस वहम में पड़ी हो ?"

११

तारा दो वर्ष से केन्द्रीय सरकार के सहायता और पुनर्वास विभाग में काम कर रही थी। जीवन में स्थिरता आ गयी थी। उसकी संरक्षिता सीता भी बहुत अच्छी तरह हिन्दी स्टेनो का काम सीख रही थी।

रतन शीलो को लेकर पाँच मास पँचकुइयाँ रोड की गली में रहा। उस ने माता-पिता से स्पष्ट कह दिया था कि वह शीलो को लेकर ही घर लौट सकता है वर्ना वह अलग ही रहेगा। बाबू गोविंदराम पाँच मास तक इस विषय में चुप रहे, फिर उन्होंने शीलो को घर में ले आने की अनुमति दे दी। रतन की माँ स्वयं शीलो को लिवा लाने गई और उन्होंने उसे स्नेह से पुत्र-वधू के रूप में अपने घर में ले लिया था। उन्होंने पड़ोसियों से शीलो के अतीत की कोई चर्चा नहीं की। पूछने वाला भी कौन था ? रतन शीलो के साथ अपने घर आ गया तो एक रविवार स्वयं आकर, तारा को करोलबाग में अपने यहाँ ले गया था। उसके माता-पिता तारा को देख पाने के लिए बहुत उत्सुक थे।

तारा पहली बार रतन और शीलो से मिलने के लिए गयी थी तो संध्या तक वहाँ ही रही। रतन ने पुरी, मास्टर जी और चाची के विषय में पूछा था। तारा ने बता दिया था—भाई जालंधर में 'नाजिर' के सम्पादक हैं। सब लोग ठीक ही होंगे।

रतन जब से दिल्ली में आया था, जीविका कमा लेने के संघर्ष में इतना व्यस्त रहा था कि उसे अखबार-वखबार से कोई मतलब नहीं था। पुरी का पता पाकर उस ने उत्साह से पत्र लिखने और मिलने जाने का विचार प्रकट किया।

तारा ने बहुत संक्षेप में कह दिया था, इस विषय में कुछ सोचने या पत्र लिखने की जरूरत नहीं है। शीलो तारा की बात अधिक समझ सकती थी। उसने भी रतन और सास को समझा कर चुप रहने के लिए कह दिया था। गोप्य रहस्य की बातें रतन पिता को क्या बताता ?

बाबू गोविन्दराम के पते पर जालंधर से दो पत्र आये। एक उनका था और एक उनकी मार्फत तारा के नाम था। उन्होंने अपने लाहौर के मकान के लिए

क्लेम किया था। तारा उसी दफ्तर में थी। उसने उनका काम बहुत जल्दी करवा दिया। वे बदले में उसके लिए कुछ करना चाहते थे। इसी उद्देश्य से उन्होंने पुरी को पत्र लिखा था।

रतन ने पहले तो तारा से नहीं कहा परन्तु जब तारा के नाम पत्र आया तो उसे पत्र देते समय बताना पड़ा कि उसके कुछ कहने से पहले ही पिताजी पत्र लिख चुके थे।

रतन के जाने के बाद तारा ने पत्र पढ़ा। पुरी ने बड़े स्नेह से विस्तृत पत्र लिखा था। पत्र में उसके बारे में पूछताछ के बाद पुरी ने घर का सारा हाल लिखा था। उसने सोमराज के बारे में भी लिखा था कि उसने अपनी भाभी को घर में बैठा लिया है। पुरी ने उसकी इच्छा जाननी चाही थी। उसने लिखा था कि अभी माता-पिता को साहनी के कारण बरख ही नहीं दी है। उसने पत्र-व्यवहार करने की इच्छा प्रकट की थी।

तारा पत्र पढ़कर गुमसुम हो गई। वह किसी से उस विषय में क्या बात करती। अतीत बार-बार स्मृति में जाग उठता था। वह सोचती पत्र का उत्तर दे या न दे। फिर उसने तय कर लिया कि उसके जाने से वहाँ असुविधा होगी। अगर वह उत्तर नहीं देगी तो वहाँ की स्थिति वैसी ही रहेगी, जैसी अब है। उसे किसी अनुरोध या सहायता की जरूरत नहीं थी। उसने उत्तर न देना ही उचित समझा।

पुरी के पत्र से तारा के मस्तिष्क में जो तूफान उठ आया था वह कुछ दिन में स्वयं शांत हो गया। उसके सामने अपना भविष्य स्पष्ट था। उसे आत्म-निर्भर रह कर जीवन बिताना था। नरोत्तम, रावत साहब और डाक्टर श्यामा के उत्साहित करने पर वह 'पब्लिक सर्विस कमीशन' की परीक्षा की तैयारी कर रही थी। मई १९५० में तारा, सेंट्रल सेक्रेटेरिएट सर्विस के चुनाव में ले ली गई थी।

अंडर सेक्रेटरी के रूप में तारा की नयी नियुक्ति 'नारी-कल्याण केन्द्रों' की अध्यक्ष के रूप में हुई। उसका वेतन बढ़ गया, यातायात के लिए भत्ता भी मिलने लगा। एक चपरासी भी मिला। नरोत्तम, माथुर और मर्सी ने तारा को उत्साहित किया कि वह एक गाड़ी खरीद ले और अच्छा सा मकान लेकर रहे। परन्तु तारा को यह मंजूर न था। वह टैक्सी पर ही दफ्तर चली जाती थी। परन्तु तीन मास में ही स्थिति बदल गई।

जुलाई में चड्ढा अज्ञातवास से प्रकट हो गया था। फरारी के पहले जहाँ वह रहता था, उस स्थान पर उसकी फरारी के समय कब्जा कर लिया गया था। मर्सी ने उसे निधड़क अपने यहाँ रख लिया और अपने विवाह के लिए अदालत में दरखास्त दे दी। मर्सी अपनी उमंग और प्रसन्नता वश में नहीं कर पाती थी। दिन भर किलकती रहती थी।

चड्ढा के आ जाने से माथुर भी प्रायः ही आ जाता और कई दूसरे कामरेड भी आ जाते और लम्बी-लम्बी बहसें चलती रहती थीं। विषय प्रायः एक ही रहता—कम्युनिस्ट पार्टी की नीति की आलोचना और उसकी सफाई।

माथुर और तिवारी कम्युनिस्टों के समाजवादी लक्ष्यों का समर्थन करते थे परन्तु उन्हें पार्टी की नीति पर भयंकर आपत्ति थी। वह भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को स्वतन्त्र राष्ट्रीय संगठन नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट संगठन का आनुषंगिक अंश ही मानते थे। उन्हें आपत्ति थी कि कम्युनिस्ट पार्टी की नीति अपनी राष्ट्रीय परिस्थितियों की चेतना से नहीं अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन की स्ट्रेटेजी (दाँव-पेंच) के आधार पर बनती है।

"तो इसमें दोष क्या है ?" चड्ढा का उत्तर था, "किसी भी देश में साम्राज्यवादी अथवा शोषण की व्यवस्था का अन्त प्रजातन्त्रवाद के लिए सहायक होगा। ऐसा प्रगतिवादी अन्तरराष्ट्रीय सहयोग किसी भी देश के राष्ट्रीय हित के विरुद्ध कैसे हो सकता है। कांग्रेस सरकार देश की खाद्य समस्या के लिए अन्तराष्ट्रीय सहायता ले रही है या नहीं ? कश्मीर के प्रश्न पर आप अन्तरराष्ट्रीय मत की सहायता चाहते हैं या नहीं ? अपने उद्योग-धन्धों का विकास करने के लिए आप अमेरिका-ब्रिटेन और सोवियत से सहायता और ऋण ले रहे हैं या नहीं ?"

"यही तो मैं कह रहा हूँ।" माथुर बीच में बोल उठा, "अमेरिका-ब्रिटेन हमें अपना आश्रित बनाये रखने के लिए सहायता दे रहे हैं। याद रखिये, वह हमें बाजारू माल बनाने में सहायता देते हैं, बुनियादी उद्योग चालू करने में सहायता नहीं देते ! सामरिक सामान स्वयं बना सकने में सहायता नहीं देते। ऐसे ही रूस भी अपनी शक्ति बढ़ाने में हमारा उपयोग···"

"यह इसलिए कि पूँजीवादी देशों का लक्ष्य साम्राज्यवादी है !" चड्ढा ने चेतावनी दी, "तुम सोवियत का उदाहरण चीन और कोरिया में देखो।"

तारा ने चड्ढा के समर्थन में टोक दिया—"काँग्रेस सरकार तो इन ऋणों के लिए अपनी राष्ट्रीयकरण की शर्त को भी स्थगित करने के लिए विवश हो रही है। काँग्रेस अब अपने बीस बरस पहले स्वीकार किये कराची प्रस्तावों को क्यों नहीं पूरा करती ?"

"इन्होंने ने तो सब कुछ पूँजीपतियों के हाथ में दे दिया है।" मर्सी ने क्षोभ प्रकट किया।

"नहीं-नहीं" माथुर ने कई बार आग्रह किया, "कम्युनिस्ट पार्टी एम्फेसिस (प्राथमिकता) देश की स्थिति को नहीं बल्कि अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट नीति को देती है। इन लोगों ने १९४७ में, चीन में कम्युनिस्ट सत्ता कायम हो जाने की सम्भावना देखी, पूर्वी यूरोप में समाजवादी व्यवस्था कायम होते देखी, पूर्वी बरमा, इन्डोनेशिया में विप्लव के प्रयत्न होते देखे तो भारत में भी समाजवादी क्रांति कर लेने के लिए तैयार हो गये।····"

"कातरता से मैंने अनुरोध किया—साथी, हम तुम्हारा विरोध कर सकते हैं ? पुरानी दोस्ती का भी ख्याल नहीं करोगे ?

"कामरेड दायें पाँव पर घूम कर बोले, वायदा नहीं कर सकता।"

माथुर और तारा हँसी से उछल पड़े।

"चल बातूनी, तुम हो ही पक्के बुर्जुआ।" मर्सी ने डाँट दिया। उसे कम्युनिस्टों का मजाक अच्छा नहीं लगा।

माथुर ने फिर कहा—"मैं बचकाना लोगों की बात नहीं कर रहा हूँ। तुम लोगों की नीति सदा अन्यत्र से प्राप्त आदेशों के अनुसार चलती है। सब जानते हैं, तुम लोगों ने अपनी कलकत्ता काँग्रेस की नीति 'फार लास्टिंग पीस एण्ड पीपल्स डेमोक्रेसी' में प्रकाशित लेख के आधार पर बदली है। तुम इन्कार नहीं कर सकते !"

"इन्कार करने की जरूरत क्या है ?" चड्ढा ने उत्तर दिया, "यदि पार्टी ने अन्तर्राष्ट्रीय प्रगतिवादी प्रवृत्ति को ध्यान में रख कर, देश के लिए नीति निश्चित करने का यत्न किया है तो हर्ज क्या है ? यदि किसी समय इस देश के साथी, परिस्थितियों पर मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को उचित रूप से लागू न कर सकें तो दूसरे समझदार या अनुभवी लोगों से सीख सकते हैं। इसमें आपत्ति क्या है ? काँग्रेस सरकार भी तो विशेषज्ञों को विदेशों से बुलाती है।" चड्ढा ने तिपाई पर उँगली मार कर पूछा, "साम्राज्यवाद से मुक्ति चाहने वाले और साम्राज्यवाद-विरोधी देशों के हित निश्चय ही साझे होंगे ?"

"नहीं-नहीं, तुम्हारी पार्टी का दृष्टिकोण कभी राष्ट्रीय नहीं रहा।" माथुर ने विरोध किया। वह प्रमाण देने के लिए फिर १९४२ की घटनाओं की विवेचना को दोहराने लगा।

तारा यह सब कई बार सुन चुकी थी। अपने कमरे में चली जाने के लिए उठ गई।

"अरे बैठो, इतनी जल्दी क्या है।" मर्सी ने उसे रोक दिया।

मर्सी अपने सन्तोष में इतनी डूब गयी थी कि कभी उसे स्वयं ही शंका हो जाती कि यह लड़की कहीं उपेक्षा तो अनुभव नहीं करती। वह तारा के प्रति और भी अधिक लाड़ और चिन्ता प्रकट करने लगती। चाहती थी, तारा उसकी छोटी बहिन के नाते चड्ढा से हँसी-मजाक और छेड़-छाड़ करे। घर में रौनक हो। हँसी-मजाक और चुटकी लेने में तारा को स्वयं भी रस आता था परन्तु उसके संस्कारों की सीमा थी।

मर्सी तारा को जरा भी अन्तर या परायापन अनुभव नहीं होने देना चाहती थी। तारा को पति-पत्नी के बीच में बने रहना भला नहीं लगता था। अपने कमरे में चले जाने पर भी साथ के कमरे से पति-पत्नी में हँसी और बोलचाल सुनाई देती रहने से विचित्र सा लगता था। दफ़्तर से थक कर लौटती तो घर में कल-कल काँय-काँय के मारे चैन न था। वह ऊब कर दूसरी जगह भाग जाना चाहती थी।

दूसरी जगह अलग रह कर रसोई और घर सँभालने की समस्या थी। उसके प्रति लोगों के विचार और व्यवहार ने अपनी स्थिति ऊँची मान लेने को विवश कर दिया था। वह ऐसी-वैसी जगह जाकर रह भी कैसे सकती थी। मन मार कर मर्सी के यहाँ होने वाली असुविधा सहे जा रही थी।

अक्टूबर के पहले सप्ताह में ही डिप्टी सेक्रेटरी बत्रा ने तारा को बुलाकर पूछ-ताछ की—उसका कम्युनिस्ट पार्टी से कोई सम्बन्ध तो नहीं है। क्या उसके मकान पर कम्युनिस्ट लोग आकर मीटिंगें करते हैं? तारा ने सारी परिस्थिति बत्रा साहब को समझा दी। बत्रा साहब ने उसे राय दी कि वह जल्दी ही मकान बदल ले।

बत्रा साहब ने कहा कि अगर उसे सरकार की तरफ से मकान नहीं मिला है तो वह अप्लाई करे, सरकार किराये पर लेकर भी मकान दे सकती है। अगर पैसा ज्यादा भी खर्च करना पड़े तो वह कुछ करे। उसे अपने पास गाड़ी भी रखनी चाहिए।

तारा ने मकान बदलने की मजबूरी के विषय में मर्सी से कुछ कहना उचित नहीं समझा। कुछ कह कर अपना अपमान प्रकट नहीं करना चाहती थी। इतनी सी बात के लिए नौकरी छोड़ दे....यह त्याग किस आदर्श के लिए करे? वह तो केवल जीविका कमाने के लिए ही जिन्दा है। उसका क्या सभी का यही हाल है।

तारा को दौड़-धूप के बाद पँचकुइयाँ रोड पर मकान मिल गया। अब खाना बनाने की समस्या आ गई। वह मर्द चपरासी कैसे रख लेती? उसने सीता को बुला कर बात की, "मैं अभी तक हर महीने साठ-सत्तर तुम माँ-बेटी को देती रही, पर अब खर्चा बढ़ जाने से मुश्किल हो रही है। मैं तुम दोनों को एक कमरा दे दूँगी। माँ घर सँभाल ले। जैसी दाल-रोटी मैं खाऊँगी, तुम्हारे लिए भी हो जाएगी।"

तारा किसी अनजान औरत को रख कर धोखा नहीं खाना चाहती थी। सीता और उसकी माँ के लिए भी इससे अच्छा और क्या प्रबन्ध हो सकता था। तारा कुछ दिन नया घर जमाने में व्यस्त रही।

नये मकान में तारा को समय ही समय था। उससे मिलने आने वाले लोग बहुत कम थे। माथुर ने तारा के बड़े भाई या संरक्षक का कर्त्तव्य अपना लिया था। सप्ताह में एक बार अवश्य आता था। नरोत्तम भी आता था। वह मास के अंतिम सप्ताह में तारा को क्लब ले जाने के लिए नियमित रूप से आता था। अब नीलम की सगाई दूसरी जगह हो जाने से वह रावत साहब की अधिक प्रशंसा करता था। दफ़्तर के दो आदमी सेक्शन असिस्टेन्ट राम स्वरूप भट्ट और अपर ग्रेड क्लर्क खुशीराम मेहता भी तारा के यहाँ आया करते थे। भट्ट उसे दफ़्तर के कर्मचारियों के कर्मों की रिपोर्ट दे जाता था।

तारा को नया मकान मेहता की कोशिश से ही मिला था। वह भी उसी मुहल्ले में रहता था। वह अपने मामा की दूकान से साफ-साफ मसाले आदि ला देता था।

रतन और शीलो भी तारा के यहाँ आये। सीता और पूरण देई गंभीर हो गईं। परन्तु तारा की उनसे आत्मीयता देखकर उन्हें अपने माथे के तेवर छिपा लेने पड़े।

मेहता अक्सर अपनी लड़की गुड्डी को तारा के घर ले आता था। गुड्डी तारा से बहुत हिल-मिल गई थी। एक दिन नरोत्तम और माथुर बैठे हुए थे कि मेहता की पत्नी और बहन आईं। बसन्त पंचमी के दिन गुड्डी का नामकरण था। मेहता

परिवार का विचार था कि जो नाम तारा बता देगी, वही नाम लड़की का रख दिया जाएगा। दोनों महिलाओं के कपड़े देखकर नहीं लगता था कि वे मध्यम श्रेणी के परिवार की हैं। नरोत्तम और माथुर उनके जाने के बाद दिल्ली पर रिफ़्यूजियों के प्रभाव पर बातचीत करते रहे।

बसन्त पंचमी के दिन तारा मेहता के घर गई। वह अपने साथ सीता को भी ले गई। वहाँ उससे कहा गया कि अगर वह अनुमति दे तो लड़की का नाम उसी के नाम पर तारा रखा जाए। तारा के मस्तिष्क में झनझनाहट हुई—उसने सोचा जो उसने भोगा है वह कोई न भोगे। परन्तु उसके मुँह से इतना ही निकला—"सुखी हो, उसका कल्याण हो।"

तारा के मस्तिष्क में पाँच वर्ष पूर्व का एक ऐसा ही दिन कौंध गया। जब नरेन्द्र के भांजे का नामकरण हुआ था—उसका नाम तारासिंह रखा गया था। तब से असद उसे भी कभी-कभी तारासिंह कह दिया करता था। तारा मेहता के घर अधिक न बैठ सकी। वह सीता को वहीं छोड़ कर आ गई।

डिप्टी सेक्रेटरी बत्रा साहब ने तारा को फोन पर कहा—"प्लानिंग के लिए तुमने जो दूसरी रिपोर्ट दी है, उसमें भी वह लोग बहुत-सा ब्यौरा माँग रहे हैं। उन्होंने और भी बहुत से सवाल पूछ डाले हैं। उनकी प्रश्नावली भेज रहा हूँ। मेरा ख्याल है, तुम इस प्रश्नावली के उत्तर तैयार करके उनके दफ़्तर में स्वयं ही चली जाओ। डाक्टर नाथ से मैं यहीं कह देता हूँ। ठीक है न !"

डाक्टर नाथ प्लानिंग कमीशन के औद्योगिक विभाग के आर्थिक परामर्श-दाता थे। प्लानिंग का नया दफ़्तर मानसिंह रोड पर था। तारा ने डाक्टर नाथ के सामने पूरी व्याख्या कर सकने के लिए तीन दिन तक नयी रिपोर्ट और नये ब्योरे तैयार किये। उसने चपरासी से फाइलें उठवाईं और तीन बजे निश्चित समय पर डाक्टर नाथ के दफ़्तर चली गयी।

डा० पी० नाथ के चपरासी ने देखा—चपरासी से फाइलें उठवाये एक महिला चली आ रही हैं। वह खड़ा हो गया। नाम लिखने के लिए पर्ची सामने कर दी। तारा ने लिख दिया—"अन्डर सेक्रेटरी, फार स्माल स्केल इन्डस्ट्रीज, वीमेंस सेक्शन—तारा पुरी।"

चपरासी ने भीतर से तुरन्त लौटकर तारा के लिए दरवाजे का पर्दा उठा दिया।

डाक्टर नाथ नवम्बर के आरम्भ की सुहावनी ऊष्णता में हलके पंखे के नीचे, बड़ी मेज पर कोहनी टेके अपने दाहिने बैठे स्टेनो को लिखवाया नोट ध्यान से सुन रहे थे। तारा की ओर देखे बिना ही उन्होंने अँग्रेजी में कह दिया—कृपया एक मिनट प्रतीक्षा कीजिये, बैठिये। स्टेनो नोट पढ़ता रहा।

तारा ने कुर्सी पर बैठ कर डाक्टर नाथ की ओर देखा। उसकी आँखें विस्मय से खुली रह गयीं। प्रोफेसर डाक्टर प्राणनाथ !....कनपटी पर और कान के नीचे बचपन में गरम पानी से जल जाने के अमिट हल्के चिन्ह ...। तारा को अपने

हृदय की धड़कन सुनाई देने लगी। हाथ होठों पर चला गया। फिर कुर्सी पर सँभली। आँचल सम्भाला !

नोट पढ़ लिया जाने पर प्रोफेसर ने उस पर दस्तखत कर दिये और तारा की ओर घूमा। आगन्तुक को देख कर प्रोफ़ेसर की पलकें कुछ और खुल गयीं, पल भर को स्तब्ध रह गया। मेज पर पड़ी पुर्जी पर नजर डाली। चेहरे पर एक दमक सी आ गयी। बोलने के लिए गहरी साँस खींची पर बोल न सका। फिर तारा के चेहरे पर दृष्टि टिकाये, आगे झुक कर अँग्रेजी में निश्चय के स्वर में बोला—"तुम तारा हो !" उसने फिर मेज पर पड़े पुर्ज़े की ओर देखा—तारा पुरी ! अपना नाम तुमने स्वयं लिखा है। मैं स्वप्नावस्था में तो नहीं हूँ ! तारा को पहचानने में भूल नहीं कर सकता !"

प्रोफेसर डाक्टर प्राणनाथ को देख कर गत पाँच वर्ष की स्मृतियाँ तारा के मस्तिष्क में आँधी की तरह उमड़ आयी थीं। उसने मन के आवेग को वश में कर लेने के लिये गर्दन झुका ली थी।

डाक्टर नाथ ने मेज पर झुक कर अपना हाथ तारा की ओर बढ़ा दिया—"तुम मुझे नहीं पहचानतीं ?"

प्रोफेसर नाथ के अनुमान के समर्थन में तारा ने अपना हाथ मिलाने के लिए बढ़ा दिया और फिर बिलकुल दृढ़ बन जाने के लिए दोनों हाथों की उँगलियों को आपस में जकड़ कर निश्चल हो गयी।

नाथ का मन उबल पड़ा था। वह तारा के चेहरे पर दृष्टि लगाये कुछ और आगे झुककर बोलता गया—"वह क्या बेहूदा अफवाह थी...पर स्वयं मास्टर जी ने मुझ से कहा,...बहुत रो रहे थे। बहुत परेशान थे। बताया था, तुम ससुराल में ऊपर की मंजिल में थीं, बच नहीं सकीं, यह क्या बकवास थी ?"

नाथ के चुप होते ही साथ के कमरे से टाइपराइटर की पट-पट बहुत जोर से सुनाई देने लगी, तारा के मस्तिष्क में स्मृतियाँ चटख रही थीं।

तारा के मन के सब दुख और स्मृतियाँ बह जाने के लिए उमड़ पड़े थे। वह फूट-फूट कर रो देना चाहती थी। प्रोफेसर क्या नहीं जानता था ? कालेज में दाखिल होते समय आर्थिक कठिनाई का उपाय उसी की सहायता से हुआ था। जिस रहस्य के कारण, आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए भाई के सामने सिर तोड़ लेना पड़ा था, आत्म-हत्या का यत्न किया था, उस बात में भी प्रोफेसर की सहानुभूति तारा के प्रति थी। जब वह रहस्य लज्जा का कारण बन गया, तब भी प्रोफेसर ने उसके रहस्य की रक्षा की थी, परन्तु अपने-आप को सँभाले रखना अनिवार्य था। इतने बड़े आदमी के सामने रोना। अब वह लड़की नहीं, महिला और अफसर थी ! तारा के मस्तिष्क में चक्कर आ रहा था। वह दोनों हाथों की उँगलियाँ आपस में जकड़े, दाँत दबाये निश्चल बनी हुयी थी। साथ के कमरे से टाइपराइटर की पट-पट बहुत जोर से सुनायी दे रही थी।

प्रोफेसर ने मेज पर कोहनी टिका ली। वह तारा की ओर झुक गया और

शीशे के पेपरवेट को लट्टू की तरह घुमाते हुए याद कर-कर के कहता गया—"मास्टर जी सोनवाँ चले गये थे। लेकिन मैं अगस्त के अन्त तक लाहौर में ही रहा। कैसा ध्वंस, कैसा हाहाकार! होटल से बाहर निकलने में डर था कि पहचान कर होटल का मुसलमान बैरा ही न छुरा मार दे। होटल में प्रायः यूरोपियन ही थे इसलिए भय नहीं था। बैठे-बैठे ख्याल आता था, हम तो हिन्दू-मुसलमानों की दो कौमें होने की बात पर विश्वास ही नहीं कर सकते थे, लेकिन यह सामने प्रत्यक्ष क्या है? सब कुछ हमारे विश्वास पर ही निर्भर नहीं कर सकता। यदि पाकिस्तान बनाने वाले हमें शत्रु समझते हैं तो हम उन्हें जबरदस्ती अपने साथ बाँध कर नहीं रख सकते। हम, मेरा अभिप्राय है सामूहिक-सामाजिक रूप से जिन से छू जाना असह्य समझते रहे हों, आज उन्हें अपना अंग बता कर बहलाने का यत्न करना धोखा नहीं है? हम ने चाहे जिस कारण ऐसा व्यवहार किया हो, उसकी कीमत देनी होगी। हिन्दू-मुसलमान के हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के बँटवारे का बीज, सरकारी नौकरियों को हिन्दू-मुसलमानों में साम्प्रदायिक अनुपात से बाँटने के दिन या उनके चुनाव-क्षेत्र अलग-अलग बना देने से नहीं बोया गया था। बल्कि मुसलमानों को म्लेच्छ और अछूत समझने के दिन से ही बो दिया गया था। हिन्दू को आप अछूत बना कर भी दबा सकते हैं, क्योंकि वह आप के धर्म से बँधा है। मुसलमान तो उस धर्म से बँधा नहीं। वह अछूत समझे जाने का अपमान क्यों बर्दाश्त करे? जिस नियम को हमने अपनी सत्ता की रक्षा के लिए अपनाया था, उसी नियम ने हमें खा लिया। कैसा द्वन्द्व है?"

डाक्टर नाथ ने गहरी साँस ली। आँखें पल भर झपकीं और शायद यह सोच कर कि तारा के लिए बोल पाना कठिन है, मेज पर उँगलियों के बीच घूमते पेपरवेट पर नजर टिकाये कहने लगा—"शिमला से मास्टर जी को सोनवाँ पत्र लिखा था। उनका उत्तर मिला था। फिर मैं ही नहीं लिख सका। छः महीने शिमला में व्यर्थ पड़ा रहा। पंजाब यूनीवर्सिटी में कुर्सियों के लिए अजीब पैंतरे चल रहे थे। पंजाब ने मुझे केन्द्र को सौंप दिया। केन्द्र ने बंगाल भेज दिया।

"मुख्यमंत्री घोष बाबू गांधी जी की कल्पना के अनुसार विकास की योजना आरम्भ करना चाहते थे। मुझे भी लगा कि इस काम में उपयोगी हो सकूँगा। लेकिन वे विकास योजनायें बंगाल का भाग्य अपनी मुट्ठी में लिये जबरदस्त लोगों के स्वार्थों के अनुकूल नहीं थीं। उन लोगों ने घोष को ही उखाड़ फेंका। नये चीफ मिनिस्टर का ख्याल था कि मैं घोष का आदमी था। उनके तरीके में खटकता था। बरस भर से यहाँ प्रोफेसर सालिस के साथ पंचवर्षीय योजना के काम में साथ दे रहा हूँ।"

तारा अब भी दोनों हाथों की उँगलियाँ आपस में जकड़े, चुप और निश्चल थी। प्रोफेसर ने पेपरवेट को जोर से घुमाते हुए पूछ लिया—"मास्टर जी आ गये हैं, पुरी भी?"

"जालंधर···" तारा ने सूखे कंठ से घूंट भर कर कहा।

"तुम यहाँ ससुराल में होगी?" नाथ ने अनुमान प्रकट किया।

तारा ने इंकार में गर्दन हिला दी।

"अच्छा तो तुम यहाँ नौकरी के कारण हो। खूब अच्छी जगह मिल गयी है। सिलेक्शन में आ गयी होगी !"

तारा ने गर्दन हिला कर हामी भर ली।

"तुम्हें देख कर लाहौर याद आ गया। किक्के, गुल्ली, बल्लू को पढ़ाने तुम हवेली में आती थीं। वे भी कैसे दिन थे ? अन्तिम बार तुम्हारे घर गया तो तुम विवाह के रंग-बिरंग, गोटा लगे कपड़े पहने थीं, हाथों में मेंहदी लगी हुई थी। बहुत छोटी-सी लग रही थीं। अब तो सफेद कपड़ों में बिलकुल सीरियस लेडी बन गयी हो !"

तारा ने आँखें उठायीं। बहुत यत्न से फीकी सी मुस्कान चेहरे पर ला सकी।

"तुम्हारे ससुराल के लोग, तुम्हारा पति..." नाथ मुस्कराया, "कहाँ हैं ?"

तारा की गर्दन फिर झुक गयी।

नाथ मौन रह गया। कुछ पल सोच कर उसने फिर पूछ लिया—"जालंधर में पुरी क्या कर रहा है ?"

"अखबार....।"

"किस अखबार में है ?"

"नाजिर।"

"नाजिर, उर्दू में होगा। कभी देखा नहीं। ठीक चल रहा है ?"

तारा ने हामी भर ली।

नाथ ने कह दिया—"तुम भी तो कुछ बोलो। तुमने तो कुछ बताया ही नहीं। तुम जानती हो, मुझे तुम्हारे बारे में बहुत उत्सुकता है। अपनी सब बातें बताओ।"

"फिर..." तारा ने सूखे गले से घूँट निगल कर कहा।

नाथ ने ध्यान से तारा के चेहरे की ओर देखा और उधर से नजर हटा कर कहा—"इट्ज आल राइट।"

टाइपराइटर की आवाज बार-बार खूब जोर से कह रही थी—आलराइट, आलराइट...आल राइट !

नाथ तारा को अपनी नजर की असुविधा से बचाने के लिए कई क्षण तक दायीं ओर की दीवार पर आँखें टिकाये पेपरवेट को लट्टू की तरह घुमाता रहा और फिर कलाई पर घड़ी देखकर बोला—"साढ़े चार बजे हैं। इस समय तो मुझसे कुछ भी काम नहीं हो सकेगा। तुम्हें देख कर इतना प्रसन्न हो गया हूँ कि ध्यान काम में नहीं लगेगा।"

तारा ने कृपा और सांत्वना की छाया पाकर गर्दन झुका ली और कृतज्ञता में मुस्करा दी।

"कल साढ़े दस-ग्यारह बजे आ जाना, तभी काम कर सकेंगे। आ सकोगी, असुविधा तो नहीं होगी ?"

"नहीं नहीं, कोई असुविधा नहीं होगी।" तारा ने विश्वास दिलाया।

नाथ ने चपरासी को बुलाने की घण्टी की ओर हाथ बढ़ाते हुए पूछा—"चाय मँगाऊँ ?"

"इच्छा हो तो मँगा लीजिये।"

नाथ ने पूछ लिया—"तुम इस समय अपने दफ्तर जरूर जाना चाहती हो ?"

"बहुत जरूरी तो नहीं है ।"

"तो हम लोग कहीं बाहर चाय पियें। कुछ देर बातचीत होगी। कितने दिन बाद मिले हैं। तकरीबन चार बरस बाद। जान पड़ता है, बीच के समय में प्रलय गुजर गयी है ।"

तारा ने गर्दन झुका कर हामी भरी।

नाथ और तारा कार में बैठकर चल दिए। रास्ते भर भी नाथ ही बोलता रहा। लौटते समय तारा ने नाथ से अपने घर चलने को कहा, उसने किसी और दिन आने का आश्वासन दिया और अपने घर चला गया।

पूरणदेई तारा की बुआ और सीता तारा की बहन के रूप में उसके साथ रहती थीं। पूरणदेई तारा की स्थिति के विचार से बाहर जाते समय साफ कपड़े ही पहन लेती थी। तारा ने कह-सुनकर फरवरी से सूचना विभाग में सीता को हिन्दी स्टैनो की नौकरी दिलवा दी थी। उसे सवा सौ रुपया महीने मिल जाता था।

तारा के पड़ोस में लाहौर की पुरानी अनारकली के दुलीचंद तलवार रहते थे। उनके पास पैसा बहुत था। मुहल्ले के लोग उन्हें ताया जी और उनकी पत्नी को तायी जी कहा करते थे। तायी जी को घर में कुछ काम न रहता था। काम करने को नौकर थे। वे अक्सर पूरणदेई के पास आकर बैठी रहतीं।

तारा ने पूरणदेई को आरम्भ में ही सख्त ताकीद कर दी थी कि उसके घर-बार, विवाह और आग की दुर्घटना की चर्चा किसी से करने की जरूरत नहीं है। तायी जी पूरणदेई के पास आकर बैठतीं तो लड़कियों के ब्याह की बात ही छेड़ बैठतीं। वह तारा के सामने ही अपने भतीजों की अमीरी का जिक्र पूरणदेई से किया करतीं।

तारा के प्रभाव और अपने कटु अनुभव से सीता बहुत सम्भल गई थी। परन्तु तारा की सूक्ष्म दृष्टि ने भाँप लिया था कि लड़की संयम के बन्धनों में फिर अकुलाने लगी थी। तारा मन ही मन सोचती माँ-बाप लड़कियों को संकट समझते हैं। मैंने व्यर्थ का झमेला समेट लिया है।

●

गुड्डी के नामकरण के बाद ही मेहता की पत्नी ने एक बार धीरे से बात की थी। मेहता के मामा का लड़का दिल्ली में ही काम करता था। वह उसकी शादी सीता से करना चाहते थे। वे अमीर थे, उन्हें दहेज की कोई चिन्ता नहीं थी, पर लड़की अच्छी चाहिए। बातचीत हो गई। दूर से लड़के को लड़की भी दिखा दी गई। शादी तय हो गई।

अमृतसर से पूरणदेई के कुछ रिश्तेदार भी आ गए थे। तारा को इस विवाह में क्या उत्साह होता। वह कर्त्तव्य समझ कर निबाह रही थी। उसकी ओर से सुझाव और प्रबन्ध का उत्तरदायित्व माथुर ने सम्भाल लिया था।

जिस दिन तारा की डाक्टर नाथ से मुलाकात हुई थी, उसके दूसरे दिन तारा

जब दफ्तर गई तो उन्हें रविवार को अपने घर भोजन पर बुला आयी थी। वह डाक्टर के आने से पहले ऐसी सावधानी और पुलक से काम कर रही थी जैसे किसी पर्व की तैयारी हो।

डाक्टर आया। उसने बात ही बात में कह दिया कि उसकी बीवी को तो ठीक ढंग से कुछ करना ही नहीं आता। बीवी शब्द सुनकर तारा को कुछ विस्मय हुआ। उसने डाक्टर साहब से भाभी से मुलाकात करवाने को कहा। डाक्टर ने इस बात पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया और बँटवारे के बाद और अब से पहले की बातें सुनाता रहा।

डाक्टर नाथ से मिलकर तारा के मस्तिष्क में असद की याद एकाएक आँधी की तरह आ गई थी। तीन-चार महीने पहले अखबार में उसने पढ़ा था कि कम्युनिस्ट लीडरों को पाकिस्तान में पकड़ा जा रहा है। यह पढ़कर वह कई दिन तक असद के खयाल को मस्तिष्क से निकाल नहीं पाई थी। मई के दूसरे सप्ताह में अखबार में फिर खबर आई थी कि मिसेज जौहर असद ने अपने पति की जमानत की दरखास्त दी थी; असद जमानत पर जेल से छूट गया था। गिरफ्तारी से दो सप्ताह पूर्व ही उनका विवाह हुआ था।

सीता का विवाह सितम्बर के अन्तिम सप्ताह के लग्नों में निश्चित हुआ था। तारा ने डाक्टर नाथ के घर इस आशा से फोन किया कि शायद फोन पर भाभी बोलें। परन्तु फोन बूढ़े चपरासी ने उठाया। उसने मिसेज नाथ को फोन पर बुलाने को कहा तो उसने कह दिया कि हम साहब को बुला देते हैं। तारा ने डाक्टर से सीता की शादी पर भाभी को लाने को कहा तो भी डाक्टर ने अच्छा कह कर बात टाल दी।

तारा को सीता की शादी पर साढ़े आठ सौ रुपया खर्च करना पड़ गया। परन्तु उसने कर्त्तव्य समझ कर सब कुछ कर दिया।

डाक्टर के अकेले आने पर तारा को लगा कि क्या दोनों में पटती नहीं है? डाक्टर ऐसे गंभीर हैं फिर उन्होंने ऐसी औरत से शादी कैसे कर ली? पर उस समय कुछ कहने का अवसर नहीं था।

विदाई के दो दिन बाद पूरणदेई सीता को ले आई थी। तारा ने उससे बात-चीत की तो उसे आभास मिल गया कि सीता इस विवाह से खुश है। शनिवार को तारा दफ़्तर से लौटी तो सीता के ससुराल की दो औरतें उसे लेने आई हुई थीं। सीता के चले जाने पर तारा को अकेले रह जाना बहुत खला। सीता से गले मिलते समय उसकी आँखों में आँसू आ गए थे।

एक रविवार को चड्ढा बाहर दौरे पर गया हुआ था। मर्सी ने फोन करके तारा को बुला लिया कि उससे कोई बात करनी है। तारा मर्सी के घर गई तो पहले इधर-उधर की बातें होती रहीं। फिर मर्सी ने तारा से साफ-साफ तिवारी के विषय में उसका विचार पूछ लिया। तार ने कह दिया कि उसका शादी करने का विचार नहीं है। मर्सी ने बताया कि तिवारी ने उसके कारण ही और कई प्रस्ताव अस्वीकार कर दिए हैं और वह उसकी पूजा करता है। परन्तु तारा को यह कुछ भी अच्छा नहीं

लगा। उसने मर्सी से कह दिया कि वह तिवारी से कह दे कि वह उसकी (तारा की) इच्छा छोड़ दे और दूसरे प्रस्ताव स्वीकार कर ले।

तारा ने बात बदल दी। उसने मर्सी से कार के विषय में राय माँगी। डाक्टर नाथ का जिक्र आया तो मर्सी ने तारा से कह दिया कि आजकल तू डाक्टर के आगे बिछी जा रही है। तारा ने कहा—दीदी कैसी बातें करती हो। तुम नहीं जानतीं कि वह हमारे परिवार के लिए क्या हैं। उन्होंने हम सब की बहुत सहायता की है, वह हमारे परिवार के रक्षक रहे हैं। वैसे भी वह विवाहित हैं। इस पर मर्सी ने कहा कि कभी उनकी पत्नी को देखा तो नहीं। तारा ने कहा—शायद आजकल दोनों में कुछ गड़बड़ है। मर्सी ने कह दिया—हो सकता है तुम्हारे कारण दोनों में गड़बड़ हो गई है। उनकी बीवी ने तुम दोनों को एक साथ देख लिया होगा। तारा ने कहा कि मैं डाक्टर की इज्जत बड़े भाई से भी अधिक करती हूँ। तारा कुछ देर चुप रही फिर वापस चली आई। आते समय मर्सी ने उसे प्यार से बाँहों में ले लिया था। मर्सी के प्रति तारा के मन का क्षोभ धुल गया।

एक महीने के बाद चड्ढा आया तो उसने डाक्टर नाथ से भेंट करने की बात तारा से कही। एक रविवार तारा डाक्टर को मर्सी के घर ले गई। वहाँ पर माथुर जी भी मौजूद थे। माथुर, चड्ढा और डाक्टर बड़ी देर तक बातें करते रहे।

मिसेज अगरवाला ने तारा से सम्पर्क टूटने नहीं दिया था। अपना काम पड़ने पर वह उसे गाड़ी भेज कर बुला लेती थीं।

नवम्बर के दूसरे सप्ताह में मिसेज अगरवाला ने तारा को पुत्तन के जन्म-दिन पर बुलाया। वहाँ प्रसाद जी और एक-दो और काँग्रेसी लोग भी मौजूद थे। वे लोग आपस में डाक्टर श्यामा की निन्दा कर रहे थे।

चुनाव में डाक्टर श्यामा कांग्रेस की ओर से टिकट लेने वाली थीं। इसी विषय पर वे लोग बातें कर रहे थे। वे कह रहे थे—उसका कैरेक्टर क्या है? वह डे को बेवकूफ बना रही है। तारा को डाक्टर श्यामा की निन्दा बुरी लग रही थी। वह उनके पास से हटकर डौली और नरोत्तम से बात करने लगी।

मिसेज अगरवाला ने लोगों के चले जाने के बाद कहा कि उसकी तो श्यामा से अच्छी दोस्ती है, वही उसे समझाये। वह श्यामा से कहे कि वह कांग्रेस की ओर से उम्मीदवार न बने।

तारा घर आकर इसी प्रसंग पर सोचती रही। उसे डाक्टर श्यामा बड़ी स्पष्टवादी और स्वभाव की अच्छी लगती थीं। उसने सोचा कि ये लोग व्यर्थ ही उनके पीछे पड़े हैं।

एक रविवार तारा ने डाक्टर श्यामा को फोन करके समय ले लिया और उसी समय उसके घर गई। पहले दोनों ने एक-दूसरे से हाल-चाल पूछा फिर तारा ने मिसेज अगरवाला का जिक्र किया। इस पर श्यामा ने कहा कि उनसे दूर रहना ही भला है। उन्होंने बताया कि अगरवाला स्वयं काँग्रेस की टिकट चाहती हैं, पर उन्हें

मिल नहीं रही है।

तारा कुछ पल मौन रही फिर बोली—"आप उन लोगों को ऊटपटाँग-बकवास करने का मौका क्यों देती हैं ?"

"क्या ?"

"बहिन जी, यह मत ख्याल करियेगा कि चुगली कर रही हूँ, पर आप के लिए कोई ऊटपटाँग बकता है तो मुझे बुरा लगता है। मैं आप का बहुत आदर करती हूँ।"

"कौन क्या कह रहा था ?" श्यामा ने तारा की ओर झुक कर पूछा।

"यही, अगरवाला कह रही थी। विश्वास कौन करेगा···पर सुन कर बुरा तो लगता है। मि० डे का नाम लेकर काँग्रेसियों के सामने जाने क्या-क्या बक रही थी।"

"कुछ समझ में नहीं आता, क्या करूँ इस जिन्दगी का···शायद यही बुराई है कि ब्याह नहीं किया। घरों में बन्द औरतें शायद हम से अच्छी है। गृहस्थी के धन्धे और बच्चों की चिन्ता और चिल्ल-पों, उनके दिमाग में और कोई बात आने ही नहीं देती होगी।···पेट भरता रहता है, मशीन की तरह काम करती रहती हैं। स्त्री को बाँध कर रखना है तो उसका व्यक्तित्व जगाने, उसे आत्मनिर्भरता की बात सिखाने की क्या जरूरत है ? पति होता तो उसे शायद मुझे बहुत पीटना पड़ता, शायद मेरा कत्ल ही कर डालता। हो सकता है, मेरा मन बदल जाता, पशु बन जाती। कभी रस्सी तुड़ाने का यत्न करती। हाँक दी जाने पर भी दरवाजे पर अड़ी रह कर रम्भाने लगती।"

श्यामा मौन हो गयी। तारा भी सोच में पड़ कर चुप थी।

श्यामा फिर बोली—"तैंतीस की हो गयी हूँ। अब शादी कर लूँ ? किससे कर लूँ ? चौबीस-पच्चीस बरस के लड़के से कर लूँ ? शादी लायक कौन मर्द पैंतीस-चालीस की उम्र तक प्रतीक्षा करता रहता है ? किसी दूसरी स्त्री का पति छीन लूँ ! किसी समय मर्द जिस स्त्री को चाहते थे, उसे जोर-जबर से उठा ले जाते थे। अब दूसरे ढंग हैं। मेरा भी इरादा होता तो शायद असंभव न होता पर ऐसा नहीं सोचा। मैं ऐसा नहीं चाहती। डे की बीवी किस बात के लिए मरी जा रही है। मैं कभी दो बात कर लेती हूँ तो उसका कौन सा धन छीन लेती हूँ ?···क्या जिस-तिस से ब्याह कर लूँ ? मैं क्या गाय-भैंस हूँ। जो संगति के लिए अच्छे लग सकते हैं, वे सब गृहस्थियाँ लिये बैठे हैं।"

तारा को लग रहा था श्यामा किसी अप्रिय रोग का ब्योरा उसे समझा रही थी। गहरी साँस लेकर बोली—"दीदी, फिजूल क्या सोचना है ! क्या ब्याह के बिना निभ नहीं सकता ?"

"कहाँ निभ सकता है ? कैसे निभ सकता है ?" श्यामा ने बेबसी प्रकट की। और हाथ पर कनपटी टिका कर मौन हो गयी। फिर गहरी साँस ली—"कभी सोचती हूँ, अध्यात्म का नशा लगा लूँ पर उस में मेरा मन नहीं जमता, जबरदस्ती

कैसे विश्वास कर लूँ। जो विश्वास कर पाते हैं, उन की बात दूसरी है। ऐसी भी तो स्त्रियाँ हैं जो टोना करके संतान पा लेने में विश्वास कर सकती हैं, ऐसे विश्वास में जान की बाजी लगा देती हैं, हम-तुम वैसा विश्वास कर सकती हैं ?"

तारा क्षण भर सोच कर बोली—"दीदी, जिस समाज में रहते हैं, उसके नियम तो माने जाते हैं, भूख से व्याकुल हो जाते हैं तो भी संयम रखते हैं। कुछ दिन भूखी रह कर, कई-कई दिन आधा पेट खा कर देखा है दीदी ! कुछ को टुकड़ों के लिए लड़ते भी देखा है। जो नहीं लड़ीं, उन्हें भी देखा है। अपना आत्म-सम्मान भी तो कुछ होता है, जिसके लिए प्राण दे दिये जा सकते हैं।"

तारा ने संक्षेप में शेखूपुरा की कैद के अनुभव बता दिये। श्यामा आँखें फाड़े सुनती रही। अन्त में कुछ पल मौन रह कर उसने तारा से पूछ लिया—"तुम मानने को तैयार हो, वह तुम्हारे कर्मों का फल था ?"

"यह कैसे मान लूँ ? कैसे मान लूँ कि भगवान मेरे कर्मों का फल देने के लिए दूसरों से पाप करवा रहा था ? बस में नहीं था इसलिए सहना पड़ा, अपने बस की सीमा तो माननी ही पड़ेगी।"

कुछ सोच कर तारा बोली—"पर दीदी, उस के तीन बच्चे हैं। उन लोगों का क्या होगा ?"

"उनका क्या बिगड़ रहा है ? वही चुड़ैल बवंडर खड़ा किये रहती है। मैंने उसका छीन क्या लिया है, वही बता दे ! उसे ईर्ष्या है, यही जलन है कि उसका पति जरा खुश क्यों हो जाता है ? प्राइड आफ पजेशन (स्वामित्व का अहंकार) और क्या ? ईर्ष्या ! ईर्ष्या के सिवा उस चुड़ैल को काम ही क्या है ? खाना-पहनना और शिकायत करना। घर अब भी डे की माँ सँभालती है। रसोइया है, आया है।...वह सब के सामने बेकार उस गरीब की बदनामी करती फिरती है। डे खून के घूँट पी कर, अपनी घृणा को दबा कर चुप रह जाता है। एक दिन तो इतना परेशान हो गया कि सोचने लगा—रात बँगले के सब दरवाजे बन्द करके आग लगा दे, कोई भी न बचे...।"

तारा कुछ भी न बोल सकी। कल्पना में डूब गयी—दुखों और व्यथाओं का अन्त नहीं है। कहीं शारीरिक, कहीं मानसिक। मेरे दुख, बंती के दुख, मिसेज अगरवाला और डे के दुख, शीलो और श्यामा के दुख। जब कोई और दुख न हो तो, अतृप्त प्यार का दुख ! संसार की सब भूलों से बड़ी भूल, बेमेल व्याह की भूल।...मैं कैसे बच गयी।...क्या भुगत कर बची...पर वह यातना गले पड़ जाती तो उसका अंत तो मृत्यु से ही हो सकता था।

रात बहुत देर हो गई थी, श्यामा तारा को उसके घर छोड़ने आई।

दिल्ली चुनावों के बवंडर के कारण क्षुब्ध थी। देशहित और जनहित के उत्साह और नशे में उचित-अनुचित की चिंता नहीं रही थी। चुनाव का सबसे विराट आयोजन कांग्रेस का ही था। तारा को संतोष था कि श्यामा ने टिकट लेने

से इन्कार कर दिया था। वह सरकारी अफसर होने के कारण चुनाव के बावलेपन के दौरे से बची हुई थी। यही नरोत्तम के साथ भी था। चुनाव के दिन तो उसकी फैक्टरी में छुट्टी थी। उसे किसी दल की हार-जीत से कोई विशेष प्रयोजन न था, परन्तु विजेता दल का नाम जानने का कौतूहल अवश्य था। अधिकांश लोग जानते थे कि शासन में धाँधली और अयोग्यता के बावजूद विजय काँग्रेस की ही होगी। सोशलिस्टों और कम्युनिस्टों का आपस में सबसे उत्कट विरोध था। दोनों जानते थे, वे काँग्रेस-विरोधी लोगों को आपस में बाँटकर, दोनों ही काँग्रेस से हार जायेंगे पर आपस में मिल न सकते थे।

तारा सब्जी मण्डी में पोलिंग अफसर नियुक्त थी। वहाँ आपस में दो दल के लोगों में कुछ झगड़ा हो गया था। वह बड़ी उलझन में फँस गई थी। उसने मामला पुलिस के हाथ में दे दिया।

चुनाव के बवंडर के साथ-साथ तारा के मस्तिष्क में श्यामा की बातों से उठा बवंडर शनैः-शनैः बैठता जा रहा था। तारा को श्यामा से एक रोगी बहन जैसी सहानुभूति हो गई थी। उसे खयाल आ जाता कि अगर कहीं मर्सी की बात ठीक हुई तो क्या मिसेज नाथ मिसेज डे की तरह उत्पात नहीं कर सकती। उसने सोचा कि अगर वह भ्रम है तो क्या मिसेज नाथ से मिलकर उसे दूर कर देना ही उचित है।

उसने एक दिन फोन किया तब फोन पर डाक्टर नाथ की ही आवाज सुनाई दी। तारा ने उनसे कहा कि वह उनके घर आएगी तो उन्होंने कहा कि तुम इतनी दूर क्या परेशान होगी, मैं ही आ जाऊँगा। तारा ने भाभी जी को लाने की बात कही तो डाक्टर ने टाला। फिर तारा के बहुत आग्रह पर केवल—'अच्छी बात है' कह दिया।

डाक्टर नाथ के अकेले आने पर तारा निराश हो गई। तारा ने भाभी को न लाने की शिकायत की तो उन्होंने फिर कभी लाने को कह दिया।

चुनावों की आँधी बिलकुल शान्त हो चुकी थी। कुछ लोगों ने कांग्रेस सरकार को गिरा देने के जो काल्पनिक किले बना लिये थे वे कोहरे के बादलों की तरह उड़ गये थे। भारत के सभी राज्यों में कांग्रेसी सरकारें कायम हो गयी थीं। सभी विधान सभाओं में कांग्रेस का निर्णायक बहुमत था परन्तु कांग्रेसी सरकार की आलोचना करने वालों की संख्या पूर्वापेक्षा बढ़ गयी थी। कई राज्यों में कम्युनिस्ट भी विधान सभाओं में पहुँच गये थे। लोकसभा में भी पाँच सौ में तीस के लगभग कम्युनिस्ट सदस्य आ गये थे। अब कम्युनिस्ट पार्टी गैर कानूनी नहीं थी। कानूनन कम्युनिस्ट पार्टी की स्थिति दूसरी राजनैतिक पार्टियों के ही समान थी। फिर वही व्यवस्था चलने लगी थी। सरकारी क्षेत्रों में पंचवर्षीय योजना के सफल-असफल होने के अनुमानों और उसे सफल बना सकने के प्रयत्नों की चर्चा थी। तारा की बदली 'उद्योग और व्यापार' विभाग में हो गयी थी।

मिस्टर अगरवाला डाक्टर नाथ से मिलना चाहते थे। उन्होंने डाक्टर को

रविवार की संध्या को चाय पर बुलाया। तारा को भी वहाँ जाने का निमंत्रण मिला था। नरोत्तम को तारा से मिसेज नाथ के बारे में पता चला था। अतः उसने तारा को बताया था कि उन्हें भी बुलाया जाएगा। तारा ने सोचा अब तो भाभी मिल ही जायेंगी। जब तारा अगरवाला साहब के घर पहुँची तो नरोत्तम ने उससे कहा कि उसने मिसेज नाथ का क्या तमाशा बनाया है, डाक्टर अविवाहित है। तारा चकरायी कि यह क्या रहस्य बन गया है!

अगरवाला साहब ने प्रोफेसर नाथ को बड़े अपनेपन से लिया। 'गोपालशाह एण्ड संस' से पुराने सम्पर्क की चर्चा की। वे उस सीजन में भी 'सोनवाँ' और 'गडारी' से चीनी ले रहे थे। वे लाहौर में एक वार डाक्टर नाथ के पिता देवीलाल शाह से भी मिल चुके थे। अगरवाला योजना के प्राइवेट (निजी) सेक्टर और पब्लिक (राष्ट्रीय) सेक्टरों के लिए विस्तार के अवसरों के सम्बन्ध में काफी बातें करते और पूछते रहे।

मिसेज अगरवाला ने बात आरम्भ करने के लिए तारा की प्रशंसा की—"बहुत अच्छी लड़की है। हम तो इसे छोटी बहिन ही समझते हैं। बच्चों से बहुत ही प्यार करती है। छः महीने हमारे यहाँ रही। बच्चे तो इससे ऐसे हिल गये थे कि इसकी ही मानते थे।"

तारा की आँखें नाथ की ओर उठ गयीं, परन्तु नाथ ने उसकी ओर नहीं देखा। जैसे अपनी दृष्टि पर संयम किये हों। कुछ सोचते हुए उसने जेब से सिगरेट केस निकाला और साहब की ओर बढ़ा दिया।

साहब ने ५५५ का डिब्बा डाक्टर की ओर बढ़ा कर कहा—"यह लीजिये, सिगरेट तो सामने पड़े हैं।"

"आप लीजिये, मुझे कैप्सटन की ही आदत है।" नाथ का खयाल कहीं और चला गया था।

मिसेज अगरवाला कहती गयीं—"फिर हम ने रावत साहब से इसके बारे में कहा कि ऐसी लायक लड़की है···।"

नाथ ने चलने की आज्ञा चाही तो तारा की ओर देख कर पूछा—"तुम अभी ठहरोगी या तुम्हें मकान पर छोड़ता चलूँ?"

तारा ने साहब और मिसेज से चलने की अनुमति ले ली।

डाक्टर गाड़ी सड़क पर निकालते ही बोला—"यह तुमने मेरा क्या तमाशा बना दिया, कैसी मिसेज नाथ? कहाँ-कहाँ प्रचार कर दिया है?"

"बड़े वैसे हैं, आप से नहीं बोलूँगी···" तारा के मुँह से निकल गया। अपनी अभद्रता से सिहर गई पर कह ही गयी, "इतने दिन बेवकूफ बनाते रहे।"

"बेवकूफ तो खुद ही बन गया। अच्छा बदला लिया। पर तुम मान कैसे गयीं, कुछ सोचा नहीं? तुम तो इतनी चतुर हो···।"

"आपने नहीं कहा था, हमारी बीवी को ऐसी तमीज कहाँ है? और कहा था भाभी से मिला देंगे।"

"अरे वह तो बुड्ढा अर्दली भूपसिंह है। कोठारी उसे मेरी बीवी कहता है। नौकर चोरी करके भाग गया था। भूपसिंह ने कहा, वही खाना बना दिया करेगा, झाड़-बुहार भी कर देता है। वहीं मेरे साथ रहता है।"

"पर जब मैंने इतनी बार मिन्नत की भाभी से मिलाने की, तब क्यों नहीं कहा ?" तारा ने विरोध किया।

"तुम्हारा कहना ही फिजूल था, कोई बात होती तो स्वयं नहीं कहता ? क्या बात नहीं कही तुम से ? खूब कल्पना बाँध ली तुम ने।"

अब तारा और क्या क्रोध दिखाती ? हृदय में भर आया उल्लास धरती से उठाये लिये जा रहा था। बोली—"जो विश्वास कर बैठे, उसे बेवक़ूफ बनाना चाहिए ?" उत्तर के लिए उसने डाक्टर की ओर देखा। वह गाड़ी में नहीं हवा में उड़ी जा रही थी।

"आखिर तो मजाक मुझ पर ही पड़ा। वह अगरवाला क्या बात कर रही थीं, तुम कैम्प में कैसे पहुँच गयीं ?"

"ठीक कह रही थीं।"

"कैम्प में, न मायके में न ससुराल में, यह कैसे ?"

"मेरी कोई ससुराल नहीं है।"

"क्या मतलब ?"

तारा का मकान सामने आ गया था बोली—"घर चल कर बताऊँगी।"

१२

कमल प्रेस की मिल्कीयत के सम्बन्ध में रिखीराम से मुकद्दमे के समय नैयर और पुरी की बहुत आत्मीयता हो गयी थी। वह सम्बन्ध निबाह सकना पुरी के लिए बहुत कठिन हो जाता था। पुरी को नैयर के व्यवहार में अहंकार की गंध आये बिना न रहती। यह अनुभूति कटु-स्मृतियों को जगा देती थी।

पुरी, विभाजन से पहले शहालमी दरवाजे के बाजार में आग के मामले में जब अकारण गिरफ्तार कर लिया गया था और कनक समाचार पाकर उससे मिलने के लिए हवालात में पहुँची थी तो उसे जमानत पर छुड़ाने के लिए नैयर ने निःशुल्क वकालत की थी। पुरी हवालात से छूट जाने पर उन्हें धन्यवाद देने के लिये ग्वालमण्डी गया था तो नैयर ने उसे औपचारिक आदर से लिया था। मित्र बनकर, वकालती दाँव-पेंच से पुरी से कनक के प्रति उसके आकर्षण की बात कहलवा ली थी और फिर उसका कितना तिरस्कार किया था। पुरी की स्मृति में नैयर की वे बातें लाल लोहे के स्पर्श की तरह दगी हुई थीं—तुमने भावुक लड़की को बहका लिया है। उसे तो तुम्हारे प्रेम में अपने परिवार से सम्बन्ध, सहानुभूति, सामाजिक-स्तर, सम्पन्न परिवार की सुवि-

धाएँ सभी कुछ छोड़ना पड़ेगा। तुम उसे प्रेम के लिए क्या दोगे? क्या त्याग करोगे? ...यानी पुरी किसी लायक नहीं था। वह केवल अनाधिकार स्पर्धा कर रहा था।

पुरी पर नैयर का पुराना एहसान था और नैयर से पाये अपमान के लिए क्रोध भी था। पुरी ने, नैयर के विरोध के बावजूद कनक को पा लिया था। उस संघर्ष में पुरी ने नैयर को मात दे दी थी। इस गर्व से पुरी नैयर को क्षमा कर देना चाहता था पर प्रेस के मुकद्दमे में पुरी को नैयर का बहुत एहसान उठाना पड़ गया था। खुशामद भी करनी पड़ी थी। पुरी को यह अच्छा न लगता था। वह मन को समझा लेना चाहता था—इसमें क्या है, कांता बड़ी बहन है। नैयर रिश्ते में और आयु में भी बड़ा है। हम लोगों की सहायता करना उसका कर्त्तव्य है। फिर भी वह नैयर के लिए कुछ करके सम-स्तर पर हो जाना चाहता था।

जनवरी मास में एक दिन पुरी सुबह-सुबह नैयर के घर पहुँच गया। उसने बिना भूमिका के कह दिया—"जीजा जी, 'मजाना' केस में गवर्नमेन्ट दो और वकील ले रही है। आप जरा सूद जी के यहाँ चले चलते। मुँह देखे का काफी लिहाज हो जाता है।"

नैयर ने कहा—"अभी तक तो उनके यहाँ कभी गया नहीं, केस के लिए जाना खुशामद लगेगी।"

पुरी ने आश्वासन दिया, "आप फिकर न कीजिये, सब चलता है।"

"धन्यवाद, तुमने इतनी चिन्ता की, पर दोस्त ऐसी मुसाहिबी मेरे बस की नहीं है।" नैयर ने अँग्रेजी में कह दिया।

पुरी को बहुत बुरा लगा। उसे लगा कि नैयर उसकी अवज्ञा करने के लिए नुकसान तक उठाने को तैयार है। घर आकर उसने नैयर की ऐंठ की झल्लाहट कनक पर उतारी। कनक ने बात समाप्त करने को कह दिया, "उनका अपना स्वभाव है। तुम्हें क्या, रहने दो।"

पुरी और नैयर की तनातनी से कनक, कांता और दोनों परिवारों के दूसरे लोगों के लिए भी अच्छी-खासी परेशानी हो जाती थी।

बस्ती-निगारखाँ में मास्टर जी के मकान में बिजली नहीं थी। ऊषा को बी०ए० की परीक्षा देनी थी। वह रात में पढ़ सकने के लिए दिसम्बर में ही विक्रमपुरा में भाई के यहाँ आ गयी थी। ऊषा की परीक्षा के पहले नैयर का छोटा भाई लेफ्टीनेन्ट राजेन्द्र नैयर, छुट्टी पर जालंधर आया था। वह अक्सर भाभी की बहन कनक से मिलने आ जाता था। राजेन्द्र का जालंधर आना ऊषा की पढ़ाई में अच्छा-खासा विघ्न बन गया।

ऊषा बीसवाँ वर्ष पूरा कर रही थी। नख-सिख तारा की तरह तीखे न थे परन्तु चपलता और शोखी उससे अधिक थी। राजेन्द्र से तीसरी मुलाकात में ही उसने उसकी दृष्टि को स्वीकार कर लिया था।

कनक ने उनका भाव भाँप कर पुरी से बात की। उसको कोई एतराज नह था। परन्तु उसने कनक से मना कर दिया कि वह नैयर से कोई बात न करे। कहीं

वह यह न समझे कि उसका भाई कैप्टन बन रहा है इसलिए हम खुशामद कर रहे हैं।

राजेन्द्र अक्सर कनक को फुसलाकर ऊषा को साथ ले जाता था। पुरी को यह अच्छा नहीं लगा। उसने कनक से कह दिया कि इस तरह हमारी बदनामी होगी। अगर राजेन्द्र इतना ही चाहता है तो भाई से शादी की बात कर ले।

कनक ने राजेन्द्र से स्वयं बात की। वह शादी करने को तैयार था। परन्तु उसे अपने दफ़्तर से अनुमति और छुट्टी लेने में एक वर्ष लग सकता था। कनक ने उससे कहा कि अगर अभी वह शादी नहीं कर सकता तो सगाई कर ले। राजेन्द्र तैयार हो गया।

राजेन्द्र तो छुट्टी समाप्त होने पर चला गया, उसके पीछे ही सगाई की रसम हो गई। इस मौके पर नैयर और पुरी सम्बन्धियों की तरह स्नेह से गले मिले।

जून के अन्तिम सप्ताह में ऊषा और राजेन्द्र का विवाह हो गया। विवाह के अवसर पर कनक और पुरी में कुछ खटपट हो गई थी। कनक ने पुरी से तारा को बुला लेने को कहा तो पुरी ने उसे डाँट दिया कि तुम क्यों परेशानी का तूफान खड़ा करना चाहती हो।

सितम्बर के अन्तिम सप्ताह में दिल्ली से खबर आई कि कनक की माँ की तबियत खराब है। कांता दिल्ली जा रही थी। पुरी शिमला गया हुआ था। अतः कनक न जा सकी।

पुरी अक्टूबर के पहले सप्ताह में लौटा। वह इतना व्यस्त था कि किसी तरह दिल्ली नहीं जा सकता था। वह सप्ताह भर बाद जाने के लिए तैयार था।

दूसरे बृहस्पतिवार को सुबह-सुबह होशियारपुर से पुरी के ताया जी का लड़का किशोरचन्द आ गया। उसने बताया कि तीन बरस से शीलो या उसके पति का कोई पत्र नहीं आया था। पत्र लिखने पर भी कोई उत्तर नहीं मिला था। दस दिन पूर्व शीलो के ससुर का पत्र आया था कि लड़की को पहुँचा दिया जाए नहीं तो वे अपने लड़के (शीलो के पति) का दूसरा विवाह कर देंगे। किशोरचन्द ने बताया कि शीलो तो कभी होशियारपुर पहुँची ही नहीं। वह दिल्ली गया तो मोहनलाल (शीलो के पति) ने बताया कि तीन बरस हो गए मायके गए, पर शीलो ने कभी पत्र नहीं लिखा।

मोहनलाल ने बताया कि शीलो मायके जाने की जिद्द करती रहती थी। उसे दफ़्तर से छुट्टी नहीं मिल रही थी। वह उसे भेजने को तैयार हो गया था। परन्तु एक दिन दफ़्तर से आने पर उसे पता लगा कि तारा शीलो और बच्चे को लेकर चली गई है। पड़ोसियों ने उसे बताया कि शीलो मायके गई है। उसने किशोरचन्द को तारा के विषय में भी बता दिया था कि वह सरकारी दफ़्तर में नौकरी कर रही है—ससुराल में आग लगने में वह मरी नहीं थी।

पुरी किशोरचन्द की बातें सुन कर चिन्ता में डूब गया। उसने उससे कहा कि तारा तो यहाँ कभी आई ही नहीं, सारी बात का पता तो दिल्ली जाकर ही लगाया

जा सकता है। अभी तो नहा-धोकर नाश्ता कर लो, फिर सोचेंगे कि क्या करना चाहिए।

किशोरचंद नाश्ता करने के लिए आया तब उसने पुरी से कहा—"तुम मेरे साथ चलो। तारा यह क्या तमाशा कर रही है? हम से पूछे बिना लड़की को ससुराल से ले आने का मतलब ही क्या था? मोहनलाल दूसरी शादी कर लेगा तो क्या तारा शीलो और बच्चे को उम्र भर अपने यहाँ रख लेगी? तुम आज ही मेरे साथ चलो।"

"चलूँगा।" पुरी ने स्वीकार किया, "पर मोहनलाल क्या कहता है? तीन बरस हो गए, वह इतने दिन क्यों चुप था?"

किशोरचंद ने झुँझलाहट प्रकट की—"वह तो इतना नाराज है कि बात ही नहीं करता।"

"खैर, पर शीलो ने तुम्हें इस बारे में क्यों नहीं लिखा? ससुराल वाले परेशान करते थे तो तुम्हें खबर तो देती!"

"मैं क्या कहूँ, तारा वहाँ थी, उसी से बात करती होगी। दोनों ने आपस में जो सलाह बना ली हो। तारा बड़ी है। शीलो तो सदा ही बात-बात पर उससे सलाह लेने तुम्हारे यहाँ दौड़ी चली जाती थी।"

"ऐसी बड़ी क्या है, छः महीने का ही तो फरक है।" पुरी ने कहा।

"आखिर तो बड़ी है। वही नजदीक थी। शीलो ने तकलीफ-परेशानी बतायी होगी। तारा खुद ससुराल-मायका छोड़कर आजाद हो गयी है, कहा होगा तू भी मेरी तरह मौज कर।"

कनक को किशोरचंद की बात अच्छी नहीं लगी। उसने पुरी की ओर देखा।

पुरी ने विरोध किया—"मौज का क्या मतलब है? उसने इतना पढ़ा-लिखा है तो उसका कुछ फायदा होना चाहिए। सरकारी दफ़्तर में इज्जत से नौकरी कर रही है।"

"यह क्या इज्जत है कि ससुराल में न रहे?" किशोरचंद ने टोक दिया, "तुम लोग अपने ख्याल से चलो, हमारी लड़की को बहकाने का क्या मतलब है?"

"बहकाने का क्या मतलब? शीलो कोई बच्चा नहीं है!" पुरी का स्वर गम्भीर हो गया।

"मोहनलाल गुस्से में तीन बरस से चुप है तो शीलो को भी गुस्सा होगा। तारा के कहने से ही पति और परिवार को छोड़कर चली गई!" कनक ने पति से बात कर जेठ को सुना दिया।

पुरी ने कनक को चुप रहने का इशारा कर दिया—"हाँ, शीलो को स्वयं तुम्हें लिखना चाहिए था। अच्छी-खासी पढ़ी-लिखी है।" पुरी ने बात सम्भाली, "दिल्ली जाकर देखे-सुने बिना क्या कह सकते हैं? आज शाम को ही चलेंगे।" पुरी ने किशोरचन्द को समझाया—"साँझ या रात के समय दिल्ली पहुँचने से कोई लाभ नहीं। रात की गाड़ी से चलेंगे। सुबह सूरज निकलते दिल्ली पहुँच

जायेंगे। तुम रात भर के थके-जागे भी हो। तुम्हारे लिए पलँग लगवा दिया हैं। आराम करो। मैं शिमला से कई दिन बाद आया हूँ। प्रेस-अखबार के कई जरूरी काम हैं। शाम तक लौट सकूँगा।"

पुरी और कनक एक साथ ही दफ़्तर गए। रास्ते भर दोनों उसी विषय पर बातें करते रहे। पुरी कनक को तारा की असद से छुप-छुप कर मिलने की बात और सिर फोड़ लेने की बात भी बता गया। कनक यह सब सुनकर मन में न जाने कैसा-कैसा अनुभव करती रही।

दफ़्तर में दोपहर के समय पुरी ने कनक से कहा कि मैं दिल्ली जाकर क्या करूँगा? हो सकता है तारा मुझे देखकर घबरा जाए। तुम हरि (पुरी का छोटा भाई) को लेकर किशोरचन्द के साथ चली जाओ। तारा से मिलकर बातें कर लेना। किशोरचन्द को तारा का पता न बताना। शीलो का पता उसे दे देना। किसी उलझन में तुम न पड़ना।

कनक, हरि और किशोरचन्द सुबह ही दिल्ली पहुँच गए। कनक नहा-धोकर करोल बाग की ओर चल दी। जया रोने लगी, सो उसे भी साथ लेना पड़ा। कनक माँ से कह गई कि अगर उन्हें देर हो जाए तो वे घबराएँ नहीं।

कनक रतन के घर पहुँची तो मेलादेई ने उसका बहुत आदर-सत्कार किया। बहू को बुलाकर उनसे मिलाया। कनक से घर के अन्य लोगों के बारे में पूछा। तारा का नाम आते ही मेलादेई उसकी प्रशंसा करने लगी।

रतन आया तो उसने भी कनक का परिचय पाकर उससे पुरी के बारे में बातें करनी आरम्भ कर दीं। उसने तारा के बारे में सब कुछ बता दिया, जितना कि वह जानता था। कनक ने वहाँ जाने को कहा तो रतन ने कहा कि तारा बहन दफ़्तर से शाम को आती हैं, तब मैं आपको ले चलूँगा।

रतन ने बताया कि चित्रा (रतन की पत्नी) को तो तारा ने ही बचाया है। फिर उसने बताया कि चित्रा तारा की बहन शीलो ही है। रतन तो किसी काम से चला गया और कह गया कि शाम को आ जाएगा, कनक ने शीलो से पूछा कि यह सब कैसे हुआ तो शीलो ने कहा कि सब तारा बता देगी।

रतन जानता था कि तारा परिवार वालों से दूर रहना चाहती थी। पुरी का पत्र पाने पर उसने कोई पुलक नहीं दिखाई थी। इसीलिए जब वह दोपहर को घर से निकला था तो वह तारा को दफ़्तर में फोन करके कनक के आने की बात बता आया था। उसने तारा से बताया था कि कनक उससे मिलना चाहती है। तारा ने अनुमति दे दी थी।

घर आकर तारा ने पूरणदेई को बता दिया कि जालंधर से भाभी आयी हैं। छः बजे यहाँ आयेंगी। पूरण देई ने सोचा कि वह मेरी तो बहू लगेगी। उसने तायी को खबर देना और बहू को शगुन देने के बारे में तायी से राय लेना ठीक समझा। उसने मेहता के घर खबर भी दे दी कि वे भी बहू को देख लें।

कनक और तारा साढ़े पाँच वर्ष बाद मिली थीं। दोनों में अब काफी अन्तर

हो गया था। दोनों बड़े प्रेम से मिलीं। तारा को जया से दोस्ती करने के लिए उसकी बड़ी खुशामद करनी पड़ी।

कनक को तारा से बहुत कुछ पूछना था और उसे बहुत कुछ बताना भी था। उसे समझ में ही नहीं आ रहा था कि बात कहाँ से आरम्भ करे। रतन दो घण्टे बाद आने को कह गया था। अभी वे लोग चाय पीने ही जा रही थीं कि नरोत्तम आ गया। वह इस खयाल से आया था कि मम्मी ने तारा को बुलाया है सो मैं उसे लेता जाऊँ। परन्तु तारा ने कनक के आने की खबर सुनकर मिसेज अगरवाला को फोन कर दिया था। नरोत्तम को यह मालूम नहीं था। वह वापस जाने लगा तो तारा ने उसे रोक लिया।

तारा और कनक बातें करने लगीं। नरोत्तम ने पहले जया से परिचय प्राप्त किया फिर कंचन से बात करने लगा। कंचन ने बताया कि लाहौर से आने के बाद उनकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी, अतः वह लड़कियों के कालेज में कैमेस्ट्री पढ़ा रही थी। कंचन की यह बात नरोत्तम के मन में गड़ गयी।

इतने में पूरणदेई और तायी जी भी अन्दर आ गईं। वे लोग कनक से कुछ व्यवहारिक पूछताछ के बाद तारा की प्रशंसा करने लगीं। पूरणदेई ने कनक से कहा कि तुम आई हो तो ननद की शादी का मामला तय कर जाओ। कनक ने बातों और तारा की प्रतिक्रिया से अनुमान लगा लिया कि यहाँ सब तारा को अविवाहित ही समझते हैं।

पूरणदेई और तायी जी के जाने पर कनक ने तारा से बात करनी चाही क्योंकि उसे घर जाकर किशोरचंद को जवाब देना था। तारा के साथ वह दूसरे कमरे में चली गई।

तारा कनक को अपने कमरे में ले गयी। दोनों पलँग पर बैठ गयीं। कनक ने शीलो के सम्बन्ध में उसके माता-पिता की चिन्ता और किशोरचंद के तारा और शीलो को खोजने आने की सब बात बता दी।

तारा कुछ पल चुप रह कर बोली—"उन लोगों को मुझ से क्या मतलब है ? मैंने किया क्या है ? मोहनलाल ने शीलो को घर से निकाल दिया था। जिस कारण निकाल दिया था वह अब पहले से दूना है।"

तारा ने कनक को शीलो और रतन के पुराने सम्बन्ध की बात बता कर कहा—"शीलो ने तब भूल की थी, परन्तु वह भूल इस समय सुधर गयी है। उसे फिर अनाचार सहने के लिए विवश करना चाहते हैं, अनाचार को छिपाये रखने में ही नाक की रक्षा मानते हैं तो वे लोग जानें। इस सब में मेरा कोई उत्तरदायित्व नहीं है। मैंने तो केवल शीलो का समाचार रतन तक पहुँचा दिया था।"

कनक फर्श की ओर टकटकी लगाये थी। उसने सहसा तारा की ओर देख कर पूछा—"मालूम है, सोमराज जालंधर में ही है ?"

"मुझे कोई मतलब नहीं है।" तारा ने गर्दन झुका ली।

कनक ने तारा के कन्धे पर हाथ रख कर पूछ लिया—"सुना था, तुम उससे

विवाह नहीं करना चाहती थीं ?"

तारा ने गर्दन झुकाकर स्वीकार कर लिया।

"पर तुमने यह जबरदस्ती का ब्याह स्वीकार कैसे कर लिया ?"

तारा कुछ क्षण चुप रह बोली—"जो होना था हो गया, अब क्या बताऊँ ?"

"तुम्हारे साथ जबरदस्ती की गयी थी ? भाई ने कुछ सहारा नहीं दिया ?" कनक ने विस्मय से पूछा।

"पहले तो भाई के विश्वास में ही मारी गई। मेरा भी दोष था, साहस नहीं किया, मान गई।"

"भाई के विश्वास में कैसे मारी गई ?"

"भाई इस विवाह के और उस आदमी के बहुत विरुद्ध थे। फिर उनकी नौकरी छूट गई। दूसरी जगह नौकरी मिली नहीं, काम करते थे तो पैसा नहीं मिलता था। इन्हीं सब बातों से दब गये और क्या कह सकती हूँ।"

"समझ में नहीं आता, तुम अनिच्छा होने पर भी कैसे मान गयीं ?" कनक ने फिर विस्मय प्रकट किया।

"साहस की कमी और क्या ? परिस्थितियों के विरुद्ध अकेली खड़े हो सकने का साहस नहीं था। सोचा—लोग मुझे बुरी न समझें, सभी के विवाह ऐसे ही होते हैं, मैं ही कौन निराली हूँ। माता-पिता को परेशानी न हो।"

कनक कुछ क्षण के लिए फिर विचार में डूब गयी। फिर पूछ लिया—"ससुराल में क्या एक दिन भी नहीं रहीं ?"

"प्लीज लीव इट (बस रहने दो), कुछ और बात करें।"

कनक का मन सहानुभूति से छलक रहा था। मौन रह गयी।

तारा ने कनक को दूसरे दिन खाने पर बुलाया और कंचन को भी साथ लाने को कहा। दूसरे दिन शनिवार होने के कारण वह दफ़्तर से सवा बजे तक घर पहुँच सकती थी।

नरोत्तम गाड़ी में उन लोगों को घर तक छोड़ आया।

कनक घर लौटी तो उसके आते ही किशोरचंद ने पूछा कि कुछ पता लगा या नहीं। कनक ने उससे कह दिया कि वह सबेरे बतायेगी। कनक ने रात भर विचार करने के बाद सुबह किशोरचन्द को संक्षिप्त उत्तर दे दिया—मोहनलाल ने ही शीलो को घर से निकाल दिया था। दूसरा ब्याह करना चाहता है तो बेशक कर ले। शीलो तो अब नहीं लौटेगी, वह अब दो बच्चों की माँ है। तारा का इस मामले से कुछ सम्पर्क नहीं है।

किशोरचन्द स्वयं तारा और शीलो से मिलना चाहता था। परन्तु कनक ने इस काम में सहायता करने से साफ इन्कार कर दिया। किशोरचन्द क्रोध के मारे उसी समय अपना सामान उठा कर वहाँ से चल दिया। वह सीधा होशियारपुर चला गया। गाड़ी में रात भर सोच-विचार करने के बाद वह इस परिणाम पर पहुँचा कि इस मामले में चुप रहना ही ठीक है। बोलने से अपनी ही फजीहत होगी। शीलो

को उसने मर गयी मान लिया। मोहनलाल चाहे जो करे। उससे रिश्ता ही खत्म था।

कनक सोमवार सुबह जालंधर पहुँच गई। उसने सारी बातें पुरी को बतायीं। उसने तारा की प्रशंसा की और कहा कि उसकी समझ में तो शीलो ने कुछ बुरा नहीं किया।

बस इसी प्रसंग से बात बढ़ गई। कनक प्रेस भी नहीं गई। दूसरे दिन भी उसने पुरी को बुलाना चाहा, परन्तु उसकी प्रतिक्रिया देख कर जल गई। अकेले ही दफतर गई। पुरी दिन भर दफतर नहीं आया। कनक ने टालना चाहा परन्तु गिल ने कनक से उसके घरेलू मामले पर बातचीत आरम्भ कर दी। गिल ने कहा, "तुम अभी तक अपने पति को समझ नहीं पाई हो। अब वह कुछ पूँजी वाला आदमी है। उसे अब परिवर्तन और न्याय की नई धारणाओं की आवश्यकता नहीं जान पड़ती है। उसकी जड़ें जम रही हैं। अब वह उलट-पुलट के विचारों से घबराता है। तुम मतभेदों को बढ़ाकर उसे चिढ़ा देती हो।"

कनक समझ गई कि पुरी ने गिल से बात की होगी और उस पर दुराग्रह का आरोप लगाया है। अब वह गिल के सामने चुप न रह सकी, बोल पड़ी, "बताओ, वास्तविकता को छिपाकर सदा छलना का ही सहारा लेकर जीवन कैसे चल सकता है ? मैं सदा झूठ को निगलती रहूँ ? क्या इसी लिये मैंने सबका विरोध सहा था ?"

कनक घर तक गिल के साथ पैदल ही गई। रास्ते में उसने निःसंकोच गिल को पूरी बात बता दी। गिल ने कनक को समझाया कि जब तुमने उससे प्रेम और विवाह किया है तो तुम्हें निबाहना ही पड़ेगा। कनक ने गिल से कहा कि आप ही उन्हें समझाइये। इस पर गिल ने कहा, "तुम्हारे समर्थन में उसका विरोध करूँगा तो मेरा यहाँ रहना सम्भव नहीं रहेगा। पुरी इसे अनुचित हस्तक्षेप समझेगा। सोचेगा कि मैं तुम्हें बहकाता हूँ। तुम्हारी बातों को मेरी प्रतिध्वनि समझेगा। तुम पर उसका क्रोध बढ़ जाएगा। फिर मैं यहाँ कैसे रह सकूँगा।"

दोनों बँगले पर पहुँच गए। पुरी अभी तक नहीं आया था। चाय मँगवा कर कनक गिल के साथ बरामदे में जा बैठी। फिर दोनों उसी प्रसंग पर बात करने लगे। इतने में पुरी आ गया। कनक ने अपना चाय का प्याला उसकी ओर खिसका दिया। पुरी को थक कर आने के बाद घर आते ही चाय मिल जाना अच्छा लगा।

गिल ने दोनों को सम्बोधन कर स्नेह से डाँट कर कहा कि मुँह बनाना छोड़ो और कायदे से बात करो। पुरी को लगा गिल उसका ही समर्थन कर रहा है। पुरी गिल को इधर-उधर की बातें बताने लगा। कनक को अच्छा लगा कि कम से कम उसका पति इतने दिनों के बाद प्रेस या राजनीति के अलावा कुछ बात तो कर रहा है।

पुरी और कनक में तारा और शीलो का प्रसंग फिर न उठा, परन्तु गिल से कनक कई बार बात कर लेती थी। वह तारा को स्वयं देख-समझ आई थी।

पुरी विधान सभा के लिए मुकेरियाँ क्षेत्र से चुना गया था। उसे वोट नेहे

वाले पुरी को पहचानते नहीं थे। उसका नाम भी बहुत कम लोगों ने सुना था। क्षेत्र के पुराने निवासियों ने और मुस्लिम किसानों की धरती पर पश्चिम से आकर बसे सिक्ख-हिन्दू किसानों ने काँग्रेस को ही वोट दिये थे। उन्होंने वोट पुरी के नाम पर नहीं, काँग्रेस के चुनाव-चिन्ह 'बैलों की जोड़ी' का चित्र देख कर दिये थे। साधारण किसान की धारणा थी, काँग्रेस और मुस्लिम लीग ने देश का राज बाँट लिया था। पूर्वी पंजाब और शेष भारत काँग्रेस को मिल गया था। अब काँग्रेस ही राजा थी। भविष्य में धरती का लगान अँग्रेज सरकार को नहीं, काँग्रेस सरकार को ही देना होगा। पश्चिम से आये किसानों ने पूर्व में आ कर जिन खेतों पर कब्जा कर लिया था, उन्हें वे काँग्रेस सरकार की मंजूरी से ही रख सकते थे; जिन्हें अभी जमीन नहीं मिल सकी थी वे काँग्रेस सरकार से ही जमीन की आशा कर सकते थे।

वैधानिक रूप से काँग्रेस पार्टी और काँग्रेस सरकार का अस्तित्व पृथक-पृथक था परन्तु काँग्रेस पार्टी और भारत-सरकार के झंडों का रंग एक ही था। झंडों पर 'चक्र' और 'चर्खे' के भेद की सूक्ष्मता झंडा पूरा खुला होने पर ही प्रकट होती है। सरकारी एलान था कि सरकार चुनाव में निष्पक्ष है। चुनाव से पूर्व सरकार ने देश के कल्याण के लिए, मुख्यतः कृषि और किसानों की अवस्था सुधारने और बेकारी मिटा देने के लिए अरबों रुपये के खर्च से नहरें, बाँध और सस्ती बिजली बाँटने की योजनाओं का प्रचार आरम्भ कर दिया था। इससे पूर्व जनता अँग्रेजों के विरोध के लिए काँग्रेस को वोट देना सीख चुकी थी। अब किसान शक्तिमती काँग्रेस को छोड़ कर दूसरे छोटे-मोटे राजनैतिक दल को वोट क्यों देते? काँग्रेस के लिए वोट पुरी के लिए वोट था।

सूद जी अमृतसर के एक स्कूल के वार्षिक उत्सव में सभापतित्व के लिए शिमला से अमृतसर जा रहे थे। पुरी भी सुबह ही चाय पीकर स्टेशन चला गया और कह गया कि शायद उसे भी अमृतसर जाना पड़े।

उस रोज एक सिक्ख अपनी पत्नी और बच्चों सहित पुरी के मकान के आगे धरना दे के बैठ गया। कारण यह कि सरकार ने उसकी खेती की धरती छीन ली थी। कनक ने बहुतेरा समझाया कि इस समय पुरी जी घर में नहीं हैं, फिर भी वह सिक्ख जिद्द पर अड़ा रहा कि जब तक उसकी जमीन उसे नहीं लौटाई जायेगी तब तक वह वहाँ बैठा ही रहेगा। शाम को पुरी लौटा तो उसे सारी बात का पता चला। उसने बहुतेरा समझाया कि इस काम के लिए उसे उन्हीं के यहाँ धरना देना चाहिए, जिन्होंने जमीन छीनी है। इस पर इस सिक्ख ने काँग्रेस सरकार को खूब बुरा-भला कहा।

पुरी ने सिक्ख को बीस मिनट का वक्त दिया कि वह चला जाए नहीं तो पुलिस बुला ली जाएगी। वह व्यक्ति नहीं गया। अन्त में पुरी को पुलिस बुलानी पड़ी। पुलिस उस व्यक्ति को जबरदस्ती खींच कर ले गई। वह तब भी चिल्लाता ही रहा कि न्याय की पुकार करने पर उसे जेल भेजा जा रहा है।

पुरी 'यातायात परामर्श समिति' की बैठक के लिए शिमला गया था। उस

सप्ताह का 'नाजिर' उसने वहीं देख लिया। सम्पादकीय पढ़कर वह खिन्न हो गया। शैली से समझ गया था कि कनक ने लिखा है। उसमें राष्ट्रीयकरण और इवेक्वी जमीन के बँटवारे पर लिखा गया था। इसी प्रसंग में उसे सूद जी की बात भी सुननी पड़ी। सूद जी ने कह दिया कि अब ऐसी हरकत हुई तो प्रेस और पेपर पर ताला लगवा दूँगा। मुझे यह सब कुछ नहीं चाहिए।

पुरी किसी का आतंक मानने के लिए तैयार नहीं था। उसने क्रोध की जगह बुद्धि से काम लेना उचित समझा। शिमला से लौटते समय पुरी को कनक के प्रति बहुत क्रोध था। कनक के अहंकार और अपने प्रति उसकी आन्तरिक विरक्ति से पुरी का मन खिन्न हो जाता था।

विधान सभा का मेम्बर बन जाने से पुरी को उर्मिला से मिलने की बहुत सुविधा हो गई थी। उर्मिला ट्रेनिंग समाप्त करके शिमला में स्टाफ-नर्स थी। पहली बार पुरी उससे अस्पताल मिलने गया और उससे कह आया कि वह उससे मिलने विधान सभा के क्वार्टरों में आ जाया करे।

पाँच वर्षों से उर्मिला से बात नहीं कर पाया था। अब उर्मिला उससे मिलने आयी तो पुरी ने उसके प्रति अपने अक्षुण्ण प्रेम और विवशता की पूरी बात कह दी। उर्मिला पुरी की चिकनी-चुपड़ी बातों की वास्तविकता समझ रही थी इसलिए उससे विमुख हो रही।

इसके बाद सितम्बर में पुरी शिमला आया था तो उर्मिला ने उससे कहा था कि वह शिमले की सर्दी नहीं सह सकती अतः उसकी बदली अमृतसर हो जाए तो अच्छा है। पुरी ने स्वास्थ्य विभाग के संचालक से मिलकर उर्मिला की बदली अमृत-सर में करवा दी थी।

इस बार पुरी जालंधर के पास तक पहुँच कर फिर उर्मिला से मिलने के लिए अमृतसर पहुँचा तो उसे पता चला कि उर्मिला ने डाक्टर भोंगिया से शादी कर ली है। उर्मिला उससे मिली तक नहीं। पुरी सोचने लगा कि उर्मिला ने इसीलिए अमृतसर बदली करवाई थी।

पुरी अजीब सी खिन्नता में घर पहुँचा। कनक दफ्तर जा चुकी थी। घर में केवल नौकर चेला और उसका भाई हीरा था। पुरी ने मन ही मन सोचा कि यह घर का क्या तरीका है ?

वह नहाया। चेला ने उसे खाना लाकर खिलाया। वह खाना खाकर सो गया। दोपहर को नींद खुली तो उसने कनक को दफ्तर में फोन कर लिया। उसने कनक से कह दिया कि अगर वह पाँच बजे तक दफ्तर न पहुँचे तो कनक गिल को लेकर घर आ जाए।

पुरी ने दिन भर सोचा, उसे लगा कि पुरुष की तरह काम करने से कनक का नारी भाव दब गया है। उसने सोचा उसे 'नाजिर' और प्रेस में उलझे रहने की क्या जरूरत है। यह क्या घर है ? मेरे प्रेम के लिए उसने क्या नहीं किया ? उससे अधिक 'डिवोटिड' पत्नी और क्या हो सकती है। स्थिति को सम्भालना आवश्यक है···।

कनक और गिल घर आए तो पुरी नहीं था। थोड़ी ही देर में वह आ गया। वह गिल से 'नाजिर' में छपे लेख, सूद जी के स्वभाव आदि के बारे में बातें करता रहा। परन्तु उसके स्वर से उसकी गम्भीरता और खिन्नता स्पष्ट झलक रही थी। गिल ज्यादा देर नहीं बैठा। वह चला गया। पुरी और कनक ने खाना साथ-साथ खाया। खाते समय पुरी चुप ही रहा, जैसे किसी सोच में डूबा हो।

खाने के बाद, जया को सुलाकर कनक पुरी के कमरे में गई तो वह कुर्सी पर बैठा कुछ सोच रहा था। कनक ने उससे कहा कि अगर थके हुए हो तो सो जाओ। मैं दूध का गिलास ले आती हूँ। पुरी ने तब भी कोई बात न की। कनक ने उससे पूछा कि क्या 'नाजिर' में छपे लेख के कारण नाराज हो तो पुरी ने कहा, उस बात को छोड़ो। जो कहना था मैंने कह दिया।

कनक के आग्रह पर पुरी ने कहा कि मैं चाहता हूँ कि अब तुम घर पर ही रहो। 'नाजिर' का काम बहुत समय तक मैंने तुमसे करवा लिया। उसने पूछा "हमारे बीच का अन्तर तुम्हें अस्वाभाविक नहीं लगता ?"

कनक ने कोई उत्तर नहीं दिया। पुरी के बार-बार कहने पर उसने अपनी विवशता जता दी। पुरी कनक के व्यवहार से खिन्नता महसूस करने लगा।

दोनों का मन-मुटाव नौकरों और जया के लिए मुसीबत हो जाता था। सुबह पुरी अकेले ही दफ्तर चला गया। दफ्तर में उसने कनक से रुखाई से ही व्यवहार किया। उसके अगले दिन भी यही सिलसिला रहा। उस दिन कनक दफ्तर में गिल से बहन के घर जाने का बहाना करके घर आ गई। हीरा के पूछने पर उसने कह दिया कि सिर में दर्द है।

सन्ध्या समय गिल आया। बड़ी मुश्किल से कनक बिस्तर से उठकर, मुँह धोकर बाहर आयी। गिल पुरी और कनक का झगड़ा भाँप गया था। उसने कनक से कारण पूछा। पहले तो वह चुप रही, परन्तु गिल के आग्रह और स्नेह के कारण उसने कहा कि उसका (कनक) अब इस घर में रहना संभव नहीं है।

यह सुनकर गिल की भौंहें उठ गयीं—"कन्नी तुम बहुत मूर्ख हो।" प्यार से अंग्रेजी में बोला, "मैं तुम्हें बहुत अच्छी तरह समझा चुका हूँ। तुम्हें सहिष्णु होना चाहिए।"

"क्या सह लूँ ? मैं क्या...?" कनक फुंकार उठी और फिर घबराकर आँचल से मुँह ढँक लिया। अपने कमरे में जाकर पलँग पर गिर पड़ी। कई मिनट तक आवाज दबाये फफक-फफक कर रोती रही। परिताप से मरी जा रही थी, मुँह से क्या निकल गया। स्वयं ही विरोध किया—ठीक तो है, इस घर में रहने के लिए, पत्नी बनी रहने के लिए, सब तरह रिझाने के लिए मुझे सब कुछ सहना होगा ? मैं स्वयं कुछ नहीं हूँ ! ...कभी नहीं सहूँगी। मैं पत्नी नहीं हूँ।"

पलँग के समीप पुरी का शब्द सुनाई दिया—"कन्नी, बाहर जाओ ! गिल बैठा है।"

कनक निश्चल रही।

पुरी खीझ उठा—"तुम लोगों के सामने विहेव (निबाह) भी नहीं कर सकतीं ?"

"नहीं कर सकती। तुम ने दफतर में कैसे बिहेव किया था ?" कनक ने आँचल के भीतर से रुँधे हुए परन्तु क्रुद्ध स्वर में उत्तर दे दिया।

पुरी ने लौट कर गिल को बताया—"कन्नी की तबियत ठीक नहीं है। प्रातः ही सिर में बहुत जोर का दरद हो जाता है। मुझे ब्लडप्रेशर का सन्देह है। डाक्टर को दिखाऊँगा।"

"हाँ, आज दिन में भी बहुत थकी-थकी सी लग रही थी। डाक्टर की राय जरूर ले लो।" गिल ने समर्थन कर दिया।

१३

तारा को डाक्टर नाथ पर क्रोध था।

अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में अगरवाला साहब की कोठी से लौटते समय डाक्टर नाथ के प्रश्न के उत्तर में तारा ने कह दिया था—उसकी कोई ससुराल नहीं है। जब नाथ ने विस्मय से इस वाक्य का अभिप्राय जानना चाहा तो ससुराल का अनुभव और तत्-सम्बन्धी पूरी-पूरी आप-बीती बता देना सरल नहीं था। तारा ने गर्दन झुकाए टूटते-टूटते शब्दों में संक्षेप में अंग्रेजी में बताया—"उसे मालूम हो चुका था, मैं उस से विवाह नहीं करना चाहती थी। वह मन में बैर लिये था। मुझे अपने यहाँ विवश पाकर उसने बदला लेना चाहा। मेरा अपमान किया। मैंने विरोध किया। उस ने बहुत मार-पीट की। अचानक कुछ ही देर बाद, पड़ोस के मुसलमानों ने आक्रमण कर दिया। मकान में आग लग गयी। मैं साथ के मकान की छत पर कूद गयी। घटना का सत्य ब्योरा बहुत कष्ट से पहली बार तारा के मुख से निकला परन्तु कह देने पर उसे बहुत हल्कापन अनुभव हुआ, जैसे फोड़े पर नश्तर की पीड़ा के पश्चात मवाद निकल जाने से शांति मिल जाती है।

नाथ ने कोई प्रश्न नहीं किया। विस्मय या सहानुभूति का भी कोई संकेत नहीं किया। बिल्कुल निश्चल, मौन अधमुँदी आँखों से सुनता रहा। बीच में तारा बार-बार ओठ काटकर चुप भी हुई, तब भी नाथ उसकी असुविधा से आँखें बचाये रहा।

तारा बता चुकी तो नाथ ने कहा—"पुरी के व्यवहार पर बहुत विस्मय है।" फिर पूछ लिया, "कैम्प में कैसे पहुँचीं ?"

तारा अपमान और अत्याचार का शिकार होने की बात कह कर क्षणिक सहानुभूति तो पाती परन्तु सदा के लिए लोगों की दृष्टि में गिर जाती। तारा यह नहीं चाहती थी। उस प्रसंग की एक कहानी उसने बना ली थी पर नाथ के सामने

झूठ नहीं बोल सकी। गर्दन झुकाए पाँच वाक्यों में उत्तर दे दिया—"गली से कोई गुण्डा मुझे उठा ले गया था। उस के यहाँ से एक भले रिटायर्ड मुसलमान अफसर ने छुड़ाया। मुसलमान बनना स्वीकार नहीं किया इसलिए वहाँ से निकाल दी गयी। फिर दूसरी हिन्दू स्त्रियों के साथ गुण्डों की कैद में रही। भारतीय सेना ने हमें छुड़ा-कर कैम्प में रख दिया था।" नाथ क्या सोचेगा, तारा ने चिन्ता नहीं की। उसके सामने वह झूठ नहीं बोल सकती थी।

नाथ ने केवल एक ही वाक्य कहा—"तारा, तुम बहुत बहादुर हो, बहुत साहसी हो।" उसके स्वर में आदर और स्नेह छलक रहा था।

नाथ की बात से तारा की मुद्रा ही बदल गई। उसने नाथ के नौकर के बारे में पूछा तो पता चला कि वह काम ठीक नहीं कर पाता है, परन्तु डाक्टर उसे निकालना भी नहीं चाहता। तारा ने एक और नौकर रख लेने का सुझाव दिया और साथ ही नौकर भिजवाने का वायदा भी किया।

तारा ने डाक्टर को रविवार को खाने पर बुलाना चाहा तो डाक्टर ने कहा कि वह एक हफ्ते के लिए पटना जा रहा है, वहाँ से आकर वह अगले रविवार को आ सकता है। परन्तु अगले रविवार के बाद उसे पता चला कि डाक्टर शिमला गया हुआ है। उसे बुरा लगा। खीझ भी आयी। पटना जाने को यह कह रहे थे, शिमला जाते समय कम से कम वहाँ का पता तो दे सकते थे। फिर सोचती, माँ-बाप, भाई को खोकर भी चुप हूँ तो उन पर क्यों अधिकार जताऊँ?

तीन महीने पहले तारा ने सरकार से कर्ज लेकर नयी गाड़ी खरीद ली थी। उसकी गाड़ी ने उसके जीवन में रस उत्पन्न कर दिया। तारा गाड़ी की गोद में बैठती थी परन्तु उसे बच्चों की तरह प्यार करती थी।

नरोत्तम छः-सात माह कलकत्ता में था तो तारा को नियमित रूप से पत्र लिखता था। तारा को कहीं और से पत्र नहीं आते थे। जुलाई के महीने में उसके पते पर एक तार आई। तारा परेशान हुई कि आखिर तार आई कहाँ से। खोलने पर तारा ने पढ़ा, लिखा था, 'तुम से मिल कर नहीं आ सका। अपने स्वास्थ्य और कुशल का समाचार देना—प्राणनाथ।' तार में नाथ का पता भी था। तारा गद्गद हो गयी। हृदय उमग उठा। मन असीम सान्त्वना और शांति से विभोर हो गया जैसे अनंत कृपा और शुभ-कामना ने उसे सभी प्रकार के संकटों से शरण दे दी हो।

तारा ने रात बहुत देर तक जाग कर डाक्टर नाथ को पत्र लिखा। तारा ने आठ पृष्ठ लिख डाले। फिर उसे लगा यह सब व्यर्थ है। उसने फोन करके एक्सप्रेस तार दे दिया—'कृपा के लिए अनेक-अनेक धन्यवाद। पूर्णतः स्वस्थ और प्रसन्न हूँ। पत्र लिख रही हूँ।' फिर उसने बहुत सोच कर छोटा सा एक पत्र लिखा। पत्र में तारा ने कोई विशेष बात नहीं लिखी। बस, डाक्टर की कृपा के लिए धन्यवाद और भविष्य में उसकी पुनः प्राप्ति की कामना।

तारा पत्र के उत्तर की उत्साह से प्रतीक्षा करने लगी। परन्तु उत्तर नहीं आया। सितम्बर के अन्त में तारा को डाक्टर नाथ का संदेश फोन से मिला। वह

दिल्ली लौट आया था। सन्ध्या छः बजे घर पर आयेगा। सन्ध्या समय डाक्टर नाथ आया तो तारा के लिए सेब की गठरी लेता आया। तारा गद्गद् हो गई। नाथ के आत्मीयता भरे आशीर्वाद में डूब गई।

जून, ५३ के पहले सप्ताह में तारा मर्सी के घर गई। मर्सी के लड़के का मुंडन था। वहाँ नरोत्तम ने बताया कि वह कंचन के पास गया था। एक महीने से कनक भाभी आई हुई हैं। घर में सब चुप-चुप और उदास थे। तारा ने नरोत्तम को कंचन के नाम एक रुक्का लिखकर भेजा कि वह भाभी के जाने से पहले उनसे मिलना चाहती है।

नरोत्तम ने आकर तारा को खबर दी कि भाभी ने जाने की तो कोई बात नहीं की। वह यहाँ दिल्ली में ही नौकरी ढूँढ़ रही हैं। स्वयं तुमसे मिलने आयेंगी। तारा सुनकर बहुत हैरान हुई। चिन्ता ने दबा लिया, जालंधर में क्या हो गया होगा ?

अगले रविवार कनक सुबह ही तारा के घर आई। तारा ने पहले हाल-चाल पूछा फिर धीरे से पूछा, "नरोत्तम कह रहा था, यहाँ नौकरी कर लेने का विचार है ? पर क्यों ? माँ ने कुछ कह दिया क्या ?"

कनक ने कहा, "नहीं ऐसी कोई बात नहीं है।"

"तो ?"

"मेरे लिए वहाँ रहना संभव नहीं है। मानती हूँ, मेरा ही दोष है। मैं असहिष्णु हूँ। 'उनकी' प्रकृति वैसी है। सब लोग उनका आदर करते हैं, परन्तु मैं क्या करूँ ? समझ लो मैं अपने को ही दंड दे रही हूँ पर मैं वहाँ पर रह नहीं सकती। सच कहती हूँ, मैंने अपने दोष के कारण बहुत सहा है, अब नहीं सह सकती। मुझे उनकी कोई बात अनुकूल नहीं लगती। विवाह के छः मास बाद से ही कटुता आरंभ हो गयी थी। पाँच बरस निबाहा, अब नहीं सह सकती। निन्दा होगी, हो ! मैं क्या करूँ ?" कनक ने आँचल से मुँह ढँक लिया।

तारा कुछ समझी नहीं पर देख रही थी, कनक दुखी थी। उसने कनक के गले में बाँह डाल दी और कहा—"चलो, भीतर के कमरे में चलें।"

कनक दस मिनट तक रोती रही। भयंकर गर्मी के बावजूद तारा उसे अपने आलिंगन में समेटे रही। कनक कुछ स्वस्थ हुई तो तारा के अनुरोध पर संक्षेप में मतभेद के कई प्रसंगों के संकेत कर दिये। स्वयं तारा का प्रसंग भी आ गया। शीलो-कांड के सम्बन्ध में हुआ झगड़ा भी बता दिया। अन्त में कहा—"हम लोगों की रुचि और प्रकृति एक-दूसरे के अनुकूल नहीं है। लोक-लाज के लिए जितना निबाह सकती थी, निबाह दिया। अब नहीं निबाह सकती...।"

तारा को भाई के रोष या अप्रसन्नता से कोई भय नहीं था पर अपने सम्बन्ध में भाई की भावना जान कर मन को बहुत चोट लगी। समझ लिया, अब परिवार से मेल की कोई आशा और आवश्यकता भी नहीं है। उसे अपने लिए और सच्चाई के लिए लड़ने वाली कनक के प्रति ही सहानुभूति थी। सोचती रही, बेचारी गूंगी,

आज्ञाकारिणी बन कर कैसे रह जाती। ऐसे विवाह से अविवाहित भली। प्रथम आकर्षण कितना भ्रामक हो सकता है !—यह बात उसने कनक से कह दी।

कनक की आँखें फिर छलक आयीं। बताने लगी—"पिता जी, जीजा जी सभी लोग कितने विरुद्ध थे। पुरी के सम्बन्ध में जीजा से झगड़ा और तारा के सम्बन्ध में पुरी के कहे झूठ भी बता दिये। स्वयं पुरी के लिए क्या-क्या किया, स्पष्ट बता गयी और कह दिया यह सब करके आज मेरी यह अवस्था है। यदि अपने को दबा सकती, मार सकती तो यह विवाह ही क्यों होता ?'

तारा ने स्पष्ट कह दिया—"मैं तो तुम्हारा कोई दोष नहीं देखती। तुम ने तब भी ईमानदारी से ठीक किया था और अब भी तुम्हें दोष नहीं दे सकती।"

कनक ने पहली बार किसी के सामने इतनी बात कही और इस प्रकार सांत्वना पाई थी। वह तारा की गोद में सिर रख कर खूब रोयी।

तारा कनक को उसके घर तक छोड़ने गयी। लौटते समय वह उसे भाभी नहीं, प्यार के नाम कन्नी से ही सम्बोधन करके लौटी।

कनक ने पिता जी से इतना ही कहा था—"माँ की तबियत ठीक नहीं है, मैं कुछ दिन उनके पास यहीं रहूँगी, जालंधर नहीं जाऊँगी।" परन्तु पंडित जी बेटी और दामाद में मन-मुटाव भाँप ही गए। जब उन्हें पता चला कि कनक दिल्ली में ही नौकरी ढूँढ़ रही है तो उन्हें चिन्ता हुई। उन्होंने साहित्यिक शैली में पुरी को अत्यन्त आत्मीयता से पत्र लिखा। जिसका आशय इस प्रकार था—'कनक को समझाना तुम्हारा ही उत्तरदायित्व है। उसकी हानि तुम्हारी हानि है। उसे आकर ले जाने में तुम्हारा बड़प्पन ही है।'

पत्र पाते ही पुरी दिल्ली आया। पंडित जी ने उसके सामने तारा की बात चलाई। उन्होंने कहा कि वह बड़ी नेकबख्त है। कनक की हमदर्दी में उसके लिए नौकरी ढूँढ़ रही है। यह सुन कर पुरी जल गया। उसने सोचा तारा हम लोगों की हर बात में विरुद्ध ही चलती है। उसने निश्चय कर लिया कि तारा से मिलने नहीं जाएगा।

पुरी ने एकान्त में कनक को समझाने का प्रत्येक सम्भव उपाय किया। कनक न मानी तो उसने तारा को ही बुराई की जड़ मान लिया। वह दिल्ली से असफल लौट गया।

पहले तो पुरी कनक के घर छोड़ जाने की बात अपने माँ-बाप और नैयर एवं कांता से छुपाए रहा। पर अब वह नैयर से ही सहायता लेने को मजबूर हो गया था। इसके लिए भी तैयार हो गया कि कनक नैयर के प्रभाव से लौट आये। नैयर और कांता ने पुरी को आश्वासन दिया कि वे उसकी सहायता के लिए हर संभव प्रयत्न करेंगे। परन्तु नैयर ने कांता से कह दिया कि इन दोनों की प्रकृति बिल्कुल भिन्न है। अगर कनक अभी आ भी गई तो क्या है। अब इनकी ज़िन्दगी तो ऐसे लड़ते-झगड़ते ही कटेगी।

नैयर तो नहीं जा सका, परन्तु कांता कनक को समझाने दिल्ली पहुँच गई।

कनक पिता जी को हर बात का घुमा-फिरा कर कुछ उत्तर दे देती थी। कांता के साथ भी वह उस प्रसंग में बहुत गहराई में नहीं जाना चाहती थी। परन्तु बातों-बातों में कनक ने उर्मिला के बारे में भी बता दिया।

कांता कनक को लौटाने में असफल जालंधर लौटी। उसने नैयर को सब हाल बता दिया। नैयर स्थिति का रहस्य जानकर कुछ चिंतित हुआ। उसने कहा, "दोनों की प्रकृति में भेद तो स्पष्ट दीखता था। जिन्दगी मनमुटाव में ही समाप्त हो जाए, यह कुछ अच्छा नहीं है, परन्तु दोनों की उपस्थिति भी तो एक-दूसरे के लिए सह्य नहीं होगी।"

उन दोनों को इस समस्या का कोई हल नहीं सूझ रहा था।

नरोत्तम कभी-कभी तारा को क्लब ले जाया करता था। अब तारा को कनक की नौकरी के लिए घूमना पड़ता था। काफी दिनों से वह क्लब नहीं गयी थी। प्रायः कंचन उसके घर आ जाती थी। कंचन और नरोत्तम की भी आपस में बोलचाल थी। उनका व्यवहार ऐसा था कि तारा कोई आपत्ति नहीं कर सकती थी।

क्लब में मेजर कपूर आया करते थे। उनकी बहन मिसेज खन्ना और उनके जीजा कर्नल खन्ना भी आया करते थे। वहीं तारा से उनकी जान-पहचान हो गई थी। मिसेज खन्ना के अनुरोध पर तारा को क्लब जाना पड़ा। कर्नल खन्ना ने तारा से अपने साथ ओखला तक पिकनिक पर चलने को कहा। तारा को उनका आग्रह स्वीकार करना पड़ा। मिसेज खन्ना ने तारा से कह दिया था कि वे उसे आकर ले जायेंगी।

मिसेज खन्ना के आने से पहले डाक्टर नाथ ने फोन पर तारा से बात की। तारा के मुँह से निकल गया कि इस समय वह घर पर ही है। डाक्टर आया, थोड़ी देर बाद मिसेज खन्ना आ गईं। डाक्टर फिर आने को कह कर चला गया।

तारा ने पूरणदेई को पहले ही मना कर रखा था कि वह मुहल्ले में किसी से भी उसके विगत जीवन के बारे में कुछ न बताए। परन्तु कनक के आने पर जब पूरणदेई ने बात की तो तारा ने उसे फिर ताकीद कर दी कि आगे से वह ऐसी बातें न करे। उसे शादी करवाने की कोई जरूरत नहीं है। पूरणदेई ने शीलो से बात की तो उसने केवल इतना ही कहा कि तारा का ससुराल तो वहीं बनेगा जहाँ यह चाहेगी।

पूरणदेई ने तायी से भी तारा की मर्जी बता दी थी। तायी ने उसके घर आना-जाना कम कर दिया। तारा ने सोचा—क्षितिज पर दिखायी दी आँधी दूर से ही निकल गई।

एक दिन सुबह-सुबह ही डाक्टर नाथ का फोन आया। उन्होंने कहा कि वे सन्ध्या समय आयेंगे। सन्ध्या समय डाक्टर आया तो उसने तारा से कहा, "लोगों ने मुझे तुम्हारा अभिभावक समझ लिया है।"

तारा ने गर्व से कहा—"डाक्टर साहब, ठीक ही तो समझा है।"

डाक्टर ने कहा—"मुझे तुम्हारे विवाह के विषय में अभिभावक बनाया जा

रहा है। मिसेज खन्ना का अनुमान है कि तुम्हें उनका भाई पसन्द है। उन्होंने तुमसे और तुम्हारे माँ-बाप से बात करने का जिम्मा मुझे सौंपा है। परन्तु मैंने कह दिया कि मैं तो ऐसे मामले में पड़ना ही नहीं चाहता। हाँ, अगर तारा मुझसे कहे तो मैं उसके पिता से कुछ कह सकता हूँ। वैसे कपूर मुझे भी अच्छा आदमी लगा।"

तारा ने निस्संकोच कह दिया, "डाक्टर साहब, उनसे कई बार मिली हूँ, उनका व्यवहार बिल्कुल यंत्रवत लगता है। वह तो अंग्रेजों के साथ ही चले गए होते तो अच्छा रहता। मुझे तो मिसेज खन्ना के घर का ढंग भी बिल्कुल पसन्द नहीं है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि मेरा शादी करने का कोई इरादा नहीं है।"

डाक्टर ने कहा—"जो होना था हो गया। उस सब को भूल कर तुम्हें स्वस्थ दृष्टिकोण से जीवन में संतोष पा सकने की बात सोचनी चाहिए। व्यर्थ आत्मबलिदान नहीं करना चाहिए।"

परन्तु तारा के इन्कार से डाक्टर ने उस प्रसंग को वहीं छोड़ दिया। तारा ने डाक्टर से स्वयं विवाह करने को कहा तो डाक्टर ने कहा कि यह संभव ही नहीं है। उसने बताया कि पहले भी एक लड़की से उसका विवाह होने वाला था, परन्तु लड़की चाहती थी कि मैं दादा की जायदाद में से अपने हिस्से के लिए दावा करूँ, परन्तु मैं यह मुसीबत नहीं उठाना चाहता था, अतः शादी न हो सकी। उसने कहा कि इसी डर से मैं फिर विवाह नहीं करना चाहता कि कहीं मेरी पत्नी ऐसा आग्रह करे तो मुसीबत होगी, इसीलिए मैं मुसीबत से दूर ही रहना चाहता हूँ।

बात यहीं समाप्त नहीं हुई। डाक्टर नाथ तो घर चला गया। दो-तीन दिन बाद मिसेज खन्ना आ गईं। उन्होंने तारा से घुमा-फिरा कर बात की। तारा ने कहा कि उसकी आर्थिक अवस्था ठीक नहीं। अभी तो उसे छोटे भाई-बहनों के लिए भी कुछ करना है। भाई करते हैं तो उनको सहायता भी तो मिलनी चाहिए। मिसेज खन्ना ने भी सोचा कि ऐसी जल्दी क्या है? वह तारा से साधारण ढंग से ही बात करती रहीं।

तारा को नरोत्तम पर खीझ थी। उसने ही तारा का खन्ना परिवार से परिचय बढ़ाने का यत्न किया था। नरोत्तम उसके घर आया तो तारा ने इस विषय में उससे बात की। नरोत्तम ने कहा कि वह तो स्वयं नहीं चाहता कि तारा और कपूर की घनिष्ठता बढ़े। नरोत्तम ने कपूर के विषय में कुछ गुप्त बातें भी बतायीं। उसने बताया कि पहले कपूर का किसी और लड़की से प्रेम था। पर अब वह उस लड़की से विवाह करने को तैयार नहीं है।

तारा ने कपूर से न मिलने का निश्चय कर लिया था। इस झगड़े से वह बिना परेशानी के बच गई थी, परन्तु नरोत्तम की बातों से उसे बहुत खिन्नता अनुभव हुई थी। रात उसे स्त्री-जीवन की विवशता के विषय में सोचते ही बीत गई।

दूसरे दिन सुबह भी तारा का मन भारी था। सन्ध्या समय मेहता की पत्नी सरोज आ गई। बातों ही बातों में उसने बताया कि आजकल उसके घर में ननद कुंत

के विवाह की समस्या विकट रूप लिए है। करनाल में सरोज की सास और जेठ थे। वे कुंत का विवाह कर देना चाहते थे। कोई लड़का भी देखा था। परन्तु कुंत राजी नहीं थी। मेहता बहन से जबरदस्ती नहीं करना चाहता था। इसी कारण माँ और बड़ा भाई उससे नाराज थे। सरोज ने बताया कि बड़ी मुश्किल है, अगर अच्छा घर देखते हैं तो लड़के वाले दहेज बहुत माँगते हैं। और साधारण घर में बात करो तो कुंत कहती है कि मैं अपनी जिन्दगी क्यों बरबाद करूँ? कुंत स्वयं नौकरी कर रही थी।

सरोज चली गई तो तारा को कंचन का खयाल आ गया। वह सोचने लगी यदि नरोत्तम से कंचन का संबंध हो जाए तो अच्छा रहेगा।

दूसरे दिन प्रातः ही कुंत तारा से सिलाई की मशीन माँगने आ गई। जब से तारा ने मशीन खरीदी थी, मुहल्ले के लोग प्रायः ही माँग कर ले जाते थे। तारा ने कुंत को रोक लिया और उससे पूछा कि वह माँ की पसन्द के लड़के से विवाह क्यों नहीं करती? कुंत ने कहा कि माँ तो कुछ सोचती नहीं। लड़के को मुश्किल से भत्ता मिला कर सौ-सवा सौ वेतन मिलता है, उसका परिवार बहुत बड़ा है, घर में एक भी नौकर नहीं है। उसने कहा कि ऐसा विवाह करके जिन्दगी चौके-बर्तन में खपा देने से क्या सुख मिलेगा।

तारा ने उसकी बात समझी और अपनी राय दी। कुंत इस बात पर राजी थी कि लड़का ऐसा हो जो दो-सवा दो सौ कमाता हो, जो उसके नौकरी करने पर एतराज न करे और सहयोग से जीवन बिताये।

कुंत चली गयी तो तारा फिर सोचने लगी—स्थिति कैसे सब कुछ बदल देती है! पाँच-छः साल में यह लड़कियाँ कितनी बदल गयी हैं।

१४

दिल्ली में अब हजारों लड़कियाँ और स्त्रियाँ नौकरी करना चाहती थीं। सफलता उन्हें ही मिल सकती थी जिनको सम्पर्कों का प्रभाव प्राप्त था। बाहर से आयी कनक को तुरन्त नौकरी कैसे मिल जाती। कनक पाँच वर्ष तक कर्मठ और व्यस्त रही थी। अब ठाली बैठे, प्रतीक्षा करते रहने का धैर्य न था। तारा के अनुरोध से समाज-विकास-विभाग की डिप्टी सेक्रेटरी मिस सक्सेना के प्रयत्न से कनक को, दिल्ली से सत्ताइस मील दूर, अलीगंज के 'समाज-विकास-केन्द्र' में 'नारी-कल्याण निरीक्षिका' की अस्थायी नौकरी मिल सकती थी। मिस सक्सेना ने उसे सहानुभूति से समझाया था कि कुछ मास कष्ट में निबाह लेगी तो इस अनुभव के आधार पर, उसे किसी 'शिक्षण-केन्द्र' में आराम की पक्की नौकरी के लिए चुनाव में आने का अवसर रहेगा। कनक ने अलीगंज जाना स्वीकार कर लिया था।

कनक को अलीगंज में एक मकान और एक परिचारिका भी मिली। जया

की समस्या थी। कनक उसे दिल्ली में कैसे छोड़ सकती थी। माँ बीमार थी, कंचन को स्वयं स्कूल जाना रहता था। जया की पढ़ाई की भी समस्या थी। वह चार वर्ष पूरे कर चुकी थी। अलीगंज में कनक का काम ऐसा था कि उसे सारा दिन घूमना पड़ता था। उसे जया को भी साथ ले जाना पड़ता था। कनक, पुरी और जन-अपवाद से दूर रहने के लिए और किसी सीमा तक कर्त्तव्य-बुद्धि से भी गाँव की कठिनाइयाँ और अस्वस्थ वातावरण सह लेने को तैयार थी परन्तु जया के लिए अस्वस्थ वातावरण और उसकी शिक्षा की उपेक्षा नहीं सह सकती थी।

कनक के लिए समस्या हो गयी कि बेटी की उचित देख-भाल करे या जीविका और देश के लिए काम करे। कनक जया के स्वास्थ्य और भविष्य का ख्याल कर उसे सितम्बर में दिल्ली छोड़ गई थी। उसका विचार था कि वह प्रति शनिवार की संध्या दिल्ली जाकर सोमवार प्रातः ही बस से अलीगंज लौट आया करेगी। पर इस प्रसंग में भी एक समस्या खड़ी हो गयी।"

केन्द्र के अध्यक्ष वर्मा जी ने कनक से कह दिया कि वह प्रति सप्ताह दिल्ली नहीं जा सकती। वर्मा जी से कनक की कुछ खटपट हो गई थी। अब कनक प्रति सप्ताह नियम के अनुसार 'आकस्मिक आवश्यकता' के लिए छुट्टी लेकर जाने लगी। प्रति सप्ताह नहीं जा सकती थी इसलिए पन्द्रह दिन में आने लगी। वर्मा जी कनक को टोकने के लिए कोई न कोई बहाना ढूँढ़ लेते थे। अब नौकरी और आत्म-सम्मान की रक्षा में द्वन्द्व आरम्भ हो गया।

कनक, नरोत्तम और कंचन के परस्पर आकर्षण और उनके सम्बन्ध के लिए पिता जी की सहर्ष अनुमति की बात जान गई थी। पंडित जी शीघ्र ही यह काम कर देना चाहते थे। परन्तु कंचन पिता जी और माँ को अकेले छोड़ जाने को तैयार नहीं थी। कनक ने अनुभव किया कि सब कुछ उसी पर निर्भर करता था। उसकी अलीगंज की नौकरी ही कंचन के विवाह में बाधा नहीं हुई थी। उस नौकरी से वह स्वयं खिन्न थी।

पंडित जी का प्रेस का कार्य भी बिलकुल बन्द ही हो गया था। गिल भी जुलाई में 'नाजिर' का काम छोड़कर दिल्ली आ गया था। वह पंडित जी का पता जानता था। कनक से उसका पत्र-व्यवहार चलता था। कनक के दिल्ली आने की ख़बर सुनकर वह उससे मिलने भी जाता था। पंडित जी ने कनक की अनुपस्थिति में गिल से पुरी के बारे में बात की। गिल ने सब कुछ बता दिया। पंडित जी ने सोचा कनक ने खुद सफरिंग का रास्ता चुना है। अपनी पसन्द से शादी करना उसका हक था। उस शादी को निबाहना, अपने शौहर को सही रास्ते पर लाना उसका फर्ज है। पीठ दिखाने का क्या मतलब? उसके हमदर्दों को उसे यही नसीहत देनी चाहिए।

गिल को दिल्ली आकर एक डेढ़ महीना पाँव जमाने में लग गया। अब वह महीने में साढ़े तीन सौ का प्रबन्ध कर चुका था। कनक विजयदशमी के अवसर पर छुट्टियों में दिल्ली आयी तो गिल ने उसे दिल्ली में ही रहने की राय दी। उसने कहा कि अगर पिता जी की सहायता करनी चाहती हो तो—यहाँ आकर ही रही हो।

कनक ने अलीगंज लौट कर एक मास में छुटकारा मिल जाने के लिए त्याग-

पत्र दे दिया था। तीसरे ही सप्ताह में बीमारी के दौरे में माँ के दिवंगत हो जाने की सूचना का तार मिला। कनक अपना सामान समेट कर दिल्ली चली आई।

१५

योजनाओं के सम्बन्ध में समाचार-पत्रों में जो कुछ भी रहता था, तारा ध्यान से पढ़ लेती थी। पहली पंचवर्षीय योजना के तीन वर्ष बीत चुके थे। पहली योजना मुख्यतः कृषि-सम्बन्धी थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में उद्योग-धन्धों को अधिक महत्व दिया जाने का प्रस्ताव था। भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के 'अवाडी' अधिवेशन में पंडित नेहरू ने घोषणा की थी कि देश की आर्थिक कठिनाइयों को दूर करने और देश के औद्योगिक विकास के लिए समाजवादी ढंग की नीति और मार्ग अपनाना होगा। नेहरू जी काँग्रेस के प्रधान और काँग्रेसी सरकार के प्रधानमंत्री भी थे। उनकी बात काँग्रेस और सरकार दोनों की बात थी। इस घोषणा की उपेक्षा नहीं की जा सकता थी। इस घोषणा की दृष्टि से नयी योजना का अर्थ था, बड़े-बड़े उद्योग-धन्धों का राष्ट्रीय साधनों से राष्ट्रीय नियन्त्रण में आरम्भ किया जाना। नयी नीति की घोषणा से कुछ क्षेत्रों में सनसनी और कुछ क्षेत्रों में स्फूर्ति फैल गयी थी।

योजना कमीशन के मुख्य आर्थिक परामर्शदाता डाक्टर सालिस और उद्योग विभाग के आर्थिक परामर्शदाता डाक्टर नाथ का उत्तरदायित्व और महत्व सहसा बहुत बढ़ गया था। दूसरी योजना के लिए समाजवादी ढंग की नीति स्वीकार कर ली जाने से आशंकित लोग उनके विचार जानने और उन्हें अपनी दृष्टि से सही सुझाव पहुँचा सकने के लिए चिन्तित थे। डाक्टर नाथ से मिलने वालों और बातचीत के लिए उसे लंच और डिनर पर बुलाना चाहने वालों की संख्या बहुत बढ़ गयी थी। चड्ढा और कई दूसरे कम्युनिस्ट, लोकसभा के कम्युनिस्ट और दूसरे मेम्बर भी अपना दृष्टिकोण नाथ के सामने रखने के लिए आतुर रहते थे। नाथ से बातचीत कर पाने के लिए कभी उसे निमंत्रण देकर बुला लिया जाता, कभी लोग उसके बँगल पर भी पहुँच जाते थे।

दिल्ली आकर गिल का कम्युनिस्टों से फिर हेल-मेल हो गया था। खास कर चड्ढा जैसे उदार कम्युनिस्टों से। गिल डाक्टर नाथ का विद्यार्थी रह चुका था। वह चड्ढा के साथ प्रायः ही डाक्टर के घर चला जाता था।

चड्ढा ने एक बार नाथ से समय लिया और दल-बल सहित वहाँ गया। चड्ढा, मर्सी, गिल, माथुर और तारा। वहाँ भूपसिंह उर्फ भाभी का काम देख कर तारा को बहुत खिन्नता हुई। मर्सी और तारा बाकी सबको बात करते छोड़कर मकान के अन्य कमरे देखने को उठ गईं। सभी कमरों का हाल एक सा ही था। कोई भी सामान ढंग से नहीं रखा था। रसोई का भी बुरा हाल था। मर्सी ने मजाक में तारा से कह

दिया कि अब तुम अपना यह चार्ज कब सम्भालोगी । तारा ने मर्सी को चुप करा दिया ।

भूपसिंह किसी काम से उनके पास चला गया तो मर्सी ने तारा से कहा, "मेरे क्या आँखें नहीं हैं ? तुम पर उसका अनुराग है और तुम हजार जान से उस पर निछावर हो । दिल की बात साफ क्यों नहीं कह देती ?"

तारा ने एतराज किया, "जितना आदर पिता जी का करती हूँ, उससे अधिक इनका करती हूँ । तुम्हें ऐसी बातें कहते शरम भी नहीं आती ।"

तारा ने एकान्त में मर्सी से कह दिया कि वह विवाह नहीं करना चाहती है । मर्सी ने कारण पूछा तो तारा ने कह दिया, "तुम इसे मेरी मानसिक स्थिति समझो या शारीरिक स्थिति या प्रकृति समझ लो । बस कह दिया, शादी नहीं करूँगी, नहीं करूँगी ।" इतना कह कर तारा रो पड़ी ।

मर्सी ने कहा, "अगर तुम्हें इतना बुरा लगता है तो मैं ऐसी बात नहीं किया करूँगी ।"

एक रविवार चड्ढा, गिल, कनक और तारा डाक्टर के घर गए । इस बार चाय आदि बनाने और सबको पिलाने का काम तारा ने अपने ऊपर ले लिया । वहाँ पर चड्ढा ने डाक्टर से तारा की शादी की बात आरम्भ की । तारा ने इसे पसन्द नहीं किया ।

तारा को अब दफ़्तर के काम में पहले जैसा उत्साह नहीं अनुभव होता था । सचिवालय की नियमित, सुरक्षित नौकरी थी । उसकी नौकरी की रक्षा के लिए सरकार स्वयं जिम्मेवार थी । वेतन नियमानुसार पचास रुपया वार्षिक बढ़ता जा रहा था । अवसर और उसकी बारी आ जाने पर, नियमानुसार उन्नति होनी ही थी । परन्तु तारा के घटनाहीन एक-रस दफ़्तर के जीवन में भी एक घटना ने चिन्ता और क्षोभ का भँवर उत्पन्न कर दिया था ।

एक दिन लंच टाइम के बाद तारा को डिप्टी सेक्रेटरी चारी का फोन मिला । उन्होंने कहा कि वे मिस्टर साहनी को उसके पास भेज रहे हैं । कोआपरेटिव लोन का मामला है । एम० आई० के पी० ए० ने इनके विषय में कहा है । अगर हो सके तो आज ही इनका काम हो जाए । तारा ने कहा भी कि नियत रकम बँट चुकी है, तब भी मिस्टर चारी ने कहा कि वह फिर भी देख ले । तारा मन ही मन बहुत झुँझलाई । वह किसका मामला रद्द करती ।

डिप्टी सेक्रेटरी का चपरासी तारा के कमरे का दरवाजा ठेल कर भीतर आया और अपने पीछे आते व्यक्ति के लिए दरवाजा खोले रहा । आगन्तुक कद्दावर था । वह सफेद गाँधी टोपी, जवाहर बंडी और कुर्त्ता पहने था । उसे देख कर, तारा की आँखें विस्मय में फैल गयीं और फिर गर्दन झुक गई ।

सोमराज साहनी, पंजाब के सर्व-शक्तिमान मंत्री सूद जी से केन्द्र के उद्योग-मंत्री के नाम सिफारिशी पत्र लेकर दिल्ली गया था । जानता था, प्रार्थना-पत्रों और पत्रों से तो काम महीनों लटके रहते हैं । काम स्वयं जाने से, अफसरों को साथ लेने से ही हो सकते हैं । मंत्री महोदय ने पी० ए० को आदेश दे दिया था । पी० ए० ने

मंत्री महोदय की ओर से फोन पर सम्बन्धित डिप्टी-सेक्रेटरी को कह दिया था। डिप्टी सेक्रेटरी के यहाँ सोमराज को आश्वासन मिला था और उन्होंने मंत्री महोदय की कृपा पाये व्यक्ति को अंडर-सेक्रेटरी के कमरे तक पहुँचा देने के लिए अपना चपरासी साथ कर दिया था।

सोमराज साहनी चपरासी के साथ अन्डर-सेक्रेटरी के यहाँ इतने भरोसे से गया था कि उसने कमरे के बाहर अफसर के नाम पर नजर डाल लेना आवश्यक नहीं समझा। कमरे में जाकर अपने सामने कुर्सी पर तारा को बैठी देख कर पहचानने में भूल नहीं हुई। तारा को अप्रत्याशित और सहसा देखकर सकपका गया।

तारा ने आँखें झुका कर दाँत दबा लिये। अपनी स्थिति के ध्यान से अपने-आपको सँभाला। आँखें झुकाये ही सोमराज को सामने की कुर्सी ले लेने का संकेत किया और कागजों के लिए हाथ बढ़ा दिया।

तारा ने सोमराज से कागजों को ले लिया, ओट के लिए चेहरे के सामने करके देखने लगी। कागजों पर उसे अक्षर नहीं, कल्पना में सात वर्ष पूर्व की घटनाएँ दिखाई दे रही थीं। सूखे गले से कई घूँट भरे, किसी तरह अपने-आपको सँभाला। सहकारी ऋण के लिए सोमराज का प्रार्थना पत्र पढ़ा।

सोमराज ने प्रार्थना-पत्र देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में दण्ड पाने वाले पुराने राजनैतिक पीड़ित के रूप में दिया था।

झूठ ! धोखा ! तारा के मस्तिष्क में क्रोध की ज्वाला भभक उठी। परन्तु प्रार्थना-पत्र के साथ राज्य-काँग्रेस कमेटी के कागज पर, राज्य-काँग्रेस-कमेटी की मोहर सहित, सोमराज साहनी के राजनैतिक कारणों से दो वर्ष जेल काटने का प्रमाण-पत्र मौजूद था।

तारा ने कागजों को उलट-पलट कर देखा, विभाग के इंस्पेक्टर की आवश्यक रिपोर्ट भी मौजूद है या नहीं ? रिपोर्ट नहीं थी। तारा समझ गयी, जाब्ते की लम्बी-चौड़ी कार्रवाई के झगड़े में न पड़ कर ऊँची सिफारिश के जोर से काम बनवा लेने का प्रयत्न था।

तारा ने हाथ में लिये कागजों के पर्दे की सहायता पा कर सात-आठ मिनट में अपने-आपको बिलकुल संयत, दृढ़, तटस्थ अफसर मात्र बना लिया था। कागजों की ओट से ही अँग्रेजी में कह दिया—"उत्तर डाक से भेज दिया जायेगा।"

अफसर की कुर्सी पर अभिमान से बैठी तारा के सामने प्रार्थी के रूप में बैठना सोमराज को बहुत असह्य हो रहा था, जैसे शूलों पर बैठा हो। उत्तर पाते ही वह उठ कर, बिना कुछ बोले, कमरे से बाहर चला गया। फिर वह इस विषय में किसी से कुछ कहने नहीं गया।

सोमराज प्रायः ही सरकारी दफतरों में अपने काम करवाता रहता था। इतना अनुभवहीन नहीं था कि उस मामले में अब भी सफलता की आशा करता। जानता था, अन्डर-सेक्रेटरी तो क्या, क्लर्क भी फाइल में जाब्ते का अड़ंगा लगा दे तो बड़े से बड़ा अफसर भी जाब्ते के विरुद्ध नहीं जा सकता। अपनी असफलता का

दुखड़ा रोते फिरने से अपनी ही फजीहत होती। वह खून का घूंट पी कर रह गया था।

तारा के लिए सोमराज के केस की अप्रिय परेशानी से बचने का उपाय कठिन नहीं था। वह फाइल पर इन्क्वायरी का आर्डर लिख दे सकती थी। परन्तु डिप्टी सेक्रेटरी को उत्तर देना आवश्यक था। वह बड़ी व्यग्रता से सोचती रही कि क्या करे। उसे केवल उच्चाधिकारी का मौखिक निर्देश ही पूरा कर देना था परन्तु कर नहीं पा रही थी। मन विरोध कर रहा था—सब जाल है, फरेब है।

तारा ने निश्चय करके मिस्टर चारी को फोन कर दिया कि उसे इस केस में कई कठिनाइयाँ जान पड़ती हैं। इसलिए वह केस उनके पास भेज रही है। मिस्टर चारी ने तारा का फोन सुना तो क्रोध में फोन का चोंगा पटक दिया, उसे कोई उत्तर नहीं दिया।

तारा ने अपनी परेशानी नरोत्तम से भी बताई। अब उसे न्याय पाने के लिए होम सेक्रेटरी रावत का ही भरोसा था। दफतर की कार्यवाही का क्षोभ तो समाप्त हुआ परन्तु सोमराज को देखकर मन में गहरी भयंकर टीस फिर जाग उठी थी, उसे वह किसी से कह भी नहीं सकती थी। अतीत की बातें सोच-सोच कर उसका सिर चकरा जाता था। वह सोचती, उसका जीवन तो वृक्ष से टूट कर हवा में उड़ते-जाते पत्ते की तरह है, उसके भविष्य का क्या ठिकाना ?—जीवन को स्वयं ही समाप्त कर देना पड़ेगा।

सुबह के ही पत्र में कश्मीर की सीमा पर भारतीय और पाकिस्तानी सेना में भयंकर संघर्ष हो जाने का समाचार था। दोनों देशों में भयंकर युद्ध हो जाने की आशंका थी। तारा सोचने लगी—क्या मैं ही एक बर्बाद हुयी हूँ, लाखों बर्बाद हो चुके, मिट चुके। यदि परस्पर द्वेष का प्रलय अब भी शान्त नहीं होता तो जाने क्या होकर रहेगा ?

उस घटना के परिणाम में तारा की बदली सूचना विभाग में हो गई थी। बदली से उस की हानि तो कुछ भी नहीं हुई फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से यह उसकी पराजय और बेईमानी की विजय थी। घटना तारा के मन में एक कसक छोड़ गयी थी।

१६

कनक को जालंधर से आये दो बरस हो गए थे।

कांता कनक को समझा कर लौटा ले जाने के लिए दिल्ली गई थी पर निष्फल जालंधर लौटी थी। पुरी कांता से मिलने गया था। कांता उसे क्या कहती, बात टाल दी—"भई जितना समझा सकती थी, समझाया, पर उसकी तो खोपड़ी में जो समा जाये, उससे टल नहीं सकती।...तुम क्या नहीं जानते ?"

परन्तु पुरी ने प्रयत्न नहीं छोड़ा। वह पंडित जी को साहित्यिक शैली में

विनय से पत्र लिखता था। ज्यों-ज्यों समय बीत रहा था, पंडित जी की चिन्ता बढ़ती जा रही थी। सन् ५४ मई में कंचन नरोत्तम के साथ कानपुर चली गई थी। कनक ने काम करना आरम्भ कर दिया। वह सन्ध्या समय हफ्ते में तीन दिन एक दूतावास में हिन्दी पढ़ाने जाती थी। एक पाक्षिक हिन्दी पत्र में नियमित काम था। बहुत मेहनत करती थी। उसने जिद्द करके नया हिन्दी प्रेस भी दो सौ रुपये मासिक में ठेके पर दे दी थी।

पंडित जी ने नया ढंग अपना लिया था। सब कुछ छोड़कर केवल खुश्क रोटी और उबली हुई तरकारी खाया करते थे। वह अपना काम भी स्वयं करना चाहते थे। कनक मना करती तो कहते कुछ हाथ-पैर हिलेंगे तभी तो खाने की भी भूख लगेगी। पंडित जी की एक मात्र चिन्ता और दिल बहलावा जया थी। वह उसके साथ बच्चा बन जाते और बातें करते। उसको मौखिक रूप से अँग्रेजी पढ़ाते। कहानियाँ सुनाया करते। गिल प्रायः आया करता था। पंडित जी उससे सूफी शायरों के बारे में बातें करते। कभी-कभी सामयिक राजनीति की भी चर्चा चल जाती थी।

पंडित जी सब चिन्ताओं से मुक्त हो जाना चाहते थे। अब कांता और कंचन की चिन्ता का तो कोई कारण नहीं रहा था। परन्तु कनक की चिन्ता उन्हें पल भर को भी नहीं छोड़ती थी। वह सदैव उसके विषय में ही सोचा करते थे। अब कनक का व्यवहार ऐसा हो गया था कि जैसे पुरी से अपने संबंध को भूल चुकी हो।

अक्तूबर में पुरी का पत्र आया। अन्त में उसने लिखा—"क्या आप समझते हैं कि मैंने पर्याप्त शान्ति और धैर्य नहीं रखा है? क्या मुझे घर और गृहस्थी की आवश्यकता नहीं है? मैं किस अपराध का दण्ड भोग रहा हूँ।" पंडित जी चिन्ता में डूब गए। स्पष्ट था कि पुरी के धैर्य की सीमा आ गई थी।

उन्होंने कनक से बात की परन्तु उससे उन्हें कोई उत्तर नहीं मिला। अब पंडित जी ने कांता को बुलाना ही उचित समझा। उन्होंने कांता को दो अनुरोधपूर्ण पत्र लिखे।

कांता दिल्ली आयी। कनक अपने काम पर चली गई तो पंडित जी ने कांता को पुरी का पत्र दिखा कर चिन्ता प्रकट की। उन्होंने कांता से कहा कि अब कनक को समझाओ।

कांता ने महसूस किया कि अब मौका आ गया है कि सब कुछ पिताजी को भी बताना पड़ेगा। उसने उर्मिला की बात सहित सब कुछ बता दिया, जितना कि वह कनक से जान पाई थी। पंडित जी के गहरे निश्वास से उसे लगा कि पिता जी समझ गए हैं।

कांता दो दिन दिल्ली में रह कर जालंधर लौट गई थी। कनक बहुत ध्यान और चिन्ता से पंडित जी की अवस्था देख रही थी। वह प्रायः ही चिन्ता में डूबे रहते थे। लगभग एक सप्ताह बाद पंडित जी का व्यवहार पूर्ववत दिखाई देने लगा।

कांता के जालन्धर लौट जाने के प्रायः मास भर बाद कनक को लगा, पंडित जी कुछ नये ढंग से या नई बातें सोचने लगे थे। कनक कभी-कभी पंडित जी की

बातों से ऊब जाती, परन्तु चुपचाप उनकी सारी बातें सुनती रहती। उसको लगता, अब पिता जी का मन हल्का है।

एक दिन भोजन के बाद आँगन में टहलते हुए पंडित जी ने बिलकुल तटस्थ भाव से एक बात कह दी। कनक उसका उत्तर देने में फरवरी की गुलाबी सर्दी में भी पसीना-पसीना हो गई थी। उत्तर दे देने के बाद वह पिता के सामने न बैठ सकी।

दूसरे दिन प्रात: ही कनक का मन गिल को सब कुछ बता देने को छटपटा रहा था। उसका सिर उड़ा जा रहा था। दफ्तर में काम कर सकना सम्भव नहीं था। परन्तु अन्त में उसने निश्चय कर लिया कि पहले गिल से वचन ले लूँगी कि मेरे अनुरोध की रक्षा करेगा, तब उसे बता दूँगी।

कनक ने एक बार जालंधर में गिल से अपना विवाह कर लेने को कहा था, परन्तु गिल ने कह दिया था कि उसे तो विवाह का ख्याल ही नहीं है। परन्तु कनक जब भी अलीगंज से दिल्ली आया करती थी तो गिल उसे यही समझाता था कि उसका जालंधर चले जाना ही उचित है। परन्तु कनक कहा करती थी कि वह पुरी को भूल जाना चाहती है। अगर कोई पुरी के साथ विवाह करने को उसका अपराध कहता है तो वह अपराध का दण्ड भुगतने को तैयार है, परन्तु लौटकर पुरी के पास नहीं जा सकती।

कनक जब अलीगंज की नौकरी छोड़कर दिल्ली आ गई तो गिल के पहले व्यवहार में अन्तर आ गया। जालन्धर में रहते समय कभी गिल के व्यवहार से ऐसा संकेत तक नहीं मिला था कि वह कनक को चाहता हो। परन्तु अब वह कनक को पत्नी के रूप में पा लेना चाहता था। कनक विचित्र यंत्रणा में थी। उसने गिल से एकांत में न मिलने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। परन्तु पंडित जी की बात उससे मन में रखी ही नहीं जा रही थी। उसने गिल को फोन करके छः बजे शाम को काफी हाउस में बुला लिया। परन्तु काफी हाउस के शोर में वह गिल से बात न कर सकी।

कनक और गिल काफी हाउस से निकल कर पैदल ही कनाट-प्लेस की ओर चल दिए। भीड़ से कुछ दूर हो जाने पर कनक ने गिल से बात बतानी चाही। परन्तु पहले उसने गिल से उसका अनुरोध मान लेने का वचन माँगा। गिल ने वचन दे दिया।

कनक ने बताया कि पिता जी के पास जालंधर से पुरी जी का पत्र आया है। उन्होंने लिखा है कि वे इस तरह कब तक प्रतीक्षा करें, कोई सीमा तो होनी चाहिए, यदि कुछ कर बैठें तो उन पर धैर्य न रखने का दोष न लगाया जाए।

कनक ने बताया कि पिता जी का कहना है कि जिस संबंध में कोई तत्व या सार नहीं है उसे बनाये रखना व्यर्थ है। वह तो केवल कानूनी बंधन है। इसे समाप्त कर देना ही दोनों के लिए उचित है। कनक ने गिल से बताया कि पिता जी के पूछने पर उसने भी सबंध समाप्त कर देने की स्वीकृति दे दी है। अब पिता जी जीजा जी को पत्र लिख कर पुरी जी से बात करने को कह देंगे, ताकि बिना क्रोध और उत्पात किए इस सम्बन्ध को कानूनी तौर पर समाप्त कर दिया जाए।

गिल यह सुनकर अत्यन्त उत्साहित हो उठा। परन्तु कनक ने कहा कि जब तक इस बात का निर्णय नहीं हो जाता, उन दोनों को वैसे ही रहना चाहिए जैसे जालंधर में रहते थे। गिल कुछ नाराज सा हो गया। लेकिन कनक को एकाएक उदास हो जाते देखा तो हल्की सी मुस्कराहट के साथ बोला, "अच्छा, ठीक है।"

१७

सन् १९५७ के आरम्भ में लोक-सभा और राज्यों की विधान सभाओं के नये चुनाव होने वाले थे। काँग्रेसी सरकार जनता का विश्वास पाने के लिए चुनाव से एक वर्ष पूर्व—सन् ५६ के आरम्भ में ही अपनी दूसरी विशाल आर्थिक योजना लागू कर देना चाहती थी।

राजनैतिक नेता भी अपनी सीमित दृष्टि से आगे नहीं देख पाते। जनता हाथी के शरीर से कहीं बड़ा समुदाय है। राजनैतिक नेता जनता के जिस अंग के सम्पर्क में आते हैं, उसी अंग को सम्पूर्ण जनता का रूप मान लेते हैं। यही बात दूसरी राष्ट्रीय-पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में थी।

कांग्रेस के प्रधान और काँग्रेसी सरकार के प्रधानमंत्री और उनके समर्थक नेता राष्ट्रीय साधनों से, राष्ट्रीय नियंत्रण में देश का औद्योगिक विकास करने की नीति और योजना द्वारा जनता का विश्वास और समर्थन पाने की आशा में थे। अनेक प्रभावशाली काँग्रेसी नेता योजना के इसी रूप के कारण जनता के विमुख हो जाने की आशंका में थे। काँग्रेस के प्रधानमंत्री, कांग्रेस के प्रकाशनों द्वारा जनता को सांत्वना दे रहे थे कि काँग्रेस की सोशलिस्टक पालिसी (समाजवादी ढंग की नीति) के प्रस्तावों का लक्ष्य पश्चिम का समाजवाद नहीं है। उसका प्रयोजन स्वतन्त्र-निजी व्यवसाय की नीति को शोसलिस्ट टोटेलिटेरियनिज्म (समाजवादी समुच्चय) के भय से बचाना है। देश के प्रमुख समाचार-पत्र बड़े-बड़े व्यवसाइयों की सम्पत्ति थे। ऐसे अधिकांश-पत्र, राष्ट्रीय साधनों द्वारा, राष्ट्रीय नियन्त्रण में, औद्योगिक विकास को राष्ट्र-हित के लिए घातक बता रहे थे।

उस सनसनी में एक छोटी सी घटना हो गई थी। सन् '४७ में काँग्रेस सरकार ने अँग्रेज सरकार से शासन का अधिकार लिया था। उस समय ब्रिटिश साम्राज्यशाही सरकार के भारतीय प्रधान सेनापति के लिए बनायी गयी, महलनुमा इमारत 'फ्लैग स्थान हाउस' को, काँग्रेसी सरकार के प्रधानमंत्री का निवास-स्थान निश्चित कर दिया गया था।

काँग्रेसी प्रधानमंत्री अपने-आप को गरीब जनता का प्रतिनिधि समझते थे। उन्हें महलनुमा इमारत में रहना असंगत आडम्बर जान पड़ता था। उनका सुझाव था कि भारत के प्रधानमंत्री के लिए ब्रिटिश साम्राज्य के प्रधानमंत्री के मकान की

ही भाँति 'साधारण और सादा' मकान होना चाहिए।

सरकार के सार्वजनिक-निर्माण-विभाग ने प्रधानमंत्री के योग्य 'साधारण और सादा' मकान का खर्चा चार लाख रूपये कूता था। प्रधानमंत्री इतना खर्च सुन कर घबरा गये थे। उन्होंने कह दिया—ऐसा मकान वे निजी प्रबन्ध में लाख-सवा-लाख रुपये में बनवा सकते थे। उन्हें नये 'साधारण और सादा' मकान का प्रस्ताव-स्थगित कर देना पड़ा था। मितव्यता के विचार से महल नुमा मकान में ही रहना स्वीकार कर लिया था। राष्ट्रीय नियंत्रण में उद्योगों के विकास के विरोधियों ने, इस उदाहरण को अपने पक्ष में बहुत बड़ा तर्क बना लिया था।

प्रधानमंत्री और योजना तैयार करने वाले लोग इस उदाहरण से यह मान लेने के लिए तैयार नहीं थे कि राष्ट्रीय नियंत्रण में अपव्यय के कारण, उद्योगों और व्यवसायों की असफलता निश्चित थी। वे इस उदाहरण को सरकारी व्यवस्था में, अँग्रेजी शासन की विरासत में पायी धाँधली और अपव्यय का प्रमाण समझते थे।

इस समाचार से सर्व-साधारण में धाँधली के विरुद्ध प्रायः चलती रहने वाली चर्चा में गरमी आ गयी थी। तारा के परिचित और पड़ोसी जानते थे कि तारा रिश्वत नहीं लेती थी इसलिए उसके सामने रिश्वत और धाँधली की चर्चा और आलोचना निर्भय की जा सकती थी। तारा जानती थी, लोग रिश्वत स्वीकार करने वाले अफसरों के सामने ऐसी चर्चा नहीं करते। यह भी जानती थी कि उसके कुछ न लेने से, लोग उससे विशेष सहायता भी नहीं पा सकते थे इसलिए उसकी गणना भले अफसरों में नहीं थी। लोगों को तो इसी में सुविधा थी कि उन्हें अवसर मिले, अफसर भी दक्षिणा के तौर पर पाँच सौ-हजार ले लें। दोनों का भला हो। धाँधली और रिश्वत की रोकथाम के लिए काफी शोर और पुकार थी, परन्तु केवल सतह पर। रिश्वत लेने वालों और देने वालों दोनों को लाभ था। हानि केवल सरकार या सार्वजनिक हित की थी। समझदारों की नजर में वह चिन्ता परायी बला थी, उसे कौन गले सहेजता।

माथुर का असन्तोष शासन की नीति और शैथिल्य के प्रति बढ़ता ही जा रहा था। वह कह बैठता—शक्ति और अवसर हाथ में होने पर अनुचित लाभ न उठाने वाले मुझे तो केवल अपवाद रूप ही दीखते हैं। लोगों को कान्स्टेबलों, चपरासियों और बाबुओं का रिश्वत लेना दिखाई दे जाता है। मैं पूछता हूँ, शासन में चोटी से लेकर पाँव के अँगूठे तक कौन अनुचित लाभ नहीं उठा रहा है? रिश्वत लेकर आदमी अपने बाल-बच्चे और कुनबे को ही तो पालेगा? मुझे बता दो, शासन सम्भाले लोगों में से किसका कुनबा नहीं पल रहा है? सरकारी नौकर उदाहरण देखकर ही तो चलेंगे! अफसरों के लिए भेंट-उपहार न लेने के कानून बना दिये हैं। अफसर ऐसे भोले नहीं हैं कि कानून से बचकर रिश्वत न ले सकें। मरण तो सर्वसाधारण का है। टैक्स पर टैक्स और मँहगाई! सरकारी रिपोर्टों में उत्पादन बढ़ता है और बाजारों में मँहगाई बढ़ती है। हमें तो योजनाओं से कुछ बनता दिखाई नहीं देता। जनता का अरबों रुपया करोड़पतियों और सरकारी अफसरों की जेबों में चला जा रहा है।

भाखड़ा-नंगल जाकर तमाशा देख लो। जनता के खर्च पर इतना सीमेंट खरीदा गया है कि भाखड़ा के पचास-साठ मील चारों ग्रोर सब मकान सीमेंट के बन गये हैं। सीमेंट फैक्टरियों की चाँदी है, ठेकेदारों की चाँदी है, सरकारी ग्रफसरों की चाँदी है। बरबादी टैक्स देने वालों की है। सीमेंट की जगह रेत भरी जा रही है। चवन्नी की जगह रुपये का एस्टीमेट बनता है। फिर उस चवन्नी में से भी तीन ग्राने खा जाना चाहते हैं। सीमेंट की जगह रेत से बनाये गये बाँध टूटेंगे तो नुकसान किसका होगा ? उस नुक्सान को न इंजीनियर पूरा करेंगे न ठेकेदार।

नरोत्तम वर्क्स-मैनेजर बनकर सीतलपुर शस्त्रों के कारखाने में चला गया था। दिल्ली ग्राने पर तारा से ग्रवश्य मिलता था। फैक्टरी में वह चारों ग्रोर शैथिल्य ग्रौर धाँधली ग्रौर उस शैथिल्य ग्रौर धाँधली पर पर्दा डाले रहने के प्रयत्न देख कर बहुत खिन्न रहता था। उसे जान पड़ रहा था कि ईमानदारी के रास्ते पर चल सकने के लिए पिता के व्यवसाय से ग्रसहयोग करना केवल मृग-मरीचिका थी। ऐसी चर्चा में उपस्थित रहने पर वह एक बार कह बैठा था—"...ईमानदार कौन है ? क्या कानून बनाने वाले विधान सभा के मेम्बर ईमानदार हैं ? जेब का पन्द्रह, बीस-पच्चीस हजार रुपया खर्च करके यह लोग देश-सेवा करने के लिए ही चुनाव लड़ते हैं ?"

तारा को इस प्रकार की शिकायतों से बहुत खीझ उठती थी, परन्तु स्वयं उसके मकान के नीचे दुकानों के सामने वही हाल था। फर्नीचर वाले, रेस्तोरां वाले दुकान के सामने की जगह रोके रहते। जनरल स्टोर्स वाले भी दो-दो ग्रालमारियाँ बाहर रख कर 'शो' बढ़ा लेते। यातायात पुलिस सार्वजनिक स्थान का दो-दो, चार-चार रुपया किराया लेकर जेब में डाल लेती थी। पड़ोस के लोगों को बहुत परेशानी होती थी। तलवार साहब ग्रौर तारा को गाड़ी लाने-निकालने में परेशानी होती थी। भुनभुनाते सब रहते थे पर प्रकट विरोध कोई नहीं करता था। पड़ोसियों से झगड़ा कौन मोल लेता ? तारा भी खीझ कर चुप रह जाती थी—सोचती थी—जब लोग ग्रावाज उठाने तक को तैयार नहीं तो सरकार ही क्या करे।

तारा ने यह बात एक बार मर्सी के इसी प्रकार की शिकायतें करने पर कह दी थी। मर्सी बिगड़ उठी थी—"हाँ, तुम्हें ग्रब सरकार में दोष क्यों दिखायी देगा ! नमक की खान में जो चला जाता है, नमक हो जाता है।"

गिल भी बैठा था। उसने दूसरी तरह बात की—"ग्रपने कष्ट ग्रौर धाँधली के प्रति ग्रावाज उठाने का साहस लोगों में न रहे तो यह सुव्यवस्था ग्रौर सुशासन का सूचक तो नहीं है !"

तारा ने मर्सी का कुछ उत्तर नहीं दिया परन्तु गिल से कहा—"लोग यदि ग्रनुचित लाभ के ग्रवसर के लिए ग्रव्यवस्था ग्रौर धाँधली को स्वीकार करते जा रहे हैं तो दोष किसका है ?"

डाक्टर नाथ स्वतन्त्र उद्योगों ग्रौर व्यवसाय के तरीकों से काफी परिचित था। यह भी जानता था कि स्वतन्त्र ग्रौर निजी क्षेत्र के उद्योगपति ग्रौर व्यवसायी, ग्रतिरिक्त ग्राय-कर से बचने के लिए उत्पादन ग्रौर व्यवस्था का व्यय कल्पित संख्याग्रों में बढ़ा

कर लाभ का अंश कम से कम दिखाने का यत्न करते हैं। उसके विचार में कोई कारण नहीं था कि राष्ट्रीय नियंत्रण में उत्पादन देश के लिए अधिक सुलभ और सस्ता न हो और उससे भावी विकास के लिए पूँजी न निकले।

राष्ट्रीय नियंत्रण में उत्पादन देश के लिए अधिक लाभकर होना चाहिए, इस बात को डाक्टर सालिस और नाथ सबसे अधिक समझते थे, परन्तु उनकी अपनी धारणा और विश्वास ही पर्याप्त नहीं था। उस नीति को शासन द्वारा व्यवहार योग्य बना सकने के लिए स्पष्ट कार्यक्रम आवश्यक थे। डाक्टर नाथ का सेक्शन ऐसे आँकड़े और विवरण तैयार कर रहा था। उसके दफ्तर को निरंतर दूसरे सरकारी दफ़्तरों के संपर्क में रहना आवश्यक था। इसी कारण पिछले वर्ष से उसका दफ्तर गर्मियों में पहाड़ पर नहीं गया था। प्रधानमंत्री, प्रति वर्ष गर्मियों में दफ्तरों और अफसरों की पहाड़-यात्रा के अँग्रेजी रिवाज को पसन्द भी नहीं करते थे।

चड्ढा इस विषय में अपनी खोज और एकत्र किए हुए आँकड़ों को अधिक प्रामाणिक समझता था। उसने अपने इस काम में कई साथियों को भी लगा लिया था।

एक दिन डाक्टर के घर महफिल जमी। उसमें स्वयं डाक्टर था, चड्ढा और नरोत्तम पहुँचे थे। तारा भी कनक और गिल के साथ वहाँ गई थी। वहाँ प्रधान-मंत्री के विषय में बातें प्रारम्भ हुईं तो गिल ने कहा, "प्रधानमंत्री की आँखों में खुशामद के घी की सलाई लगा दीजिये, उन्हें कुछ दिखायी नहीं देगा। उन्हें जो कुछ आप कहेंगे, उसी पर विश्वास करना होगा। नौकरशाही का तो 'गुरुमंत्र' यही है, अपने से ऊपर का अफसर सन्तुष्ट रहना चाहिए।"

तारा ने सब की चाय का प्रबन्ध किया। नरोत्तम ने मजदूरों की चर्चा आरम्भ की। उसने कहा कि मजदूर काम को नहीं आराम को अधिक महत्व देते हैं। अगर उनके खिलाफ एक्शन लो तो स्ट्राइक कर देते हैं। स्ट्राइक से सरकार की जन-प्रियता की पोल खुल जाती है, इसलिए अफसरों के लिए आवश्यक हो गया है कि वे स्थिति पर लीपा-पोती करके सब कुछ चुस्त और उचित दिखाते रहें।

इसी तरह की वहाँ कई राजनीतिक बहसें हुईं। तारा बहसों से ऊब गई, उसने महफिल समाप्त कर देने को डाक्टर से घर जाने की अनुमति माँगी।

अब घरेलू नौकरों में एक नई हवा चल पड़ी थी। वे भी चाहते थे कि होटलों, राजदूतावासों और अफसरों के नौकरों की तरह उन्हें भी दिन में तीन-चार घण्टे की छुट्टी मिला करे। एक दिन तारा के नौकर परसु ने भी यही बात उससे कही। उसने उसे कुछ डाँटा-फटकारा, फिर कह दिया कि वह दिन में आवश्यकता पड़ने पर बुआ जी से कह कर काम के लिए जा सकेगा। परसू ने यह बात मुहल्ले के सभी घरेलू नौकरों से कह दी। सब ने इसे एक नियम मान कर दिन में थोड़े समय की छुट्टी लेनी आरम्भ कर दी। इस बात से मुहल्ले के लोगों ने तारा को बहुत कोसा। तारा सब बातें सुनती और सोचती, खामुखाह वह इस मुहल्ले में आकर रही। मुहल्ले में केवल सरोज ही उससे ठीक से बात करती थी। परन्तु उसके भी अपने घर के कई झगड़े थे। तारा सोचती, किसी 'वर्किंग वीमेन्स होस्टल' में चली जाए, परन्तु पूरणदेई को

कहाँ फेंक देती ?

तारा कहीं जा भी नहीं पाती थी। मर्सी के घर तो हर समय राजनीतिक बहसें ही होती रहती थीं, जिससे तारा को उलझन होती थी। कंचन और नरोत्तम के विवाह के बाद से मिसेज अगरवाला भी उससे मुँह फुलाए थीं। उनका विचार था कि नरोत्तम ने तारा के प्रभाव के कारण एक गरीब लड़की से विवाह कर लिया है। बाहर भी नहीं जा पाती थी और घर में तारा पूरणदेई से परेशान हो जाती थी।

सितम्बर में मौसम भी खराब चल रहा था। सदा पढ़ते रहने से या अकेले पड़े सोचते रहने से भी वह परेशान हो जाती थी। एक दिन वह तैयार होकर कोई भी सिनेमा देख आने को जा रही थी। फिर राय बदल कर उसने तय कर लिया कि जया या शीलो के बच्चों को लेकर घूम आएगी, उन्हें आइस-क्रीम खिला लाएगी। उसे बच्चों को मनाने और रिझाने में बड़ा आनन्द मिलता था। वह जाने को ही थी कि कोई आ गया। तारा को अच्छा नहीं लगा। वह खीझ गई। परन्तु जब उसे पता चला कि डाक्टर साहब आए हैं तो उसकी खीझ दूर हो गई। डाक्टर नाथ बड़ी परेशानी में थे। भूपसिंह चला गया था। कपड़े धोबी के पास थे। डाक्टर के पास उनकी रसीद भी नहीं थी। तारा के पूछने पर डाक्टर ने भूपसिंह के चले जाने का कारण बताया। डाक्टर ने बताया कि क्लास फोर गवर्नमेन्ट एम्पलायीज़ यूनियन के आन्दोलन का चक्कर है। केन्द्रीय सचिवालय ने चपरासियों की यूनियन का प्रस्ताव पास कर दिया था। चपरासी सरकारी नौकर हैं। वे अफसरों के घर काम नहीं करेंगे। वे केवल सरकारी काम के लिए हैं। घरेलू नौकरों का काम उनकी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल और गैर कानूनी है।

डाक्टर नाथ ने बताया कि भूपसिंह तो नहीं जाना चाहता था, वह डाक्टर के लिए नौकरी तक छोड़ने को तैयार था, परन्तु एक दिन यूनियन के कुछ जवान उसके पास आए। डाक्टर ने स्वयं ही भूपसिंह से कह दिया कि वह उसकी यूनियन के फैसले के विरुद्ध उससे काम नहीं करवाना चाहता। भूपसिंह को डाक्टर के घर से जाना पड़ा। परन्तु उसकी क्रियाओं से लग रहा था कि उसे जाना बुरा लग रहा था।

तारा ने डाक्टर से खाने के बारे में पूछा तो डाक्टर ने बताया कि खाने की समस्या तो ऐसी विकट नहीं है, परन्तु घर में सफाई न होने के कारण बहुत परेशानी है। प्रत्येक वस्तु पर धूल जमी हुई है, कोई आता है तो बहुत बुरा लगता है।

एकाएक डाक्टर ने तारा से पूछा—"पुरी यहाँ आया था ?" तारा के इन्कार करने पर उसने बताया कि योजना के प्रकाशन की परामर्श समिति की बैठक हो रही थी। उसमें सूद जी भी थे। पुरी भी उन्हीं के साथ आया हुआ है।

डाक्टर ने कुर्सी पर करवट बदली—"क्या अजीब लोग हैं और क्या इनका बात करने का ढंग है। सूद जी की बात कह रहा हूँ। पुरी भी बिलकुल उसकी हाँ में हाँ मिला रहा था। मेरा अनुमान है, सूद ने पुरी से मेरे विषय में पहले बात कर ली होगी। लोग नौकरशाही ढंग को कोसते हैं। सूद का ढंग तो पूरा तानाशाही है। बिलकुल जैसे अमरीकन बौस अपने कारोबार में हुक्म चलाता है। मेरी बात

नहीं सुनी। हकला-हकला कर, 'क्या नाम...क्या नाम' करता अपनी ही बात कहता गया, क्या तर्क है ? क्या तरीका है ? अजीब आदमी है।"

तारा ने उत्सुकता से डाक्टर की ओर देखा।

डाक्टर ने बताया—"सूद कहता है, मान लिया इस योजना में बहुत शीघ्र औद्योगिक विकास हो सकता है पर योजना को कार्यान्वित कौन करेगा ? योजना को कार्यान्वित करने के लिये सबसे पहले मजबूत सरकार की जरूरत है। योजना तो बहुत अच्छी है, लेकिन यदि नये चुनाव के परिणाम में कोई दूसरी प्रतिक्रियावादी सरकार बन जाये और वह इस योजना को अव्यावहारिक बता कर रद्द कर दे तो ? दूसरी योजना की मूलनीति को चुनाव के पहिले लागू कर दिया गया तो काँग्रेस जनता के सब महत्वपूर्ण अंगों का विश्वास और सहयोग खो बैठेगी। यह योजना तो उन लोगों के लिए सीधी-सीधी कम्युनिज्म की धमकी है। यदि काँग्रेस, सरकार बनाने में ही सफल न हो सकी तो योजना को कार्यान्वित कौन करेगा ? योजना काँग्रेस के लिए आत्म-हत्या बन जायेगी।

"पुरी ने सूद के समर्थन में तर्क किया...देश की पूँजी अपने लिए प्रतिकूल परिस्थिति देख कर बाजार से सिमिट जायेगी। पश्चिमी राष्ट्र हमारी नीति में 'टोटेलिटेरियन' प्रवृत्ति देखकर सहायता से हाथ खींच लेंगे। योजना को केवल आर्थिक सिद्धान्तों की अपेक्षा व्यावहारिक राजनीति के दृष्टिकोण से देखना आवश्यक है।"

"सूद ने मुझे चेतावनी दी, काँग्रेस सरकार कोई योजना लागू करे तो पहला व्यावहारिक लक्ष्य तो काँग्रेस सरकार की स्थिरता होना चाहिए।"

मैंने सूद जी से कहा—"भावी चुनाव में क्या होता है, यह योजना का विषय नहीं है। राजनैतिक भविष्य को राजनीतिज्ञ ही अच्छी तरह समझते हैं। हम लोगों ने योजना की व्यवस्था सरकार द्वारा निर्दिष्ट सीमाओं में ही बनायी है। इस में कम्युनिज़म या मजदूर वर्ग के अधिनायकत्व का अवसर नहीं है। हमारी अविकसित परिस्थितियों में, जिस बोझ को स्वतंत्र-निजी व्यवसाय की व्यवस्था नहीं उठा सकती, उसे राष्ट्रीय साधनों और राष्ट्रीय उत्तरदायित्व से पूरा करने का प्रयत्न है। मेरा खयाल है, इस समय काँग्रेस की यही नीति है। इस योजना के मुख्य आधार प्रधानमंत्री और मंत्रि-मण्डल ने निश्चित किये हैं। योजना की रूपरेखा उन्हें समय-समय पर बतायी जाती रही।"

"सूद जी बिगड़ कर थथलाने लगे—प्रधानमंत्री तो हवा में रहते हैं। प्रधानमंत्री लाखों आदमियों की भीड़ से एक साथ मिलते हैं। काम भीड़ से नहीं चलता। प्रधानमंत्री भीड़ से चुनाव के लिए चन्दे की ही अपील करके देख लें ? लाख की भीड़ से दस हजार भी नहीं मिलेगा। आगामी इलेक्शन के लिए एक-एक राज्य में करोड़-करोड़ का खर्च पड़ेगा। प्रधानमंत्री इकट्ठा कर देंगे यह रकम ? सोशलिस्टक ढंग एक बात है पर ढंग व्यावहारिक तो होना चाहिए। अव्यावहारिक ढंग हम लोग कैसे मंजूर कर सकते हैं। जिम्मेवारी तो हमारी है। वे तो अपना आशीर्वाद देकर एक तरफ हो जायेंगे। यह बात आप को जरूर ध्यान में रखनी होगी।

"फिर सूद दूसरी बातें करने लगे, अजीब बातें। विस्मय है और दुख भी है क्योंकि मुझे वह पुरी की सूझ लगी। सूद ने कहा—तुम तो अर्थशास्त्र के विद्वान हो। खोज और अध्ययन तुम्हारा विषय है। तुम खामुखाह इस झगड़े में समय बरबाद कर रहे हो। यह तो मामूली सेक्रेटरियों के काम हैं। तुम्हारे लिए उचित स्थान 'राष्ट्रीय-खोज-संस्था' में है। तनखाह भी यहाँ से अच्छी हो जायगी। अध्ययन के लिए पूरा अवकाश रहेगा। साल दो साल में पंजाब में या किसी भी यूनिवर्सिटी में वायस-चांसलर बनने का अवसर हो सकता है। सूद इस के लिए आश्वासन देने को भी तैयार थे....।"

तारा मौन रही फिर गहरी साँस लेकर बोली—..."चक्रों के भीतर चक्र चल रहे हैं। मुझे तो डर ही लगता है, यह लोग जाने क्या कर डालें।"

डाक्टर फिर बोला—"पर मुझे पुरी पर विस्मय होता है। मुझे बाहर छोड़ने आया तो जरूर अपनेपन से कुछ बात की, पर सूद के सामने बिलकुल रूखा बना रहा। मुझे खयाल था यहाँ आयेगा। अब तक आ गया होता। वे लोग तो रात की ही गाड़ी से पंजाब लौट रहे हैं।"

तारा ने डाक्टर को अपने ही घर खाना खिलाया। उसने परसू को रसोई में जाकर पहले ही कह दिया था कि उसे डाक्टर के साथ जाना है, अतः वह खाना खाकर तैयार रहे। तारा ने डाक्टर से भी कहा कि परसू को अपने घर ले जाइये। डाक्टर ने कहा तुम्हें बहुत परेशानी होगी, परन्तु तारा ने कहा कि उसे कोई परेशानी नहीं होगी। उसने परसू को बुलाकर डाक्टर के साथ भेज दिया।

पूरणदेई कुछ दिनों से बीमार थी। परसू के न होने के कारण वह सुबह-सुबह नहा-धोकर काम करने के लिये रसोई की ओर चली तो तारा ने उसे मना कर दिया। स्वयं उसने अपने और पूरण देई के लिए खिचड़ी बना ली। रसोई में जाकर उसे पता चला कि परसू भी काम ठीक से नहीं कर सकता।

तारा ने मन ही मन सोचा परसू डाक्टर के घर जाकर क्या करेगा? उसने तय किया कि तीन बजे दफ़्तर से स्वयं डाक्टर के घर जाकर देख आएगी। तारा डाक्टर के घर पहुँची तो परसू सो रहा था। झाड़ू तो वह लगा चुका था परन्तु कमरे साफ फिर भी नहीं हुए थे। तारा स्वयं सफाई करने लगी। उसे गुसलखाने में और सोने के कमरे में कुछ मैले कपड़े दिखाई दिए। तारा ने बिस्तर ठीक किया और कपड़े हाथों में ले लिए। कुछ देर कपड़े पकड़े रही। फिर स्वयं ही सोचने लगी कि यह क्या पागलपन है। तारा ने कपड़े धो देने के निश्चय से परसू को साबुन लाने को भेज दिया था।

सवा पाँच बज रहे थे। तारा सब कुछ कर चुकी थी। परसू साबुन लेकर नहीं लौटा था। तारा परेशान हो रही थी। चाहती थी शेष काम भी जल्दी समाप्त करके डाक्टर के आने से पहले लौट जाये। उसके कपड़े और सिर गर्द से भर गए थे। ऐसी अवस्था में डाक्टर के सामने कैसे होगी।

परसू पाँच बजे लौटा। तारा घबरा रही थी, डाक्टर नाथ के लौटने में अधिक समय नहीं रहा था। तारा ने तुरन्त बाल्टी गुसलखाने के नल के नीचे रख कर बहुत सा साबुन घोल लिया। तौलिये, जाँघिये, बनियान, बाल्टी में डाल दिये। परसू से

कहा—"धूप थोड़ी देर ही है। कपड़ों का साबुन निकाल कर गुसलखाने से देती जाऊँगी। तुम दौड़-दौड़ कर बाहर धूप में दीवार पर डालते जाओ। यह भी ख्याल रखना, कोई आता-जाता उठा न ले जाय।"

परसू ने एक बार कपड़े लाकर बाहर फैला दिये थे, फिर लेने जा रहा था कि डाक्टर की आवाज सुनाई दे गयी—"परसराम, फाटक खोलो।"

डाक्टर की गाड़ी बँगले के फाटक पर पहुँच गयी थी। परसू ने दौड़ कर फाटक खोला।

डाक्टर ने गाड़ी भीतर करते हुए दीवार पर सूखते कपड़ों की ओर देख कर प्रशंसा से कहा—"वाह, तुम तो बहुत मेहनती जवान हो, कपड़े धो दिये। साबुन कहाँ से लाये ?"

"हजूर, बीवी जी धो रही हैं। उन्होंने साबुन मँगाया है।"

डाक्टर की नजर ड्योढ़ी में खड़ी तारा की गाड़ी पर पड़ गयी। वह तारा की गाड़ी के पीछे गाड़ी रोक कर लपकता हुआ भीतर गया। आवाज दी—"तारा, सुनो ! यह क्या हो रहा है ?

डाक्टर झुँझला-झुँझला कर तारा को बाहर आने के लिए कह रहा था। तारा ने कपड़े सम्भाल कर दरवाजा खोला।

डाक्टर सामने ही खड़ा था। माथे पर परेशानी के तेवर थे।

तारा ने शरमा कर पीठ फेर ली और गुसलखाने के दरवाजे की चौखट पकड़े रही।

"यह क्या कर रही हो ?"

तारा पीठ फेरे मौन रही।

"आई एम वेरी सारी। अच्छा, इधर आओ !" डाक्टर का स्वर नरम हुआ।

तारा ने डाक्टर की ओर नहीं देखा, सिर झुकाये कह दिया—"हम नहीं बोलते।"

"यह सब करने की क्या जरूरत थी ?"

तारा मुँह फेरे मौन किवाड़ की चौखट को नाखून से खोंटती रही।

"तुम इधर आओ !"

"हम नहीं बोलते।" तारा ने मान और लज्जा से कहा।

"यह तुम्हारी बहुत ज्यादती है, इधर आओ न !"

"हम नहीं बोलते आपसे !"

"क्यों ?"

"हमें खबर नहीं दे सकते थे !"

"पर यह क्या किया तुमने ?"

तारा सिर झुकाये मौन रही।

डाक्टर ने हार कर तारा को कोहनी से पकड़ कर गुसलखाने के दरवाजे से खींच लिया।

तारा ने इतना मानसिक संघर्ष और मानसिक व्यथा अपने जीवन में कभी

नहीं पायी थी। इससे पूर्व यातना और संकट ने उसे मूर्छित और जड़ कर दिया था। देश को टुकड़े करने वाला प्रलय अब शान्त हो गया था परन्तु उस प्रलय के भीषण भूकम्प की पीड़ा उसके शरीर में सदा के लिए रह गयी थी।...मेरे साथ जो भी हुआ, मैं किसी का जीवन कैसे बर्बाद कर दूँ ? कभी उसे जान पड़ता था, पाताल में गिरी जा रही है, कभी जान पड़ता था स्वर्ग की ओर उड़ जाना चाहती है। स्वर्ग और पताल उसे अपनी-अपनी ओर खींच कर छिन्न-भिन्न कर देना चाहते थे। वह स्वयं भी चाहती थी, उसका शरीर छिन्न-भिन्न हो जाये। उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो जायें और आँधी में, पत्तों की तरह उड़ जायें।...उड़ कर नाथ के चरणों की धूल बन जायें।

नाथ ने बहुत संकोच से, हिचकते हुए उसके सामने प्रस्ताव रख दिया था—"...तुमने कहा था, समय आने पर तुम्हारे विवाह के विषय में मैं ही निर्णय करूँगी। ...मेरी आयु अधिक न लगे तो मुझसे विवाह करना स्वीकार करोगी ?"

तारा नाथ के कपड़े धोती हुई पकड़ी गयी थी। नाथ ने उसकी बाँह पकड़ी थी तो स्नेह और मान की मूढ़ता में वह उस घटना की स्मृति से एक पल भी मुक्ति नहीं पा सकी थी। उस पृष्ठभूमि में नाथ का ऐसा प्रस्ताव बिलकुल अप्रत्याशित भी नहीं था, परन्तु नाथ का प्रस्ताव सुन कर तारा की गर्दन झुक गयी।

बैठक में उसके सामने नाथ ही था। दोनों का आमने-सामने बिलकुल चुप, जड़वत बैठे रहना नाथ को उचित नहीं लग रहा था। उसने प्यार से भरे स्वर में पूछ लिया—"कुछ नहीं बोलोगी ?"

तारा को इतनी जोर से रुलाई आ गयी थी कि उसे उठ कर चली जाना पड़ा। वह नाथ को उत्तर देने के लिए रुलाई रोकने का प्रयत्न कर रही थी। उसे पता ही नहीं लगा, कितना समय बीत गया। संयत होकर बाहर आयी तो नाथ जा चुका था। खिड़की से बाहर नजर गयी तो सब ओर बिजली का प्रकाश हो चुका था। तारा बहुत देर तक रोती रही।

तारा अपनी अभद्रता के प्रति ग्लानि से धरती में गड़ गयी। सोचा, अभी फोन करके क्षमा माँग ले। फोन पर हाथ रखा तो फिर आँसू बह आये। डर गयी—बात नहीं कर पायेगी। फोन से हाथ खींच लिया।

तारा ने रात दस बजे दृढ़ निश्चय करके बैठक के दरवाजे बन्द कर लिये। फोन पर नम्बर मिलाया। आँसू बहते जा रहे थे पर वह होठों को दाँतों से दाबे थी।

"मैं तारा..." कहते ही हिचकी आ गयी पर उसी साँस में कह दिया, "क्षमा कीजिये, मैं विवाह के योग्य नहीं हूँ।"

तारा केवल इतनी ही बात कह देना चाहती थी, परन्तु नाथ ने तुरन्त पूछ लिया—"क्या मतलब ? ऐसा क्यों कहती हो ?"

"ठीक कहती हूँ, क्षमा कीजिये ऐसी ही बात है।" तारा ने बहुत यत्न किया परन्तु नाथ को उसके रोने का आभास मिल गया था।

"इस समय फोन रख दो, मैं वहीं आकर बात करूँगा।" नाथ ने कहा।

तारा फिर अपने पलँग पर लेट कर आँचल में मुँह दबाये रोने लगी। चाहती थी, अपने शरीर को आँसुओं में गला-गला कर बहा दे।

पूरणदेई विस्मित थी, लड़की को क्या हो गया है। अवश्य कोई बहुत विकट पीड़ा होगी। तारा ने खाने से भी इन्कार कर दिया था। पूरणदेई बार-बार हाल पूछने आ जाती थी। तारा ने चिढ़ कर अपने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया।

दूसरे दिन तारा की अवस्था ऐसी थी कि उसे दफ्तर से छुट्टी ले लेनी पड़ी। तारा का मस्तिष्क निरन्तर चकरा रहा था—नाथ को कैसे उत्तर देगी ! सचाई और स्पष्टता के अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं था।

रविवार प्रात: आठ बजे ही नाथ का फोन सुना, बहुत प्यार और अधिकार से उसने कहा—"तारा, इस समय सुविधा हो तो मैं आऊँ? तुम्हारी 'हाँ' सुनने के लिए बहुत व्याकुल हूँ।"

"डाक्टर साहब, यहाँ ठीक नहीं रहेगा।" तार ने बहुत तटस्थ, स्थिर स्वर में कह दिया, "नौ-साढ़े नौ तक वहाँ ही आ जाऊँगी।"

सात वर्ष पूर्व तारा के मन में बार-बार आता था, आत्म-हत्या कर ले। उस समय उसने अपनी प्रतारणा की थी—इस प्रकार कायरता से क्यों मर जाये। जब समय आयेगा मरने से भी नहीं डरेगी। तारा अपनी गाड़ी में नाथ के बँगले की ओर जाते समय सोच रही थी। आज वह समय आ गया है। इस समय वह अपने-आपको बिलकुल शान्त रखना चाहती थी।

तारा को देख कर नाथ को विस्मय हुआ। तारा की निरन्तर मुस्कान गायब थी। वह पीली-सफेद, मोम की मूर्ति, स्वप्न में चलती सी लग रही थी।

नाथ ने ड्राइंग-रूम में नहीं अपने दफ्तर में समीप कुर्सी पर बैठाया। तारा कुर्सी की बाँह पर कोहनी टिकाकर, मुट्ठी पर ठोड़ी रखे, आँखें झुकाये हुए थी।

नाथ ने तारा को दो पल साँस लेने का अवसर देकर, आर्द्र स्वर में पूछ लिया—"विवाह के योग्य न होने का क्या मतलब, बताओ तो सही ?"

तारा ने आँखें झुकाये तुरन्त उत्तर दिया—"मैं रुग्ण शरीर हूँ।" शब्द उसके होठों पर ही रखे हुए थे।

"क्या मतलब ?" ...कैसा रोग ?" नाथ के माथे पर विस्मय के तेवर पड़ गये।

तारा ने उसी प्रकार निश्चल आँखें झुकाये, निस्संकोच उत्तर दिया—"आप को बता चुकी हूँ। आप से कभी झूठ नहीं बोली, नहीं छिपाया।"

"क्या बता चुकी हो ?" नाथ का विस्मय और बढ़ गया।

"आप को बताया था।" तारा ने गले का अवरोध निगला, "बन्नी हाते के मकान में आग लगा दी जाने के बाद भागी थी तो....।" तारा ने फिर घूँट भरा, "गली में से एक गुण्डा मुझे उठा ले गया था।"

नाथ कुछ पल चिंता में चुप रह गया। फिर गहरी साँस लेकर उसने कहा—

"ऐसा था तो तुमने इलाज क्यों नहीं कराया ?"

"सन् ४८ में मर्सी के साथ रहती थी तो ठीक से समझती नहीं थी। उससे

बात करने का यत्न किया था। उसने अविश्वास से कह दिया था—यह संभव नहीं है।

तारा ने दृढ़ता से अपना कर्तव्य निबाह दिया था। उठ कर चली जाना चाहती थी परन्तु शरीर ने साथ नहीं दिया। जितना निश्चय और साहस संचय करके लायी थी, उसका उपयोग कर चुकी थी।

नाथ कई पल फर्श की ओर देखता चुप रहा। फिर उसने तारा की ओर आँखें उठायीं। बहुत स्पष्ट स्वर में बोला—"ठीक है, तुम खुद रोग का इलाज नहीं करा सकीं। लेकिन मेरा अधिकार और कर्तव्य है कि अपनी पत्नी का इलाज करवाऊँ। मिसेज नाथ को इलाज कराना पड़ेगा....।"

तारा का शरीर काँप जाने से कोहनी कुर्सी की बाँह पर से फिसल गई।

नाथ ने उठ कर तारा की सहायता के लिए, उसके कन्धों को सहारा देना चाहा। तारा ने मुख आँचल में छिपा लिया था। नाथ के स्पर्श से वह बहुत जोर से काँप उठी।

नाथ ने समझा, तारा को असुविधा अनुभव हुई है। उसने हाथ हटा लिये। पल भर सोचा और फिर वैसे ही निश्चय से कहा—"तुम न चाहो तो मेरे साथ न रहना। पर जब तक तुम्हारा इलाज नहीं हो जाता, तुम मिसेज नाथ हो। यहाँ इलाज कराने में संकोच है, तो बम्बई में व्यवस्था हो सकती है। वहाँ भी नहीं चाहतीं तो मैं तुम्हें इंगलैण्ड ले जा सकता हूँ, वियाना ले जा सकता हूँ। इस क्षण से ही तुम मिसेज नाथ हो। तुम मुझे अपना अभिभावक स्वीकार कर चुकी हो, यह मेरी आज्ञा है। तुम चाहो तो अगले इतवार या किसी भी दिन अदालत में या जहाँ-जैसे चाहो, विवाह की रस्म पूरी की जा सकती है।

नाथ फिर कुर्सी पर बैठ गया। कई मिनट सोचता रहा। तारा चेहरे से आँचल नहीं हटा सकी।

नाथ ने पूछ लिया—"अब भी तुम्हें कुछ कहना है?"

तारा कुर्सी से उठी। नाथ के पाँव के समीप गिर सी पड़ी। नाथ ने खड़े हो कर उसे उठाना चाहा। तारा नाथ के घुटनों पर सिर दबा कर लिपट गई और फफक कर रो पड़ी।

१८

पंडित गिरधारी लाल जी ने कई दिन सोच-विचार कर मार्च ५६ में, कनक की जटिल समस्या के सम्बन्ध में महेन्द्र नैयर को फिर एक पत्र लिखा था। पंडित जी ने पुरी के अन्तिम पत्र की बात संक्षेप में बताकर, स्वीकार किया—बरखुर्दार, पुरी ने बहुत धैर्य से काम लिया है पर कनक का जालन्धर लौटना अब सम्भव नहीं जान पड़ता। ऐसी अवस्था में पुरी अपनी कठिनाई सुलझाने के लिये दूसरा मार्ग

अपनाना चाहता है तो उसे दोष नहीं दिया जा सकता। कनक भी पुरी के मार्ग में बाधा नहीं बनी रहना चाहती। पुरी चाहता है तो ईश्वर की इच्छा मान कर, हमें भी उनके विवाह को कानूनी तौर पर समाप्त कर देना मंजूर करना ही पड़ेगा। यह अनिवार्य है तो इसे यथा-सम्भव सद्भावना से कर डालना चाहिए। बेटा, इस कठिन काम को तुम्हारे सिवाय और कौन निबाह सकता है.

नैयर को पंडित जी की मानसिक यातना की कल्पना करके बहुत दुःख हुआ। वह पुरी और कनक के दाम्पत्य के वैषम्य का ब्योरा कांता से सुन चुका था। यह भी जानता था कि लाचार होकर कांता ने कुछ संकेत पंडित जी को भी दे दिया था। नैयर ने समझ लिया कि पंडित जी कनक को समझाने में असफल और असमर्थ हो गए हैं और शायद पुरी ने खिन्न होकर तलाक की धमकी दी है। इसी कारण पंडित जी इस झंझट को समाप्त कर देने को कह रहे हैं।

नैयर ने पंडितजी को पत्र लिख दिया कि अभी पुरी चण्डीगढ़ गया हुआ है, वह आ जाए तो मैं उससे बात करके आपको फिर पत्र लिखूँगा।

पुरी जालन्धर आ गया तो नैयर ने फोन करके उसे अपने घर बुलाया। पुरी आया तो नैयर ने उससे बात की। नैयर को न कहने योग्य बात भी कह देनी पड़ी। उसने कह दिया " यदि पत्नी साधारण अवस्था में या स्वस्थ न हो, निर्बल या रोगी हो जाए तो वह क्या करे ? मेरा अभिप्राय है, रोगी को तो रोगी समझ कर सहूलियत देनी पड़ती है।"

नैयर अपनी बात समाप्त कर उत्तर की प्रतीक्षा में था। कनक और पुरी में समझौता करा सकने के लिए उल्टी बात कहनी पड़ी थी।

पुरी ने बहुत गहरा साँस लिया—"जीजा जी, मैं तो सब कुछ आप के निर्णय पर छोड़ देने के लिए तैयार हूँ। आप जो कहेंगे, इन्कार नहीं करूँगा। आप जानते हैं, मैंने उसे घर की नौकरानी या अपनी सम्पत्ति कभी नहीं समझा। आप क्या मेरे विचार नहीं जानते ? सदा, सब कुछ ही उसके हाथ में रहने दिया है। उसे किसी भी यातना से बचाने के लिए मैं अपना दमन करने के लिए तैयार हूँ। उसकी इच्छा के विरुद्ध मुझे कोई आग्रह नहीं है। वह अपना घर सँभाले। मुझे तो सबसे पहले लड़की का ख्याल है।" पुरी की आँखें छलक आयीं।

"आप जानते हैं, मेरा घर से बाहर रहना उतना असंगत नहीं होगा जितना उसका घर में न रहना है। मैंने यहाँ अभी तक किसी को नहीं बताया है कि उसने नौकरी कर ली है। यही कह देता हूँ कि जया की शिक्षा और पिता जी की बीमारी के कारण दिल्ली में है। इस समय हमारा घर दिल्ली में है। यह मकान तो जालन्धर आने-जाने पर ठहरने के लिए ही है। मैं तो अधिकांश में बाहर ही रहूँगा। सन् '५७ के शुरू में ही चुनाव आ रहा है। मुझे फुर्सत ही कहाँ होगी ? मैं सब बात आप ही पर छोड़ रहा हूँ। जो सम्भव और उचित समझें कीजिये।"

नैयर इससे अधिक क्या आशा कर सकता था ? उसे स्थिति के सुलझाव का मार्ग पा लेने का सन्तोष हुआ। मन में पुरी और कनक दोनों के लिए करुणा अनुभव

हुई, परन्तु दूसरा मार्ग नहीं था ।

वह पुरी के घर कई बार आया । वहीं काँग्रेस की चर्चा चलती । पुरी सूद जी का समर्थक था । परन्तु नैयर के विचार उससे भिन्न थे ।

मई के अन्त में पंडित जी को नैयर का पत्र मिला । नैयर ने लिखा था कि पुरी कनक की हर बात मानने को तैयार है । परन्तु सामाजिक स्थिति के कारण वह चाहता है कि कनक घर में ही रहे । पुरी को बेटी के भविष्य की भी चिन्ता है । नैयर और कांता की राय भी यही थी, जैसा कि पत्र में नैयर ने लिखा था, कि कनक को अपने घर में ही रहना चाहिए । पंडित जी ने कनक को पत्र दिखाकर उसकी इच्छा पूछी तो कनक ने कह दिया कि वह जालन्धर नहीं जाएगी ।

नैयर पंडित जी का दूसरा पत्र पाकर विस्मित रह गया । उसे बुरा भी लगा कि पहले ही अपना अभिप्राय स्पष्ट कर देते तो वह पुरी से उस तरह की बात न करता ।

इस बार पंडित जी ने लिखा था, "...चिंरजीव पुरी का धैर्य प्रशंसनीय है, परन्तु वह स्वयं स्वीकार करता है कि उनके सम्बन्ध में अब तथ्य और अनुराग शेष नहीं है । जिस व्यवहार में तथ्य न हो वह छलना मात्र होगा । दूसरों को छला जा सकता है, अपने-आप को तो छला नहीं जा सकता । ऐसी अवस्था में परस्पर की संगति कैसे सह्य हो सकती है ? चिरंजीव पुरी सामाजिक कर्तव्य या सम्मान के विचार से अपने भावों का दमन करके, स्थिति को निबाहने के लिए तैयार हैं, परन्तु यह स्वाभाविक तो नहीं होगा । सम्बन्ध का जो शरीर निस्सत्व हो चुका है, यदि बना रहेगा तो सड़कर दुर्गन्ध जरूर फैलायेगा । उस दुर्गन्ध को ढक कर, दबा कर रखने की कोशिश की जायेगी तो वह अस्वास्थ्यकर अवश्य होगी । चिरंजीव पुरी का पहला विचार स्वाभाविक था । कन्नी भी यही चाहती है । मेरा अनुरोध है कि दोनों ने अगर पहले भूल की थी तो उनकी भूल क्षमा करके, उन्हें निरन्तर मानसिक क्लेश से मुक्त करने का यत्न किया जाना चाहिए ।"

नैयर और कांता दोनों ही परेशान हो गए । कांता ने कहा कि वह कनक को जालन्धर बुलाकर उससे बात करेगी कि आखिर यह क्या तमाशा है ।

कांता ने कनक को जालन्धर बुलाया । कनक ने गिल से राय ली । वह कुछ परेशान हुआ, परन्तु कनक का जाना उसे भी अनिवार्य ही लगा । कनक जालन्धर पहुँचने की तिथि की सूचना नहीं दे पाई थी । वह जया को भी साथ नहीं ले गई थी ।

कनक जालन्धर स्टेशन से निकल कर रिक्शा लेकर बहन के घर की ओर चल दी । रास्ते में उसे चेला मिल गया । उसने घर चलने को कहा तो कनक ने कह दिया कि वह अभी बहन के घर जा रही है । चेला पुरी को खबर पहुँचाने चला गया ।

कनक ने बहन के घर पहुँच कर उसके दोनों बच्चों को प्यार किया । नैयर ने उससे कुछ हँसी-मजाक किया । अभी मिलन के उल्लास की बातें हो ही रही थीं कि फोन आ गया । नैयर ने बताया कि पुरी आ रहा है । कनक ने कहा कि उसे उनसे कोई बात नहीं करनी है । इस पर नैयर बोला कि वह पुरी से कैसे कह देता कि अपनी पत्नी से मिलने मत आओ । कांता ने खिन्नता प्रकट की, बोली—"पहले हम

ग्रापस में बात कर लेते तो ग्रच्छा रहता ।''

नैयर ने कहा कि ऐसा हो जाता तो ग्रच्छा था परन्तु पुरी को रोकता तो वह समझता कि मैं ग्रड़चन डाल रहा हूँ ।

नैयर कनक की ग्रोर घूम गया—''सुनो कन्नी, हमारा तुम से यही ग्रनुरोध है कि बात को बिगाड़ना नहीं ।''

''बात बनाने-बिगाड़ने का सवाल क्या है ? बात तो सब हो चुकी । पिता जी ने ग्रापको लिख दिया है ।''

नैयर ने प्यार से समझाया—''हाँ, पिता जी ने लिख दिया है पर पुरी डाइवोर्स नहीं चाहता । वह समझेगा, हम ग्रौर पिता जी ही यह सब कर रहे हैं । तुम्हें डाइवोर्स की बात स्वयं करनी चाहिए । ग्रपनी इच्छा का कारण बताना चाहिए, उसकी बात सुननी चाहिए । उसे बात कहने का तो हक है । उसकी बात सुन कर ही तो ग्रन्तिम निर्णय कर सकती हो । दो-चार मिनट में ग्राता होगा । उसके पास गाड़ी है । कन्नी, हम दोनों का ही ग्रनुरोध है, पुरी में जो भी न्यूनतायें हों, उसका तुम पर वास्तविक ग्रनुराग है । जया के भविष्य का प्रश्न है । तुम संयम से बात करना, उसे दुतकारना नहीं । तुम्हारा जो भी निश्चय हो, बात नम्रता से ही करना ।''

पुरी ग्राया तो नैयर ग्रौर कांता ने कुछ इस तरह बात-चीत की जैसे कोई झगड़ा हुग्रा ही न हो, परन्तु कनक गरदन झुकाए चुप बैठी रही । पुरी भी हल्के से ही मुस्करा भर दिया । नैयर ग्रौर कांता ने पुरी ग्रौर कनक को ग्रलग कमरे में चाय पीने ग्रौर बात करने को भेज दिया । कनक नहीं जा रही थी, परन्तु नैयर ने उसे जबरदस्ती उठा कर भेज दिया । कनक पलँग पर जाकर चुपचाप बैठ गई ।

पुरी कनक के समीप पलँग पर बैठ गया । भरे हुए गले से कहा—''मुझे ग्राने की खबर भी नहीं दी ।''

कनक सीने पर बाहें बाँधे ग्राँखें झुकाये बैठी थी । वह मौन ग्रौर निश्चल रही ''

''कन्नी !'' पुरी ने प्यार से धीमे स्वर में पुकारा ग्रौर बाँह कनक के कन्धे पर रख दी ।

कनक पलँग से उठ कर कुर्सी पर बैठ गयी ।

पुरी का सम्पूर्ण उत्साह कड़वाहट में बदल गया । पल भर ग्रपने-ग्रापको वश में करके फिर बोला—''कन्नी, मेरे लिए तो तुम ग्रब भी वही हो जो विवाह से पहले ग्रौर विवाह के बाद थीं । चलो, ग्रपने घर चलो !''

कनक ने इन्कार में सिर हिला दिया ।

पुरी कुछ देर सोच कर बोला—''वह घर मेरा नहीं तुम्हारा है । तुम्हारे कहने से ही वह मकान लिया था । तुम्हें वहाँ ही रहना होगा । मेरा रहना पसन्द न हो तो मुझे निकाल देना । मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कोई बात नहीं होगी ।''

कनक ने फिर भी इन्कार में सिर हिला दिया ।

"आखिर तुम मेरे साथ रहना क्यों नहीं चाहतीं ?"

कनक बोली—"सम्भव नहीं है ।"

"सम्भव क्यों नहीं है ?"

"नहीं है !"

"मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, तुम्हें जिस बात से विरक्ति थी...." पुरी ने कातर स्वर में ही स्पष्ट बात करनी चाही, "वह नहीं होगी । मैं पति के अधिकार का तकाजा या उस तरह के सम्बन्ध की इच्छा कभी नहीं करूँगा । तुम अपने घर में रहो !"

कनक ने इन्कार कर दिया ।

"मैं तुम्हारी सब बातें मानने को तैयार हूँ तो फिर सम्भव क्यों नहीं ?"

"जब सम्बन्ध नहीं तो मतलब क्या ?"

पुरी सोचकर बोला—"तुम्हें क्या सचमुच मुझसे इतनी घृणा हो गयी है ?"

"इन बातों से लाभ ?" कनक आँखें झुकाये रही ।

"मैं तुम्हारी सब बातें मान लेने के लिए तैयार हूँ तो हम क्यों साथ नहीं रह सकते ?"

"हमारा कोई सम्बन्ध नहीं तो साथ रहने का कारण क्या ?"

"मेरा तुम से कोई सम्बन्ध नहीं है ?'

कनक ने इन्कार में सिर हिला दिया ।

"मैं तुम्हारी बेटी का पिता हूँ । मेरा उस पर अधिकार है ।"

"कोई अधिकार नहीं है ।"

"यह कैसे हो सकता है ?" पुरी ने प्रबल युक्ति पाकर कहा ।

"वह मेरी बेटी है ।"

"तुम्हारी बेटी है, पर मैं भी उसका पिता हूँ । वह मेरी भी सन्तान है । सन्तान के लिए पिता का कर्तव्य और अधिकार होता है ।"

"अधिकार माँ का है । मुझे अपनी बेटी के लिए संरक्षण माँगने की जरूरत नहीं है । मैं नहीं चाहती ।"

"कन्नी, ऐसे निबाह कैसे होगा ?"

"जैसे अब हो रहा है ।"

"यह निबाह है या बरबादी ?"

"आप ने ही पिता जी को पत्र लिखा था, ऐसे निबाह नहीं हो सकता, डाइवोर्स दे देंगे । मैं भी वही चाहती हूँ । पिता जी भी वही उचित समझते हैं ।"

"मैंने तो यह शब्द कभी नहीं लिखे । मैं तो डाइवोर्स की कल्पना भी नहीं कर सकता ।"

"मैं तो वही चाहती हूँ ।"

'कन्नी तुम्हें क्या हो गया है ?" पुरी का कंठ भर आया, "हम लोग दुनियाँ को क्या मुँह दिखायेंगे ?"

"छल से फायदा क्या है ? तथ्य तो तथ्य है । दुनिया में डौंडी पीटने की

जरूरत भी नहीं है ?"

पुरी मौन रहा ।

कनक भी गर्दन झुकाये, आँखें फर्श पर लगाये थी। पुरी के आँसुओं का घूंट भरने की गटक सुनायी दी । कनक के मन में आया, क्या व्यर्थ नाटक है । उसने मुँह फेर कर पूछा—"मैं जाऊँ ?"

पुरी ने बहुत गहरा निश्वास लिया—"तुम चाहे जैसे या जहाँ रहो, हमारा सम्बन्ध अटूट है । डाइवोर्स नहीं होगा ।"

"मुझे चाहिए ।"

"आखिर उस नाटक की जरूरत क्या है ?"

"नाटक तो झूठा बन्धन है । मैं मरे साँप की केंचुल से अपने को क्यों बाँधे रहूँ ।"

पुरी का स्वर क्रोध से कड़ा हो गया—"स्वतंत्रता चाहिए ? दूसरा विवाह करना चाहती हो ?"

"जो मेरी इच्छा होगी ।"

"किससे विवाह होगा ?"

"आपको मतलब नहीं !"

"गिल से ?"

"आपको मतलब नहीं ।"

"मुझे मतलब है । तुम मेरी पत्नी हो !"

"आपकी पत्नी नहीं हूँ । आपने स्वयं पति का अधिकार छोड़ दिया है ।"

"वह बात मैंने तुम्हारे प्रति सहृदयता के कारण कही थी, लेकिन तुमने मुझे धोखा दिया है । मेरे साथ छल किया है ।"

"मैंने छल कभी नहीं किया ।" कनक ने दृढ़ता से कहा, "जिस दिन असह्य हो गया, स्पष्ट कह दिया । न छल किया है, न करने के लिए तैयार हूँ ।"

"डाइवोर्स नहीं दूँगा !"

"बैर पूरा करने के लिए, मेरी जिन्दगी बर्बाद करने के लिए ही सम्बन्ध रखेंगे ?"

"मैंने कभी किसी के साथ धोखा और क्रूरता नहीं की। तुम्हारे कारण उर्मिला को जाना पड़ा । अब यह गुल खिला रही हो ?"

"आपने जो किया है, जानती हूँ, उर्मिला के साथ, अपने माता-पिता के साथ, तारा के साथ । किसके साथ छल और क्रूरता नहीं की ।"

"तारा के साथ मैंने क्रूरता की है ?"

"मैं सब जानती हूँ ।"

"जानती हो तो ठीक है ।" पुरी ने क्रोध में दाँत पीस लिये ।

पुरी ने कुछ सोच कर पूछा—"तुमने यहाँ से जाते समय तो डाइवोर्स की बात नहीं की थी ? मैं उसी प्रकार प्रबन्ध करता !"

"तब मेरे मन में यह ख्याल नहीं था ।"

"यह शिक्षा दिल्ली में मिली है ?"

"मुझे किसी ने शिक्षा नहीं दी ।"

"जिसने शीलो को दी थी उसी ने तुम्हें भी दी होगी !"

"यह गलत बात है । झूठा आरोप है ।"

पुरी कमरे से निकलने लगा तो कनक ने फिर कह दिया—"आप डाइ-वोर्स नहीं देंगे तो मैं दूँगी ।"

पुरी कमरे से बाहर निकल कर सीधा जीने की ओर जा रहा था । नैयर ने उसे बुला लिया और अपने दफ्तर में ले गया । उसने पुरी के कंधे पर हाथ रख कर पूछा—"क्या बात हुई ? उसे कुछ समझ में आया ?"

पुरी का चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था । कुछ देर बोल न सका । फिर उसने विस्मय प्रकट किया—"आप मुझे कह रहे थे कि डाइवोर्स की बात न सोचूँ । वह तो खुद डाइवोर्स के लिए जिद्द कर रही है । कहती है, पिता जी भी यही चाहते हैं ।"

"यह बिल्कुल अभी इधर की बात होगी । इसने जिद्द की होगी तो पिता जी मान गये होंगे । यह बिल्कुल अव्यावहारिक बात है । तुम अपना इरादा बताओ ! उसके कहने से तो सब कुछ नहीं होगा । तुम्हें तो अभी धैर्य है ?"

पुरी ने गहरा साँस लिया—"धैर्य क्या है । आप खुद कह रहे हैं, वह बात अव्यावहारिक है ।"

"तो ठीक है," नैयर ने आश्वासन दिया, "उसके चाहने से ही नहीं होगा । उसे दिल्ली में ही रहने दो ।"

नैयर और कांता कनक को तलाक के विचार से रोकना चाहते थे । उन्होंने कहा कि तुम सब परेशानियों से दूर दिल्ली में रहो, नाम मात्र के संबंध से तुम्हें क्या संकट है । तुम्हारी स्वतंत्रता में क्या कमी है ? परन्तु कनक ने कहा कि वह कानूनी बन्धन से मुक्त होना चाहती है । कांता ने पूछा, "क्या दूसरा विवाह करेगी ?"

कनक ने उत्तर दिया, "हो सकता है ।"

कांता को क्रोध आया । उसने कह दिया "तभी पुरी असह्य हो रहा है ।"

कनक ने विरोध करते हुए कहा, "जब तक उन्हें पति माना, कभी ऐसा ख्याल मन में भी नहीं लायी थी ।"

नैयर ने नरमी से समझाते हुए कहा, "तुम दूसरा विवाह कर सकती हो, फिर भी तुम्हें अपनी और अपने सम्बन्धियों की स्थिति का, लड़की के भविष्य का भी ख्याल करना चाहिये ।"

कनक उत्तेजित होकर बोली, "आप लोग अपनी खयाली बदनामी की चिन्ता में मेरी बलि देना चाहते हैं तो समझ लीजिये मैं मर गई । आप लोगों के मुँह नहीं लगूँगी । मेरी लड़की किसी पर बोझ नहीं बनेगी ।"

कनक आँचल में मुँह लपेट कर दूसरे कमरे में चली गयी ।

नैयर ने कुछ देर बाद कनक को बुला लिया और समझाने लगा—" कन्नी मैं तुम्हारे भाव समझता हूँ । मन में तुम्हारे साहस की सराहना भी करता हूँ कि तुम

व्यर्थ आडम्बर और छलना का विरोध कर रही हो, परन्तु इस काम में तो चाहने पर भी तुम्हारी सहायता नहीं कर सकूँगा। तलाक का एक कानून है। कानूनन तलाक तुम तभी दे सकती हो जब यह साबित कर सको कि या तो पति अक्षम है या वह तुम्हें मारता-पीटता रहा है या उसका किसी अन्य स्त्री से सम्बन्ध है या उसे ऐसा कोई असाध्य रोग है जिससे तुम्हारे स्वास्थ्य की आशंका हो या वह तुम्हें छोड़ कर चला गया हो या उसने तुम्हें घर से निकाल दिया हो। इनमें से कोई भी बात तुम साबित नहीं कर सकतीं...।

"पुरी के पास अलबत्ता और भी कारण हो सकते हैं। उदाहरणतः—तुम्हारा उसके घर में रहने से इन्कार करना। उसने तो तुम्हें घर में रखने से इन्कार नहीं किया। तुम उसके साथ रहना सम्भव नहीं समझतीं, इस बात का कानून की दृष्टि में कोई महत्व नहीं है। पुरी की जिस अजीब प्रकृति की बात कांता ने मुझे बतायी है, वह जरूर असह्य होगी, परन्तु उसके लिए अदालत में गवाही के रूप में कोई प्रमाण पेश नहीं किया जा सकता। अदालत तथ्यों को गवाही के प्रमाण से ही मान सकती है। तलाक की इच्छा करना व्यर्थ है।"

कनक जालन्धर से लौट रही थी तो दिमाग बहुत परेशान था—गिल को क्या बतायेगी ?

१९

मंत्री पद स्वीकार कर लेने के बाद सूद जी के रहन-सहन का पुराना ढंग शनैः-शनैः बदल गया था। मण्डी बाजार में, छोटे से मकान की दूसरी मंजिल पर एक कमरे में निर्वाह सम्भव नहीं रहा था। उतनी कम जगह में मंत्रियों के लिए नियुक्त शरीर-रक्षक और सन्तरी कहाँ खड़े हो सकते थे ? दूसरे मंत्री और बड़े-बड़े सरकारी अफसर मंत्रणा के लिए आते तो कहाँ बैठते ? उनके लिए उचित फर्नीचर भी चाहिए था। मंत्री से परामर्श के लिए आने वाले लोगों को भी प्रतीक्षा के लिए स्थान चाहिए था। ऐसे लोगों की संख्या इतनी थी कि अंतरंग व्यक्तियों के अतिरिक्त लोग दो-दो तीन-तीन दिन प्रतीक्षा और यत्न किये बिना, उन तक पहुँच नहीं पाते थे। नियमानुसार उन्हें सरकारी मकान मिला था और सरकारी झण्डा लगी मोटर यातायात के लिए थी। पाँच-सात मेहमान बने ही रहते थे।

आरम्भ में पंजाब सरकार के मंत्रियों के निवास-स्थान शिमला में थे। राजधानी चण्डीगढ़ में स्थानांतरित हो जाने पर सूद जी को अधिकतर वहाँ ही रहना पड़ता था। बड़े और भव्य मकान में रहने पर भी सूद जी के व्यक्तिगत अभ्यासों में विशेष परिवर्तन नहीं आया था। अब अपने कपड़े स्वयं धो लेने के लिए समय नहीं था परन्तु कपड़े अब भी वैसे ही—मोटे खद्दर का कुर्त्ता-पाजामा या कुर्त्ता-धोती ही—पहनते

थे। मशीन फिरी हुई खोपड़ी पर चिपकी हुयी गाँधी टोपी और पाँव में चप्पल रहती थी।

सूद जी ने अपने लिये कोई मकान, बँगला या हवेली नहीं बनवायी थी। बैंक में भी उनके हिसाब में चर्चा करने लायक रूपया नहीं था। उन्होंने व्यक्तिगत आर्थिक लाभ की चिन्ता कभी नहीं की थी, परन्तु उनके प्रति भक्ति दिखाने और निवाहने वाले निहाल हो गये थे और अभी दुगने-तिगुने हो सकने की आशा और विश्वास में थे। सूद जी की कृपा पाये लोगों को कानून और सरकारी अनुशासन का भी भय न था। राज्य के ही नहीं, देश भर के बड़े-से-बड़े व्यवसायी और उद्योगपति उनकी शक्ति से परिचित थे और उनके प्रति आदर से उनके मित्र बन गये थे। सूद जी के संकेत पर वे किसी को हजार-दो-हजार रुपया मासिक पर घर बैठे रहने की नौकरी दे सकते थे।

सूद जी ने अपने लिए धन संचय नहीं किया था, परन्तु वे राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्र में धन की शक्ति से बेखबर नहीं थे। वे कितनी ही संस्थाओं के सूत्रधार थे। सूद जी के प्रभाव से इन संस्थाओं के कोषों में दो-अढ़ाई करोड़ रुपये से अधिक जमा था। उस धन के कर्ता-धर्ता सूद जी ही थे। इन संस्थाओं, स्कूलों, अस्पतालों, समितियों में नौकरी पाये लोग अपने-आप को सूद जी के ही 'आदमी' समझते थे। अन्यथा वे बिना किसी औपचारिकता के बरखास्त हो जाते। उनके संकेत या उनकी सिफारिश पर बड़े-बड़े उद्योगों और व्यवसायों में नौकरी पाये लोगों की भी संख्या बहुत बड़ी थी। वे सब लोग अपने मालिकों की अपेक्षा सूद जी के ही अनुगत थे।

सूद जी के वेश और शारीरिक व्यवहार की ही तरह उनका स्वभाव और वर्ताव भी मूलतः पहले जैसा ही था। वही स्पष्टवादिता, अपने पक्ष की दृढ़ता और विचारों की एकाग्रता। स्थिति के दूसरे पक्ष के लिए उनकी कल्पना में स्थान ही नहीं था। उनकी शक्ति असीम रूप में बढ़ जाने के कारण उनके व्यवहार की तीव्रता और उसका प्रभाव बहुत बढ़ गया था। उनकी स्पष्टवादिता, हाकिमाना रूखापन और अपने पक्ष की दृढ़ता, विरोधी पक्ष को समाप्त कर देने की प्रवृत्ति बन गयी थी। विचारों की एकाग्रता ऐसी असहिष्णुता बन गयी थी कि वे केवल अपनी ही बात की प्रतिध्वनि सुनना चाहते थे। अफसरों की दृष्टि में मुख्यमंत्री के आदेश की अपेक्षा सूद जी के सुझाव का ही मूल्य अधिक था। वे 'चीफ मिनिस्टर' (मुख्यमंत्री) नहीं थे परन्तु उनका उल्लेख मिनिस्टर-इन-चीफ (नायक मंत्री) के रूप में किया जाता था। सभी जानते थे कि वे जब चाहें मुख्यमंत्री बन सकते थे।

जैसे किसी वस्तु या पदार्थ के बढ़ने पर उसकी छाया भी बढ़ती है वैसे ही किसी स्थिति या अवस्था के बल पकड़ लेने पर उसकी प्रतिक्रिया भी अवश्य होती है। सूद जी के प्रति लोगों की श्रद्धाभक्ति, निष्पक्षता या बेलाग व्यवहार के कारण नहीं, उनसे पायी कृपाओं से ही बढ़ी थी। उनके प्रबल समर्थकों की संख्या बहुत बढ़ गयी थी, परन्तु प्रत्येक कृपा के अनेक इच्छुक थे। कृपा पाने में असफल रह जाने वाले खिन्न होकर उनके पक्षपात के विरोधी बन गये थे। सूद जी सदा समर्थकों से घिरे

रहने के कारण इस प्रतिक्रिया से अपरिचित ही थे।

सूद जी कृपालु होने पर निहाल कर सकते थे तो अप्रसन्न हो जाने पर विरोधी को धूल चटा देना या उसे निर्मूल कर देना भी आवश्यक समझते थे। अपने से मत-भेद को वे अपनी सत्ता के प्रति शंका और विरोध समझते थे। योजना-आयोग के परामर्शदाता डाक्टर सालिस और डाक्टर प्राणनाथ ने प्रधानमंत्री के समर्थन के भरोसे सूदजी के सुझावों की अवज्ञा की थी। उन्होंने दूसरी पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक विकास का प्रधान अंश, सूदजी के पक्ष की आपत्ति के बावजूद, राष्ट्रीय नियंत्रण में रख लिया था। योजना सन् '५६ के आरम्भ से लागू भी हो गयी थी। बड़े-बड़े उद्योगपति और व्यवसायी, काँग्रेस के समाजवादी ढंग की प्रवृत्ति रखने वाले पक्ष से आशंका अनुभव करके, पहले की अपेक्षा भी सूद जी के पक्ष और सूद जी की कृपा के अधिक आकांक्षी बन गये थे। परन्तु सूद जी ने डाक्टर सालिस और डाक्टर नाथ को क्षमा नहीं कर दिया था।

गत आठ वर्षों में सूदजी के अनेक विरोधी और डाक्टर राधेलाल के समर्थक सूद जी की शक्ति देख, उनकी छत्र-छाया में आ गये थे। डाक्टर प्रभुदयाल भी काँग्रेस में डाक्टर राधेलाल का दल छोड़कर सूद जी के पक्ष में हो गया था। विभाजन के बाद डाक्टर साहब की कृपा से डाक्टर प्रभुदयाल को फीरोजपुर में असिस्टेन्ट सर्जन का स्थान मिल गया था। फिर उनकी अमलदारी में उसे मेडिकल कालेज में असिस्टेंट प्रोफेसर की जगह मिल गयी थी। डाक्टर प्रभुदयाल सन् '५० से ही सूद जी का अनुगत बन गया था। सन् '५५ में वह अवकाश लेकर इंगलैण्ड चला गया था और स्पेशल कोर्स छः मास में कर आया था। डाक्टर प्रभुदयाल की नजर मैडिकल कालेज में 'प्रोफेसर आफ मैडिसन' के पद पर थी। उस पद के लिए उसकी अपेक्षा पुराने कई एम० डी० भी उम्मीदवार थे, परन्तु लोग जानते थे, सूदजी की 'कृपा सों पंगु गिरि लंघैं, मूक होंय वाचाल'।

अगस्त के पहले रविवार को डाक्टर प्रभुदयाल सूद जी के इलाज के लिए चण्डीगढ़ आया था। सूद जी ड्राइंग-रूम में सोफा पर लुढ़के हुए एक बहुत आवश्यक फाइल देख रहे थे। प्रभुदयाल प्रतीक्षा में समीप बैठा बीच में गोल तिपाई पर पड़े अखबारों और पत्रिकाओं के पन्ने पलटता जा रहा था।

सूद जी ने फाइल देख कर एक ओर पटक दी। वे चश्मा उतार रहे थे। डाक्टर प्रभुदयाल ने एक सचित्र पत्रिका का खुला पृष्ठ उनकी ओर बढ़ा दिया—"भाप्पा जी, यह चमत्कार देखा आपने ?"

"क्या ?"

"मर चुकी लड़की जिन्दा होकर, सूचना विभाग में अन्डर सेक्रेटरी बन गई। योजना-आयोग के सेक्रेटरी डाक्टर प्राणनाथ ने उससे ब्याह कर लिया है।"

"क्या, कब ?" सूद जी ने पूछ लिया।

प्रभुदयाल ने पत्रिका का पृष्ठ सूद जी के सामने करके तर्जनी से चित्र दिखा दिया।

सूद जी चित्र पर नजर डाल ही रहे थे कि प्रभुदयाल बोल उठा—"बिलकुल चमत्कार है। तारा पुरी तो जलकर मर गयी थी भाप्पाजी, अपने जयदेव पुरी की ही तो बहिन है।"

"जलकर मर गयी थी तो क्या नाम यह उसके भूत का फोटो है ?" सूद जी ने पत्रिका एक ओर फेंक दी।

"नहीं भाप्पाजी !" प्रभुदयाल ने आग्रह किया, "अजीब तमाशा है। लड़की को मैं नहीं पहचानूंगा। बिल्कुल तारा है, जो कहिये शर्त लगाता हूँ। भोला पांधे की गली में हमारे मकान के सामने ही तो पुरी रहता था। तारा मेरी पत्नी की बहुत सहेली थी। उसके माथे पर चोट लगी थी तो मैंने ही ड्रेसिंग किया था। इसकी तो पार्टिशन से पहले, मुझे तारीख याद है, २९ जुलाई ४७ को शादी हुई थी। आपके सोमराज साहनी से ही ब्याह हुआ था। वही सोमराज जालंधर वाला। आपने ही तो मेहरबानी करके उसे सेक्रेटेरियट के बाग की चारदिवारी का ठेका दिलाया है। हिन्दू मैरिज हुई थी। आप पुरी से पूछ लीजिये।"

"हूँ !" सूदजी ने फिर पत्रिका उठा ली, "तो क्या नाम प्राणनाथ से विवाह कैसे हो गया ?" उन्होंने चित्र को बहुत ध्यान से देखा। चित्र के नीचे छपी पंक्ति को पढ़ने के लिए आँख के समीप किया और विस्मय से बोल उठे, "ब्याह नयाहिन्द प्रेस दिल्ली में हुआ है ! क्या नाम नया हिन्द प्रेस तो पंडित गिरधारी लाल का है। यह तो पुरी की ससुराल है ? यह क्या तमाशा है ? सोमराज तो चंगा भला है।"

प्रभुदयाल ने रहस्यमय घटना का अनुमान प्रकट करते हुए बताया :

"तारा के ब्याह से पहले अफवाह थी कि वह वहाँ ब्याह नहीं करना चाहती थी। वही सोमराज है न, प्रोफेसर दीनमुहम्मद के केस वाला। मेरा तो खयाल है, सोमराज के घर पर आग लगी थी तो तारा जली नहीं, भाग गयी होगी। पुरी बेचारे को कुछ पता नहीं है। वह और सोमराज तो इसी खयाल में हैं कि तारा जल कर मर गयी थी। तारा ने अपने घर पर कुछ पता ही नहीं दिया। लड़की बड़ी ब्रिलियंट थी। जाने कहाँ रही ? भाप्पाजी, गलती की तो कोई बात ही नहीं है। तस्वीर सामने है···हंड्रेड वन परसेंट तारा है···।"

सूद जी ने चपरासी को बुला कर आदेश दिया—"बारी साहब को बुलाओ !" पर्सनल असिस्टेन्ट के आने पर सूदजी ने आदेश दिया, "जालंधर में जयदेव पुरी के मकान माडल टाउन में फोन मिलाना।"

पुरी चण्डीगढ़ से सूद जी का फोन पाकर पहले तो कुछ समझा नहीं। सूद जी ने उसे अगस्त के पहले सप्ताह का 'दिल्ली सचित्र-साप्ताहिक' भी देख लेने के लिए कह दिया था।

पुरी ने दोपहर तक पत्र मँगवा लिया था। पत्र देखा तो उसका सिर घूम गया। पति जिन्दा रहते तारा का ब्याह, वह भी नयाहिन्द प्रेस में। मेरी छाती पर मूंग दल कर दिखायी गई है। चित्र छपवाना भी जरूरी था।···खूब षड़यंत्र बाँधा है। कनक भी यही करना चाहती है, मैं डाइवोर्स दूँ या न दूँ ! यह खबर मुझे ही

चुनौती है।

पुरी क्रोध में तारा और कनक के कलेजे निकाल कर चबा जाने के लिए तैयार था परन्तु क्या करता, चोट अपने ऊपर ही पड़ती थी।···कहाँ मुँह दिखाता।

सूद जी के आदेश की अवज्ञा पुरी के लिए संभव नहीं थी। सूद जी ने पुरी और सोमराज को आश्वासन दे दिया था कि सब कार्रवाई सरकारी रहस्य के ढंग से बिलकुल गुप्त, केवल विभाग द्वारा ही की जायेगी। डाक्टर प्राणनाथ को होश आ जायेगा।

पुरी को डाक्टर नाथ के प्रति भी कम क्रोध और घृणा नहीं थी···यही है उसकी संस्कृति और सज्जनता ! हमारे ही, अपने गुरु के घर में ही आग लगाने का संतोष चाहिए था ! ···उसे छोटी बहन कहता था।···ट्यूशन के बहाने का जो जाल रचा था।

डाक्टर नाथ और तारा सन् '५५ के नवम्बर में ही विवाह कर लेना चाहते थे, परन्तु कारणवश जुलाई '५६ से पहले अवसर नहीं बन सका। तारा को सिविल मैरिज का ढंग पसन्द नहीं था। अतएव पंडित बुलाकर रीति पूरी करने का आयोजन हुआ।

अतः विवाह पंडित गिरधारी लाल जी के घर में हुआ। मर्सी ने ननद बन कर डाक्टर के घर में तारा का स्वागत किया। शादी में चुने हुए लोग ही उपस्थित थे।

डाक्टर और तारा ने तीन मास की छुट्टी का प्रबन्ध कर लिया था। दोनों स्विटजरलैण्ड चले गए। तारा ने अनुभव किया कि उसे पृथ्वी पर ही स्वर्ग मिल गया है। वह अपनी प्रसन्नता और संतोष में कोई भी न्यूनता नहीं रहने देना चाहती थी।

तारा को छुट्टी से लौटे पूरा सप्ताह ही हुआ था कि दोपहर बाद उसे गृह-विभाग के सेक्रेटरी के चपरासी ने एक पत्र लाकर दिया। पत्र पर 'अत्यंत गुप्त' लिखा हुआ था। वह पत्र पढ़कर तारा का सिर चकरा गया। एक मिनट स्तब्ध सी रह गई। प्रत्येक कागज पढ़कर उसे लग रहा था कि अतल-अँधेरे कुएँ में गिरती जा रही थी। उसे कुछ भी नहीं सूझ रहा था।

तारा ने व्यवस्थित हो सकने के लिए कई गहरे साँस खीचें। मेज पर कागज और फोन दिखायी देने लगे। उसका हाथ फोन की ओर उठा, परन्तु औचित्य के विचार से हाथ पीछे हट गया। उड़ते जाते सिर को सँभाले रखने के लिए माथे को दोनों हाथों से जकड़ लिया। मन में आवेश उठा कि सिर को जोर से मेज पर पटक-पटक कर तोड़ दे। पति की दहलीज पर सिर पटकती बंती कल्पना में दिखाई देने लगी। तारा कुर्सी के बाजुओं का सहारा लेकर उठ खड़ी हुई और कमरे में मेज के चारों ओर चक्कर लगाने लगी।

फोन बज उठा।। तारा सुनना नहीं चाहती थी। घण्टी असह्य हो गयी। सोचा, उठा कर रख दे परन्तु बेसुधी में हाथ ने फोन कान पर रख लिया—"यस !"

डाक्टर नाथ की आवाज थी—"तारा सुनो, शायद तुम्हें कोई पत्र मिला हो···"

"हाँ, मिला है।"

"घबराना नहीं। मैं अभी नहीं, पाँच-सवा पाँच तक लेने आऊँगा।"

तारा ने समझा...पत्र उन्हें भी मिला है। चोट पर और भी भयंकर चोट लगी—खुद तो मरी 'इन्हें' भी मुसीबत में डाला।

तारा ने लड़खड़ा जाने से बचने के लिये मेज का सहारा ले लिया—मेरा भाग्य क्या 'इन्हें' भी ले डूबेगा ?

तारा जैसे-तैसे अपने आप को सँभाले हुए थी। डाक्टर की बाँह का सहारा पाकर उसकी सब शक्ति समाप्त हो गई। नाथ ने तारा को सहारा देकर गाड़ी से उतारा और कमरे में ले गया। उसे पलँग पर लिटा, समीप बैठ कर सान्त्वना देने लगा।

नाथ ने तारा को मिला पत्र देखा और स्वयं पाया पत्र उसे दिखाया। दोनों पत्रों का विषय एक ही था। दोनों पत्रों के साथ पुरी, सोमराज और डाक्टर प्रभुदयाल के 'विशेष पुलिस' को दिये गुप्त बयानों की प्रतिलिपियाँ थीं।

तारा नाथ के घुटने पर सिर रख कर रो पड़ी।

नाथ ने उसके सिर पर हाथ रख कर पूछा—"यह डाक्टर प्रभुदयाल कौन है ?"

तारा ने बताया—"गली में हमारे मकान के सामने ही रहता था। यह सब भाई की करनी है, जाने क्या द्वेष माने बैठे हैं ?"

"पुरी नहीं, पुरी की पहुँच इतनी दूर नहीं हो सकती। इसमें सूद का हाथ है। वह वार तुम पर नहीं है, सूद की मेरे प्रति नाराजगी का परिणाम है। पुरी तो उसके हाथ का पाँसा बन गया है। गेहूँ के साथ घुन की तरह तुम्हें भी पीसा जा रहा है। तुम ने क्या सोचा है, क्या उत्तर दोगी ?"

"क्या उत्तर दे सकती हूँ ?" तारा ने आह भरी, "आप को मालूम है, घटना के रूप में इन लोगों के बयान ठीक हैं, लेकिन मैं कभी 'उसकी' पत्नी नहीं थी। मैंने कभी उसे पति स्वीकार नहीं किया। कभी उसके साथ नहीं रही। मैंने कोई अनैतिक काम नहीं किया ! यदि यह कानूनन अपराध है तो इसका उत्तदायित्व मुझ पर है। जो दण्ड देना है, मुझे दें। आप तो विवाहित नहीं थे। मुझे इनकी नौकरी नहीं चाहिए।"

"क्या बात कहती हो ? प्रश्न तुम्हारी नौकरी का नहीं, सम्मान का है।" नाथ ने टोक दिया, "मैंने सब कुछ जान-बूझ कर किया है। मुझे सब कुछ मालूम था। विवाह का प्रस्ताव भी मैंने ही किया था। उत्तरदायित्व मुख्यतः मेरा है। हमें सन्तोष है कि हमने कोई अनैतिक काम नहीं किया है, परन्तु आरोप नैतिक नहीं, कानूनी आधार पर है। आरोप का निराकरण भी कानूनी युक्ति से करना होगा।"

इतने में गिल आ गया। वह पत्रिका में छपी डाक्टर और तारा की तस्वीर दिखाने को लाया था। उसने डाक्टर को परेशान देखकर कारण पूछा तो डाक्टर ने सब बता दिया। उसे दिखाने के लिए वह दोनों पत्र लेने अन्दर चला गया।

नाथ कागज लेकर लौटा तो मुस्कराने का यत्न कर बोला—"तुम्हारी ही करतूत है। तुम अखबार में छपवाये बिना नहीं रह सके। विवाह भी उसकी ससुराल में हुआ।"

"हूँ, यह तो क्रोध का बहुत बड़ा कारण होगा।" गिल ने स्वीकार किया।

"हमें विश्वास है कि हम ने कोई अनैतिक काम नहीं किया। हमारे विवेक को पूरा सन्तोष है" नाथ ने कहा, "परन्तु अपराध का आरोप कानून के आधार पर है। कानून केवल विवेक और सत्य ही नहीं है। कानून के बहुत से पहलू होते हैं, उस की व्याख्या होती है। किसी वकील से राय ले लेना आवश्यक है। बात फैलनी भी नहीं चाहिए।"

"वकील से राय लेना चाहते हैं तो कल तक ठहर जाइए।" गिल ने अनुरोध किया, "यों भी दशहरे के कारण दफ्तर बन्द रहेंगे। कनक का जीजा नैयर कल आ रहा है। गम्भीर आदमी है, बहुत सफल वकील भी है। वह पुरी और सूद को खूब जानता है। विवाह गैर-कानूनी है तो इसमें सहयोग के लिए कनक और पंडित जी पर भी जिम्मेवारी आनी चाहिए। कन्यादान तो पंडित जी ने ही किया था। मैं यहाँ से लौट कर कनक के यहाँ जाकर बात करता हूँ।"

नैयर के दिल्ली आने का प्रयोजन तो कुछ और था।

जून के अन्त में कनक के जालन्धर से लौटने के बाद पंडित गिरधारीलाल जी ने बहुत सोच-विचार कर अगस्त के आरम्भ में एक और पत्र नैयर को लिखा था। इस पत्र में पंडित जी ने नैयर से अनुरोध किया था कि वह पुरी को समझाने का यत्न करे कि जीवन केवल दिखावे की वस्तु नहीं है। पुरी और कनक के जीवन में जो वैषम्य और कटुता आ गयी है, उससे दोनों के लिए मुक्ति आवश्यक है। पुरी बहुत समझदार है। वह स्वयं ऐसा उपाय सोचे कि दोनों का आत्म-सम्मान बना रहे और दोनों कटुता से मुक्त हो जायें। पंडित जी ने स्वयं तलाक कानून को पढ़कर सुझाव दिया था कि पुरी चाहे तो कनक को 'डेजर्शन' (छोड़ जाने) के आधार पर तलाक दे दे। कनक की ओर से कोई सफाई नहीं दी जायेगी। इस ढंग से पुरी पर कोई भी बात नहीं आयेगी। अदालत से कार्रवाई कैमरा में (गुप्त) की जाने की प्रार्थना की जा सकती है।

नैयर ने पंडित जी को इस प्रकार कनक का समर्थन करते देखा तो उत्तरदायित्व अपने ऊपर न लेने के लिए पुरी को सब बात बता दी थी।

पुरी नयाहिन्द प्रेस में तारा के विवाह की घटना से बहुत खिन्न था। उसने तारा के विवाह का जिक्र न कर रूखा सा उत्तर दे दिया था—"पंडित जी सठिया गये हैं। कनक उन्हें बेवकूफ बना रही है। मैं उनके इशारे पर नहीं नाच सकता। मेरे पास कानूनी आधार है, पर मैं तलाक नहीं दूँगा।...मैं उसकी सब चालबाजी समझता हूँ।...यह उच्छृङ्खलता नहीं होने दूँगा। मैंने उसके लिए क्या नहीं किया? मुझे इस सम्बन्ध से कुछ नहीं मिल रहा, परन्तु मैं उसे दूसरे विवाह का अवसर नहीं दूँगा। तलाक नहीं दूँगा। यदि वह कुछ करेगी तो उसकी पत्नी नहीं बन सकेगी।

तब फिर दोनों को देख लूंगा।

नैयर पुरी को क्या कह सकता था और उससे पाया उत्तर पंडित जी को कैसे लिख देता। वह पंडित जी की मानसिक अशान्ति की कल्पना करके बहुत चिन्तित था। अनुमान था, कनक की इच्छा के कारण ही पंडित जी इस प्रकार व्याकुल हैं। पत्र लिख दिया था कि विजयदशमी के अवकाश में दिल्ली आकर वहीं सब बात करेगा। दिल्ली में उसे कुछ और भी काम था।

कनक नैयर के स्वागत के लिए स्टेशन पर गयी थी। स्टेशन से ही उसने डाक्टर नाथ और तारा के विरुद्ध सूद जी और पुरी के षड़यन्त्र की बात नैयर को बतानी आरम्भ कर दी थी। दोपहर बाद गिल, कनक और नैयर को डाक्टर प्राण के यहाँ ले गया।

नैयर, कनक और गिल से सब कुछ सुन चुका था। तारा के सम्बन्ध में कनक से सुन कर मन में सहानुभूति और आदर था।

नैयर ने तारा और डाक्टर नाथ को दिये गये नोटिस देखे। पुरी, डाक्टर प्रभुदयाल और सोमराज के 'विशेष पुलिस' को दिये गुप्त बयान भी पढ़े।

नैयर चिन्ता से भवों पर अनामिका रखे और होठों को दाँतों में लेकर कुछ संकोच से अँग्रेजी में बोला—"इसमें तो सन्देह नहीं कि व्यवहारिक दृष्टि से और वास्तव में भी वह विवाह डिफ़ंक्ट (समाप्त) हो चुका था। अगर आपने नये तलाक कानून का जरा सा उपयोग कर लिया होता तो ऐसी शरारत के लिए इन लोगों के पास कोई आधार न रह जाता।"

"आपका कहना ठीक है।" नाथ ने स्वीकार किया, "अव्वल तो गत नौ वर्ष की स्थिति से ऐसी किसी आशंका का अनुमान ही नहीं हो सकता था। उस सारहीन अप्रिय घटना को याद करना भी अपमानजनक लगता था। कानून की बात दूसरी है, परन्तु वह घटना विवाह नहीं, एक अन्याय-मात्र थी। कानून की याद तो भय से बचने के लिए या भय दिखाने के लिए ही आती है।" नाथ हँस दिया।

"कानून तो होता ही परेशान करने के लिए है।" कनक ने नैयर की ओर कटाक्ष किया।

"इसीलिए उससे सावधान रहना चाहिए!"

नैयर के होठों पर भी मुस्कान आ गयी। उसे व्यसायिक ढंग से बात करने का अवसर मिल गया—"रक्षा के लिए भी कानून की ही शरण लेनी पड़ेगी। कानून की चोट से कानून की ही ढाल बचा सकती है। यह स्थिति कुछ विचित्र है। इस में न तो सीधी कानून और अदालत की बात है और न साधारण नैतिकता या विवेक-बुद्धि की बात है। यह अदालती कार्रवाई नहीं है, परन्तु आप पर कानून की आड़ लेकर शासकीय शक्ति से, विभागीय कार्रवाई का वार है। मामला अदालत में होता तो सोमराज पर 'इन्हें' इरादतन जला कर मार डालने का उल्टा आरोप लगा दिया जा सकता था। उचित तहकीकात किये बिना, इनके जल कर मर जाने की अफवाहें उड़ा देने और जल्दी से क्रिया-कर्म कर देने की क्या आवश्यकता थी? गवाही तो बाद

में तैयार हो जाती ।"

नैयर ने भवों को सहलाते हुए तारा की ओर देखा—"इन लोगों के बयानों को तो गलत नहीं कह दिया जा सकता ?"

तारा ने आँखें झुकाये उत्तर दिया—"कानून के शब्दों की दृष्टि से बयान चाहे ठीक हों पर वास्तव में मैंने उसे कभी पति स्वीकार नहीं किया। पिछले नौ वर्षों में मेरा उससे कोई सम्बन्ध या सम्पर्क नहीं रहा।"

नाथ ने कह दिया—"वास्तव में सूद की नाराजगी तो मुझ से है। प्रयोजन मुझे मार्ग से हटाना है।"

नैयर ने स्वीकार किया—"मैं जानता हूँ, मैं अभी तारा जी पर लगाये गये आरोप की बात कर रहा हूँ।" उसने तारा से पूछा, "आपको कोई अदालती नोटिस मिला है कि आपका यह विवाह अवैध है, आप कानूनन सोमराज की ही पत्नी हैं ?"

तारा ने इन्कार में सिर हिला दिया।

नैयर ने गर्दन सीधी कर ली—"तब तो अदालत की दृष्टि से आप लोगों पर लगाया गया यह आरोप बिलकुल निराधार है। यह स्पष्ट है।" नैयर ने नाथ की ओर देखा, "वही बात तो आप कह रहे थे कि यह शिकायत सोमराज की नहीं है। शिकायत सोमराज की होती तो पहले आपके विवाह को अवैध घोषित करके तारा जी पर उसके अधिकार की प्रार्थना होनी चाहिए थी। इन्हें उसका नोटिस मिलना चाहिए था। इस षडयंत्र में सोमराज को साधन बनाया गया है। सूद वकील है, इसलिए कानूनी दाँव देख कर उछल पड़ा, परन्तु प्रैक्टिस नहीं करता इसलिए चूक गया है। मुझे आश्चर्य है कि आपके विभाग ने इस बात पर क्यों ध्यान नहीं दिया ! कानूनी परामर्शदाता की राय क्यों नहीं ली गई ? हो सकता है, सरकारी अधिकारी के अनैतिक व्यवहार (मौरल टर्पटीच्यूड) की युक्ति ले ली गई हो।"

नैयर ने पल भर सोच कर पूछ लिया—"आपको इस नोटिस का कोई पूर्वाभास नहीं था ? मानता हूँ, केस गुप्त रूप से तैयार किया गया होगा, पर बातें इधर-उधर से रिस कर पता भी लग ही जाता है।"

"हम दोनों नौ दिन पहले ही लौटे हैं। विदेश में थे।" नाथ ने याद करके कहा, "हाँ इतना तो सुना था, कुछ लोग मेरे पीछे पड़े हैं। ऐसी बातें तो कई बार सुन चुका हूँ।"

"मुझे कुछ उल्टा सन्देह है। आपके खिलाफ मामला तैयार करने वाले ने बेमन से अधूरा ही काम किया है। इसमें कई कड़ियाँ शिथिल हैं। खैर, अनुमान स्पष्ट है कि विभाग का रवैया इस मामले में संदिग्ध है। कुछ प्रभावशाली लोग तो जरूर आपके विरुद्ध हैं।"

गिल बोल उठा—"यह पूरी घटना पोलिटिकल है। पोलिटिकल साबोटाज और पोलिटिकल ब्लैकमेल है (राजनैतिक अड़ंगा और राजनैतिक छल है)।"

नैयर ने नाथ से पूछा—"आप इस मामले में अपने विभाग से सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण का भरोसा कर सकते हैं ?"

नाथ ने आशंका प्रकट की--"योजना के राष्ट्रीकरण के पक्ष के विरोधियों का प्रभाव कुछ कम नहीं है । मंत्रि-मण्डल में भी योजना के इस रूप के प्रति सभी लोग तो प्रधानमंत्री की तरह उत्साह में नहीं हैं पर वे बोल नहीं पाते । खैरात में परामर्श देते रहने वाले विदेशी परामर्शदाता बहुत ऊपर तक पहुँचे हुए हैं वर्ना जैसा आपने कहा, शायद यह नोटिस ही न आता । मैं तो अपने उत्तर में स्थिति की पूरी पृष्ठभूमि—सूद से बातचीत का भी उद्धरण—दूँगा ।"

"इस मामले का निर्णय आपके ही सचिवालय के हाथों में ही रहने देना ठीक नहीं होगा । योजना-आयोग के सभापति तो प्रधानमंत्री हैं न ?" नैयर ने माथे पर बल डाल कर पूछा ।

"पर हमें तो नियमानुसार अपने-अपने विभाग के अधिकारियों को ही उत्तर देना होगा और निर्णय विभाग के मंत्री के हाथ में रहेगा । प्रधानमंत्री तक पहुँचना अवैधानिक होगा ।" नाथ ने विवशता प्रकट की ।

"परन्तु हमारे लिये तो ऐसा कोई बन्धन नहीं है ।" कनक और गिल प्रायः एक साथ ही बोल उठे, "हम तो इस पोलिटिकल ब्लैकमेल के विरुद्ध प्रधानमंत्री तक आवाज उठा सकते हैं ।"

"मैं गोदीवाला से बात करूँगा" गिल ने कहा, "वह काँग्रेस पार्टी में और लोक-सभा में भी प्रश्न कर सकता है । उस का कांग्रेस की समाजवादी अर्थनीति में विश्वास है ।"

नैयर ने फिर कनपटी अँगूठे और मध्यमा में पकड़ कर सुनने का संकेत किया —"आप के विरुद्ध कानूनी दाँव से पोलिटिकल साबोटाज और ब्लैकमेल किया गया है । आपको भी आत्म-रक्षा के लिए पोलिटिकल साधनों का उपयोग करना होगा और विभागीय कार्यवाई के उत्तर में इस आरोप को कानूनन भी निर्मूल सिद्ध करना होगा ।"

नैयर ने तारा की ओर देखा—"यह प्रमाणित करना जरूरी है कि आपके विवाह से पहले उस तथाकथित विवाह का बंधन समाप्त हो चुका था । उस के लिए आप 'डेजर्शन की प्ली' (छोड़ दी जाने की युक्ति) दे सकती हैं । इस प्रयोजन से ऐसी साक्षी चाहिए कि उस आदमी को आपने नहीं छोड़ा बल्कि उसने आपको छोड़ा है, इस बात का महत्व है । कानूनी स्थिति ऐसी ही है । साक्षी चाहिए कि आपने सम्बन्ध और सम्पर्क कायम रखने का यत्न किया, परन्तु आप के प्रयत्न की उपेक्षा की गयी । ऐसी साक्षी तो बन सकेगी ?"

तारा ने इनकार में सिर हिला दिया।

"क्यों, इस में क्या कठिनायी होगी ?" नैयर ने विस्मय प्रकट किया ।

"मैंने कभी भी उन लोगों को कोई पत्र नहीं लिखा । कभी वहाँ गयी नहीं, न चाहती ही थी ।"

नैयर ने भवें ऊँची करके पूछा—"प्रश्न यह नहीं है कि आप क्या चाहती थीं या आपने क्या किया ! मैं साक्षी की बात कर रहा हूँ । सुनिये, पुरी, सोमराज और

प्रभुदयाल के बयान साक्षी में हैं कि आप सोमराज की पत्नी हैं, क्या यह सच है ?"

"यह केवल झूठा सच है !"

"परन्तु उस झूठ को सच प्रमाणित करने के लिए साक्षी मौजूद है। उस झूठ का निराकरण करने के लिए साक्षी चाहिए। वास्तविक सच को प्रकट करना आवश्यक है। वास्तविक सच को बल देने के लिए भी साक्षी आवश्यक है।" नैयर ने तर्जनी दिखा कर चेतावनी दी, "यह न समझिये कि मैं झूठ बोलने के लिए कह रहा हूँ। घटना तो झूठ-सच नहीं होती। झूठ-सच तो घटना को प्रकट करने के प्रयोजन में होता है। मूल सत्य को प्रकट करने के लिए प्रयत्न करना या उसे जमाना भी आवश्यक होता है। सच को बल देने से लिए साक्षी आवश्यक होती है।

"स्वयं पुरी की पत्नी साक्षी है कि पुरी को आप के विषय में सन् '४६ से मालूम था। पुरी और सोमराज का सम्पर्क बहुत गहरा है। नौ बरस से दोनों एक ही नगर में रहते हैं। उनमें इतना सम्बन्ध है कि पुरी बहिन के विरुद्ध और उसके पक्ष में बयान दे रहा है। पुरी के लिए यह स्वाभाविक था और उसका कर्तव्य भी था कि आपका पता पाने पर, सोमराज को आपका पता देता। वह यह कभी नहीं कह सकेगा कि उसने सोमराज को पता नहीं दिया। पुरी ने आपको जालंधर नहीं बुलाया क्योंकि वह जानता था, सोमराज आप को छोड़ चुका था।"

नैयर ने कनक की ओर देखा—"क्या कनक यह कहने के लिए आश्वासन नहीं दे सकती कि इन की इच्छा और प्रयत्नों के बावजूद पुरी ने बहिन की उपेक्षा की, क्योंकि सोमराज इन्हें शरण नहीं देना चाहता था ?"

"मैं जरूर दे सकती हूँ।" कनक ने आगे झुक कर दृढ़ निश्चय से कहा, "यही वास्तविक सच है। सोमराज तो चरित्रहीन रहा है। पुरी जी खूब जानते थे, उसी डर से बात दबाये रहे। उन के माता-पिता भी सोमराज की सब बातें जानते थे। मैं जरूर कह सकती हूँ—अदालतों में, पब्लिक में, सब जगह कह सकती हूँ। यह झूठ नहीं, सच है। सोमराज और पुरी जी दोनों ही नहीं चाहते थे कि तारा जालंधर आये। यह बिल्कुल सच है।"

तारा ने गहरी साँस ली। विस्मित थी, कार्य-कारण के तर्क का विचित्र क्रम बनता जा रहा था जो उस पर लगाये गये झूठ आरोप का एक मात्र उत्तर हो सकता था। तारा सोमराज से घृणा करती थी, उसे पति नहीं मानती थी, इस तथ्य का कोई मूल्य नहीं था।

नैयर ने कनक को सुनने का संकेत करके तारा से कहा—"आप को इसी साक्षी के आधार पर उत्तर देना चाहिए। एक बात आवश्यक है, आप अपने उत्तर में विभाग को यह चेतावनी भी जरूर दें कि यदि समाप्त विवाह को बहाना बनाकर आपके विरुद्ध कोई अन्यायपूर्ण कार्रवाई की जायगी तो आप अदालत की शरण लेंगी। अवसर आये तो आप को अदालत से संकोच भी नहीं करना चाहिए। अदालत में केवली कन्नी की साक्षी के आधार पर उनका अभियोग जाल साबित हो सकेगा।"

बहुत देर तक मंत्रणा से निश्चय हुआ कि तारा और डाक्टर बयान लिख

कर, नैयर के जालंधर लौट जाने से पहले उसे दिखा लें। कनक, पुरी की पत्नी के रूप में राष्ट्रीयकरण की नीति के विरुद्ध पोलिटिकल साबोटाज और ब्लैकमेल की सूचना देने के लिए एक पत्र प्रधानमंत्री को, दूसरा पत्र काँग्रेस के प्रधान को लिखेगी।

नैयर ने ध्यान से सुनने का संकेत करके कहा—"प्रधानमंत्री और काँग्रेस प्रधान के लिए पत्र में इस असंगति की ओर ध्यान दिलाना जरूरी है कि यदि मामला सोमराज के प्रति न्याय के लिए उठाया गया है तो इस विवाह को रद्द करने के लिए अदालत में आवेदन से आरम्भ होना चाहिए था। पुरी ने अपनी बहिन को उसके ससुराल में बसाने का कोई भी प्रयत्न नहीं किया। उसने अपनी बहिन के विरुद्ध बयान, किस उद्देश्य के प्रति निष्ठा या कर्त्तव्य-बुद्धि से दिया है? इस बात की तहकीकात अवश्य होनी चाहिए कि 'विशेष पुलिस' को इस विषय में जाँच करने का आदेश, किस रिपोर्ट के आधार पर दिया गया था? पहली रिपोर्ट किस सूत्र से आई है? मामले का वास्तविक कारण राजनैतिक नहीं तो क्या है? तुम स्पष्ट लिखो, पुरी और सोमराज सूद की कृपा से अनुचित लाभ उठाने वाले, उसके हाथ के मोहरे मात्र हैं......।"

पंडित गिरधारीललाल जी को डाक्टर प्राण और तारा पर किये गये नीच आक्रमण की बात मालूम हुई तो उनका मन दुख और ग्लानि से भर गया। बहुत देर तक खेद प्रकट करते रहे—राजनीति इस स्तर पर आ गयी है तो देश का क्या होगा। नया हिन्द प्रेस में दो दिन लगातार इसी प्रसंग पर चर्चा होती रही। परन्तु पंडित जी बेटी की समस्या को कैसे भूल जाते। उस दिन नैयर को रात की गाड़ी से लौटना था। पंडित जी ने दोपहर बाद प्रसंग उठाया—"बरखुरदार कनक के मामले में क्या सोचा है?"

नैयर ने संक्षेप में कह दिया—"पिताजी, पुरी के ढंग आप देख रहे हैं। इस विषय में सौजन्य के नाते उससे कोई आशा व्यर्थ है, परन्तु मैंने कनक से कहा है कि वह प्रधानमंत्री और काँग्रेस के प्रधान को लिखे अपने एक पत्र की नकल पुरी को भी भेज दे और लिख दे कि इस अन्याय के विरुद्ध तारा अदालत की शरण लेगी। वह पुरी की पत्नी और सब कुछ जानने की स्थिति में, अदालत में मिथ्यारोप के विरुद्ध गवाही देगी। देखिये, क्या होता है।"

डाक्टर नाथ और तारा ने नोटिसों के उत्तर अक्टूबर के अन्त में ही दे दिये थे। तारा को एक-एक दिन एक-एक युग की तरह भारी हो रहा था, क्या निर्णय होता है। उसे नौकरी चली जाने की चिंता नहीं, कलंक की वेदना थी। उसने बहुत कुछ सहा था, परन्तु इतना आदर-सम्मान पाकर ऐसे कलंक की वेदना असह्य थी।

नाथ ने पूरी घटना डाक्टर सालिस को बता दी थी। डाक्टर सालिस आर्थिक परामर्शदाता थे। वैदेशिक विभाग के मंत्री स्वयं प्रधानमंत्री थे। सालिस से वैदेशिक सम्बन्धों के सचिवालय की भी बात उनसे होती रहती थी। सालिस की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के कारण, प्रधानमंत्री उनका बहुत आदर और विश्वास करते थे। सालिस इस विषय में प्रधानमंत्री से बात करना चाहते थे, परन्तु उन्हें अवसर

ही नहीं मिल रहा था ।

प्रधानमंत्री आगामी चुनावों की योजनाओं और उस सम्बन्ध में काँग्रेसी उम्मीदवारों के निर्णय में इतने व्यस्त थे कि जनवरी '५७ के पहले सप्ताह से पूर्व सालिस प्रधानमंत्री से मिल ही नहीं सके । प्रधानमंत्री से मिल कर सालिस ने नाथ और तारा को आश्वास दे दिया था कि प्रधानमंत्री ने मामला अपने गौर के लिए स्थगित कर दिया है । वे इन तिकड़मों और सूद को भी खूब समझते हैं ।

डाक्टर सालिस से आश्वासन पाकर भी तारा की चिंता मिट नहीं गयी । दोषी तो वह अपने-आप को कभी नहीं समझती थी । उसे तो कलंक की छाया से ग्लानि थी परन्तु प्रधानमंत्री के यहाँ से निर्णय का अर्थ ही था, विलम्ब । पत्रों में नित्य ही प्रधानमंत्री के चुनाव सम्बन्धी हवाई दौरों के समाचार रहते थे । चुनाव के संबंध में उनके भाषण और सन्देश छपते थे । वे प्राय: देश की गंभीर स्थिति और उत्तरदायित्व की चेतावनी देते थे—जमाना बहुत तेज चाल से चल रहा है । हमें भी उसके साथ चलना है । हमारे सामने बड़े-बड़े मसले हैं। राष्ट्रीय समस्यायें हैं और अन्तरराष्ट्रीय समस्यायें भी हैं, परन्तु आप लोग छोटे-छोटे व्यक्तिगत मामलों में ही उलझे हुये हैं । हमें व्यक्तिगत मामलों से ऊपर उठकर देखना चाहिए ।

तारा ने नौ वर्ष पूर्व स्वराज्य के आरम्भ में, शरणार्थी कैम्प में, असहाय अवस्था में भी प्रधानमंत्री के मुख से यही बातें सुनी थीं ।

डाक्टर और तारा के यहाँ जो भी आता, चुनाव की ही बात करता था । दिल्ली देश का केन्द्र है, इसलिए यहाँ प्रत्येक राज्य के चुनाव की चर्चा सनसनी पैदा कर देती है । चड्ढा, माथुर, नरोत्तम, गिल, कनक, जो आता चुनाव की ही बात करता था । विशेषत: कांग्रेस की आलोचना···आज भी महात्मा गांधी की जय पुकार कर काँग्रेस के लिए वोट माँगे जाते हैं, परन्तु गांधी जी के सिद्धान्त और नीति, शासन में या काँग्रेस के व्यवहार में कहाँ है ? गांधी जी को तो केवल राजघाट में समेट दिया गया है···।

तारा अपनी चिन्ता दबा कर उनकी चर्चा में सहयोग देती ।

जनवरी के तीसरे सप्ताह खूब कड़ा जाड़ा था । तीर की तरह बेधती सर्द हवा के झोंकों के साथ बूँदा-बाँदी भी थी । ऐसी अवस्था में कनक और गिल को शहर से इतनी दूर, अपने बँगले पर आया देख कर तारा को कुछ विस्मय हुआ ।

कनक के चेहरे से उत्साह और प्रसन्नता फूटी पड़ रही थी, संकोच की लाली भी थी ।

कनक ने नाथ और तारा का हाल-चाल पूछा और बताया—"मुझे जालन्धर से तलाक का नोटिस आया है, डेजर्शन की प्ली पर ।"

तारा ने कनक की पीठ ठोंक कर उसे बहुत-बहुत बधाई दी—"तुम मानसिक क्लेश से तो छूट गयीं !"

नाथ अपने कमरे में व्यस्त था । तारा ने उस ओर देख कर ऊँचे स्वर में

पुकारा—"सुनिये, जरा एक मिनिट के लिए आइये !"

नाथ के आने पर तारा ने कहा—"कनक को बधाई दीजिये !"

नाथ ने कनक के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर बहुत-बहुत बधाई दी और कुर्सी पर बैठते हुए कहा—"जानती हो, पुरी ने तलाक की नोटिस क्यों दे दिया है, बता दूँ ?...इस आशंका से कि तुम अदालत में उसके विरुद्ध गवाही दोगी तो उसकी क्या स्थिति होगी ! अब तो वह कह सकेगा, तुम सदा से उसकी विरोधी रही हो। उसे अपमानित करने के लिए झूठी गवाही दे रही हो।"

कनक के चेहरे की चमक सहसा बुझ गयी।

"अरे तुम परवाह न करो !" तारा और नाथ एक ही साथ बोल उठे।

"झूठ के पैर ही कितने होते हैं !"

डाक्टर नाथ को डाक्टर सालिस के आश्वासन पर भरोसा था, परन्तु चिन्ता यह थी कि उस मानसिक क्लेश के कारण तारा भीतर ही भीतर गलती जा रही थी। नाथ के बहुत समझाने पर कह देती—"नहीं, मैं कहाँ चिन्ता कर रही हूँ !"

नाथ देख रहा था, स्विटजरलैण्ड से लौटने पर परिचित लोग तारा का स्वास्थ्य देख कर बधाई देते थे। लेकिन अब वह पहले से भी आधी रह गयी थी। चेहरा बिलकुल पीला-सफेद पड़ गया था। नाथ को उसका शरीर भी गरम जान पड़ता था। एक दिन नाथ थर्मामीटर ले आया। तारा ने बहुत टालमटोल की। आखिर थर्मामीटर लगाया ही गया। तारा को लगातार निन्नानवे या सौ बुखार चल रहा था।

नाथ और भी चिन्तित हो गया। उसने डाक्टर सालिस को फोन किया—"....मैं क्या करूँ ? यदि प्रधानमंत्री निर्णय नहीं कर सकते तो मैं ही त्याग-पत्र दे दूँ। इसी ख्याल से रुका हुआ हूँ कि इस तरह मैं स्वयं उन लोगों के षड़यन्त्र का उद्देश्य पूरा कर दूँगा।"

डाक्टर सालिस ने विवशता प्रकट की—"प्रधानमंत्री दिल्ली में हों तो मैं कुछ कह सकता हूँ। जानते हो, कल वे फिर पंजाब गये हैं, काँग्रेस के उम्मीदवार यानी सूद के समर्थन में भाषण देने। यह राजनीति है। सूद प्रधानमंत्री की जड़ पर चोट भी करता है और उन्हीं से अपना समर्थन भी करवाता है। खैर लौटेंगे तो मैं जरूर यत्न करूँगा...।"

जालन्धर में सुबह दस बजे से सूद जी के चुनाव के वोट गिने जा रहे थे। दिल्ली में परिणाम की प्रतीक्षा बहुत उत्सुकता से हो रही थी। काँग्रेस के समर्थक और विरोधी, सभी जानते थे कि वे जीत जायेंगे। उत्सुकता यही जानने की थी कि उनसे टक्कर लेने वाला कितने वोट ले सकेगा। परिणाम संध्या छः बजे तक आने का अनुमान था। गिल पौने छः बजे ही समाचार-एजेन्सी के दफतर में पहुँच गया था।

समाचार-एजेंसी का सहायक-सम्पादक संगल मुनीश को चिढ़ा रहा था—"तुम्हें सूद जी के हार जाने की उम्मीद है ? आओ शर्त लगा लो ! मैं एक पर दस लगाता हूँ। सूद जी जीत जायें तो तुम मुझे दस रूपये देना, अगर हार गये तो मैं सौ दूँगा। लगाओगे शर्त ?"

मुनीश दबे स्वर में कहे जा रहा था—"अरे देखो, अभी दस-पन्द्रह मिनिट में मालूम हो जायेगा।" शर्त लगाने का साहस उसे नहीं हो रहा था।

बात चल रही थी : पंजाब में काँग्रेस को बहुमत तो मिल ही चुका था। काँग्रेस के नायक, काँग्रेस की ओर से चुनाव के कर्ता-धर्ता की सफलता में क्या सन्देह हो सकता था ?

कुछ पत्रकारों का अनुमान था कि सूद जी के प्रतिद्वंद्वी की जमानत जब्त होगी। वह चुनाव का परिणाम सुनने से पहले ही चुनाव के निर्णय के विरुद्ध चुनाव में धाँधली की शिकायत का आवेदन टाइप करा चुका होगा।

संगल बाँह उठाये सौ का नोट दिखा-दिखा कर सबको चिढ़ा रहा था, "कोई इस पर लगाता है, दस ही लगाओ !"

संगल सौ का नोट हाथ में लिये 'टेलीप्रिन्टरों' के बीच खड़ा था। कमरा मशीनों की किट-किट, किट-किट से गूँज रहा था। एक साथ दो-दो, तीन-तीन मशीनें समाचारों के तार छापती जा रही थीं। किसी टेलीप्रिंटर पर नया समाचार आरम्भ होता तो संगल झुकर कर देख लेता। नागपुर, बम्बई, कलकत्ता या लखनऊ देख कर मुँह मोड़ लेता।

टेलीप्रिंटर पर जालन्धर देखते ही संगल ने संकेत के लिए बाँह उठा दी और मशीन पर झुक गया। कमरे में सन्नाटा छा गया। कई लोग साँस रोके टेलीप्रिन्टर पर झपट पड़े।

पत्रकार पागल हो उठे। समाचार-एजेन्सी के दफ़तर के अनुशासन की परवाह न कर 'इन्कलाब जिन्दाबाद !' और 'तानाशाही मुर्दाबाद !' के नारे लग गये।

पत्रकार एक-दूसरे को आलिंगन में ले-ले कर कूदने लगे। संगल उल्लास और उत्साह से बोल नहीं पा रहा था।

गिल टेलीफोन की ओर लपका। फोन खाली नहीं था। दूसरे लोग भी अवसर के लिए फोन को घेरे खड़े थे। गिल तुरन्त जीना उत्तर गया। पहिली दुकान में गया कि फोन से सूचना दे दे। वहाँ भी फोन खाली नहीं था। गिल अपने उल्लास और उत्साह को वश में नहीं कर पा रहा था। समीप ही मिठाई की दुकान पर गया। नयाहिन्द प्रेस में फोन किया। चपरासी मुरली ने उत्तर दिया—पंडित जी अभी-अभी बाहर गये हैं। कनक जी अभी नहीं लौटीं।

गिल डाक्टर नाथ को फोन करना चाहता था, परन्तु मिठाई की दुकान ने विचार बदल दिया। उसने पाँच रूपये की मिठाई खरीद ली और दुकान से निकल, टैक्सी लेकर सीधा डाक्टर नाथ के यहाँ चल दिया।

नाथ के यहाँ बैठक में कोई नहीं था। गिल ने ऊँचे स्वर में आवाज दी—"डाक्टर साहब ! भाभी जी !"

नाथ बैठक में आया। गिल का प्रफुल्ल चेहरा देख कर नाथ ने प्रसन्नता से चमकती आँखों से पूछ लिया—"तुम्हें खबर मिल गयी ?"

नाथ के पीछे-पीछे तारा भी आ गयी थी। तारा का चेहरा और आँखें भी

चमक रहा थीं।

"हैं, आपको खबर मिल भी गयी ?" गिल ने नाथ और तारा की प्रसन्नता देख कर विस्मय से पूछा।

"क्या खबर ?" तारा ने होंठ पर तर्जनी रख कर जानना चाहा।

"पहले आप बताइये, क्या खबर है ?" गिल ने मिठाई का डिब्बा सीने पर दबा कर पूछा।

"आज सुबह ही हम लोगों को पत्र मिले हैं, हम लोग एक्जोनरेट (दोषमुक्त) हो गये !" नाथ बोल उठा।

गिल किलक कर उछल पड़ा—"वाह ! वाह ! बधाई ! बधाई !"

गिल ने डाक्टर और तारा दोनों से हाथ मिलाये—"आप के मुँह मीठे कराता हूँ। मैं भी खबर लाया हूँ। मेरा भी मुँह मीठा कराइये !"

"क्या खबर ?" नाथ और तारा ने उत्सुकता से पूछा।

"सूद जी सत्रह हजार वोट से हार गये !"

"हैं !" विस्मय से तारा की भवें चढ़ गयीं।

गिल ने अपनी बात दोहरायी—"अभी समाचार-एजेंसी में टेलीप्रिन्टर देख कर आ रहा हूँ। पन्द्रह मिनिट में तो विशेषांक बाजार में आ जायेंगे। मैं कनक को फोन कर दूँ।"

डाक्टर सहसा गम्भीर हो गया—"गिल, अब तो विश्वास करोगे, जनता निर्जीव नहीं है। जनता सदा मूक भी नहीं रहती। 'देश का भविष्य' नेताओं और मंत्रियों की मुट्ठी में नहीं है, देश की जनता के ही हाथ में है।"

• • •